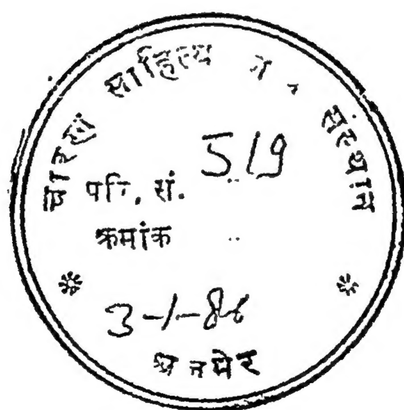
कोन्स्तान्तिन फ़ेदिन

आग्नेय वर्ष

(दो भागों में)
भाग २



प्रगति प्रकाशन
मास्को

अनुवादक : योगेन्द्र नागपाल

К. ФЕДИН,
„НЕОБЫКНОВЕННОЕ ЛЕТО“,
Книга 2
На языке хинди

Konstantin Fedin
NO ORDINARY SUMMER
Part 2

© हिन्दी अनुवाद • प्रगति प्रकाशन • १९८१

Ф $\frac{70302-081}{014(01)-81}$ 672-81

4702010200

१८

मेरकूरी अव्देयेविच मेश्कोव को रागोज़िन के सामने हाज़िर हुए अभी एक महीना भी नहीं हुआ था और उसका मन अभी इस विचार का थोड़ा सा भी आदी नहीं होने पाया था कि उसके सिर पर नंगी तलवार लटक रही है, इतने में फिर से वित्त-विभाग से वुलावा आ गया। मेरकूरी अव्देयेविच मानो सलीव पर चढ़ने चल दिया।

किन्तु वुरी-वुरी आशंकाओं के विपरीत रागोज़िन उससे अच्छी तरह मिला। उसकी वातों में प्रोत्साहन का पुट था, हां, वातचीत लंवी खींचने की इच्छा उसमें न थी। पता चला कि वैंक में की गई जांच-पड़ताल से मेश्कोव के अपनी पूंजी के वारे में वयान की पूरी तरह से पुष्टि हो गयी है। वह सचमुच ही सब कुछ खो वैठा था। अपने स्वभाव के विपरीत जिस भोलेपन से उसने 'स्वतंत्रता ऋण' के वायदों पर भरोसा कर लिया था (और जिसका पहले उसे वेहद अफ़सोस था), वही अव उसके लिए वरदान सिद्ध हो रहा था। वह कंगाल था और इसलिए निश्चिंत हो सकता था। मेश्कोव जव यह समझ गया कि खतरा टल गया है, तो उसके दिमाग में ख्याल आया: "पहले

कभी भी पैसे ने इन्सान को इस तरह नहीं बचाया है, जैसे कि अब खाली जेब बचा रही है।" ऐसी मुंहफट बात कहने की तो उसकी हिम्मत नहीं हुई, सो उसने इसी विचार को अलंकृत करके पेश किया:

"पहले ज़माने में आदमी बुरे दिनों के लिए भला बचत कैसे न करता? मैंने तो, प्योत्र पेत्रोविच, आप से कुछ छिपाया नहीं है और छिपाना चाहता, तो भी न छिपा सकता: आपको तो याद है मैं कैसे रहता था। खैर जो बीत गया, सो बीत गया। हां, बुरा मैंने किसी का नहीं किया। जो कुछ भी था मेरे पास मैंने दिन-रात मेहनत करके रत्ती-रत्ती जोड़ा था, और वह भी बस यही सोचते हुए कि बुढ़ापा आयेगा, तो क्या करूंगा। अब हालांकि मेरी एक टांग कब्र में लटक रही है, तो भी मन निश्चिंत है: सिर छिपाने को जगह मेरे पास रहने दी है, काम मुझे दे दिया है, और अगर हाथ-पांव जवाब देने लगे, तब भी सोवियत सत्ता सभी मेहनतकश नागरिकों की भांति मेरी देखरेख का इंतज़ाम कर देगी। और भला क्या चाहिए?.."

"अच्छा तो बात यहीं खत्म करते हैं, मेहनतकश नागरिक मेश्कोव," रागोज़िन ने कहा। वह मानो मेश्कोव को समझने की कोशिश करते हुए अपनी पैनी नज़रों से उसकी ओर देख रहा था, साथ ही वह अपना कौतूहल दिखाना भी नहीं चाहता था। शीघ्र ही उसने पूछा: "सोना आपके पास नहीं है, यह बात पक्की है?"

"बिल्कुल नहीं है।"

"अच्छा, आपका मामला साफ़ हो गया है। आप चैन से सहकारी दुकान में काम कर सकते हैं। सहकारी दुकान में ही हैं न आप?"

हां, मेश्कोव सहकारी दुकान में ही काम करता था, और उसका ख्याल था कि वह रागोज़िन को सौ बार यह बता चुका है। उसने आभार प्रकट करते हुए सिर झुकाया। वह खुश था कि सलीब पर चढ़ना नहीं पड़ा और सारा मामला इतनी अच्छी तरह रफ़ा-दफ़ा हो गया, मगर जब वह बाहर निकला, तो उसके मन में विरोध की भावना उठ रही थी। इस आश्वासन से कि वह चैन से नौकरी करता रहे, यह नौकरी उसे और भी बुरी लगने लगी थी। रागोज़िन ने मानो उस पर रहम करते हुए उसे यह नौकरी दान में दी थी। और यह रहम उसके लिए बोझ बन रहा था, क्योंकि हर

नुक्कड़ के पीछे उसके लिए जो दस खतरे मुंह बाये खड़े थे, उनमें नौकरी ग्यारहवां खतरा बनकर जुड़ रही थी और यह खतरा भी सबसे भयानक था।

अभी थोड़े दिन हुए कुछ लोग दुकान में आये थे। उन्होंने मेश्कोव को रुक्का दिखाकर ट्रेड यूनियनों के लिए कागज़ मांगा और पूरी गाड़ी लादकर आराम से चले गये। खाते में आर्डर दर्ज करते हुए मेश्कोव के मन में सहसा ऐसा संशय उठा कि उसके हाथ-पांव ठंडे हो गये और वह टेलीफ़ोन की ओर लपका। तब उसे पता चला कि किसी ट्रेड यूनियन ने माल नहीं मंगाया था और रुक्का फ़र्ज़ी था। बदहवास सा वह भागा-भागा मिलीशिया गया। वहां जब तक रपट लिखी जाती रही, उसे यही लगता रहा कि अब वह यहां से नहीं निकल पायेगा, उसे सीधे जेल भेज दिया जायेगा। दुकान पर लौटकर उसने पाया कि खुफ़िया विभाग के एजेंट उसका इंतज़ार कर रहे हैं। इस नये डर से तो वह बेहोश ही हो चला था। पर तभी पता चला कि एक सुखद संयोग ने उसे बचा लिया है। हुआ यह था कि शहर के बाहरी इलाके में इन एजेंटों ने माल से लदे छकड़े को एक घर के अहाते में घुसते देखा। इन्हें कुछ शक हुआ और उन्होंने छकड़े को रोक लिया। अब ये एजेंट मामले की गांठ खोलने यहां दुकान में आये थे। मेश्कोव की निर्दोषता सहज ही सिद्ध हो गयी।

इस खतरे से छुटकारा पाने पर उसने गिरजे में प्रभु के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए पूजा की। परन्तु इससे उसे मन में व्याप्त भय से छुटकारा नहीं मिला। उसका तो यह विश्वास दृढ़ हो गया कि यह नौकरी ही उसे ले डूबेगी। अगर वह सुखद संयोग न हुआ होता, तो भला कौन इस बात पर विश्वास करता कि भूतपूर्व व्यापारी मेश्कोव माल की हेराफेरी में शामिल नहीं है? आखिर आजकल लोग जैसे सोचते थे, उसके हिसाब से तो भूतपूर्व स्वामी के नाते मेश्कोव के लिए धोखाधड़ी करना स्वाभाविक ही था।

नहीं, वह चैन से नौकरी नहीं कर सकता था। अब उसके सिर पर जो नया खतरा मंडराता रहा था और जो रागोज़िन की दया से टल भी गया था, उससे छुटकारा पा लेने के बावजूद, उसके मन में गहरी व्यथा थी, जो उसे अंदर ही अंदर खाये जा रही थी। उसके

पांव उसे जिधर जाना था, उधर नहीं, बल्कि दूसरी ही दिशा में लिये जा रहे थे। हां, वह इस बात का भी फ़ायदा उठा सकता था कि दुकान पर कोई उसका इंतज़ार नहीं कर रहा था, क्योंकि वह ऊपर से बुलावा आने पर गया था।

मेश्कोव को सारी उम्र गई-गुज़री सड़कें-गलियां ही पसंद रही थीं। उसकी स्वर्गीय पत्नी वालेरिया इवानोव्ना कई बार यह सहती-सहती झुंझला उठती थी: "हे भगवान, क्या तुम हमेशा नाबदान सूंघते चलते हो?" पर उसने अपनी आदत नहीं बदली थी – घूमने निकलता, तो भी पिछवाड़े-पिछवाड़े ही चलता, उजाड़ जगहों में ही जाता। वह दिखावापसंद नहीं, बल्कि स्वभाव से घुन्ना ही था और उसे मानो यह डर रहता था कि बेवजह भीड़भाड़ वाली जगह में जाकर लोगों को यह याद न दिलाये कि वह धनी है।

चहल-पहल भरी सड़क से मुड़कर उसने कुछ गलियां और निर्जन बुल्वार पार किया, जहां रोज़-विलो जैसी धूसर झाड़ियां उग रही थीं। फिर वह दूर तक चले गये खड्ड के किनारे-किनारे चला, जो कूड़े और राख से आधा भरा हुआ था, आखिर उसे पार करके टीलों की पगडंडियों पर क़ब्रगाह की ओर बढ़ चला। खूब गर्मी पड़ रही थी और हवा में फैली धूल में से छनकर आती रोशनी कंपकंपाती सी लग रही थी, ज़मीन सूखे से पथरा रही थी।

मेश्कोव ने वालेरिया इवानोव्ना की क़ब्र पर प्रार्थना पढ़ी और पुश्ते पर बैठ गया। वह यहां मन की शांति के लिए आया करता था – बसंत में बेलचा लेकर क़ब्र का ढूह ठीक-ठाक करने, सलीब को मज़बूती से टिकाने और त्योहारों के दिन फाटक के पास लड़ती-झगड़ती भिखारिनों को भीख बांटने। सलीबों के बीच शोक-प्रार्थना का एकल स्वर गूंज रहा था: "तब संत्रस्त हुआ आकाश और स्तब्ध धरती..." और वह मन ही मन दोहरा रहा था: सचमुच ही आकाश संत्रस्त हो उठा है! सचमुच ही सारी धरती स्तब्ध है! क्या-क्या घट रहा है! क्या कुछ नहीं हो रहा! परमात्मा का शुक्र मनाओ, वालेरिया इवानोव्ना, कि उसने तुम्हारी आंखें मूंद दी हैं, और तुम्हें अब परमात्मा के भय के अलावा और कोई भय नहीं देखना होगा। उसने क़ब्र के सामने खड़े होकर सिर झुकाया, उसका मन अब शांत

हो गया था और चित्त में व्याप्त विनम्रता मानो उसे मनोवल प्रदान कर रही थी। कब्रगाह से निकलकर वह आश्रम की ओर चल दिया।

पुरुषों के मठ के ऐन पीछे टीले पर एक छोटा सा जंगल चला गया था। थोड़ी दूर पर उसमें वलूत वृक्षों से घिरा आश्रम था। चारदीवारी के पीछे से पीले रंग में पुती नीची-नीची इमारतें और एक गिरजे का गुम्वद दीख पड़ते थे। इधर कुछ समय पहले इन इमारतों में एक अनाथालय खोल दिया गया था। यहां लड़के रहते थे, जिन्हें पहले विगड़े हुए कहा जाता था और अव पिछड़े हुए या विकारग्रस्त। अतीत में जिस जंगल में शांति का राज था, वहां अव दिन चढ़े से सांझ ढले तक लड़कों का हो-हल्ला होता रहता था। क्रांति के वाद आश्रम के द्वार एक वार जो खुले, तो फिर वंद नहीं हुए। हां, वलूत कुंज यहां घने थे और आश्रम काफ़ी वड़ा था, सो जीवन में पूर्ण परिवर्तन आ जाने पर भी यहां अव तक कुछ ऐसे स्थान थे, जहां एकान्त मिल सकता था।

ऐसे ही एक छायादार कुंज में विल्कुल अलग-थलग वनी छोटी सी इमारत में विशप का निवास था। यह विशप सामान्य पादरीगण से अलग ही प्रकृति के थे। यह तो नहीं कहा जा सकता कि वह अपने से वरिष्ठ पादरियों की अवहेलना करते हों, धार्मिक नियमों और रीति-रिवाजों की तो वात ही दूर रही। सभी नियमों का वह वड़ी श्रद्धा से पालन करते थे। अपने जैसे अन्य पादरियों से जिस वात में वह भिन्न थे, वह था उनका रहन-सहन। वैसे अगर वह साधारण मठवासी होते तो ऐसे रहन-सहन पर सव केवल गहरा संतोष ही प्रकट करते। परन्तु उनके पद के लिए ऐसा रहन-सहन अमान्य था, जो एक साधारण मठवासी को तो आदर का पात्र वना सकता था, परन्तु जो विशप के उच्च पद की गरिमा के लिए अशोभनीय था।

इस विरोधाभास के कारण ही विशप की स्थिति विशिष्ट थी। वह विल्कुल सादा जीवन व्यतीत करते थे, प्रायः भिखारी की ही भांति, मानो एक साधारणतम मठवासी से अधिक उनकी कोई आवश्यकताएं ही न हों। उनके भक्त उनके लिए वहुत कुछ लाते थे, लेकिन वह वड़ी वेफ़िक्री से और निस्स्वार्थ भाव से सव कुछ वांट देते थे। उनकी इस कमज़ोरी का लाभ उठाने तरह-तरह के लोग वहां

आते रहते थे, यहां तक कि पास के लड़के भी मौका-वेमौका मज़ा लेने चले आते थे। माया के प्रति उनकी इस उदासीनता से ही लोगों के मन में उनके लिए आदर भाव उठता था और उनके भक्तों की संख्या धीरे-धीरे, किन्तु निरन्तर वढ़ रही थी। एक सच्चे धर्मात्मा के रूप में उनकी ख्याति फैल रही थी। लोग अपने मन का बोझ हल्का करने, पश्चाताप करने उनके पास आते थे। विशप की ख्याति की तुलना पुराने ज़माने के उन संतों की ख्याति से तो नहीं की जा सकती, जिनके दर्शन करने झुंड के झुंड भक्त आया करते थे। पर इस वात से कोई इन्कार नहीं कर सकता था कि उनका खूब नाम है और न ही इस वात से कि उनकी कीर्ति उनके सदाचार और धार्मिकता पर लोगों के विश्वास पर आधारित है। लेकिन ठीक इसी वजह से चर्च के सत्ताधारी उनसे नाखुश थे और यहां तक कि उन्हें तरह-तरह से तंग करते थे। आर्कविशप और उनके साथ-साथ धार्मिक परिषद के दूसरे सदस्य विशप की सादगी को धूर्तता तथा उनकी निस्स्वार्थ भावना को पादरीगण की धन-लोलुपता पर चोट करने का प्रयास समझते थे, विशप की लोकप्रियता में वे अहं की तुष्टि और शालीनता के पीछे संत वनने का प्रलोभन देखते थे। संक्षेप में, विशप के भक्तों की दृष्टि में उनके जो सद्‌गुण थे, वही शत्रुओं की नज़रों में पाप थे।

मेश्कोव ने जीवन में पहली बार चर्च की राय की अवहेलना करने की हिम्मत की। विशप की संगत में आते ही उसे उन पर ऐसी श्रद्धा हो गई कि जिन लोगों को विशप के पूर्णतः निष्पाप होने में कोई संदेह था, उनको वह वुरा-भला कहने लगा और विशप के शत्रुओं से तो उसे मरते दम तक के लिए नफ़रत हो गई।

विनीत मन से मेश्कोव ने आश्रम में प्रवेश किया। वड़े अरसे से उसके मन में एक विचार उठ रहा था और अव अंततः उसने एक अडिग संकल्प का रूप धारण कर लिया था। आश्रम की वाड़ के साथ-साथ चलते हुए मेश्कोव सोच रहा था कि अभी घंटा भर पहले वह कुमार्ग पर चलता हुआ शैतान के चाकर रागोज़िन के भट[1] में जा रहा था और उसे लग रहा था कि मौत उसके सामने मुंह वाये खड़ी है, किन्तु अव वह सन्मार्ग पर चलता हुआ प्रभु के सेवक के आश्रम में जा रहा

है, उसका हृदय निश्शंक है, उसके होंठ प्रभु का गुणगान कर रहे हैं और कानों में वह मधुर नाद है, जो पवित्र आत्मा में गुंजायमान होता है।

भद्दा सा चोगा पहने, घुंघराले वालों वाले वूढ़े सेवादार ने उसका स्वागत किया, वाहर की कोठरी लांघता हुआ वह उसे अंदर की कोठरी तक ले गया, वहां "परम पिता परमेश्वर, दयावान हों..." कहते हुए उसने द्वार खटखटाया, खोलकर अंदर गया, क्षण भर में ही लौट आया और मेश्कोव से कहा कि धर्माचार्य ने अंदर वुलाया है।

कोठरी के एक कोने में शीशे में जड़े देवचित्र रखे हुए थे और उनके आगे दीपक जल रहा था। उनके सामने खड़े होकर मेश्कोव ने माथा, छाती और फिर कंधों को छूकर सलीव का निशान वनाया, कमर भुकाकर हाथ की विचली उंगली से दरी का स्पर्श किया और फिर विशप का आशीर्वाद लेने आगे वढ़ा। गोलाईदार कुर्सी में वैठे विशप थोड़ा आगे को भुके और अस्वस्थता के कारण उठ न सकने के लिए क्षमा मांगी। उनका चेहरा फूला-फूला सा था, जैसा हृदय रोगियों का होता है। उनकी दाढ़ी इतनी भीनी थी कि उसमें भारी अण्डाकार चेहरा उतना ही स्पष्ट दिखता था, जितना दाढ़ी साफ़ मुंडी होने पर दिखता। दाढ़ी के लंवे, सफ़ेद वाल हल्के गाजरी से रंग की त्वचा पर अलग-अलग चिपका दिये गये लगते थे। जहां तक उनकी छोटी-छोटी आंखों में गति का प्रश्न है, उनमें ज़रा भी चंचलता न थी, किंतु उनकी प्रायः रंगहीन, जलीय पारदर्शिता से दृष्टि में एक स्थायी वेचैनी का आभास होता था। कोठरी की खिड़की छोटी सी ही थी, लेकिन कुंज में चिलचिलाती धुप थी, सो अंदर काफ़ी उजाला था।

अपने स्वास्थ्य के वारे में प्रश्न का विशप ने कोई उत्तर नहीं दिया, वस जोड़ों पर फूले हाथ धीरे से दोनों ओर को फैलाये और माला के फ़ीरोज़ी दाने जल्दी-जल्दी फेरने लगे। मेश्कोव पर लगी उनकी दृष्टि मानो कह रही थी कि वह सीधे अपनी वात वताये, किस काम से आया है।

"एक निश्चय किया है, महाराज, वस आपका आशीर्वाद चाहिए। वर्षों से मन में कामना थी कि गृहस्थी छोड़कर किसी मठ में चला जाऊं। अव निश्चय करने का समय आ गया है। आशीर्वाद दें, महाराज!"

मेश्कोव एक वार फिर नतमस्तक हुआ।

"अच्छी तरह सोच लिया है न? जल्दबाज़ी तो नहीं कर रहे?" विशप ने हौले से पूछा।

"नहीं, महाराज। साठ वरस का हो गया हूं।"

"सो तो देख रहा हूं। कोई-कोई पंद्रह वर्ष की आयु में ही संन्यास लेकर ऐसे लगता है कि जन्म से ही संन्यासी रहा हो, और कोई बुढ़ापे में भी मठ में आता है, तो पराये घर में लगता है।"

"मेरी तो मन से इच्छा है, महाराज।"

"वैठ जाओ, न। शांत हो जाओ। अगर निश्चय पक्का है, तो घवराने की क्या वात है।"

"निश्चय तो पक्का ही है, महाराज। दिन-रात वस एक ही चिंता है: कैसे आत्मा का उद्धार हो।"

"परमात्मा तुम्हारी मदद करे! पर आत्मा का उद्धार तो कहीं भी हो सकता है। संसार से नाता तोड़कर मठ में रहने के वजाय संसार में रहकर आत्मा की चिंता करना अधिक श्रेयस्कर वताया गया है।"

"सांसारिकता का वोझ नहीं सहा जाता..."

"समझता हूं। घृणा को दवा पाना आसान नहीं," विशप ने सहानुभूति के साथ सिर हिलाया और फिर से थोड़ा आगे को झुककर अपनी दृष्टि मेश्कोव के चेहरे के पास ले गये और सहसा वड़े हौले से अपनी वात पूरी की: "जो है, उसे स्वीकार कर लो, वस इसी में उद्धार है।"

मेश्कोव ने गहरी सांस ली और धूप में विजली के तपे तार जैसी इस दृष्टि से वचने की कोशिश करते हुए विनम्रतापूर्वक कहा:

"इतना आत्म-वल नहीं है, महाराज!"

"तो अपनी दुर्वलता से विवश होकर यह निश्चय किया है?"

"पापी हूं, महाराज!"

"परमपिता को दुर्वलता नहीं, मन की दृढ़ता प्रिय है।"

विशप ने मानो निढाल होकर पीठ कुर्सी पर टेक ली, माला फेरनी वंद कर दी। उनकी उंगली सलीव वाले वड़े दाने पर टिकी हुई थी। सहसा उन्होंने सख्ती से पूछा:

"संसार से मन कड़वा हो गया, सो मठ में शरण लेना चाहते हो?"

"नहीं", मेश्कोव ने दृढ़तापूर्वक कहा। "मन की कड़वाहट बस जल्दी करा रही है, महाराज। इच्छा तो जवानी से ही है। उन दिनों मैं दूसरे कारिंदों के साथ मालिक के यहां रहता था। वे सब पुरातनपंथी थे, मुझे भी अपने पंथ की शिक्षा देने लगे। मैं तो उनके बहलावे में आ ही चला था, पर तभी एक भले आदमी ने सलाह दी कि मैं ऐथंस पर्वत के संत जेरोम से परामर्श मांगूं। उसका कहना मानकर मैंने चिट्ठी लिख दी, जवाब में उन्होंने मुझे हमारे आर्थोडोक्स पंथ का पालन करने का उपदेश दिया और साथ ही एक पुस्तक भी भेजी। तब से धार्मिक पुस्तकें पढ़ने लगा और मठवासी हो जाने की अभिलाषा जागी। पर उन्हीं संत से परामर्श मिला कि मां के जीते ऐसा न करूं, हां बाद में अगर प्रभु को मंजूर हुआ तो अपनी मनोकामना पूरी कर लूं। पर मां के जीते मेरा विवाह हो गया। वैसे, गृहस्थ जीवन में भी प्रभु से सदा यही प्रार्थना करता रहा कि अगर मैं विधुर हो जाऊं, तो प्रभु मुझे जीवन के अंतिम दिन मठ में काटने का अवसर दें। अब मैं विधुर हूं, नाती की मेरे सिर पर ज़िम्मेवारी थी, सो जल्दी ही उसका सौतेला पिता आ रहा है। बस अब इस संसार में मेरा कोई बंधन नहीं।"

.उसकी बात सुनकर बिशप थोड़ी देर चुप बैठे रहे, फिर बोले: "हुं! फिर क्या है? दान कर दो अपना सब कुछ और चलो मेरे साथ!"

"दान करने को तो कुछ बचा ही नहीं, महाराज," मेश्कोव के सारे बदन में मानो उत्साह की झुरझुरी दौड़ गई। "मेरे लिए जो एकमात्र मूल्यवान वस्तु बची थी–'संतों की जीवनियां'–वह मैं आपको सौंप चुका हूं और जो कुछ मेरे पास बचा है, उसे तो चाहे उठाकर घूरे पर फेंक दो।"

उसने कोठरी की दीवारों पर नज़र दौड़ाई। बिशप मुस्करा दिये।

"क्या देख रहे हो? अपनी भेंट नहीं नज़र आती? मैंने उसे आगे भेंट कर दिया है। अभी कुछ दिन पहले एक देहात का पादरी आया था, जीवन की कठिनाइयों का रोना रो रहा था, कोई पूजा-वूजा करने ही नहीं आता, जनता की उदारता का स्रोत सूख गया है। परमात्मा को भुला बैठे हैं। मुझे उस पर तरस आ गया, बोला: "ले ये जीवनियां,

ले जा, शायद ज़िले का कोई शौकीन ख़रीद ले।" खुद तो पादरी ने जाने कब से संतों की जीवनियां नहीं पढ़ी होंगी। बिल्कुल बिगड़ गया है, नाक बैंजनी हो रही है। जीवनियां भी बेचकर पी डालेगा। ख़ैर, भगवान मालिक है उसका!"

मेञ्कोव ने धीरे से सिर हिलाया।

"क्यों, अफ़सोस हो रहा है?" चुभते से लहजे में बिशप ने पूछा।

"यह सोचकर मुझे खुशी होती थी, महाराज, कि पुस्तकें आपके पास हैं।"

"देखा," बिशप ने अभी भी मुस्कराते हुए उलाहना दिया। "अपनी ही नहीं, दूसरों की चीज़ों का भी दुख है। अरे भई, जब भेंट कर दी, तो फिर क्या उसका ख्याल करना?"

"पापी हूं, महाराज।"

"यह बात है! अच्छा तो कहां जाना चाहते हो, कौन से मठ में? आजकल तो मठों का हाल भी कोई अच्छा नहीं है: हमारे संन्यासी भाई भी देखो मोर्चे के सिपाहियों जैसे एक दूसरे पर टूट पड़ेंगे..."

"ख़्वालीन्स्क के पास एक मठ है, वहीं जाने की सोच रहा हूं, महाराज। आप सलाह दें..."

"हां, जानता हूं यह मठ। सुंदर जगह है, शांत। पर वहां पुरातन-पंथी भी पास ही हैं। और वहां वाले तो हमारे संन्यासियों से तेज़ हैं। कहीं तुम्हें अपने पंथ में मिला लिया तो?" बिशप ने चुटकी ली।

"महाराज, अपने आर्थोडोक्स पंथ की रक्षा करना जानता हूं: इसी आश्रम में कभी इन पुरातनियों का मुंह काला करना सीखा था।"

"अच्छा, यही सही," बिशप ने चैन की सांस लेते हुए कहा। "प्रभु का वरदान, पा सके सो पाये! जाओ, परमात्मा तुम्हारा साथ दे।"

मेञ्कोव ने देवचित्र के सामने खड़े होकर प्रार्थना पढ़ी, फिर बिशप के सामने घुटने टेके। उन्होंने हाथ बढ़ाकर मेञ्कोव को चूमने दिया और उसे आशीर्वाद दिया। मेञ्कोव चलने को हुआ, पर फिर थम गया, बिशप के रुग्ण, लटक से गये चेहरे पर प्रश्न भरी दृष्टि डाली और यह प्रतीक्षा करने लगा कि कब वह उसे बोलने का इशारा करें।

"अब क्या परेशानी है?" उसके मन की बात समझते हुए बिशप ने पूछा।

"एक सवाल है, महाराज," मेश्कोव ने दबे स्वर में कहा, "१३३५ – इस संख्या का क्या अर्थ है?"

बिशप की पारदर्शी आंखें देर तक एकदम निश्चल रहीं, उनमें किसी तरह का ज़रा सा भी जो रंग था वह भी मानो धीरे-धीरे विलुप्त हो गया, फिर पलकें सिकुड़ते-सिकुड़ते मिच गईं, और फिर जब आंखें खुलीं, तो उनकी अंगारों सी दहकती पुतलियों ने मानो मेश्कोव को झुलस डाला।

"कहां से आये ये विचार?"

मेश्कोव ने विश्वासपूर्वक पर साथ ही अत्यंत संकोच के साथ जवाब दिया:

"एक पुस्तक पढ़ी थी, महाराज, जिसमें लोगों और साम्राज्यों के इतिहास को बाइबिल से मिलाया गया है। इस ग्रंथ के अंत में भविष्यवाणी के शब्द दिये गये हैं: 'धन्य है वह, जो सब्र करता है और एक हज़ार तीन सौ पैंतीस दिन पूरे करता है।'"

"किसने लिखा है यह ग्रंथ?"

"कोई विद्वान लगता है – वान वीनिंगेन नाम है।"

"जर्मन-वर्मन है क्या?"

"ऐसा तो कुछ नहीं लिखा। बस यही लिखा है कि पुस्तक सेंसर द्वारा स्वीकृत है।"

"हां, कोई आश्चर्य की बात नहीं है," बिशप तरसभरी आवाज़ में बोला। "सेंसर वाले तो अंधे थे, अज्ञानवश समाजवाद की किताबें भी छापने देते थे।"

"पर, महाराज, इस पुस्तक में तो समाजवाद की बुराई की गई है।"

"तो क्या हुआ, रोम के कैथोलिक पोप भी समाजवाद की खूब बुराई करते हैं।"

"लेकिन, महाराज, पुस्तक में तो पोपों को भी आड़े हाथों लिया गया है।"

"इससे भी कोई बात नहीं बनती, क्योंकि समाजवादी भी पोपों को खूब जली-कटी सुनाते हैं।"

मेश्कोव ने यों हतप्रभ होकर सिर झुका लिया कि अब बिशप पर ही यह निर्भर था कि वह या तो पथभ्रष्ट को दण्ड दें या क्षमा कर

दें। वह थोड़ी देर तक चुप रहे, जितना कि अपनी पूर्ण विजय की अनुभूति के लिए आवश्यक था, और फिर बड़े हौले से हंसकर दो-तीन बार अपने घुटनों पर माला से चोट की, मानो पीट रहे हों।

"अरे, विदेसी शैतान की हमें क्या ज़रूरत जबकि हमारा अपना ही कम नहीं," बड़े खुश अंदाज़ में उन्होंने पूछा।

फिर उनके चेहरे पर क्रोध का भाव आ गया। उन्होंने दाढ़ी का एक बाल चुटकी से पकड़ा और धीरे-धीरे उस पर उंगलियां फेरीं।

"घर जाकर आग जलाना और अपने उस बान... क्या नाम है उसका?.. उस जर्मन विद्वान को फूंक डालना," कठोर स्वर में वह बोले। "और बहुत अकलमंद मत बनो; अपनी बुद्धि से सब कुछ समझने की कोशिश मत करो, क्योंकि बुद्धि तो तुम्हारी छोटी सी ही है। भविष्यवाणियां कोई अंकगणित नहीं हैं, परमात्मा का शब्द हैं। ज़रा सोचो तो: मनुष्य कुछ समझ सकता, इसके लिए प्रभु के मेमने को मनुष्य की भाषा में बोलना पड़ा। और हमारी यह भाषा क्या है? हमारी बुद्धि की निर्बलता – यह है हमारी भाषा। परमात्मा कहता है 'एक दिन' और हम समझते हैं चौबीस घंटे। सम्भव है परमात्मा के एक दिन में हमारे सभी पूर्वजों और सभी वंशजों का जीवन ऐसे समाता हो, जैसे बादाम के छिलके में गिरी? अब समझ लो बाइबिल की संख्याएं! समझने की नहीं, आस्था रखने की आवश्यकता है। निष्कपट मन से आस्था रखो। और यह याद रखो कि स्वयं हमारे शिक्षक ने अपने द्वितीय अवतरण के बारे में क्या कहा है: 'उस दिन और उस घड़ी का ज्ञान प्रभु के पुत्र को भी नहीं है, केवल परमपिता परमेश्वर ही जानता है।'"

उन्होंने रुककर सांस ली, एक बार फिर बाल पर उंगलियां फेरीं और फिर नम्र स्वर में बात पूरी की:

"अच्छा, जाओ अब। थक गया मैं। संन्यास लोगे तो अपने गुरु को इस सेंसर द्वारा स्वीकृत विधर्मी के अपने पाप के बारे में बताना। हो सकता है, वह तुम्हें कुछ प्रायश्चित करने को कहे। मैं तुम्हें क्षमा करता हूं, जाओ। तुम्हें अभी कठोर परीक्षा से गुज़रना है। जाओ अब..."

मेश्कोव को घर लौटते हुए ऐसा लग रहा था मानो वह अपने शरीर का बोझ कहीं बहुत पीछे छोड़ आया हो। अतीत एक गहरी

खाई से अलग हो गया था, और बुढ़ापे में, जवानी की भांति आनंदमय भविष्य सहज ही सम्भव प्रतीत हो रहा था। बेशक, अतीत से कब का कुछ न बचा था, सिवाय घिसे हुए जूतों के, परन्तु अगर वह अतीत किसी चमत्कारवश फिर से जी उठता, तो मेश्कोव उसे अपना न सकता। उसने भविष्य के लिए जिस आशीर्वाद की याचना की थी और जिसे अब पा लिया था, उसका तकाज़ा यह था कि वह बीते दिनों को याद तक न करे। उसे एक नया व्यक्ति बनना ही नहीं था, उसे प्रतीत हो रहा था कि वह वैसा नया व्यक्ति बन गया है – उसने यह निर्णायक कदम इतनी श्रद्धा के साथ उठाया था कि स्वयं ही भाव-विभोर हो उठा था।

घर पहुंचते ही मेश्कोव को एक नया समाचार मिला। वैसे तो यह समाचार उसके लिए अप्रत्याशित नहीं था। साथ ही इससे उसकी मुक्ति का क्षण और निकट आता था, जो अब उसके जीवन का एकमात्र ध्येय थी। इस समाचार से वह अत्यंत प्रसन्न था, क्योंकि इससे उसके सब बंधन कट रहे थे, पर साथ ही इससे उसके मन में हल्की सी उदासी भी छा गई थी, क्योंकि इसका अर्थ था कि वह अभी अपने निकट सम्बन्धियों को छोड़ भी न पाया था, उनसे यह कह तक न पाया था कि वह उन्हें छोड़कर जा रहा है और उन्हें न उसकी सलाह की, न उसकी हमदर्दी की ज़रा भी ज़रूरत रही थी।

मेज़ पर इस्तरी किया मेज़पोश बिछा हुआ था, जिसे खास तौर पर इस मौके के लिए संदूक से निकाला गया था। चारों ओर सब कुछ इसी मेज़पोश की भांति सजल था और उमंग से वैसे ही फूला-फूला था, जैसे कलफ़ लगे मेज़पोश की उठ-उठ रही तहें।

लीज़ा श्वेत वस्त्र पहने थी। उसका सिर मानो ऊंचा उठ गया था। उसका केश-परिधान फिर से हल्का-फुल्का हो गया था। पतली सी उंगली पर एक बार फिर अंगूठी रही थी – नई-नई पतली सी, ठीक वैसी ही जैसी अनातोली मिख़ाइलोविच की उंगली पर थी। लीज़ा सारी तैयारी कर चुकी थी – मेज के चारों ओर चार कुर्सियां उनकी प्रतीक्षा में रखी हुई थीं। वीत्या नारंगी रंग की नई रेशमी कमीज़ पहने था, कमीज़ इस्तरी की हुई थी और उस पर अभी कोई दाग नहीं लगा था। अनातोली मिख़ाइलोविच ओज्नोबिशिन ने गर्मियों का हल्का कोट पहन

रखा था, जिसके पीतल के बटनों पर शाही उकाब बने हुए थे – उन पर कपड़ा चढ़ा दिया गया था।

मेश्कोव दरवाज़े पर प्रकट हुआ, तो तीनों चुप हो गये, जहां खड़े थे, वहीं खड़े रह गये। मेश्कोव ने भौंहें तानकर बेटी से पूछा:

"रजिस्टरी करा ली?"

"जी हां, करा ली।"

वह अपने कमरे में चला गया और क्षण भर बाद हथेली जितना बड़ा देवचित्र लेकर बाहर आया, जिसका तांबे का चौखटा हरा पड़ चुका था, देवचित्र लेकर उसने पहले लीज़ा को आशीर्वाद दिया, फिर ओज़्नोबिशिन को, और ऐसा करते हुए उसके मन में यह विचार उठा कि अब उसे एक ही बेटी से दूसरा दामाद मिल गया, और फिर उसने वीत्या के सिर पर हाथ फेरा।

"देखो, इन्हें अपना पिता समझना," मेश्कोव ने कहा। "इनका कहना मानना, आदर करना। अब यही घर में सबसे बढ़कर होंगे, तुम्हारी मां से भी बढ़कर। समझे? और मैं..."

"चलिये, बैठ जायें," लीज़ा बोली।

"बैठने से पहले मैं चाहता हूं कि आप लोग मेरी बात सुन लें," शनैः शनैः पर आग्रहपूर्वक मेश्कोव ने कहा। "तुमने अपनी ज़िंदगी बदल ली है, और मैंने भी बदलने का फ़ैसला किया है। बहुत पहले मैंने एक संकल्प किया था, उसे पूरा करते हुए अब मैं अपने शेष दिन मठ में बिताने जा रहा हूं। ईसा के वास्ते भूल-चूक माफ़ कर देना।"

उसने बेटी और ओज़्नोबिशिन के सामने सिर झुकाया। लीज़ा उसकी ओर ज़रा बढ़ी और असमंजस में अपने ऊंचे माथे पर हाथ फेरा।

"पिता जी, आपने पहले तो कभी इसका ज़िक्र नहीं किया..."

"सोचते ज़्यादा हैं, बोलते कम हैं। और मुंह से बात निकालकर, बात बदलते नहीं। तुम्हारी ओर से मैं निश्चिंत हूं, तुमने भले आदमी से शादी की है। वीत्या के सिर पर भी हाथ है। अब मुझे अपनी आत्मा की भी चिंता करनी चाहिए। सोते-जागते बस यही एक सोच है।"

तीनों उसकी ओर देखते रहे थे और कुछ सकुचाते हुए, मानो किसी बात पर लज्जित से चुप खड़े थे। वीत्या ने पूछा:

"नाना, अब तुम चोला पहन लोगे?"

"वीत्या!" लीज़ा बोली।

मेश्कोव ने उसांस रोकी।

"मेरा कमरा आपको मिल जायेगा," उसने ओज़्नोविशिन से कहा।

ओज़्नोविशिन ने अपनी स्त्रियों जैसी छोटी-छोटी हथेलियां रगड़ीं और झिझकते हुए कहा:

"आप, वो ... यह सब मत सोचिए। लीज़ा और मुझे कुछ ख़ास नहीं चाहिए।"

"ख़ास तो मैं कुछ दे ही नहीं सकता," मेश्कोव ने कहा। "इसीलिए निश्चिंत होकर जा रहा हूं। अच्छा चलो, अब बाकी बातें बैठकर कर लेंगे।"

उसने मेज़ पर नज़र डाली। यहां पुरानी पोर्ट वाइन की स्याह-हरी बोतल रखी थी और वोद्का की मीना झिलमिला रही थी। ऐसी सजी हुई मेज़ उन्होंने जाने कब से नहीं देखी थी, खाने की भीनी-भीनी महक उन्हें दावत दे रही थी।

"वाह, भई, वाह!" वह फुसफुसाया। "सो मैंने सोवियत ब्याह भी देख लिया।"

उसने बाहर का दरवाज़ा कसकर बंद किया और सब बैठ गये। वह नाती और बेटी के बीच बैठा।

"यह तो एक तरह से सगाई हुई," उसने कहा। "अब गिरजे में विवाह संस्कार कब होगा? संस्कार के बिना दाम्पत्य जीवन सुखी नहीं हो सकता। जब तक मैं यहां हूं, यह काम भी कर लो।"

"पर, पिता जी, ऐसे अचानक क्यों आप?" लीज़ा ने पूछा। वह अभी भी अपने आपको दोषी अनुभव कर रही थी, हालांकि ख़ुद भी नहीं जानती थी कि क्यों।

मेश्कोव ने उसका कंधा छुआ, यह एहसास दिलाते हुए कि जो अवश्यम्भावी है उसे स्वीकार ले।

"अचानक नहीं, बिटिया। आज ही मुझे अपने धर्मगुरु की अनुमति मिली है। सो बस ..." उसने फिर से मेज़ पर नज़र डाली, मुस्कराया और नीची आवाज़ में बोला: "लाओ, थोड़ी डालो तो। बस, आख़िरी बार यह पाप सही। फिर सदा के लिए ख़त्म।"

सबने आंखों के इशारे से एक दूसरे को प्रोत्साहन दिया और चुपचाप पी ली। वे यह भूल ही चुके थे कि कब ऐसी दावत हुई थी, सो पूर्णतः

इसके रसास्वादन में लीन हो गये। वीत्या ने चटखारा भरा, उसने पहली बार पोर्ट वाइन चखी थी।

"कहां से ले आये यह सब?" मेश्कोव ने विस्मय के स्वर में पूछा और ओज़्नोविशिन को प्रशंसा की दृष्टि से देखा। "वाह, जान आ गई। बिल्कुल पहले जैसा स्वाद है, है नहीं?.. अच्छा, आप तो वकील हैं, एक बात बताइये। आजकल तो सबके लिए काम करना ज़रूरी है, तो फिर मैं कैसे नौकरी छोड़ूं कि कोई परेशानी न हो?"

"बीमार पड़ना होगा।"

"हां, वो तो मैंने सोचा था। पर कौन सी बीमारी पकड़ूं?"

"इसका जवाब तो डाक्टर दे सकता है, वकील नहीं।"

"पर अगर मैं अपनी ढलती उम्र में भी बिल्कुल स्वस्थ हूं, तो?"

"आप ऐसे डाक्टर के पास जाइये, जो यह मानता है कि बिल्कुल स्वस्थ व्यक्ति होते ही नहीं।"

"जो सबको जन्म से ही रोगी समझता है?"

"जो यह मानता है कि आवश्यकता होने पर किसी को भी रोगी माना जा सकता है।"

"जो यह मानता है?" मेश्कोव ने आंख मारी और अंगूठे को तर्जनी से यों रगड़ा मानो नोट गिन रहा हो।

"बिल्कुल," ओज़्नोविशिन ने भी उसी लहजे में हामी भरी और मीना की ओर हाथ बढ़ाया।

मेश्कोव को अचानक ही सरूर आ जाता था। वह कभी भी यह तय नहीं कर पाता था कि किस क्षण अपने पर नियंत्रण खो बैठता है। एक छलांग में वह रोज़मर्रा की ज़िंदगी से एक विशिष्ट संसार में जा पहुंचता, जहां सभी रंग पारभासी होते, रंगीन कांच की भांति। और यह संसार उसे कुछ करने की अल्हड़ चुनौती देता।

लीज़ा बचपन से ही परिचित लक्षणों से यह क्षण निर्धारित कर लेती थी: मेश्कोव के नथुने फड़कने लगते थे, और वह उंगलियों के झटकों से अपनी दाढ़ी को इधर-उधर यों छिटकाने लगता था, मानो वह आहत हो और साथ ही रोष में भी। लीज़ा ने मीना परे हटा दी। मेश्कोव ने चुपचाप तिरछी नज़रों से बेटी की ओर देखा। फिर मानो अपनी सफ़ाई देते हुए बोला:

"अभी तो मैंने संन्यास नहीं लिया है, अभी लोभ, मोह का दास हूं। मठ में जाकर संसार के बंधनों से मुक्त हो जाऊंगा, तब सच्ची मुक्ति का आनंद पाऊंगा।"

"आपका कहना सही है," ओज़्नोबिशिन ने हामी भरी। "सच्ची मुक्ति इसी में है कि इन्सान अपने आप से मुक्त होता है।"

"पर क्या यह सही है कि अपने आप से मुक्त होता है?" मेश्कोव ने संशय प्रकट किया।

"मेरे ख्याल में सही है। क्योंकि धार्मिक व्यक्ति अपने आपको पूरी तरह प्रभु की इच्छा पर छोड़ देता है।"

"बिल्कुल। इन्सान अपनी इच्छा अपने गुरु की इच्छा के सुपुर्द कर देता है, और गुरु के रूप में परमात्मा की इच्छा को स्वीकार करता है। अतः यही कहना सही होगा कि इन्सान अपनी इच्छा से मुक्त होता है, न कि अपने आप से। अपने आप से तो हम मृत्यु के साथ मुक्त होंगे। अपने नश्वर शरीर से मुक्त होंगे।"

मेश्कोव स्वयं अपने तर्ककौशल पर विमुग्ध हो रहा था, उसने वोद्का की ओर हाथ बढ़ाया। पर लीज़ा ने पहल करके उसका जाम अधूरा भर दिया। उसने अपनी घनी भौंहें फैलाईं और फिर सिकोड़ीं।

"तुम क्या पिता पर हुक्म चलाना चाहती हो," उसने अपने आक्रोश को दबाते हुए कहा।

पर तभी किसी ने दीवार पर दस्तक दी और दरवाज़े के बाहर कोई खांसा। यह दीवार बड़े कमरे को उस गलियारे से अलग करती थी, जो मकान के नये निवासियों के रास्ते के लिए बनाया गया था। दीवार बिल्कुल पतली सी थी, सो दस्तक की आवाज़ उनके वार्तालाप में धमाके की तरह गूंजी। लीज़ा ने दरवाज़ा थोड़ा सा खोला।

बाहर गलियारे में बूढ़ा कारीगर मत्वेई खड़ा था, जो अब इसी घर के एक कमरे में रहता था। उसकी काम करने की छोटी सी ऐनक नाक पर खिसक आई थी और उसके ऊपर से नज़र ताक-झांक करने के लिए नहीं, बस यों ही कमरे में पड़ रही थी। वह धीमी आवाज़ में लीज़ा से कुछ कह रहा था।

"पिता जी, कोई फ़हरिस्त-वहरिस्त बनाने आये हैं," पिता की ओर सिर घुमाकर लीज़ा ने कहा।

2*

"फ़हरिस्त? कैसी फ़हरिस्त?" मेश्कोव ने पूछा। गुस्से से भरकर उठते-उठते उसने वोद्का का अधूरा जाम पूरा भरा और गटाक से पी लिया।

वेटी को दरवाज़े से हटाते हुए उसने एक झटके से ठोड़ी के ऐन बीच से दाढ़ी को दो हिस्सों में छिटक दिया।

"कैसी फ़हरिस्त?" एक बार फिर वह बोला। "फ़हरिस्त बनाने को कुछ बचा भी है?"

"मकानों की फ़हरिस्त बना रहे हैं," अलसाई आवाज़ में मत्वेई ने जवाब दिया। "जानना चाहते हैं कि रिहायशी क्षेत्रफल कितना है। मैंने कहा आपको कमरों की लम्बाई-चौड़ाई पता होगी।"

"आपसे कहने को किसने कहा था?"

"कहने की बात ही क्या है? बजाय इसके कि लोग फ़ीता लेकर नापते फिरें, आप बता दीजिये और बात खत्म।"

"क्यों न नापते फिरें? इस काम की ही तो उन्हें तनख्वाह मिलती है? नापने दो उन्हें।"

"ऐसे काम जल्दी हो जाता, नहीं तो उन्हें एक-एक कमरे का चक्कर लगाना पड़ेगा।"

"तो मैं क्या करूं? घर तो मेरा नहीं है।"

"ठीक है, ठीक है, मेरकूरी अव्देयेविच," बूढ़ा हंस दिया, "पर आपकी ही दावत में विघन पड़ेगा।"

"दा-वत?" मेश्कोव धीरे से बोला। कमरे में पड़ती बूढ़े की नज़र के सामने वह दीवार बन जाना चाहता था, जहां तक बन पड़ता था, पंजों के बल ऊपर उठ गया था। "दा-वत?" एक-एक अक्षर पर ज़ोर देते हुए उसने फिर कहा। "अच्छा! यह दिखा है तुम्हें यहां! दावत! इसीलिए दूसरों के दरवाज़े में ताक-झांक हो रही है!"

"ताकना क्या है, सारे घर में तो ठर्रे की बू फैल रही है," मत्वेई ने घिन के साथ सिर झटकाया।

"ठर्रे की?" मेश्कोव की ऊंची उठती आवाज़ में धमकी थी। "जी नहीं, श्रीमान, माफ़ करना!"

"पिता जी!" लीज़ा ने उसे टोका।

पर उसे मानो यही चाहिए था कि कोई उसे टोके। वह गला फाड़कर चिल्लाया:

"ठर्रा नहीं, साफ़ वोद्का है! ज़ार के ज़माने की वोद्का! सुन लिया? जा, अब दौड़के, कर दे रपट कि मेश्कोव तेरे ठर्रे की जगह ज़ार की वोद्का पीता है। जा, जा, दौड़के जा, कर दे रपट, वेहया बुड्ढा!"

"धत् तेरे की, खुद तू वेहया वुड्ढा है!" बूढ़ा घूम गया, उसने झटके से नाक से ऐनक उतारी और गलियारे में चल दिया।

"जा, जा, दौड़के जा," मेश्कोव चिल्लाये जा रहा था। उसने दरवाज़े को धम से वंद कर दिया था और अव पंजों पर उचक-उचककर गुस्से में कमरे के एक कोने से दूसरे कोने तक का चक्कर काट रहा था। "जा, जा वता दे सवको कि मेश्कोव ने ज़ार की मोहर वाली वोद्का छिपा रखी है! मेश्कोव दावतें उड़ाता है! शादी के जशन मनाता है! और अपने फटीचर पड़ोसियों को, इन कंगालों को दो वूंद भी नहीं देता! जा, जा, दौड़के जा, दौड़के!"

वूढ़े ने ज़ोर से दीवार पर ठोकर मारी और गलियारे में गरजा:

"अरे क्यों आसमान सिर पर उठाता है! सवको पता है तेरी असलियत क्या है!"

मेश्कोव दीवार पर मुक्के मारने लगा:

"तेरी यह मजाल! तू अपनी असलियत देख! तू पराये घर में घुस आया है! तू दूसरों के यहां ताक-झांक करता फिरता है! किसने मेरा सव कुछ लूटा है? किसने मुझे भूखे-नंगों के वरावर कर दिया है? सव तेरे हथकंडे हैं, तुम सव चोर-उचक्कों के। सव कुछ छीन लिया, आखिरी रद्दी वांड तक! खुद ही अपनी 'स्वतंत्रता ऋण' छापे ठगों ने, खुद ही वेचे और खुद ही वापस ले लिये! अभी भी कमवख्तों का जी नहीं भरा। घूमते-फिरते हैं, ताक-झांक करते हैं, और क्या फ़ीते से नापने को रह गया है, और क्या हथिया लें, क्या छीन लें! ठीक है, नोच लो मेश्कोव को, वोटी-वोटी नोच लो! कलेजा चीर डालो मेश्कोव का! तुम्हारा कोई भला नहीं होने का! पराया धन किसी को नहीं फलता! वन पाये तुम अमीर! मालिक वनने चले हैं!"

वह दौड़के मेज़ तक गया, वोद्का का पूरा जाम भरा, गले में उंडेल लिया, मुंह खोले हवा खींचता खड़ा रहा और सहसा कुर्सी पर ढह गया।

लीज़ा इस सारे वक्त खिड़की की ओर मुंह किये खड़ी थी। एक जमाना था जब पिता के यों चीखने-चिल्लाने पर वह भयभीत हो जाती थी। उसे लगता था कि क्रोध में आकर उसका बाप थप्पड़ मार सकता है, पीट सकता है, जान तक से मार डाल सकता है। अब उसे ज़रा भी डर नहीं लग रहा था। पिता पर रहम से उसका दिल दुख रहा था। पिता की बेबसी भी उसे तुच्छ लग रही थी और उस पर शर्म आ रही थी। उसे याद आया कि सपने में उसने पिता को किस रूप में देखा था – मरियल और दब्बू सा। उसे मदद करनी चाहिए थी, परन्तु पिता के प्रति पुरानी विरक्ति उसे ऐसा करने से रोक रही थी। वह इतना दुर्बल और दयनीय था और लीज़ा की अपनी श्रेष्ठता उसके लिए बोझिल पड़ रही थी, और वह पिता के लिए कुछ नहीं कर सकती थी। इस वक्त पिता पर तरस के साथ-साथ उसे झुंझलाहट भी हो रही थी, क्योंकि वह ओज़्नोबिशिन के सामने शर्मिंदा थी। बाप ने जो बवेला खड़ा किया था, उससे उसके मन में टीस उठ रही थी, पर वह यह नही सोच रही थी कि वह क्यों चीख-चिल्ला रहा है। वह केवल अपने पति के बारे में सोच रही थी, जो इस दिन से उसके पारिवारिक जीवन का एक अंग बननेवाला था और जो अब इस ख्वामख्वाह के शोर से, ऐसे भोंडे तौर पर इस घर का सदस्य बन रहा था। मुड़कर देखे बिना ही, मानो अपनी पीठ से ही वह महसूस कर रही थी कि ओज़्नोबिशिन किंकर्तव्यविमूढ़ सा खड़ा है।

अचानक सन्नाटा छा जाने पर उसकी यह जड़ता खत्म हुई और सिर घुमाने पर उसने देखा कि उसका बाप कोहनियां मेज पर टिकाने की कोशिश कर रहा है और बुदबुदा रहा है:

"मैंने इनका क्या बिगाड़ा है? क्यों इन्होंने मुझे अपराधी बना दिया है? क्यों मेरे पीछे पड़े हुए हैं? क्यों मुझे यों नीचा दिखा रहे हैं? क्या मेरा काम इनसे बुरा था? हर काम आदमी पेट भरने के लिए करता है। क्यों मेरे दाने पर इनकी भूखी नजरें हैं?"

"धीरज रखिये," ओज़्नोबिशिन ने बर्तनों को चुपके से बूढ़े की लड़खड़ाती कोहनियों से दूर करते हुए कहा।

सहानुभूति पाकर मेरकोव तुरंत ही पसीज गया, उसकी आंखें डबडबा आईं और ज़ुबान पर उसका बस और भी कम हो गया:

"पाप हो गया, मुझसे ... पाप हो गया ... प्रायश्चित्त करूंगा ... दिन-रात प्रभु की प्रार्थना करूंगा ... माफ़ कर दो मुझ किस्मत के मारे को ... मैं चला जाऊंगा ... तुम चैन से रहना! पुराने ज़माने में जैसे बूढ़े उत्तर के जंगलों में चले जाते थे ... वैसे ही मैं भी ... बनवासी हो जाऊंगा ... हाय, वीत्यां, तुझे कैसे छोड़ जाऊंगा! मुझे माफ़ कर दो ... मरते दम तक प्रभु से तुम्हारे लिए प्रार्थना करूंगा ... हे, प्रभु, क्षमा करो ..."

उसका सिर मेज़ के सिरे से जा टकराया।

लीज़ा ने वीत्या की ओर देखा। उन्होंने मेश्कोव को उठाया और उसके कमरे में ले चले। वह ज़रा भी भारी नहीं था, ढुलमुल सा और अजीब ही छोटा सा। उन्होंने उसे बिस्तर पर लिटा दिया। वह बार-बार वीत्या को पकड़ने की कोशिश कर रहा था, आख़िर उसने नाती का गाल चूम लिया। वीत्या ने उसके जूते उतारे, हाथ झाड़े और गाल पोंछा। उसने नाना को कभी भी ऐसा नहीं देखा था और अब उसे पहली बार अपनी श्रेष्ठता की अजीब सी, बोझिल अनुभूति हुई। उसने अपनी नारंगी आतलसी कमीज़ झटकी और उस पर नज़र दौड़ाई। कमीज़ पर सिलवटें पड़ गई थीं, पर वह साफ़ थी। लीज़ा ने पिता को कम्बल ओढ़ा दिया और वे उसे अकेला छोड़कर बाहर आ गये।

ओज़्नोबिशिन हिचकिचाते हुए पत्नी के पास आया और उसके कंधों पर अपनी बांह रखी। वह उसकी ओर देखने का साहस नहीं जुटा पा रही थी। आखिर बोली:

"पिता जी पर नाराज़ मत होना ... वैसे तो वह अच्छे आदमी हैं। बस ... अपना हुक्म चलाने की आदत है ..."

"मैं कतई नाराज़ नहीं," ओज़्नोबिशिन ने कहा। वह जल्दी से जल्दी पत्नी को दिलासा देना चाहता था। "जिस आदमी में अहं हो, उसी के लिए झुकना मुश्किल होता है, उसके लिए नहीं, जिसका कोई अहं ही नहीं। समझने की बात है।"

सहसा वह उससे दूर हो गई, गुस्से से एक गहरी उसांस भरी। अपनी इस खीज पर शर्मिंदगी से उसका चेहरा लाल हो गया:

"ओह, कैसा अहं! वह तो बस अपने अलावा और किसी को सह ही नहीं सकते!"

वह मेज़ के पास बैठ गई और देर तक वीत्या पर नज़रें टिकाये बैठी रही और फिर चैन की सांस ली:

"शुक्र है, हमें छोड़कर जा रहे हैं।"

१६

आंसुओं से भीगा चेहरा लिये अल्योशा लिलक की झाड़ियों में घास पर लेटा हुआ था। दोरोगोमीलोव के झाड़-झंखाड़ भरे बाग के हर कोने को वह अच्छी तरह जानता था, फिर भी हर बार वह यहां एक नयापन पाता था, जिससे उसका मन खुश हो उठता था। यहां वह बड़ों से वैसी बातचीत करता था, जिसके लिए और कहीं साहस नहीं जुटा पाता था।

पान की शक्ल की सख्त पत्तियों के नुकीले सिरे उसके गालों को छू रहे थे। उसे लग रहा था कि पत्तियां इस तरह चूमकर उससे सहानुभूति दिखा रही हैं। यहां हर चीज़ में अपनापन था – जड़ों से फूटकर निकले नये अंकुर नन्हे वृक्षों से लगते थे, पतंगों के लाल परों पर काली-काली आंखों वाले बूढ़ों के से चेहरे बने लगते थे, मैलो की कच्ची, दूधिया फलियां उसे रात को पहनने की क़मीज़ के कपड़े के बटनों जैसी लगती थीं।

पत्तियों की छाया में इस एकांत जगत से कहा जा सकता था – देखो, तुम अल्योशा का दर्द समझते हो, तुम्हें उससे सच्चा प्यार है, वैसे ही जैसे वह तुम्हें जी-जान से चाहता है। पर क्या पापा को अल्योशा से प्यार है? ज़रा भी नहीं!

दूसरी बार आर्सेनी रोमानोविच ने उसे वोल्गा पर ले चलने को कहा है। और दूसरी बार पापा ने मना कर दिया है। उसने सारी बंसियां देख-दाखकर तैयार कर रखी थीं। सारी जालियां ठीक-ठाक कर ली थीं। वीत्या नये कांटे भी ले आया था – बिल्कुल छोटे-छोटे भी और ओल्गा अदामोव्ना की बालों की सूइयों जितने बड़े भी। सारी तैयारी हो चुकी थी। और फिर से पापा ने मना कर दिया!

आर्सेनी रोमानोविच ने उसे कितना अच्छा तिरेंदा दिया था! माही का इतना लम्बा धारीदार कांटा! एक धारी काली, एक सफ़ेद, एक काली, एक सफ़ेद। सारी वोल्गा पर किसी के पास ऐसा तिरेंदा न

मिले। हां, कांटे के एक सिरे पर छेद हो गया था। और अगर छेद में से कांटे में पानी भर गया, तो तिरेंदा डूब जायेगा। पर आर्सेनी रोमानोविच ने अटारी पर मधुमक्खियों के छत्ते का चौखटा ढूंढ़ लिया था और वह छेद में मोम भर देना चाहते थे। वैसे तो मोम पड़ा-पड़ा चकमक सा सख्त हो गया था। पर आर्सेनी रोमानोविच के पास स्पिरिट लैम्प है, उस पर मोम पिघलाया जा सकता है। हां, स्पिरिट अभी नहीं है, सो लैम्प जलता नहीं। पर मिट्टी के तेल से भी काम चलाया जा सकता है। अभी थोड़े दिन पहले ओल्गा अदामोव्ना कहीं से मिट्टी का तेल खरीद लाई थीं और अल्योशा को पता था कि उन्होंने उसे कहां छिपा रखा है।

अल्योशा की सारी मुसीवतों की जड़ ओल्गा अदामोव्ना ही हैं। वही हर वक्त आर्सेनी रोमानोविच की चुगली करती रहती थीं: बुड्ढा वेचारे अल्योशा को विगाड़ डालेगा! ज़रूर उन्हें आर्सेनी रोमानोविच से जलन होती होगी, तभी ऐसे कहती फिरती हैं! आखिर वह आर्सेनी रोमानोविच का मुकावला थोड़े ही कर सकती हैं! उनका मुकावला कौन कर सकता है! मां को छोड़कर दुनिया में अगर सवसे प्यारा कोई है तो आर्सेनी रोमानोविच ही। यदि अल्योशा से कोई पूछे कि वह वड़ा होकर क्या वनना चाहता है, तो वह जवाव देगा: आर्सेनी रोमानोविच।

वह सारे जीवन भर आर्सेनी रोमानोविच जैसा ही होना चाहता है, पर मन ही मन समझता भी है कि वह कभी ऐसा नहीं वन पायेगा। भला वह कभी हर चीज़ के वारे में इतना कुछ जान पायेगा, जितना आर्सेनी रोमानोविच जानते हैं? कहां से उसके पास ऐसा घर, ऐसा वाग और वे ढेर सारी चीजें आयेंगी, जिनसे गलियारा भरा हुआ है? और वह ठीहा? वह डूवतों को वचाने का चक्का? भला अल्योशा के पीछे लड़के ऐसे झुंड वनाकर चला करेंगे? और क्या कभी उसे ऐसी नौकरी मिलेगी, जैसी आर्सेनी रोमानोविच की है? पापा को देखो न, उनकी तो कोई नौकरी है ही नहीं। मन तो उनका भी करता होगा। और आर्सेनी रोमानोविच की टोपी? उनकी दाढ़ी? अल्योशा भला कहां ऐसी दाढ़ी वढ़ा पायेगा!

नहीं, अल्योशा भली भांति समझता है कि वह कभी आर्सेनी रोमानोविच नहीं वन पायेगा। वह तो वस दूसरे लड़कों की तरह उनके

साथ रहना चाहता है। टीलों पर, नदी किनारे घूमना चाहता है। आज़ाद, निडर होकर और सदा, सदा!

अल्योशा के आंसू सूख गये थे। उसने चेहरा पोंछा और मैलो की बटनों जैसी फलियां तोड़कर वहीं बाग में खा लेने का फ़ैसला किया, ताकि कोई उसे देख न ले। नहीं तो सबको अल्योशा के पेट की चिंता होने लगेगी। अभी उस दिन ओल्गा अदामोव्ना बाज़ार से मीठी, काली बेरियों का कसोरा खरीद लाई थीं। अल्योशा खाने बैठा ही था कि पापा ने कसोरा उठाकर कूड़े की बाल्टी में फेंक दिया। "देवी जी, अगली बार आप खट्टी बेरियां ले आना, उनसे जल्दी हैज़ा हो जायेगा!" गुस्से में उन्होंने कहा था।

पापा यों भी हर बात से डरने लगे थे। कभी वह कहने लगते कि वे सब भूखों मर जायेंगे। या उदास होकर ठंडी सांस भरते: "आस्या, यहां किसी को हमारी ज़रूरत नहीं है।" या कभी ऐसी बात कहते, जो अल्योशा बिल्कुल ही न समझ पाता: "अल्योशा तो शायद बुढ़ापे में कुछ देख ले, पर आस्या, हम तुम कुछ नहीं देख सकेंगे।"

"पापा, अगर तुम्हें ठीक दिखाई नहीं देगा, तो ओल्गा अदामोव्ना जैसी ऐनक खरीद लेना," तब अल्योशा ने कहा था।

"वाह रे, मेरे बुद्धू," पापा ने जवाब में कहा था।

ये सब बातें याद करते हुए अल्योशा ने आखिरी फलियां खा लीं और झुरमुट में से निकलकर पगडंडी पर आया। यहां उसने सिर उठाया और सहसा ऊपर गलियारे की खुली खिड़की में फ़ौजी को देखा, जो बाग की ओर पीठ किये खड़ा था। उसकी छोटे-छोटे बालों वाली गुद्दी और एकदम सपाट पीठ देखकर वह तुरंत ही उसे पहचान गया और तुरंत ही सहम गया।

हाथ झाड़कर वह घर की ओर भागा। उसका जूता उतर गया, दौड़ते-दौड़ते ही वह जूते के पिछल्ले को मलते हुए पंजा घुसाने की कोशिश कर रहा था। वह बेहद जल्दी में था। दिल की धड़कन उसके कानों में गूंज रही थी।

गलियारे में पापा और मां ज़ूबिन्स्की से बात कर रहे थे।

"जी, मैंने कहा न, मामला तय हो चुका है," ज़ूबिन्स्की विनम्रतापूर्वक कह रहा था।

"पर यह तो हमारी सारी ज़िंदगी का सवाल है," मां ने हौले से जवाब दिया और अपनी असाधारणतया बड़ी आंखों से ज़ूबिन्स्की की ओर देखा।

"मुझे अफ़सोस है। मैं समझता हूं, यह घोर असभ्यता है। किन्तु मैं क्या कर सकता हूं? मोर्चों पर स्थिति ऐसी है कि क्षमा कीजिये, शैतान जाने क्या से क्या हो जाये! मैं तो आज्ञा का पालन कर रहा हूं। परसों मकान खाली हो जाना चाहिए। इसे फ़ौजी महकमे के नाम कर दिया गया है। आप कृपया नागरिक दोरोगोमीलोव से कह दीजिये कि यह निर्णय अंतिम है।"

ज़ूबिन्स्की ने एड़ियां बजाईं, टोपी पहनी और सल्यूट मारा।

अब फिर से, दूसरी बार अल्योशा ने सीढ़ियों पर उसके भारी बूटों की पटापट सुनी।

पापा चुपचाप गलियारे में से कमरे में चले गये। अल्योशा चुपके से दरवाज़े के पास सरक गया और सांस रोके खड़ा हो गया। दौड़कर आने से अभी तक उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था। अभी तक उसका डर दूर नहीं हुआ था। ज़ूबिन्स्की के शब्द—अंतिम निर्णय—घंटे की घनघनाहट की तरह धीरे-धीरे हवा में विलय नहीं हुए थे, बल्कि उनकी गूंज बढ़ती जा रही थी, मानो कोई इंजन चला आ रहा हो। इंजन अब सड़क पर बढ़ रहा है। अब वह बाग में घुस आया है और पेड़ों को कुचल रहा है। वह घर में घुस आया है और गलियारे में आर्सेनी रोमानोविच की इतनी अच्छी, प्यारी-प्यारी चीज़ें रौंद रहा है। अभी उसके भार से अल्योशा के पैरों तले फ़र्श ढह जायेगा।

"यह बात है!" खामोशी को चीरती पापा की तीखी आवाज़ आई। उन्होंने मुड़कर मां की ओर देखा और क्षण भर बाद चिल्लाये:

"ऐसे मत देखो अपनी इन कासनी आंखों से!"

अल्योशा ने पहले कभी पापा को यों चिल्लाते नहीं सुना था।

पापा ने तम्बाकू की डिबिया उठाई, धम से पलंग पर बैठ गये और कांपती उंगलियों से सिगरेट बनाने लगे। मां उनके पास गईं, उनके सिर पर हौले से हाथ फेरा, जैसा अल्योशा को फुसलाने के लिए किया करती थीं।

"निराश मत होओ," वह बोलीं। "मेरी बात मानो। अभी उस जल्लाद इज़्वेकोव के पास जाओ। उससे बात करो, हमारी हालत की तस्वीर खींचो।"

"तस्वीर खींचो!" पापा ने मां की नक्ल उतारी। "अब तस्वीर खींचने का नहीं, हथौड़े मारने का वक्त है। फिर भी कोई नहीं सुनेगा... मैं उस छोकरे के सामने ज़लील होऊं? हमारी हालत! यह हालत नहीं है, यह अनर्थ है! समझीं?! हमारे लिए यह प्रलय है! कफ़न है! कब्र है! सूली है! मौत है!"

"ज़लील होने का क्या मतलब?" मां बोलीं। "जब बारिश हो रही हो, तो तुम छाता खोलते हो। इसका मतलब यह नहीं कि तुम बारिश के सामने ज़लील हो रहे हो।"

पापा उछलकर खड़े हो गये, फिर क्षण भर खड़े रहकर शांत स्वर में बुदबुदाये :

"मेरी टोपी कहां है?"

उन्होंने बाल्टी में से चुल्लू भर पानी लेकर छिड़क दिया और गीला हाथ बालों पर फेरा, कंघी की, टाई ठीक की। फिर मां का हाथ पकड़कर देर तक अपने होंठ उस पर रखे रहे।

"अच्छा, नाराज़ मत होना," अस्फुट स्वर में उन्होंने कहा।

गलियारे में बेटे पर उनकी नज़र पड़ी। अल्योशा दरवाज़े में से सरककर मां के पास जाना चाहता था। पर पापा ने उसे पकड़ लिया, छोटे बच्चे की तरह कोहनियों से उसे सिर के ऊपर उठा लिया, फिर थोड़ा नीचा करके माथा चूमा। अल्योशा का कलेजा बल्लियों उछलने लगा, उसने पूछा :

"पापा, पापा, आप सचमुच आर्सेनी रोमानोविच को वह अंतिम निर्णय की बात नहीं बतायेंगे न? है, न?"

पापा ने उसे फ़र्श पर खड़ा कर दिया।

"जा, मां तुझे सब कुछ समझा देंगी..."

बाहर सड़क पर अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच पास्तुख़ोव को अजीब सा लग रहा था। लोगों की ओर उसका ध्यान आकर्षित नहीं हो रहा था, गर्मी भी उसे महसूस नहीं हो रही थी, यहां तक कि उसकी घ्राण-शक्ति भी मंद पड़ गई लगती थी। उसके लिए सब कुछ एक विचार में सीमित होकर रह गया था और यह विचार एक शूल की भांति मन में चुभ रहा था। उसने इसे "मृत्यु दण्ड सुननेवाले व्यक्ति की अंतिम घड़ी" की संज्ञा दी। एक ओर एक यथार्थ था, जिसका

महत्व सबसे बढ़कर था, दूसरी ओर, इस यथार्थ का कोई अर्थ ढूंढ़ पाने की उत्कट इच्छा थी – यही दो बातें एक साथ उसके दिमाग पर हावी थीं। यथार्थ यह था कि उसे मृत्यु दण्ड सुना दिया गया था। इस यथार्थ में कुछ अर्थ ढूंढ पाने के प्रयासों से उसके मस्तिष्क में अंतर्विरोध की लहरें रह-रहकर उठ रही थीं: कभी वह इस दण्ड को स्वीकार कर लेता और कभी उस पर भड़क उठता।

गृहयुद्ध भी एक यथार्थ था। इस युद्ध के अलग-अलग ब्योरों पर विचार किये बिना पास्तुखोव उन्हें अभिन्न समग्रता में देखता था, ठीक वैसे ही जैसे "मृत्यु" शब्द में ही दण्डप्राप्त व्यक्ति जीवन से बिछुड़ने के दसियों ब्योरे देखता है।

वह नगर की शांत सड़कों पर चला जा रहा था, पर पास ही कहीं, गलियों-सड़कों के पार उसे निरंतर बढ़ते कोलाहल का आभास हो रहा था। लगता था मानो जुलाई का ज्वालामुखीय विस्फोट नगर की बेखबर शांति भंग करने बढ़ता चला आ रहा है।

जुलाई में व्रांगेल की काकेशियाई सेना वोल्गा के तट पर धीरे-धीरे कमीशिन नगर की ओर बढ़ती चली आ रही थी। एक महीने से भी कुछ पहले ही येकातेरीनोदार में दक्षिणी रूस की सेना के नाम जारी किये गये आदेश में देनीकिन ने कोल्चाक को रूस का सर्वोच्च शासक स्वीकार कर लिया था, और इसके उत्तर में सर्वोच्च शासक ने जनरल को "गहरे आभार" का तार भेजा था। पूर्वी और दक्षिणी रूस की प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों के इस प्रकार मिल जाने के शीघ्र ही बाद देनीकिन अधिकृत नगर त्सरीत्सिन पहुंचा। वहां अपनी फ़ौजों की परेड के बाद उसने एक नये आदेश पर हस्ताक्षर किये, जो आत्मविश्वास भरे इन आडम्बरपूर्ण शब्दों के साथ आरम्भ होता था: "रूस के हृदय – मास्को – पर अधिकार करने के अंतिम लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए हम आदेश देते हैं..."

इस आदेश में प्रत्येक श्वेत जनरल के अलग-अलग कार्यभार विस्तार-पूर्वक निर्धारित किये गये थे। यह आदेश पढ़कर बेबस ही तोलस्तोय के 'युद्ध और शांति' के जनरल प्फ़ूल की याद आती थी, रूसी जनरल की बेढब सिली वर्दी पहने उस जर्मन विद्वान की, जो रणक्षेत्र के मानचित्र का अध्ययन करते हुए सैद्धांतिक योजनाएं बनाने में ही निपुण था। इस आदेश के अनुसार व्रांगेल को सरातोव – र्तीश्चेवो – बलाशोव के

मोर्चे पर निकलना था तथा पेंज़ा और नीज्नी नोवगोरोद से होते हुए मास्को की ओर बढ़ना था। सिदोरिन को वोरोनेज – कोज़्लोव – र्याज़ान की दिशा में तथा येलेत्स – कशीरा की दिशा में हमला करना था। माइ-मायेव्स्की को कूर्स्क – ओर्योल – तूला होते हुए मास्को पर धावा बोलना था। दक्षिण में कीयेव और ख़ेर्सोन, निकोलायेव और ओदेस्सा पर कब्ज़ा करने का लक्ष्य रखा गया था।

परन्तु उधर फ़्रूंज़े ने वसीली चपायेव को उराल्स्क पर कब्ज़ा करने का आदेश दिया था, और देनीकिन का 'मास्को आदेश' जारी किये जाने के एक दिन पहले ही चपायेव की फ़ौजें उराल्स्क की ओर बढ़ने लगी थी। कज़्ज़ाकों की हार हुई और पांच दिन बाद वे दक्षिण की ओर भाग चले। इसके और पांच दिन बाद फ़्रूंज़े के आदेश के अनुसार निर्धा-रित तिथि को चपायेव ने उराल्स्क पर पड़े सफ़ेद गार्डों के घेरे को तोड़कर अपने रिसाले के साथ नगर में प्रवेश किया। इसके चौबीस घंटे बाद ही पूर्वी मोर्चे पर लाल सेना को एक और विजय प्राप्त हुई: ज़्लातोऊस्त नगर पर अधिकार कर लिया गया, जबकि उराल पर्वतों के पार खदेड़ दिये गये कोल्चाक के सफ़ेद गार्ड साइबेरिया में पीछे हटने लगे।

रात्रि के अंधकार में जंगल में भटकता व्यक्ति यह जानता है कि कहीं प्रकाश है, खुला रास्ता है। परन्तु इस ज्ञान से उसकी यह अनुभूति दूर नहीं होती कि वह अंधकार में है और बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं है। पास्तुख़ोव को उराल्स्क की ख़बर मालूम थी, ज़्लातोऊस्त के बारे में भी उसने सुना था। उसे यह भी पता चल गया था कि लाल गार्ड त्सरीत्सिन पर जवाबी हमला करने की तैयारी कर रहे हैं। किन्तु अपनी सभी इंद्रियों से उसे सरातोव के पास ही पास आते जा रहे मोर्चे की घुटन की ही अनुभूति हो रही थी। युद्ध ज्वार की भांति नगर पर चढ़ता चला आ रहा था, नगर के सिंहद्वार पर युद्ध की तूती बज रही थी, युद्ध पास्तुख़ोव पर टूट रहा था, पास्तुख़ोव पर, उसकी आस्या और अल्योशा पर, गिलास में सजाये उसके फूलों पर, उसकी हस्तलिपियों, उसके विचारों पर, भविष्य की उसकी आशाओं पर, उसके सारे जीवन पर। इतिहास ने, समय ने, कैलंडर ने, घड़ी की सूइयों ने पास्तुख़ोव को युद्ध की सज़ा सुना दी थी। मृत्यु दण्ड सुना दिया था। यह एक यथार्थ था।

इस यथार्थ में भला कोई अर्थ कैसे ढूंढ़ा जा सकता था? क्योंकर अलेक्सान्द्र पास्तुख़ोव उस युद्ध में जान गंवाये, जिसका उसने आह्वान नहीं किया था, जिसे वह नहीं चाहता था, जिससे वह दूर-दूर ही रहने की कोशिश करता आया था? आखिर दण्ड तो अपराध के लिए, दोष के लिए, उल्लंघन के लिए दिया जाता है। उसने जीवन की किस सीमा का उल्लंघन किया है? उसका दोष क्या है? वह क्रांतिकारी लाल पक्ष का नहीं है, इसलिए उसे प्रतिक्रांतिकारी सफ़ेद पक्ष का माना जायेगा। वह सफ़ेद पक्ष का नहीं है, इसलिए उसे लाल पक्ष का माना जायेगा। उसे इसीलिए सज़ा सुनाई गई है कि वह न लाल है, न सफ़ेद। पर क्या सारी दुनिया या लाल है, या सफ़ेद? अगर पास्तुख़ोव पीला है तो? मार डालो उसे! नीला है तो? तो भी मार डालो! पर पीले या नीले क्यों नहीं मारते, लाल और सफ़ेद ही क्यों मारते हैं? वैसे तो हरे भी हैं, और वे भी मारते हैं। मज़े की बात यह है कि ये हरे भाई-बंधु कहलाते हैं – भाई-बंधु जो मारते हैं, हरे भाई, जंगल में छिपते-फिरते भगोड़े। उसी जंगल में जहां पास्तुख़ोव अंधकार में भटक गया है। वह भटक गया है, उसकी मृत्यु निश्चित है। यह एक यथार्थ है। और इस यथार्थ का कोई अर्थ नहीं समझा जा सकता। क्योंकि मृत्यु दण्ड पानेवाला दूसरों के लिए अपनी मृत्यु का महत्व तो समझ सकता है, लेकिन अपने लिए अपनी मृत्यु का महत्व नहीं समझ सकता: किसी कारण से इतिहास को, समय को, कैलंडर को, घड़ी की सूइयों को उसकी मृत्यु की आवश्यकता है, पर स्वयं उसे इस मृत्यु की कोई आवश्यकता नहीं है। उसके लिए, पास्तुख़ोव के लिए, जो मर जायेगा, मृत्यु में कोई अर्थ नहीं है। और उसका मस्तिष्क मृत्यु के इस विचार का विरोध करता है।

परन्तु उसका मस्तिष्क सहसा मृत्यु को स्वीकार कर लेना चाहता है, हालांकि वह स्वयं यह नहीं चाहता। वह यह सोचता है: मनुष्य के लिए ऐतिहासिक परिस्थितियां ऐसा ही यथार्थ हैं, जैसा कि स्वयं उसकी प्रकृति। उसे अपना जीवन-काल बढ़ाने के लिए प्रकृति की शक्तियों से संघर्ष करने का अवसर प्राप्त है। परन्तु विजय अंततः प्रकृति की शक्तियों की ही होती है और उसकी मृत्यु। उसे यह अवसर प्राप्त है कि वह परिस्थितियों को देखते हुए अधिक सशक्त रुख अपनाये और अपना जीवन-काल बढ़ाने के लिए संघर्ष करे। परन्तु अगर वह यह पूर्वानुमान

लगाने में असमर्थ है कि कौन सा रुख उसके जीवन की रक्षा करेगा, और वह असामयिक मृत्यु का शिकार हो जाता है, तो उसके लिए वस यही शेष रह जाता है कि वह इस वलि में कोई अर्थ ढूंढ़े। वलि की निरर्थकता में अर्थ ढूंढ़े। और वह यह अर्थ ढूंढ़ रहा है। अगर एक युवा, स्वस्थ, प्रतिभाशाली व्यक्ति, जैसा कि पास्तुख़ोव अपने आप को समझता है, व्यर्थ की ही वलि चढ़ जाता है, तो लोग उसकी मृत्यु की निरर्थकता समझ जायेंगे। लोग एक, दो, दस पास्तुख़ोवों को मार डालेंगे और सहसा यह पायेंगे कि उन्हें वेकार ही मारा। वे यह देखेंगे कि यह क्षति केवल निष्फल ही नहीं है, वल्कि इससे कोई लाभ नहीं, यह हानिकारक है। वे यह समझ जायेंगे, होश में आ जायेंगे और तव निरर्थक वलि सार्थक हो जायेगी।

परन्तु यहां फिर से पास्तुख़ोव के विचारों का क्रम अपने प्रस्थान-विंदु पर आ पहुंचता है। यह सच है कि वलि सार्थक हो सकती है। किन्तु वलि का अर्थ उन लोगों के लिए ही है, जिनके लिए वलि दी गई है, उनके लिए नहीं जिन्होंने वलि दी है। जिसने "अपने भाई-वंधुओं के लिए" अपनी वलि दी, उसने कुछ नहीं पाया। पानेवाले भाई-वंधु हैं। कौन हैं ये भाई-वंधु? किनकी खातिर पास्तुख़ोव का अंत होना चाहिए?

वह अपने मित्रों, अपने वंधुओं के वारे में सोचता है। कहां हैं वे? आस्या? अल्योशा? अगर वह मर गया, तो उन्हें दुख झेलने पड़ेंगे। सेंट पीटर्सवर्ग के उसके मित्र? वे धरती पर जाने कहां-कहां तितर-वितर हो गये हैं और उन्हें उससे कोई वास्ता नहीं है। थियेटरों के डायरेक्टर, अभिनेता मण्डलियां? वे उसकी मृत्यु से कुछ सीखेंगे तो क्या, उन्हें वस उसके मरने का अफ़सोस ही होगा। पास्तुख़ोव के मर-मिट जाने पर किसको लाभ होगा? दो-तीन कलमघिस्सुओं को, जिनके मार्ग में पास्तुख़ोव की सफलता वाधक थी। वे मिलकर अखवार में उसकी मृत्यु सूचना छपवा देंगे और फिर तलवों से घड़ियालू आंसू पोंछते हुए इस ख़ुशी से नाचेंगे कि अव पास्तुख़ोव का कोई भी नया नाटक नहीं छपेगा। तो क्या उन्हें नाचने-कूदने का अवसर देने के लिए ही उसे मरना चाहिए?

नहीं, पास्तुख़ोव के कोई मित्र नहीं हैं। शायद सारी विपदा यही है

कि उसका कोई मित्र नहीं है? सम्भव है अगर उसके मित्र होते, तो वे यह निश्चय करने में उसकी मदद करते कि वह किधर जाये? अगर इतिहास, समय, कैलंडर, घड़ी की सूइयां – सबने उसे मृत्यु दण्ड सुना दिया है, तो वह किस खातिर अपनी वलि दे? पास्तुख़ोव को अपना मार्ग चुनना था, हां, हां, अपना मार्ग चुनना था! उसके सारे जीवन का, सारे अस्तित्व का सार एक ही बात में है और वह यह है कि पास्तुख़ोव अपना मार्ग चुन ले!

इस तरह मृत्यु दण्ड पानेवाले व्यक्ति की अनुभूति लिये पास्तुख़ोव इज़्वेकोव के यहां पहुंचा। उसे स्वागतकक्ष में रुकने को कहा गया। वह समझता था कि यहां उसका अनादर किया जा सकता है और वह इस अनादर के लिए तैयार था। उसके ठवन तक में यह भाव था कि वह सब कुछ सह लेगा। लेकिन यह उसकी गलतफ़हमी थी: उसका अनादर करने का इरादा किसी का नहीं था। आधेक घंटे में इज़्वेकोव वेहद जल्दवाज़ी में वाहर निकला:

"माफ़ करना, टेलीफ़ोन पर कुछ ज़रूरी वातें थीं। चलिये, अंदर चलिये। आपको एतराज़ न हो तो मैं खाना खा लूं?"

आफ़िस के वगल में छोटे से कमरे में पहुंचकर इज़्वेकोव ने दो प्लेटों पर पड़ा हुआ कपड़ा उठाया। एक प्लेट में वाजरे का दलिया था और दूसरी पर एक सेव, जो अभी पूरी तरह पका नहीं था, और सवसे सस्ती डवलरोटी का एक टुकड़ा।

"लीजिये, सेव खाइये," इज़्वेकोव ने कहा।

"जी नहीं, धन्यवाद। मुझे डर है मैं आपके काम में वाधा डालूंगा। वैसे मेरा काम छोटा सा ही है।"

"नहीं, नहीं, विल्कुल नहीं," चम्मच से दलिया मुंह में डालते हुए इज़्वेकोव ने उसकी वात काटी। "खा लीजिये सेव। हमारे सोवियत वागों का है, रोकोतोव्का का। गये हैं कभी वहां?"

"हां। वड़ी प्यारी जगह थी।"

"अव भी है।"

"आपने देखी है?"

"नहीं। मैं कल्पना कर सकता हूं।"

पास्तुख़ोव के मन में इस नौजवान के प्रति कौतूहल जागा, जो

ठंडा दलिया ऐसे मज़े से खा रहा था, जैसे किसी बहुत ही नफ़ीस खाने से उसकी भूख जागी हो। वैसे उसकी यह भूख पास्तुखोव का कौतूहल नहीं जगा रही थी (इन दिनों शायद ही कोई ऐसा आदमी था, जो बिना भूख के खाना खाता हो)। उसे तो इस बात से कौतूहल हो रहा था कि खाना खाते हुए भी उसके चेहरे पर किसी चिंताजनक विचार की छाप बनी हुई थी, पर यह विचार प्रत्यक्षतः उसके खाने में ज़रा भी विघ्न नहीं डाल रहा था।

"आजकल तो क्या बाग, क्या खलिहान सभी एक जैसे हैं।"

"एक जैसे अच्छे, या एक जैसे बुरे?"

"यही बहुत है कि सब एक जैसे हैं। मेरे विचार में मानवजाति का सारा दुर्भाग्य इन समानता की शिक्षाओं के कारण ही है। जीवन का कोई सामान्य, सबके लिए एक जैसा रूप नहीं बनाया जा सकता, न ही मनुष्य के सुख का कोई एक जैसा रूप हो सकता है।"

इज़्वेकोव ने होंठों पर जीभ फेरी और मानो पास्तुखोव को आंख मारी।

"बहुत जी हो रहा फ़लसफ़ा भाड़ने का, है न? चेखोव के नायकों की तरह। ठीक है, हो जाये। तो पहले एक भ्रम दूर करना चाहिए। सामान्य का अर्थ एक जैसा नहीं है। सामान्य का अर्थ है, जो सबका है, एक जैसा नहीं। यह जो सामान्य है वह विविधतापूर्ण होगा, लेकिन सबके लिए समान रूप से उपलब्ध होगा। हर कोई अपनी इच्छा के अनुसार काम चुनेगा, कोई बागवानी करेगा, कोई सर्जन बनेगा, कोई हल चलायेगा, कोई इंजन। परन्तु हर किसी के लिए सुख समान रूप से उपलब्ध होगा।"

"अगर वह इस सुख से इन्कार नहीं कर देगा, तभी न," पास्तुखोव बोला।

"इन्कार करने में कोई फ़ायदा नहीं होगा।"

"किसी को फ़ायदा नहीं होगा, किसी को होगा। यह जो युद्ध चल रहा है, यह इसी बात का प्रमाण है।"

"हां, जब तक कि बंटवारा चल रहा है। जिन लोगों से अतिरिक्त सम्पदा छीनी जा रही है, उनका फ़ायदा उन लोगों के सुख से इन्कार करने में ही है, जिन्हें यह अतिरिक्त सम्पदा दी जा रही है," इज़्वेकोव मुस्करा दिया।

पास्तुख़ोव को उसके चेहरे पर एक नये संतोष की झलक दिखाई दी – अपनी श्रेष्ठता का चंचलताभरा संतोष। इज़्वेकोव बड़े मज़े से बात कहता और ऊपर से दलिया खा लेता, मानो सहज ही ढूंढ़ लिये गये तर्कों के लिए अपने आपको मज़ाक में इनाम दे रहा हो।

"यह सब विचारों का खेल है," पास्तुख़ोव ने कुछ रुखाई से कहा। "जीवन की प्रेरक शक्ति तो भावनाएं हैं।"

"और विचार भी!" इज़्वेकोव ने चट से जवाब दिया। "बल्कि विचार ही सर्वोपरि हैं, क्योंकि वे भावनाओं को संचालित करने का प्रयास करते हैं।"

"नहीं, यह ठीक नहीं है," पास्तुख़ोव ने कुछ झुंझलाते हुए विरोध किया। "पहले तो पीड़ा हुई, इशारा हुआ, चीख निकली, फिर ही शब्द उच्चारित हुआ। विचारों का जन्म भावनाओं से होता है, इसका उलट नहीं होता। जी हां, उलट नहीं होता। कटुता, घृणा, प्रेम सदा चेतना से अधिक सशक्त होते हैं। हम युद्ध नहीं चाहते, किन्तु उसके बिना काम नहीं चलता।"

"हम निरर्थक युद्ध नहीं चाहते, अर्थात वह युद्ध, जो बुरे इरादों के लिए लड़ा जाये।"

"आप ऐसा युद्ध चाहते हैं, जो प्रेम से प्रेरित हो? ऐसा युद्ध, जो अपने इरादों से, अपने उद्देश्य से भला युद्ध हो, क्यों? परन्तु इसका अर्थ यह है कि आप चेतना से आगे जो भावना है उसे उदात्त बनाना चाहते हैं, घृणा की भावना को सार से समृद्ध करना चाहते हैं, क्योंकि युद्ध घृणा से ही उत्पन्न होता है। और यह भावना उस विचार से अधिक प्रबल है, जिसे आप इससे आगे रखना चाहते हैं। युद्ध की बुराई उसके उद्देश्यों की भलाई से अधिक प्रबल है।"

इज़्वेकोव ने खाली प्लेट एक ओर को सरका दी और सख़्ती से पास्तुख़ोव की आंखों में आंखें गड़ाकर देखा।

"'आप' का यहां क्या मतलब है? कौन हैं ये?" उसने नीचे स्वर में पूछा।

पास्तुख़ोव क्षण भर को चुप रहा, फिर कंधे बिचकाकर जवाब दिया:

"मेरा मतलब व्यक्तिगत तौर पर आप से नहीं है। परन्तु चूंकि आपने 'हम' कहा है... मैं आम तौर पर बात कर रहा हूं..."

3*

"अपने आप को अलग रखने के लिए?"

"क्या इसकी मनाही है?"

"यह आपका हक है। मैं तो सिर्फ़ यह जानना चाहता था कि 'हम' बात कर रहे हैं, या 'हम' और 'आप'। प्रत्यक्षतः यहां दूसरा वाला मामला है। तब मैं केवल 'हम' लोगों की बात करूंगा। जी हां, इस युद्ध में हम घृणा से प्रेरित हैं। परन्तु हमारी घृणा अंधी नहीं है। इसकी नज़र तेज़ है। यह है न्याय की नज़र। हम गरीबों की, अभागों की न्यायोचित लड़ाई लड़ रहे हैं, मानवोचित जीवन के अधिकार के लिए लड़ रहे हैं। हम युद्ध नहीं चाहते, हम सबके लिए शांति चाहते हैं। पर हमारे खिलाफ़ हिंसा बरती गई है, हम पर युद्ध थोपा गया है। हमने इस चुनौती को स्वीकार किया है। हम युद्ध के विरुद्ध लड़ रहे हैं। इसलिए हमारा युद्ध बुरे इरादों के लिए नहीं है, निरर्थक नहीं है। यह युद्ध, जैसा कि आपने कहा है, भला युद्ध है। इसका महान अर्थ है और उदात्त ध्येय। अगर हम हथियार डाल देंगे, तो हम अपराधी होंगे, क्योंकि हमें क्षमा नहीं किया जायेगा, हमें कुचल डाला जायेगा और अभागे और भी अधिक अभागे हो जायेंगे।"

पास्तुख़ोव ने इज़्वेकोव को रोकने के लिए हाथ उठाया। रास्ते में उसके मन में जो व्यथा उठी थी, वही फिर सहसा लौट आई थी, उसे दबाते हुए, हौले-हौले वह बोला:

"आप जिन ध्येयों की चर्चा कर रहे हैं, उनकी महानता में मुझे कभी भी संदेह नहीं रहा है। मैं इतना भोला-भाला नहीं हूं और आखिर इतना हीन व्यक्ति भी नहीं हूं कि सार्थक संघर्ष से डरूं। परन्तु सच मानिये, मैं यह देखकर आतंकित हो उठता हूं कि भलाई के लिए संघर्ष में इन्सान को इतनी बुराई करनी पड़ती है!"

इज़्वेकोव ने चुपचाप सेब उठाया, सहज ही उसके दो टुकड़े कर दिये और मुस्कराते हुए आधा सेब पास्तुख़ोव की ओर बढ़ाया:

"चख देखिये..."

पास्तुख़ोव देर तक हिला-डुला नहीं, मन में गहरी दबी आशंका लिये वह हरे-सफ़ेद आधे सेब को देखता रहा, जिसके गूदे पर चू आई रम की बूंदें चमचमा रही थीं।

"अच्छा, मैं ख़ुद ही खा देखता हूं," इज़्वेकोव ने फिर से मुस्कराते

हुए कहा और आधे सेब को दांतों से कच से दो टुकड़ों में काट लिया।

बचपन से ही सुने हुए आदम-हव्वा के किस्से की ओर संकेत इतना प्रत्यक्ष था कि पास्तुख़ोव ने उस पर कुछ कहने की ज़रूरत नहीं समझी। वह टकटकी लगाये यह देख रहा था कि कैसे इज़्वेकोव सेब के साथ रोटी चबा रहा है। किरील के उभरे-उभरे जबड़े ज़ोर से चल रहे थे। लगता था वह खाने का आनंद लेने में पूरी तरह मग्न है। पर उसकी नज़रों में किसी चिंताजनक और साथ ही स्वप्निल विचार की झलक बनी हुई थी। सेब चबाते हुए वह बोला :

"आप कहते हैं कि युद्ध से आतंकित हैं, लेकिन युद्ध से आपका अभिप्राय क्रांति है। कम से कम मुझे तो यही समझ में आता है।"

"मेरा अभिप्राय मनुष्य द्वारा मनुष्य का विनाश किये जाने से है। और इस विनाश को क्या संज्ञा दी जाती है, इससे कोई फ़र्क पड़ता है क्या?"

"आप युद्ध में नहीं लड़े हैं न?.. फ़ौज में एक अवधारणा है: 'व्यययोग्य सामग्री'। हमारी नैतिकता की यह अपेक्षा है कि हम क्रांति के हाथों में भी ऐसी व्यययोग्य सामग्री दें। क्यों नहीं? अगर सेनाओं को सदा से यह अधिकार प्राप्त रहा है कि वे विजय के नाम पर, शत्रु से रक्षा के नाम पर विनाश करने के उद्देश्य से सम्पत्ति का, मानव जीवन का उपयोग कर सकती हैं, तो हम क्रांतिकारी को कैसे हर तरह की सम्पत्ति से, मानव जीवन के अधिकार से वंचित कर सकते हैं, जबकि उसका ध्येय नये संसार का निर्माण करना है? सैनिक से खर्च किये गये गोला-बारूद के लिए, नष्ट किये गये घरों, सम्पत्ति और जीवनों के लिए कोई जवाबदेही नहीं की जाती, बशर्ते यह सब उसने विजय की खातिर किया हो। तो फिर क्रांतिकारी से यह क्यों पूछा जाता है कि कोई प्लेट क्यों टूटी, किसी का हाथ-पैर क्यों टूटा, भले ही यह क्षति प्रत्यक्षतः शत्रु की हो?"

"बात तो तर्कसंगत है, पर निर्मम", पास्तुख़ोव ने कहा।

"और युद्ध? वह विश्वयुद्ध, जिस पर आपने शायद तब तक कोई आपत्ति नहीं की होगी, जब तक कि वह क्रांति में नहीं बदल गया। वह निर्मम था, और तर्कहीन भी। ठीक है न?"

किरील विजेता की भांति पास्तुख़ोव की ओर देख रहा था।

भगवान जाने इस अप्रत्याशित शास्त्रार्थ में वे कहां से कहां पहुंच जायें! – पास्तुख़ोव के मन में यह विचार आया, और उसने, जहां तक हो सका, अलसाये स्वर में यह दिखाते हुए कि विवाद करते थक गया है, कहा:

"मनुष्य की प्रकृति ही ऐसी है कि वह हर बात की व्याख्या करना चाहता है। वह जो कुछ देखता है या उसके चारों ओर जो कुछ घटता है, जब तक वह उसकी व्याख्या नही कर लेता, तब तक उसे चैन नहीं पड़ता। और एक बार व्याख्या पा लेने पर वह कुछ भी स्वीकार करने को तत्पर हो जाता है।"

"स्वीकार करने को नहीं बल्कि उसने जो सही व्याख्या पा ली है, उसकी रक्षा करने को तत्पर रहता है।"

बाप रे! इस बातूनी को तो बहस का चस्का लगता है! आखिर पास्तुख़ोव ऐसी कठिन घड़ी में यहां शास्त्रार्थ लड़ाने तो नहीं आया। उदास स्वर में वह बोला:

"पर क्या... क्या आप इसीलिए जान खतरे में डालकर ट्राम के पायदान पर लटकते जायेंगे कि किसी व्याख्या तक पहुंच जायें? क्या यह बेहतर नहीं होगा कि चैन से पैदल चला जाये?"

"गधे पर चढ़के भी जा सकते हैं," इज़्वेकोव ने उसे छेड़ते हुए कहा।

पास्तुख़ोव ने फिर से कंधे बिचकाये:

"मुझे लगता है आप व्याख्याओं के पीछे भागना चाहते हैं, रूस को समझना नहीं चाहते।"

"जी नहीं, मैं उन लोगों में से हूं, जो रूस को समझना चाहते हैं, ताकि नया रूस बना सकें। उन लोगों में से नहीं, जो उसे समझना चाहते हैं ताकि पुराना रूस बनाये रख सकें।"

"पर एकबारगी ही सब कुछ पुराना ठुकरा देने में भी मुझे कोई खास समझदारी नहीं दिखती। और भी बहुत से लोग ऐसा ही सोचते हैं। मैं अकेला नहीं हूं।"

"मुझे पता है, आप अकेले नहीं हैं," इज़्वेकोव की हंसी फूटी। "पिछले महीने के आंकड़ों के अनुसार दो लाख लोग ऐसे हैं। अब शायद ज़्यादा ही होंगे।"

"कैसे आंकड़े?"

"भगोड़ों को पकड़ने के केंद्रीय आयोग के।" (इज़्वेकोव ने चेहरे पर फैल आई मुस्कान को हाथ से छिपा लिया।) "वैसे हो सकता है, इससे कहीं कम ही हों। कौन जाने आयोग आंकड़े बढ़ा-चढ़ाकर पेश करता हो यह दिखाने के लिए कि खाली नहीं बैठे हैं, खूब ज़ोर-शोर से पकड़ रहे हैं भगोड़ों को।"

थोड़ी देर तक पास्तुख़ोव कुछ नहीं बोला, मानो यह दिखाते हुए कि इज़्वेकोव हद से बाहर जा रहा है, और फिर सहसा गम्भीर लहजे में, मानो मज़ाक दरकिनार करते हुए, ऐसा विचार व्यक्त किया, जिस पर इज़्वेकोव को और भी ज़्यादा हंसी आई :

"आप बोल्शेविक हैं न? तो फिर आपकी पार्टी के अंतिम निर्णय के अनुसार आपको... कामरेड भगोड़ों के साथ काम करना चाहिए।"

"आपकी टिप्पणी में, जैसा कि कहते हैं..." इज़्वेकोव कोई उपयुक्त शब्द ढूंढ़ रहा था, पर पा न सका और खिलखिलाकर हंस पड़ा।

उसकी हंसी में मज़ा लेने का अंदाज़ इतना नहीं था, जितना चुनौती का, सो पास्तुख़ोव ने फ़ैसला किया कि हर तरह का मज़ाक नहीं चल सकता। बड़े रोब से खड़े होकर उसने अपना कोट झटका।

"भगोड़ा वह होता है, जो शपथ भंग करे। मैंने कोई शपथ नहीं ली है।"

इज़्वेकोव भी खड़ा हो गया। अपनी सीधी भौंहें सिकोड़कर मिंची-मिंची आंखों से उसने पास्तुख़ोव को सिर से पैर तक नापा।

"जब शहर में बाढ़ का खतरा हो, तो सभी नगरवासी बांध बनाने आते हैं, बिना कोई शपथ लिये। और जो न आये, दुबककर बैठा रहे, वह भगोड़ा होता है।"

पास्तुख़ोव ने रूमाल निकालकर होंठ पोंछे और बहुत ही अदब से पूछा :

"आपने खाना खा लिया?"

"हां, चलिये आफ़िस में चलें," इज़्वेकोव ने जवाब दिया।

आफ़िस में वह अपनी मेज़ के पास खड़ा हो गया यह दिखाते हुए कि वह जल्दी से जल्दी काम निपटा देना चाहता है।

"पता नहीं, हमारी इस दार्शनिक बहस के बाद आप मेरी मदद करना चाहेंगे कि नहीं," पास्तुख़ोव खिंचे-खिंचे लहजे में बोला। "हम

बेघर हो गये हैं। जिस घर में हम रह रहे थे, उसे सेना विभाग अपने किसी आफ़िस के लिए ले रहा है। यह दोरोगोमीलोव का घर है। दोरोगोमीलोव का नाम सुना है आपने? हां, उसे भी हमारे साथ निकाला जा रहा है।"

"दोरोगोमीलोव को?"

"जी हां। हमें कल ही घर खाली करना है। कहां जायें? मेरी कुछ समझ में नहीं आता। मेहरबानी करके या तो उन लोगों को घर खाली करवाने से रोकिये, या फिर हमें रहने की कोई जगह दिलाइये।"

तब जो बातचीत हुई, उसके लिए वाकई किसी फ़लसफ़े की कोई ज़रूरत नहीं थी। चूंकि घर सैनिक अधिकारी ले रहे थे, इसलिए इज़्वेकोव उन्हें रोक नहीं सकता था। और जहां तक नई रिहायश का सवाल था, तो नगर में स्थिति बहुत तंग थी, और पास्तुख़ोव को खुद ही कोई जगह ढूंढ़नी होगी। चौबीस घंटे में जगह ढूंढ़ पाना प्रत्यक्षतः असम्भव था, लेकिन इज़्वेकोव को और कोई रास्ता नज़र नहीं आता था।

"माफ़ कीजिये ..." पास्तुख़ोव ने बुरा मानते हुए कहा, "पर अगर कल को लोग मेरे परिवार को जिप्सियों की तरह खुले आकाश तले अपने संदूकों, गट्ठरों पर बैठे देखेंगे, तो नगर सोवियत के बारे में क्या सोचेंगे?"

"यह नहीं हो सकता। आवास विभाग को आपको कोई न कोई रिहायश देनी होगी, भले ही अस्थाई तौर पर।"

"कहीं बैरक-बैरक में?" पास्तुख़ोव ने पूछा और ज़रा सा आगे झुका, मानो जो सकारात्मक उत्तर पाने का उसे विश्वास था, उसके लिए आभार प्रदर्शित कर रहा हो।

"हो सकता है," इज़्वेकोव ने भावहीन स्वर में उत्तर दिया। "आपको फ़्लैट दिलाने के लिए आवास विभाग नये घरों की ज़ब्ती तो कर नहीं सकता।"

पास्तुख़ोव मानो स्वयं अपना ही स्मारक बना खड़ा था, बांहें लटकी हुई, मूर्तिवत्, सारी आकृति ही मानो फूलकर बढ़ गई हो! सहसा ठंडी सांस भरकर लड़खड़ाती आवाज़ में वह बोला:

"भगवान जाने आप मुझे किधर धकेल रहे हैं!"

"इसमें मुझे कोई दिलचस्पी नहीं है कि मैं आपको किधर धकेल

रहा हूं," इज़्वेकोव ने तुरंत ही उत्तर दिया। "आप उम्र में मुझसे बड़े हैं, अपने दिमाग से काम ले सकते हैं... क्या बात है?" आफ़िस में दाखिल हुई कटे बालों वाली युवती से उसने पूछा।

"वहां मीटिंग में लोग आपका इंतज़ार कर रहे हैं।"

"हां, मेरा काम खत्म हो गया। अभी आता हूं।"

"अच्छा, नमस्ते," पास्तुख़ोव ने दबे स्वर में कहा और इज़्वेकोव से हाथ मिलाये बिना ही छोटे-छोटे कदम भरता कमरे से बाहर चला गया।

जैसे ही उसके पीछे दरवाज़ा बंद हुआ, इज़्वेकोव ने फ़ौजी कमिसार से फ़ोन मिलाने को कहा। उधर सेक्रेटरी फ़ोन का हैंडिल घुमा रही थी, हुक ठकठका रही थी, टेलीफ़ोन आपरेटर को झिड़की सुना रही थी, इधर इज़्वेकोव तेज़-तेज़ चलता हुआ आफ़िस के चक्कर लगा रहा था। आखिर वह खुद टेलीफ़ोन आपरेटर से जूझने लगा, फ़ोन मिलने पर उसने फ़ौजी कमिसार से कहा :

"सुनो, तुम्हारी शिकायत आई है मेरे पास कि तुम एक भले आदमी को घर से निकाल रहे हो... हां, हां, है एक भला आदमी... आर्सेनी रोमानोविच दोरोगोमीलोव। चाहो तो रागोज़िन से पूछ लो उसके बारे में... क्या, पहली बार सुन रहे हो? लोगों को बेघर किया जा रहा है और तुम्हें पता तक नहीं? मुझसे क्या पूछ रहे हो? मुझे तुमसे पूछना चाहिए – कौन आया था। तुम्हारे नाम से कोई घर खाली कराने आया था... क्या, तुम्हें कोई जगह नहीं चाहिए? अजीब बात है। भई, ज़रा पता लगा लो, क्या मामला है... हां, हां, जानता हूं, और भी ज़्यादा ज़रूरी काम हैं। तुम्हारा क्या ख्याल है, मेरे पास काम नहीं है? भई, ज़रा ठीक से जांच कर लो। आखिर यह अच्छी बात नहीं होगी। और हां, मुझे फ़ोन कर देना।"

किरील ने ज़ोर से अपनी जांघों पर हाथ मारे और खिड़की के पास चला गया। आखिर पास्तुख़ोव अपने मन से तो यह किस्सा घड़ नहीं सकता था! वह देखो, चला जा रहा है फ़ुटपाथ पर वैसे ही जैसे आफ़िस में से निकला था – झुंझलाया हुआ और अपनी झुंझलाहट दबाता हुआ। बस, लटकन में थोड़ा और रोब आ गया था, सिर थोड़ा और ऊपर उठ गया था, और दायां हाथ कदमों की ताल पर बड़ी शान से

और साथ ही सहज, स्वाभाविक रूप से भूल रहा था। नहीं, ऐसा आदमी कोई बेकार की बात नहीं कर सकता! ऐसे आदमी को पूरा विश्वास होता है कि वह संसार में व्यर्थ ही प्रकट नहीं हुआ है। ऐसे आदमी के लिए लोग रास्ता छोड़ते हैं, क्योंकि कद्र जाननेवालों का आदर करते हैं। हां, जरूर कुछ गड़बड़ है...

हां, यहां कुछ गड़बड़ थी। पास्तुख़ोव गरिमामयी चाल से चला जा रहा था। परन्तु यह उसकी जन्मजात लटकन थी, अपनी विलक्षण प्रकृति में विश्वास के अनुरूप शोभनीय ढंग से पृथ्वी पर डग भरने की आदत थी। जबकि पास्तुख़ोव के अंतरतम में पहले के आत्म-विश्वास का नामोनिशान तक न रहा था। इस संसार ने उसका तिरस्कार किया था, उसे दुतकारा था। उसका आहत मन बार-बार एक ही बात कहता जा रहा था: चले जा रहे हो तुम रोबदार डग भरते, अपनी सुडौल, सुंदर देह लिये, तुम जो कभी आज़ाद थे। जान लो, हां अच्छी तरह जान लो – ये तुम्हारे अंतिम डग हैं! देख लो चाव से अपने आपको – कैसी सुडौल, हृष्ट-पुष्ट, शानदार काया है! लिये जाओ इसे अज्ञात में! यह तुम्हारा अंतिम चाव है, तुम्हारी अंतिम घड़ी है! विदा ले लो, हर चीज़ से विदा ले लो जिसे तुम देख रहे हो! अपने आप से विदा ले लो, शीघ्र ही तुम्हारा अस्तित्व मिट जायेगा।

पास्तुख़ोव मनहूस शक्ल लिये घर लौटा, और आस्या समझ गई कि उनकी हार हुई है। उसने टोपी उतार फेंकी, झटके से कोट उतार डाला, धम से कुर्सी पर बैठ गया। वह पहले कभी भी इतना बोझिल नहीं दिखा था।

"सो?" क्षमायाचक मुस्कान के साथ आस्या ने पूछा।

"सांप मुझे ज्ञान का फल चखने का प्रलोभन दे रहा था," उसने कहा।

आस्या अधिक बेचैनी से, पर साथ ही चंचलता से मुस्कराई।

"तो क्या पाप हो गया?"

"जाओ, चाय बना लाओ।"

उसने इतनी तेज़ चाय गिलास में उंडेली कि आस्या को डर लगा कहीं उसके दिल को कुछ हो न जाये। वह लेट गया और सांझ घिरने तक छत की ओर ताकता लेटा रहा।

फिर वह आस्या को वाहर वाग में ले गया। वे एक पहिये के औंधे पड़े ठेले पर वैठ गये, जिसे अल्योशा वड़े शौक से चलाता था। वे धीरे-धीरे बातें करने लगे – दोनों के लिए ही ये वातें एकसमान स्पष्ट और महत्वपूर्ण थीं। मनों में निश्चय हो चुका था, पर दोनों वड़े धीरज से एक दूसरे को इस निश्चय की ओर ले जा रहे थे, उनके साथ जो कुछ घटा था – उस सब को एक वार फिर से याद करते, जांचते हुए।

उनका बस चलता तो वे इस झाड़-झंखाड़ भरे वाग की नीरवता में ही वसे रहते, जहां पैरों तले वेलों से उलझी घास का कालीन विछा हुआ था, मैलो के पौधे वाड़ से सटे हुए थे और सिर के ऊपर पाप्लर के घने वृक्षों का सायवान वना हुआ था। वेशक, यह स्वर्ग की वाटिका नहीं थी, किंतु चूंकि उन्हें यहां से भगाया जा रहा था, इसलिए उन्हें इसे छोड़ते हुए दुख हो रहा था। कल तक जो फ़रारी थे, आज उन्हें भगाया जा रहा था। अव उनके लिए एक ही रास्ता था कि वे दूसरी ऐसी जगह ढूंढ़ें, जहां उनके चैन में कोई विघ्न न पड़ सके। वह वलाशोव ज़िला, जो इतना अभिलाषित था और पहुंच से वाहर, जिसकी खातिर उन्होंने पीटर्सवर्ग छोड़ा था, वही फिर से उनका एकमात्र ध्येय वन गया। वेशक, वहां अभी भी वह कोठी है, जहां अनास्तासिया गेर्मानोव्ना – आस्या – के मां-वाप अपने अंतिम दिन काट रहे थे, वहां उन्हें दो जून की रोटी भी मिल जायेगी और रहने को घर भी, वहां कोई उनके निजी जीवन में दखल नहीं दे सकेगा। उन्होंने तुरंत ही वहां चल देने का निश्चय किया।

शाम को पास्तुखोव ने दोरोगोमीलोव को अपना निश्चय वताया।

दोरोगोमीलोव पिछले हफ़्ते भर से निरंतर उत्तेजित था। घटनाएं उसके अहं को मानो उकसा रही थीं। वह अपनी निष्क्रियता के लिए अपने आप को लानतें दे रहा था। नगर में वेचैनी वढ़ रही थी। हर कोई अपने-अपने ढंग से वढ़ते आ रहे खतरे का सामना करने की तैयारी कर रहा था। और वह अपने दफ़्तर में वैठा वही-खाते देखा करता था, जैसा कि सारी उम्र करता आया था। वह इस वात पर झुंझला रहा था कि ज़िंदगी के ढर्रे को वदलने में अक्षम था। वरसों से जिस घर में वह वसा हुआ था उसमें से निकाले जाने की सूचना पर सहसा उसके मन में कोई विरोध नहीं जागा, उल्टे एक दवी-दवी आशा ही थी कि शायद

इससे ही उसे कोई महत्वपूर्ण कदम उठाने का साहस मिलेगा – हो सकता है, वह सेना में भरती हो जाये, या शायद मोर्चे पर ही जाये। हां विलकुल, वह अपने पुराने कोट की जगह फ़ौजी वर्दी पहन लेगा, पेटी कस लेगा, टाई उतार फेंकेगा, दाढ़ी मुंडवा लेगा और लम्बे-लम्बे वाल भी! मार्च तो वह अच्छी तरह से कर सकेगा, क्योंकि उसे पैदल चलने की खूब आदत थी। वैसे उसकी ज़िंदगी तो वीत ही गई है, पर अभी भी उसके शरीर में जो थोड़ी वहुत शक्ति वची है, उसे वह उदात्त ध्येय में लगायेगा।

पास्तुख़ोव के यह वताने पर कि वह कल ही अपने परिवार को वलाशोव ले जा रहा है, दोरोगोमीलोव ने हैरान होकर पूछा:

"यह आप क्या कह रहे हैं? वहां तो विल्कुल पास ही लड़ाई चल रही है! वच्चे को लेकर ऐसी जगह कैसे जाया जा सकता है? वहां चारों ओर सफ़ेद गार्ड हैं!"

"हमारे जो हालात हैं, उसमें कोई फ़र्क नहीं पड़ता, कौन है – सफ़ेद या लाल। मुझे ऐसे हालात में डाल जो दिया गया है। हमें रहने को घर तो चाहिए," पास्तुख़ोव ने मानो हेकड़ी दिखाते हुए जवाव दिया।

दोरोगोमीलोव ने इस पर एक शव्द भी नहीं कहा। वस एक झटका सा खाकर पीछे हट गये और फिर शिष्टता दिखाने का कोई प्रयास तक न करते हुए अंधियारे गलियारे में से होकर अपने कमरे में चले गये।

अल्योशा ने यह छोटी सी वातचीत सुनी थी। वह यह देखकर स्तव्ध रह गया कि कैसे आर्सेनी रोमानोविच उसके पापा से मुंह मोड़कर चले गये थे। दोरोगोमीलोव के चेहरे पर उसने पहले कभी भी ऐसी भर्त्सना नहीं देखी थी। वड़ी मुश्किल से वह सोया और सारी रात उसे डरावने सपने आते रहे – कभी वह घंटाघर से, कभी पहाड़ से, कभी जहाज़ के मस्तूल से उफनते समुद्र में गिरता रहा। पसीने से तरवतर वह जाग जाता। उसे सुनाई देता कि मां और ओल्गा अदामोव्ना फ़र्श पर अखवार में चीनी के वर्तन लपेट रही हैं, पापा भारी सांस लेते हुए अटैचियों की चरमराती पेटियां कस रहे हैं।

जिस दिन पहली वार अल्योशा ने वीत्या और पाव्लिक को सचमुच लड़ते देखा था, तभी से वह उनका आदर करने लगा था। उसे लगता

था कि वे दोनों उससे कहीं बढ़कर हैं और इसलिए उनके प्रति उसके मन में श्रद्धामिश्रित भय का भाव था। और उनसे वह सदा सच बोलता था। सो, अगले दिन दोपहर को जब वे दोनों आर्सेनी रोमानोविच से मिलने आये, तो अल्योशा उन्हें सब कुछ बताने को तैयार हो गया। पर जब वह उनके साथ बाहर बगीचे में पहुंचा, तो उसे यह भास हुआ कि उन्हें पहले ही सब कुछ पता चल गया है। उसे लगा वह शर्म से गड़ा जा रहा है।

अल्योशा को आर्सेनी रोमानोविच के कमरे में वीत्या और पाव्लिक से हुई पहली मुलाकात खूब अच्छी तरह याद थी, लेकिन आज उनकी नज़रों में उस दिन से भी अधिक बेगानापन था। पाव्लिक ने तो निचला होंठ यों आगे को निकाल रखा था, मानो थूकने जा रहा हो। वीत्या सीटी बजा रहा था, अल्योशा यह धुन नहीं जानता था और इसलिए उसे लग रहा था कि वीत्या उसे चिढ़ाने के लिए ही ऐसा कर रहा है। आखिर वीत्या को मानो अल्योशा पर तरस आ गया, उसने तिरस्कारपूर्वक पूछा :

"क्यों, भाग लिये?"

"हम मां के घर जा रहे हैं। वहां फ़ार्म में नाना-नानी रहते हैं," अल्योशा ने जतन से समझाया।

"हां, हां, कहे जाओ। पहले क्यों नहीं गये थे? अब जब यहां गुत्थमगुत्था होनेवाला है..."

"कैसा गुत्थमगुत्था?" अल्योशा ने पूछा।

"वही..."

"ये लोग सफ़ेद गार्डिये हैं," पाव्लिक ने हिकारत से कहा।

"नहीं, हम सफ़ेद गार्डों के साथ नहीं हैं," अल्योशा ने हौले से कहा।

"तो फिर तुम लाल गार्डों के खिलाफ़ क्यों हो?" वीत्या ने पूछा।

"हम लाल गार्डों के खिलाफ़ नहीं हैं," अल्योशा ने विरोध किया, और उसकी एक आंख आंसू से चमकने लगी।

तीनों चुपचाप खड़े थे, एक दूसरे की ओर नहीं देख रहे थे।

"तुम नाराज़ हो?" अल्योशा ने सकुचाते हुए पूछा और वीत्या के थोड़ा पास खिसक गया।

"हमें क्या ज़रूरत पड़ी है!" पाव्लिक ने जवाब दिया।

"नाराज़ क्या होना?" वीत्या ने हामी भरी। "तू तो छोटा है, जहां कहेंगे, जाना पड़ेगा।"

"यह सब पापा कर रहे हैं," अल्योशा सहसा चिल्लाया। वह वीत्या का आभारी था कि उसने उसकी स्थिति समझ ली है। "मुझे तो आर्सेनी रोमानोविच को छोड़कर जाते दुख हो रहा है... और तुम्हें छोड़ते भी," उसने जोड़ा और उसका चेहरा गुलाबी हो गया।

"गरीब ज़्यादा अच्छे होते हैं," पाव्लिक ने कहा। "मेरा बाप तेरे से गरीब है, पर ज़्यादा अच्छा है। बस धत्ती है।"

"धत्ती का क्या मतलब?" अल्योशा ने पूछा।

"बस जब हत्थे से उखड़ जाता है, तो चढ़ जाता है।"

"पीटता है?"

"पीटता नहीं, पीता है! वाह रे भोंदू..."

वे थोड़ी देर और खड़े रहे, फिर पाव्लिक ने वीत्या को बुलाया:

"चल चलें, यहां क्या करना है?!"

अल्योशा से विदा लिये बिना ही वे चले गये और वह पिछली सीढ़ी के पास अकेला खड़ा रह गया। खुले दरवाज़े में से ऊपर से शोर आ रहा था। वहां भारी सामान गलियारे में निकाला जा रहा था।

अल्योशा को विह्वल कर रहे इस शोर के बीच कदमों की आहट सुनाई दी और आर्सेनी रोमानोविच दरवाज़े में प्रकट हुए – बिना टोपी के, कोट के बटन खुले हुए, लंबे बाल उलझे हुए। वह तेज़-तेज़ चलते हुए अल्योशा के पास से गुज़र गये, बाहर का फाटक खोलने ही लगे थे, पर फिर लौट आये।

अल्योशा का सिर पकड़कर उन्होंने कसकर उसे अपने पेट से तीन बार लगाया और फिर अपनी दाढ़ी के उलझे हुए ठंडे-ठंडे बालों से उसका चेहरा ढांप दिया। आलिंगनों और चुम्बनों का यह अबोध्य और प्रचण्ड उद्गार क्षण भर तक ही जारी रहा और फिर अल्योशा से अलग होकर आर्सेनी रोमानोविच फाटक की ओर दौड़ गये।

जब अल्योशा के कानों में फाटक के बंद होने की आवाज़ आई और उसने देखा कि वह अकेला रह गया है, एकदम अकेला! – उसने मुट्ठियों से आंखें भींच लीं और सिसकियां भरते हुए सीढ़ियां चढ़ने लगा।

उसके साथ क्या घटा है – यह बात वह इतनी स्पष्टतया समझ रहा था कि आप से आप ही वह ऐसे नये, अभी हाल ही तक अनजाने शब्द पा रहा था, जो उसके मन की पीड़ा को व्यक्त कर रहे थे। उसे लग रहा था कि सिसकियां भरते हुए वह ये विचित्र, निराशा भरे शब्द उच्चारित कर रहा है। पर वह केवल रो ही रहा था। मां और पापा के साथ, ओल्गा अदामोव्ना के साथ वह भी अभागा था, सबने उनसे मुंह मोड़ लिया था और वे न जाने कहां भाग रहे थे! सब उसे हीन दृष्टि से देखते थे, क्योंकि उसके पापा गरीबों से बुरे थे, क्योंकि वह स्वयं पाव्लिक और वीत्या के मुकाबले तुच्छ था, दब्बू था! बस एक आर्सेनी रोमानोविच ही थे, जिन्हें उस पर तरस आता था, उससे प्यार था, पर वह भी उसे बचा नहीं सकते थे, और सदा के लिए छोड़कर चले गये।

अल्योशा ऊपर, गर्मियों के रसोईघर में गया और अंगीठी के पास खड़ा हो गया। उसने आंखों से मुट्ठियां हटाईं और ठीक वैसे ही जैसे पहली बार इस घर में आने पर हुआ था, अपनी आंखों के सामने उसे डूबतों को बचाने का चक्का दिखा।

वहीं, पुरानी जगह पर यह शानदार चीज़ रखी हुई थी। इस चक्के के साथ अल्योशा के मन में क्या-क्या उम्मीदें बंधी हुई थीं! क्या-क्या सपने थे, जो पूरे नहीं हुए – कैसे वह दोस्तों के साथ मछली पकड़ने जायेगा, दूर वोल्गा के बड़े पाट के तट पर, रेत पर घूमेगा, डांड़ चलायेगा, या फिर पालों वाली नाव पर पाल तानेगा, नदी पर गुज़रते स्टीमरों से उठनेवाली लहरों में वे सब तैरेंगे, और हां अलाव जलायेंगे – ढेर सारे अलाव! आर्सेनी रोमानोविच बच्चों को लेकर जब नाव पर जाते थे, तो इस चक्के को अपने सच्चे साथी की भांति ज़रूर साथ रखते थे। और अब अल्योशा आर्सेनी रोमानोविच के इस सच्चे साथी से विदा ले रहा था, मानो ये उसकी खोई हुई आशाएं ही थीं। उसे लग रहा था कि वह स्वयं भी खो गया है, और संसार में कोई ऐसी शक्ति नहीं, जो उसे बचा सके।

उसने कार्क के चक्के की रंगीन देह को सहलाया, इस देह से लिपटी रस्सियों को पकड़ा और फिर अपना आंसुओं से भीगा गाल उससे सटा लिया।

गलियारे में मां की आवाज़ गूंजी:

"अल्योशा कहां है? हमारा अल्योशा कहां है?"

उसने आंखें और गाल पोंछकर सुखा लिये और रुखाई से जवाब दिया:

"यहां हूं... चिल्लाइये मत!"

सूरज डूबने से पहले ही पास्तुख़ोव परिवार सामान से लदे ठेलों के पीछे-पीछे स्टेशन पर पहुंच गया। दोरोगोमीलोव उन्हें छोड़ने नहीं आया था। अल्योशा ने सुना ओल्गा अदामोव्ना मां से कह रही थी: "छोड़ने न आता, पर चलने से पहले नमस्ते तो कह सकता था... इतनी भी सभ्यता नहीं!" मां के चेहरे पर हल्की सी मुस्कान दौड़ गई, मानो वह विचारमग्न हों और वह बोली: "वह सख़्ती से फ़ैसला करता है।"

पास्तुख़ोव बातचीत में हिस्सा नहीं ले रहा था। वह स्टेशन के चौक के दृश्य से अभिभूत था—यहां जीवन के साक्षात दर्शन हो रहे थे, असंख्य रूपों में उफनता जीवन। वैसे ही जैसे वसंत में हुआ था, एक बार फिर उसका परिवार असहाय सा स्टेशन के सामने खड़ा था, फ़ज़ूल के सामान के ढेर से बंधा हुआ, जिसे मानव-बाढ़ से बचाने की जरूरत थी। पर इन कुछ महीनों में कैसे आश्चर्यजनक परिवर्तन आ गये थे!

सबसे पहले तो लोगों की संख्या कहीं अधिक थी। उनका एक अनंत समूह यहां जमा था तथा लोगों के छोटे-बड़े झुंड इस समूह को भंवरों और धाराओं की भांति चीरते आ-जा रहे थे। कई धाराएं स्टेशन के दरवाज़ों में अंदर को बहती जा रही थीं, दूसरी धाराएं सामने से टकरातीं और लोग गुच्छों में, किशमिश की तरह दबे हुए, प्रायः कुचले हुए शरीर लिये बाहर निकलते।

दूसरी जिस बात की ओर पास्तुख़ोव का ध्यान गया—वह थी सशस्त्र लाल सैनिकों की संख्या। वे भी इस जनसमूह में निरंतर गतिमान थे, कहीं दलों में और कहीं अलग-अलग। जहां-तहां लोगों के सिरों के ऊपर स्याह-रुपहली संगीनें चमचमा रही थीं। सैनिक अपनी पसीने से भीगी, काली पीठों से ओवरकोट उतारकर उन्हें बांहों पर डाले लिये जा रहे थे, मानो घोड़ों पर चढ़ाने के लिए साज़ उठाये लिये जा रहे हों, और उनके ये भारी ओवरकोट पसीने से तरबतर भीड़ में अजीब, बेतुके से लग रहे थे, साथ ही एक विचित्र सी याद दिलाते थे कि कभी कड़ाके की सर्दी भी होनी है।

सारा चौक बोरिये-बिस्तरों पर बैठे शरणार्थियों की बाड़ से घिरा हुआ था। ऊंची-नीची आवाज़ों की गूंज छाई हुई थी, और कोई भी अलग आवाज़ चाहे वह कितनी भी तेज़ क्यों न होती, इस गूंज पर हावी नहीं हो सकती, उसे दबा नहीं सकती थी – न ही पास कहीं टीन की केतली की खड़खड़, न किसी बच्चे की चीख, न ही स्टेशन की छत के ऊपर से लहरों की तरह बढ़ती आती इंजन की सीटी। यह शोर अभेद्य था, ठोस था, और लगता था कि यहां असंख्य स्वरों, असंख्य सिरों की इस विविधता की एकता से अलग, इससे स्वतंत्र कोई विचार भी उत्पन्न नहीं हो सकता।

सहसा ख्यालों में डूबे पास्तुखोव के सामने एकदम नई वर्दी पहने फ़ौजी प्रकट हुआ। उसका चेहरा धूप में थोड़ा संवलाया हुआ था, वह दुबला-पतला था और मानो अभी-अभी नहाकर आया था। ठोड़ी का गुल मुस्कान से फैल रहा था। जवानी की उत्सुकताभरी नज़रों से वह पास्तुखोव की ओर देखे जा रहा था, यह प्रतीक्षा करते हुए कि उसका जवाब क्या होगा।

वह ज़्यादा लंबी चुप्पी सह नहीं सका और भोले अंदाज़ में बोला:

"आप मुझे कभी नहीं पहचान पायेंगे! मैंने तब दाढ़ी बढ़ा रखी थी।"

"दाढ़ी," पास्तुखोव ने दोहराया।

"आपने हमें तब रिबन दिखाया था," सहसा अल्योशा कह उठा।

"हां, हां," फ़ौजी खुश हो गया। "दीबिच हूं मैं, दीबिच।"

"हे भगवान, आप ही तो हैं!" आस्या बोली। "आप तो एकदम खिल उठे हैं!"

"कहां! बस ठीक हो गया हूं। कितने बरसों में पहली बार महसूस कर रहा हूं कि स्वस्थ हूं। और आप?.. कहां चल दिये फिर से? अभी तक पहुंचे नहीं अपने ठिकाने पर?"

"देखता हूं आप अपने ठिकाने पर पहुंच गये," धीरे-धीरे सरकती अपनी नज़र को दीबिच की टोपी के लाल सितारे पर टिकाकर पास्तुखोव बोला।

"हां," दीबिच पहले की ही भांति मुस्कराये जा रहा था, "फिर से फ़ौज में आ गया। नई टुकड़ियां बना रहा हूं।"

"क्लर्की का काम है?" पास्तुखोव ने जानना चाहा। "कमांडरी तो वे तुम्हें सौंपेंगे नहीं?"

दीविच पर इन चुटकियों का कोई असर नहीं पड़ रहा था। वह बड़े उत्साह से बातें कर रहा था, यह छिपाने का ज़रा भी प्रयत्न नहीं कर रहा था कि इन लोगों से मिलकर वह कितना खुश है।

"कमांडरी क्या करनी। आजकल नई टुकड़ी बनाना दुश्मन को खदेड़ने से ज़्यादा मुश्किल है। ऐसी गड़बड़ी मची हुई है – पूछिये मत! .. अभी थोड़े दिन पहले मैं आपको याद कर रहा था। पता है क्यों? याद है वह सिपाही, जो र्तीश्चेवो में हमें गिरफ़्तार करने लगा था?"

"चिट्टेवाला?"

"हां, हां। एक आंखवाला, दूसरी आंख उसकी गोले की किरच से खराब हो गई है। इपात इपात्येव।"

"तो?"

"वह मेरी टुकड़ी में भरती होने आया था। र्तीश्चेवो की बात याद करके हम खूब हंसे। मैंने उससे कहा, देख तू क्या करना चाहता था: भला आदमी क्रांति के लिए काम करता रहा है, और तू उसे हवालात में खींच ले चला था... मैं जब अस्पताल में था, तो आपके बारे में अखबार में पढ़ा था," दीविच ने आदर भाव से कहा।

"हुं," पास्तुख़ोव ज़रा रोबीले अंदाज़ में बोला। उसने दीविच की पेटी के बकलस को अपनी दो उंगलियों के बीच दबा लिया। "एक बात बताइये। क्या आप यह नहीं समझते कि आप ऐसे मामले में फंस गये हैं जिसका अंत बुरा होगा?"

दीविच ने धीरे से अपनी टोपी पीछे को खिसकाई।

"मामले में?" उसने पूछा। "यह मामला हमारा इतिहास बनायेगा।"

"पर आप इस इतिहास के शिकार होंगे!" पास्तुख़ोव ने तीखे स्वर में कहा और दीविच को ज़रा परे को धकेलते हुए उसका बकलस छोड़ दिया।

"हो सकता है," दीविच ने गम्भीरता से सहमति प्रकट की, पर तभी आंखें मींचकर, मानो नीचे से पास्तुख़ोव के चेहरे का निशाना लगाते हुए, चुनौती भरी चालाकी के स्वर में पूछा: "और अगर न हुआ, तो?"

"अगर न हुए?" पास्तुख़ोव क्षण भर को रुका, "अगर न हुए, तो इसका मतलब है, मैं बेवकूफ़ हूं।"

दीविच हंस पड़ा:

"अगर आप यही चाहते हैं..."

आस्या ने खतरे की अपनी तीव्र अनुभूति से यह समझ लिया कि उसे हस्तक्षेप करना चाहिये। उसने अपना सद्भावना की कांति से दमकता चेहरा दीविच की ओर मोड़ा, जिसे पहली भेंट से ही यह दमक याद थी:

"इस वक्त आप क्या कर रहे हैं?"

"नये रंगरूटों की एक पैदल कम्पनी लेकर यहां आया हूं। उसे उवेक तक ले जाना है और वहां स्टीमर पर विठाना है। मोर्चा विल्कुल पास ही है। कल सफ़ेद गार्डों ने कमीशिन पर कब्ज़ा कर लिया। सुना है आपने?"

पास्तुख़ोव ने तुरंत पत्नी की ओर देखा। आस्या ने अपनी बेचैनी चंचल मुस्कान में छिपा ली:

"तो यह स्टेशन आपके लिए अपनी जगह है। हम गरीबों को भी गाड़ी पर विठा दीजिये!"

"आप जा कहां रहे हैं?"

"वहीं – घर।"

"घर?" दीविच हंस दिया। "यह तो वो कहानी जैसी चीज़ है... सचमुच वलाशोव जा रहे हैं? कोई आसान काम तो नहीं। पर मैं कोशिश कर देखता हूं।"

वह भीड़ में गायब हो गया और वहुत देर तक नहीं लौटा। अंधेरा हो चला था जव उसने आकर वताया कि उसने स्टेशन के कमांडेंट से वात की है, वह कहता है कि पास्तुख़ोव खुद उससे आकर मिले। दीविच ने जल्दी-जल्दी उनसे विदा ली, उसकी कम्पनी गाड़ी में वैठ चुकी थी।

इस क्षण अगर पास्तुख़ोव को कोई यह वताता कि उसे दस दिन और दस रात मालगाड़ी के डिव्वे में कछुए की रफ़्तार से सफ़र करना होगा, न जाने कितने स्टेशनों और जंक्शनों पर रात-दिन खड़ा रहना होगा, और फिर भी वह वहां नहीं पहुंच पायेगा, जहां जाना चाहता है, तो वह शायद अपने परिवार के साथ यहीं स्टेशन के पार कहीं, मठ वाले

साहित्य शोध ... क्रमांक

4*

मोहल्ले में या उससे आगे इगूम्नोव खड्ड में कहीं पेड़ों की छाया में डेरा डाल लेता। पर उसने मन कड़ा करके गाड़ी में जगह पा ली और चल दिया, जैसे कोई जीर्ण-शीर्ण वेड़े पर अनजान सागर में सफ़र पर निकले।

एक वार फिर वह र्‌तीश्चेवो पहुंच गया। यहां सारा स्टेशन गाड़ियों के डिब्बों, घोड़ों, सैनिकों की मैदानी रसोइयों, घोड़ों के लिए चारे, भूखे मवेशियों, टूटी-फूटी मोटरगाड़ियों और लोगों से, अनगिनत लोगों से खचाखच भरा हुआ था। एक वार फिर उसने कमांडेंटों, अफ़सरों और कमिसारों के चक्कर लगाये, उनसे मिन्नतें कीं, मांग की कि उसे वलाशोव की गाड़ी पर विठा दें। वह दुवला और खस्ताहाल हो गया था। आस्या के चेहरे की रंगत जाती रही थी और उसकी मुस्कान फीकी पड़ गई थी। अल्योशा ओल्गा अदामोव्ना के घुटनों पर सिर टिकाये सोता या ऊंघता रहता था। चारों ओर धूल से सव कुछ मटमैला था और झुलसी स्तेपियों की उमस फैली हुई थी।

एक दिन सुवह जागने पर पास्तुखोव परिवार ने पाया कि उनकी गाड़ी पूरी रफ़्तार से दौड़ती जा रही है। मुर्झाये से काले चीड़ के पेड़ों के वीच जहां कहीं-कहीं भोज वृक्ष भी उग रहे, घड़घड़ाती और खड़खड़ाती गाड़ी ढलान पर चली जा रही थी। उनके डिब्बे को अनजान गाड़ी से कैसे जोड़ दिया गया, वे कहां जा रहे हैं और कव से – किसी को कुछ पता नहीं था। आखिर एक छोटे से स्टेशन पर उन्हें पता चला कि उनका डिब्बा एक खाली गाड़ी से जोड़ दिया गया है, जिसे कोज़्लोव ले जाया जा रहा है।

"भाड़ में जाये सव," पास्तुखोव वोला, "मेरी तो कुछ समझ में नहीं आता। क्या फ़र्क पड़ता है? कोज़्लोव तो कोज़्लोव ही सही..."

आस्या के चेहरे पर निराशा देखकर उसने जहां तक वन पड़ा शांत स्वर में कहा:

"यह तो वेहतर ही है। कोज़्लोव से हम जल्दी वलाशोव पहुंच जायेंगे – उधर से होकर... क्या नाम उस जगह का... ग्र्याज़ी..."

उसने ओल्गा अदामोव्ना की ओर देखा और सहसा आपे से वाहर होकर चिल्लाया:

"यह आंखें रगड़ना वंद कीजिये, देवी जी! आप ऐतिहासिक युग में रह रही हैं! और आपको हर वात के लिए तैयार रहना चाहिए... भाड़ में जाये यह सव!"

जुलाई के आरम्भ में रूसी कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) की केन्द्रीय समिति का पार्टी संगठनों के नाम पत्र प्रकाशित हुआ। इसका शीर्षक था: 'देनीकिन के खिलाफ़ लड़ाई में सारा ज़ोर लगा दो!' यह पत्र लेनिन ने लिखा था और इन शब्दों के साथ शुरू होता था:

"साथियो! समाजवादी क्रांति के लिए यह घड़ी सबसे नाज़ुक घड़ियों में से है और शायद यही सबसे नाज़ुक घड़ी है..."

इस पत्र में कोल्चाक और देनीकिन को सोवियत जनतंत्र के प्रमुख और एकमात्र खतरनाक शत्रु माना गया। साथ ही यह भी कहा गया था कि केवल एंटेंट* की मदद ही उन्हें मज़बूत बनाती है। और इस क्षण को संकट का क्षण स्वीकार करने के साथ-साथ पत्र में यह भी घोषित किया गया था कि सभी शत्रुओं पर विजय पा ही ली गई मानी जानी चाहिए: "हम एक शत्रु को छोड़कर शेष सभी शत्रुओं को परास्त कर चुके हैं: वह शत्रु है एंटेंट – ब्रिटेन, फ़्रांस तथा अमरीका का सर्वशक्तिमान साम्राज्यवादी पूंजीपति वर्ग। लेकिन हमने इस शत्रु के भी एक हाथ को, अर्थात् कोल्चाक को, पहले ही तोड़ दिया है; हमें अब केवल उसके दूसरे हाथ से, अर्थात् देनीकिन से, खतरा है।"

जनतंत्र पर उठे और अभी तक तोड़े न गये इस हाथ का सामना करने के लिए लेनिन ने पार्टी का आह्वान किया था कि वह सभी कार्यालयों के काम को युद्ध की स्थिति के अनुसार पुनर्गठित करे। उन्होंने यह सुझाया था कि बिना किसी हिचकिचाहट के कुछ समय के लिए उस सारे काम को बंद कर दिया जाये, जो युद्ध की दृष्टि से नितांत आवश्यक नहीं है। उन्होंने लिखा था: "पेत्रोग्राद के बाहर के मोर्चेवाले इलाके में और उस विस्तृत मोर्चेवाले इलाके में, जो इतनी तेज़ी के साथ और खतरनाक ढंग से उक्रइना में तथा दक्षिण में बढ़ता जा रहा है, हर चीज़ को युद्ध की दृष्टि से संगठित किया जाना चाहिये और हमें अपने सारे काम, सारे प्रयासों तथा सारे विचारों को युद्ध

---

* जर्मनी, आस्ट्रो-हंगरी और इटली के विरुद्ध १९०७ में गठित ब्रिटेन, फ़्रांस और ज़ारशाही रूस का साम्राज्यवादी आक्रमक गुट। – सं०

और केवल युद्ध के अधीन कर देना चाहिये। अन्यथा देनीकिन के धावे को परास्त करना असम्भव हो जायेगा। यह बात साफ़ है। इस बात को बिल्कुल साफ़ तौर पर समझ लिया जाना चाहिये और पूरी तरह इसपर अमल किया जाना चाहिये।"

यह पत्र ऐसे विश्वास से ओत-प्रोत था, जो हीरे की कनी जैसा अनम्य और तीक्ष्ण था। सारे देश में इस पर ऐसी प्रतिक्रिया हुई, जैसे पहाड़ों में निरंतर बढ़ती जाती प्रतिध्वनि। यद्यपि इसमें सारे देश के, सारी क्रांति के भविष्य की चर्चा थी, तो भी इसकी प्रत्येक पंक्ति किसी विशेष स्थान, किसी विशेष तथ्य, किसी अलग, विशिष्ट स्थिति पर चोट करती लगती थी। उदाहरणतः, जो लोग इन दिनों सरातोव की घटनाओं से सम्बन्धित थे उनके लिए यह बिल्कुल स्पष्ट था, कि पत्र में जिस विशिष्ट स्थान से अभिप्राय है, वह सरातोव ही है, विशिष्ट तथ्य सरातोव के, वोल्गा के निचले इलाके के सामाजिक तथ्य ही हैं; विशेष स्थिति, जिसे सारे रूस की स्थिति से अलग करके देखा गया है, सरातोव के पास के मोर्चे की स्थिति ही है। दूसरे शब्दों में, सरातोव में क्रांति के समर्थकों की नज़रों में यह पत्र आम तौर पर सारे जनतंत्र को, और खास तौर पर सरातोव को सम्बोधित था।

रागोज़िन ने एक बार दफ़्तर में यह पत्र पढ़ा और दूसरी बार घर पर मिट्टी के तेल के लैम्प की रोशनी में पेंसिल हाथ में लेकर पढ़ा और दो पंक्तियों में यह अर्ज़ी लिखी कि उसे वित्त-विभाग से हटाकर किसी सैनिक कार्य पर लगाया जाये।

उसे प्रदेश की पार्टी समिति में बुलाया गया। समिति के ब्यूरो के एक सदस्य ने उसे यह सूचना दी कि फ़िलहाल उसे वित्त-विभाग से सेवानिवृत्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि रागोज़िन के प्रयासों से वित्त-विभाग का काम अब कहीं थोड़ा ढंग से चलने लगा था, और उसके चले जाने से काम पर बुरा असर पड़ेगा। रागोज़िन इन आपत्तियों को सुनने के लिए तैयार था, उसके विचार में ये स्वाभाविक ही थीं। उसने जेब में से लेनिन का पत्र निकाला, जिस पर पेंसिल से तरह-तरह के निशान लगे हुए थे। 'गैर-फ़ौजी काम में कमी' शीर्षक खण्ड में उसने पेंसिल के गाढ़े निशान लगा पैरा ढूंढ़ा और उसे ऊंचे-ऊंचे पढ़ने लगा:

"'उदाहरण के लिए, सर्वोच्च राष्ट्रीय अर्थ-परिषद के वैज्ञानिक-तकनीकी विभाग को ले लीजिये। यह एक अत्यंत उपयोगी संस्था है, एक ऐसी संस्था, जो समाजवाद के पूरे निर्माण के लिए, हमारी समस्त वैज्ञानिक तथा तकनीकी शक्तियों का उचित हिसाव रखने तथा वितरण करने के लिए नितांत आवश्यक है। परंतु क्या यह ऐसी संस्था है, जिसके बिना काम ही न चल सकता हो? हरगिज़ नहीं। इसमें ऐसे लोगों को लगा देना इस समय सरासर अपराध होगा, जो **सेना में** या **प्रत्यक्ष रूप से** सेना के लिए तात्कालिक तथा सर्वथा अपरिहार्य कम्युनिस्ट काम में लगाये जा सकते हैं और लगाये जाने चाहिए।'"

"ठहरो-ठहरो ज़रा," रागोज़िन के विपक्षी ने उसे रोका। "तुम सोचते हो, हमने यह सब पढ़ा नहीं, इस पर विचार नहीं किया है?"

"पढ़ा तो होगा, पर तुम और दो-चार लाइनें तो सुनो। 'केन्द्रीय शासन में और प्रदेशों में इस प्रकार की अनेक संस्थाएं तथा संस्थाओं के विभाग हैं। समाजवाद को पूरी तरह स्थापित करने के अपने प्रयासों में हम फ़ौरन इस प्रकार की संस्थाएं स्थापित करना आरंभ कर देने के अतिरिक्त और कुछ कर ही नहीं सकते थे। परंतु यदि देनीकिन के ज़वर्दस्त हमले के सामने हम **अपनी पांतों को** इस ढंग से **पुनर्गठित करने** में असफल रहे कि **हर उस काम को**, जो सर्वथा अपरिहार्य नहीं है, **स्थगित कर दें** या उसमें **छंटनी कर दें**, तो हम मूर्ख या अपराधी होंगे।'"

"तो तुम्हारा क्या ख्याल है कि वित्त-विभाग वंद किया जा सकता है?"

"वित्त-विभाग में मुझे कम किया जा सकता है।"

"अगर यह मुमकिन होता तो हम तुम्हें वहां बिठाते ही नहीं।"

"उस वक्त यह ठीक था, उस वक्त," रागोज़िन ने अर्थपूर्ण लहजे में कहा और अपनी उंगली भी सिर के ऊपर उठाई। "तुमने देखा ही है, हम विज्ञान और तकनीक के खिलाफ़ तो नहीं हैं न? बिल्कुल खिलाफ़ नहीं हैं। पर अव इसका वक्त नहीं है। ठीक समझा न मैं? इसका वक्त नहीं है... वित्त का काम कोई दूसरा भी संभाल सकता है। इसके बारे में भी साफ़-साफ़ कहा गया है। यह देखो।"

उसने फिर से तह किया पत्र खोला, उसमें दूसरा निशान लगा

स्थान ढूंढ़ा और उंगलियों से चुटकी वनाकर पंक्तियों पर फेरते हुए पढ़ने लगा:

"'...हम कुछ समय के लिए इस वात का खतरा मोल ले सकते हैं कि ऐसी अनेक संस्थाओं को (या संस्थाओं के विभागों को), जिनमें ज़वर्दस्त छंटनी कर दी गयी हो, **एक भी कम्युनिस्ट के विना** छोड़ दें, उन्हें पूरी तरह पूंजीवादी कार्यकर्ताओं के हाथों में छोड़ दें।'"

"हां, हां, आगे पढ़ो," व्यूरो के सदस्य ने रागोज़िन को रुकते देखकर कहा और उसके हाथ से पत्र खींचने लगा। "आगे क्या कहा गया है? 'यह कोई वहुत वड़ा खतरा नहीं है, क्योंकि इनमें केवल उन्हीं संस्थाओं का सवाल है, जो सर्वथा अपरिहार्य नहीं हैं...' समझे? और तुम्हारा विभाग नितांत आवश्यक है।"

"मैंने भी पढ़ना सीखा है," रागोज़िन उठ खड़ा हुआ और मेज़ का चक्कर लगाकर व्यूरो के साथी से सटकर खड़ा हो गया। पहले की ही भांति वह कागज़ पर चुटकी चला रहा था, पर अव पढ़ नहीं रहा था, वल्कि पत्र में जो लिखा था, उसे आग्रहपूर्वक और सख्ती से अपने शव्दों में कह रहा था: "सवाल क्या है? सवाल यह है कि अगर हम विभाग को कम्युनिस्टों के विना छोड़कर उसका काम दस में से नौ हिस्सा कम कर दें, तो क्या हम मारे जायेंगे? इस सवाल का जवाव देने की ज़िम्मेदारी किस पर है? हर विभाग के अध्यक्ष पर या पार्टी इकाई पर। मैं विभाग का अध्यक्ष हूं कि नहीं? क्या मैं खुद इस सवाल का जवाव दे सकता हूं? या फिर पार्टी इकाई को मेरे वदले इसका जवाव देना है?"

"तुम्हारे वदले इसका जवाव दिया जा चुका है," व्यूरो के कामरेड ने झुंझलाकर कहा और उस पर अपना भार डाल रहे रागो-ज़िन को पीछे हटाया। "और जवाव भी पार्टी इकाई ने नहीं, प्रदेश समिति के व्यूरो ने दिया है। तुम पार्टी के आह्वान का उत्तर देना चाहते हो? शौक से दो। जो लोग सेना के लिए, युद्ध के लिए काम कर रहे हैं, उनको ज़्यादा पैसा दो, और उनके खर्चे में कटौती करो, जिनका काम अभी युद्ध के लिए खास लाभदायक नहीं है। देखो न वहां ज़ातोन में, जहां हमारे जंगी जहाज़ों की मरम्मत होती है, खरादियों की कमी है। उनके खर्चे का खाता वढ़ा दो, तो शायद उन्हें खरादी भी मिल जायें।"

रागोज़िन वेढ़ब मुद्रा में खड़ा रह गया, मानो अचानक पीड़ा ने उसे आ धरा हो।

"मुझे क्यों नहीं बताया कि ज़ातोन में खरादियों की ज़रूरत है? मैं भी तो फ़िटर हूं।"

"फिर अपनी ले बैठे! यहां लोगों को खराद से हटाकर ज़िम्मेवारी के ओहदों पर लगाया जा रहा है, और एक तुम हो कि अपनी ज़िम्मेदारी छोड़कर खराद पर जाना चाहते हो!"

"नहीं, भई, मेरा मतलब यह नहीं था। रेलवे डिपो में अभी भी कुछ पुराने लोग होंगे, जो शायद मुझे अभी तक भूले न हों – मैंने कितने साल वहां फ़िटर का काम किया है। उन्हें ज़ातोन में काम पर लगाया जा सकता है। सौंपते हो मुझे यह काम?"

"सौंपने का क्या है? जाओ करो। बस अपनी बुनियादी ज़िम्मेदारी को मत भूलना।"

रागोज़िन ने हौले से आंख मारी:

"मैं ज़िम्मेदारी थोड़ी कम कर लूंगा। दस में से नौ हिस्सा तो नहीं, हां आठ हिस्सा।"

"यह मज़ाक का वक्त नहीं है।"

"अच्छा, अच्छा!" दरवाज़े पर पहुंच गये रागोज़िन ने हंसते हुए जवाब दिया। "अच्छा, सिर्फ़ सात, सात हिस्सा, ज़्यादा नहीं... कसम से!"

इस तरह पहले वह रेलवे डिपो में पहुंचा – वर्कशॉप के धुएं भरे शेड तले, जहां टूटे हुए काले शीशों में से आती हवा सीटियां बजा रही थीं, और फिर ज़ातोन में, खुले आसमान तले, जहां रिपिटें लगने की ठकाठक और रेतियों तथा आरियों का शोर गूंज रहा था।

डिपो में दो ही ऐसे खरादी मिले, जिन्हें पुराने दिनों की याद थी और उन्होंने दिल खोलकर पुराने दोस्त से गपशप की, पर उनमें से एक ही ज़ातोन में काम करने पर राज़ी हुआ ("श्रमदान के तौर पर" जैसा कि उसने कहा), क्योंकि रेलवे डिपो में ही इतना काम था कि दम लेने की फ़ुर्सत नहीं थी। पर हां दोनों ने यह वायदा किया कि वे जवान मज़दूरों में से कुछ को ज़ातोन में मदद करने के लिए मना लेंगे।

ज़ातोन में रागोज़िन ने सबसे पहले वहां के संगठन को आर्थिक

सहायता दी। संगठन छोटा सा ही था और युद्ध के कारण उसके सम्मुख प्रस्तुत कार्यभारों को निभाना उसके लिए मुश्किल हो रहा था। फिर जहाज़ों का चक्कर लगाते हुए रागोज़िन एक टगबोट पर पहुंचा, जिसके अड़वाल की लोहे की परतों के टांके खोले जा रहे थे। वहां वह मज़दूरों की मदद करने लगा, और फिर शाम तक घन चलाता रहा। इसके बाद रोज़ सुबह घंटे भर को ज़ातोन आने पर वह अवश्य अपनी इस "चहेती" टगबोट पर पहुंच जाता, और यहां उसने एक बार फिर उन सब औज़ारों से काम किया, जो कभी उसके हाथ पर खूब अच्छी तरह चढ़े हुए थे। प्रबंधक शीघ्र ही इस बात के आदी हो गये कि रागोज़िन ज़ातोन के काम की देखभाल करता है, और उसे पता भी न चला कब उसकी जवाबदेही हो गई: जहाज़ों की मरम्मत इतनी धीरे क्यों हो रही है? उसने बस अपनी मूंछों पर ताव दिया:

"वाह रे बुद्धू, ओखली में सिर दे डाला!"

त्सरीत्सिन पर शत्रुओं का कब्ज़ा होने के तुरन्त बाद ही पूर्वी मोर्चे पर कोल्चाक के विरुद्ध सफलतापूर्वक काम करते रहे नदी बेड़े के जहाज़ों को कामा नदी से वोल्गा के निचले भाग में बुला लिया गया। ऐसा उन्हीं दिनों हुआ जब लाल सेना ने पेर्म को मुक्त कराया।

जहाज दक्षिण में सैनिक कार्रवाई के क्षेत्र में पहुंचे और उन्होंने वोल्गा के तटों पर लड़ रही फ़ौजों की अपने तोपख़ाने से मदद की, पर इन टुकड़ियों के साथ ही उन्हें पहले कमीशिन तक और फिर और ऊपर को कोई सौ मील तक पीछे हटना पड़ा। इस समय तक दसियों जहाजों का बेड़ा सैनिक कार्रवाइयों में भाग ले रहा था, ये जहाज़ नदी में कई मील के फ़ासले पर फैले हुए थे, उनके पास लगभग सौ तोपें थीं। पीछे हटने के बाद जहाज़ों की एक टुकड़ी को फिर से शत्रु के चंडावल में भेजा गया, इस उद्देश्य से कि वे व्रांगेल की पिछली कतारों को तबाह करें। इस अभियान में जहाज़ों के नौसैनिकों की कई छोटी-छोटी टुकड़ियां किनारे पर उतारी गई, जिन्होंने सफ़ेद सेना की टुकड़ियों में भगदड़ मचा दी। जहाज़ों ने अचानक ही कमीशिन पर और नगर के सामने वोल्गा के दूसरे तट पर स्थित निकोलायेव्स्काया मुहल्ले पर गोलाबारी की, ताकि सरातोव के पास बढ़ते आ रहे देनीकिन के मोर्चे को रोका जा सके।

इस अभियान में गम्भीर क्षति भी पहुंची। दुश्मन नदी बेड़े पर हवाई जहाज़ों से ज़ोरदार बमबारी करता रहा था। कुछ जहाज़ों को मरम्मत के लिए जाना पड़ा। कई दूसरे जहाज़ों की भी मरम्मत हो रही थी, या उन्हें फ़ौजी काम के लिए तैयार किया जा रहा था। इन जहाज़ों को वोल्गा नौसैनिक बेड़े की उत्तरी टुकड़ी में शामिल होना था, जिसे सरातोव की शत्रुओं से रक्षा करनी थी। नगर अब समुद्री बंदरगाह सा लगने लगा था, जहां गोदियों में जंगी जहाज़ खड़े थे, सड़कों पर काले सागर और बाल्टिक सागर के बेड़ों के नौसैनिक दिखाई देते थे। नगर की सारी दिनचर्या में ही नौसैनिक पुट आ गया था, जिससे वोल्गा की शांतिमय जहाज़रानी अभी हाल ही तक पूर्णतः अपरिचित थी।

मंद गति वाली टगबोटें, जो सदा से बजरों के कारवां खींचती आई थीं, और स्वयं बजरे भी जिनके सुक्कान-खम्भे पर खेवैयों के रंगबिरंगे कपड़े टंगे होते थे, जल्दी-जल्दी आग उगलते किलों में बदले जा रहे थे। टगबोटें गनबोटें बन रही थीं और बजरों से नौसैनिकों को हमलों के लिए तट पर उतारने या पैदल सैनिकों को धावे के समय नदी पार कराने के काम के लिए तैयार किया जा रहा था। कई गनबोटों पर बड़े-बड़े हथियार लगे थे–सबसे मज़बूत बोटों पर दो चार इंच की तोपें, दो तीन इंच की विमानभेदी तोपें, चार मशीनगनें लगी थीं, उन पर वायरलैस सेट और दूरमापी भी रखा गया था।

गनबोट का रूप धरकर टगबोट अपना सीधा-सादा स्वरूप खो बैठती। उस पर लाल नौसैनिक बेड़े का झंडा फहराता। अब यहां मल्लाहों की नहीं नौसैनिकों की शब्दावली चलती: वह किनारे नहीं लगती, लंगर डालती। धीमे-धीमे तय करते फ़ासले को वह किलोमीटरों में नहीं नापती: अब इसे मीलों में नापा जाता। उसे देखकर कोई चाव से यह नहीं कहता: "वाह, क्या शानदार चाल है!" नहीं, अब कहा जाता: "वह बारह समुद्री मील प्रति घंटे की रफ़्तार से बढ़ रही है"। डेक पर अब कप्तान नहीं कमांडर खड़ा होता। और बोट के पुराने कर्ता-धर्ता मल्लाहों का भी नाम अब नौसैनिक होता।

वोल्गा के पोतों पर बस एक ही आदमी था, जिसका स्थान कोई नौसैनिक नहीं ले सकता था। और यह आदमी मज़े में इन सब नई बातों को देखते हुए मन ही मन सोचता: किये जाओ जो मर्ज़ी। मेरे

विना तो तुम्हारा यह समुद्री किला पलक झपकते ही ज़मीन पकड़ लेगा, वोल्गा-मैया के मर्म को तो मैं ही जानता हूं कि कहां छिछला पानी है, कहां पाट में चाकी है, कहां उसमें ओंड़े कुंड हैं और कहां दो धाराओं की टक्कर से सिल पड़ती है। यह आदमी वोल्गा के तट पर ही जन्मा जहाज़रान था, जो जंगी जहाज़ों को उथले जल में कठिन यात्रा पर ले जा सकता था। वैसे तो स्वयं गनवोटें भी अपने सारे परिवर्तनों के बावजूद असल में टगवोटें ही रहती थीं, जो पानी पर छपछप पैडल मारती चलती थीं और कभी नहीं भूलती थीं कि उनका डुबाव दो फ़ुट से कम ही है और इंजन की क्षमता मुश्किल से पच्चीस अश्व शक्ति।

ऐसी ही एक छोटी सी टगवोट से रागोज़िन को लगाव हो गया था। वोट का नाम था 'जोखिमी'। रागोज़िन को यह नाम पसंद आया। वालंटियर मल्लाहों ने इसे बख्तरबंद किया था, पर जब नौसैनिक 'जोखिमी' को जंगी बेड़े में शामिल करने आये, तो वे दंग रह गये। डेक की रेलिंगों के साथ-साथ छत बनाने के मामूली टीन से चौड़ा अड़वाल बना दिया गया था और उसके बीच की खाली जगह ओकम से भर दी गई थी। कहीं-कहीं अड़वाल में छेद छोड़ दिये गये थे, जिनमें से मशीनगनें और बंदूकें चलाई जा सकती थीं। गलही और दबूसा खुले थे, यहां मैदानों में काम आनेवाली पहियेदार तीन इंच की दो तोपें रखी हुई थीं। तोपों को डेक से बांधा नहीं गया था।

"अरे भाइयो, अगर तुमने अपने इस दुर्ग से गोले दागे, तो ओकम तो जल उठेगा और अड़वाल भी नदी में जा गिरेगा। नहीं भाइयो, यह 'जोखिमी' के लिए भी बहुत जोखिम का काम है। चलो, फिर से इसे ठीक करें," नौसैनिकों ने कहा।

अड़वाल हटाकर फिर से सारा काम करने का आदेश दिया गया। रागोज़िन जब पहली बार वहां पहुंचा था, तो तोड़ने का काम पूरे जोरों पर चल रहा था। लोगों का यह जोश देखकर वह भी काम में लग गया। मैकेनिक और मल्लाह, कोयला झोंकू और हम्माल, जिन्होंने अपनी गैरफ़ौजी, वोल्गाई समझ से जनतंत्र की रक्षा के लिए यह दुर्ग बनाया था, अब उसे बेरहमी से तोड़ रहे थे और फिर से दिन-रात लगाकर उसे नौसैनिकों की फ़ौजी समझ के अनुसार बनाने जा रहे थे।

रागोज़िन को लगा कि सारी उम्र वह ऐसा ही काम करना चाहता रहा है – जिसमें खून-पसीना बहे, थकावट से चूर होकर आदमी ढह जाये, ऐसा काम, जो मज़दूरों द्वारा पा ली गई और शत्रु द्वारा खतरे में डाली गई सच्चाई की रक्षा के उच्च ध्येय से प्रेरित हो। पर वह यह भी नही भूल सकता था कि वित्त-विभाग के कमिसार के दायित्व से उसे मुक्त नहीं किया गया है और उसने इस दायित्व को दस में से न नौ और न सात ही, बल्कि सिर्फ़ कही दो हिस्सा ही, जैसे कि वह कहता था "बस इत्ता सा", ही कम किया है। और घंटा-आध घंटा यहां काम करके ज़ातोन के फाटक से वाहर निकलता, जहां वंदूक उठाये नौसैनिक पहरा दे रहा होता, वह पसीने से पर होता, ज़ंग और तेल से उसके हाथ पीले पड़े होते, पर वह थकावट से चूर न होता, वल्कि वदन में मीठी थकन होती, और उसे इस वात पर ज़रा भी खीझ न होती कि उसे फिर से वे ढेरों कागज़ देखने होंगे, जिनमें प्रायः कोई शव्द न होता, बस आंकड़े ही आंकड़े होते और असंख्य शून्य लगे होते।

परन्तु एक बार जव वह फाटक से वाहर निकला और अपनी खस्ताहाल वग्घी पर, जो सारी गर्मियां उसकी अच्छी सेवा करती रही थी, चढ़ने लगा, तो सहसा उसे कुछ कमी महसूस हुई, मानो कोई ज़रूरी चीज़ कही भूल आया हो और यह याद न कर पा रहा हो कि क्या भूला है, मानो अभी-अभी उसके हाथों में कुछ था, पर अव हाथ खाली थे।

कुछ छोकरे सड़क के किनारे छोटे से नाले के पास खेल रहे थे। सवसे बड़े ने ईट के टुकड़े पर ठोकर मारी और उसे नाले में फेंक दिया, उसके वाद सवने अपने-अपने मतलव का पत्थर ढूंढ़ते हुए यही किया। सवसे छोटे को इससे संतोप नहीं हुआ, उसने दोनों हाथों से भारी ईट पकड़ी और खूव ज़ोर लगाकर उसे नाले में फेंक दिया। साथियों में से कोई भी उसकी ओर ध्यान नहीं दे रहा था, और वह उनका आदर पाने की पूरी कोशिश करता लगता था।

यह नन्हा पहलवान किसी वात में उसे पाव्लिक पारावुकिन जैसा लगा।

"क्यों भई ..." रागोज़िन ने कोचवान से पूछा, "अगर हम उस

पहाड़ी वाली सड़क पर चल दें तो?.. सिम्बीर्स्क की सड़क पर पहुंच जायेंगे न?"

कोचवान को इसमें कोई एतराज़ न था। और सहसा रागोज़िन ने उसे उधर गाड़ी ले चलने को कहा।

अपने बेटे को खोजने का इरादा उसके मन में सदा रहा था। पर वह एक झोंके की तरह मन में उठता था – कभी दिल में टीस उठती और कभी फिर मन शांत हो जाता। यही कोई महीना भर पहले रागोज़िन अचानक आश्रम में चला गया था, इस आशा से कि शायद लड़के का कोई अता-पता चल जाये। यह विचार उसे बेचैन किये रहता था कि उसका बेटा शायद सुधारगृह में हो। और हो भी कहां सकता है? जेल में पैदा हुआ, अनाथालय में पला होगा, कैसी शिक्षा मिली होगी? बेशक, आवारा घूमता रहा होगा, विगड़ गया होगा, हो सकता है, चोरी भी करता हो। नहीं किनारे, स्टेशन पर और बाज़ारों में कितने ऐसे अभागे घूमते-फिरते हैं।

आश्रम के अनाथालय में न किसी बच्चे और न ही किसी शिक्षक को रागोज़िन नाम के लड़के का कुछ पता था। एक शिक्षक, जो यहां दूसरों से ज़्यादा अरसे से काम कर रहा था, कुछ याद करने लगा कि जब वह यहां लगा ही था, उन दिनों एक लड़के को किसी अपराध के लिए गुस्योल्का सुधारगृह में भेजा गया था और उसका नाम पता नहीं रेमेज़ोव था या रागोज़िन। अनाथालय में कोई कागजात नहीं बचे थे, पुराने शिक्षक चले गये थे, पहले के बच्चों में से भी कोई नहीं रहा था, यहां निरंतर सब कुछ बदलता रहता था। बाल संस्थाओं के लिए उत्तरदायी संगठनों में इस बात के लिए खींचातानी चलती रहती थी कि बच्चों की शिक्षा का, उनके लालन-पालन का अधिकार किसे ज़्यादा था, क्योंकि इस काम में एक साथ ही शिक्षा, स्वास्थ्य, न्याय और सामाजिक कल्याण के जन कमिसारियत लगे हुए थे। ऐसे पेचीदा हालात में घने जंगल की भांति बालक का खो जाना कोई बड़ी बात न थी, खास तौर पर जबकि यह भी पता नहीं था कि बालक है भी कि नहीं।

अनाथालय से बाहर निकलते हुए आश्रम के उपवन में रागोज़िन ने फूले से चेहरे वाले मठवासी को देखा, जो छड़ी का सहारा लिये

और ज़मीन में आंखें गड़ाये घूम रहा था। शिक्षक से रागोज़िन को पता चला कि यह अनाथालय का पड़ोसी है—विशप, और उसने खिसियाते हुए सोचा: विशप तो यहां सही-सलामत है, और उधर बच्चों की संस्थाओं की गुत्थी में उलझकर शैतान भी मुंह के बल गिरेगा। आखिर ये विशप-विशप तो अतीत की बातें हैं न? बिलकुल। और बच्चे भविष्य हैं? सही बात। बस तो सोचो बैठकर...

प्रिस्तान्नोये गांव की उजाड़ सी सड़क पर हिचकोले खाते हुए रागोज़िन वे सब बातें याद कर रहा था, जो उसने कभी गुस्योल्का के बारे में सुनी थीं। एक ज़माना था जब यह नाम सुनकर ही लोग कांप उठते थे। गुस्योल्का अल्पायु अपराधियों को सख्त सज़ाएं देने के लिए मशहूर था। अगर किसी ढीठ बच्चे को डराना होता, तो उसे गुस्यो-ल्का भेज देने की धमकी दी जाती और अगर किसी के बारे में यह कहा जाता कि वह गुस्योल्का से आया है, तो बच्चों से ज़्यादा बड़े डर जाते।

शीघ्र ही कुछ मनहूस सी पक्की इमारतें नज़र आईं। उनके चारों ओर फैले मैदान में इक्के-दुक्के पेड़ उग रहे थे और मैदान बाड़ से घिरा हुआ था। दूरी पर वोल्गा चमक रही थी। दायें तट पर धूप में झुलसी पहाड़ियां गेरुए-पीले रंग की लग रही थीं।

सड़क पर बढ़ते हुए वे बागों और क्यारियों तक जा पहुंचे। क्या-रियों में ताज़ी हरियाली छाई हुई थी। बाग में पेड़ों को पानी दिया जा रहा था। स्लेटी रंग के कपड़े पहने किशोर लड़के-लड़कियां सेब के पेड़ों तले गुड़ाई कर रहे थे। लड़के-लड़कियां जानदार लगते थे, थोड़ी दूर पर उनके हंसने की आवाज़ आ रही थी। लगता था कि बीते दिनों में गुस्योल्का के चारों ओर शहादत की जो ज्योति थी, वह अब फीकी पड़ गई थी।

डायरेक्टर कहीं गया हुआ था, सो रागोज़िन को बाग में ही लड़की सी लगनेवाली अध्यापिका से बात करनी पड़ी। बड़े सहज भाव से युव-ती ने कहा कि उसे स्कूल के सब मामलों की उतनी ही जानकारी है, जितनी डायरेक्टर को, क्योंकि वह खुद गुस्योल्का में सुधरी है और अब दूसरों को सुधार रही है।

"अच्छा सुधार हो रहा है?" रागोज़िन ने अविश्वास के लहजे में पूछा।

"और नहीं तो क्या?"

रागोज़िन नाम के लड़के के बारे में उसने ज़रा भी सोचे बिना तुरंत यों जवाब दिया कि रागोज़िन ने उसके शब्दों पर ज़रा भी विश्वास नहीं किया।

"हां, था ऐसा लड़का। पर वह वसंत में भाग गया।"

"कैसे भाग गया?"

"कैसे यहां से भागते हैं? मुझे अच्छी तरह तो वह याद नहीं – वह वर्कशाप में था, बागबानी में नहीं।"

"कितनी उम्र थी उसकी?"

"यही कोई चौदह साल।"

"हां, ज़रूर गप हांक रही है," रागोज़िन ने मन ही मन फ़ैसला किया और दफ़्तर जाने का रास्ता पूछा। उसने रास्ता दिखाया – पहले सीधा जाइये, फिर उधर दाईं ओर की उस इमारत की ओर। पर जब वह कुछ कदम दूर चला गया, तो पीछे से चिल्लाई:

"वहां कोई नहीं है। आज सब आलू खोदने गये हैं।"

वह खाली हाथ लौट गया। प्रत्यक्षतः, वह गलत रास्ते पर चल निकला था, यहां कोई और ही था। उसे बिलकुल दूसरे ढंग से खोजना चाहिए था – नीचे से नहीं, जहां हज़ारों बच्चे खाड़ी में तैरते पौनों की तरह एक जैसे थे, बल्कि ऊपर से, जहां से कोई रोशनी रहस्यमयी गहराई को बींध सकती थी और एकमात्र आवश्यक मछली को प्रकाश में ला सकती थी। आखिर कहीं तो यह रोशनी होनी चाहिए! अभिलेखागारों में, पुराने रजिस्टरों में कहीं तो एक निश्चित तिथि और निश्चित क्रमांक पर उस उपेक्षित, पर प्यारे बच्चे का जिक्र होगा, जो प्योत्र पेत्रोविच और उसकी पत्नी क्साना का सगा बेटा था।

रागोज़िन काम पर पहुंचा, तो उसका मन उचाट था और उसे काफ़ी देर भी हो चुकी थी। बहुत से लोग उसका इंतजार कर रहे थे। एक अजीब जोड़ा झगड़ा-बगड़ा करके अपनी बारी से पहले ही उसके कमरे में घुस आया।

"कामरेड रागोज़िन! यह आपके यहां क्या हो रहा है?" आगंतुक चिल्लाया।

"हद हो गई!" उसकी साथिन भी उसी लहजे में बोली।

सीधे कटे काले स्याह बालों वाला हब्शी सा लगता विद्या॰ पनामा टोपी और सुनहरी बटनों वाली सुरमई जैकट पहने था। राग॰ ज़िन के कहे बिना ही वह मेज़ के पास रखी कुर्सी पर बैठ गया, जबकि अमेज़ोन रणबांकुरी सी लगती उसकी साथिन खड़ी रही। किशोरी के से चेहरे और आकृति के बावजूद वह बड़े रोब से पेश आ रही थी

मसला यह था कि पांच दिन से वित्त-विभाग में उनकी अर्ज़ी पड़ी हुई थी, जिसमें स्कूलों के उपविभाग की ओर से प्रदर्शनी आयोजित करने के लिए तुरंत आवश्यक पैसों की मांग की गई थी।

"आपके ख्याल में पांच दिन बहुत ज़्यादा हैं?" रागोज़िन ने रुखाई से पूछा।

"हद है!" लड़की बड़बड़ाई।

"फ़ौरी मांग है! तो भी पांच दिन हो गये! हफ़्ता हो चला है!" विद्यार्थी गुस्सा हो रहा था। "हमारा काम पूरा हो चला है, और आप उसे ठप्प करने पर उतारू हैं!"

"नहीं, मुझे लगता है, अभी ठप्प नहीं हुआ," रागोज़िन कुटिल मुस्कान के साथ बोला।

"क्या मतलब?.. थोड़े से पैसों के पीछे!" विद्यार्थी की साथिन ने मानो घिन के साथ कहा, जबकि विद्यार्थी ने अपनी टोपी उतारी और अपने कलाकारों के से बाल झटके।

"स्कूलों के उपविभाग ने हमें प्रदर्शनी के आयोजकों के नाते आवश्यक राशि पाने भेजा है। प्रदर्शनी लग चुकी है, पर हम उसे खोल नहीं सकते, हमारे पास कैटलाग और निमंत्रण पत्र छपवाने के लिए पैसे नहीं हैं।"

"ये हमारे पैसे हैं, आपके नहीं। आप तो बस खज़ांची हैं," फिर से युवती बोली, खज़ांची शब्द उसने ऐसी घिन के साथ कहा, मानो वह कोई कीड़ा हो।

"हम बच्चों के चित्रों और मूर्तियों की नगर प्रदर्शनी खोल रहे हैं," विद्यार्थी हठधर्मी से अपनी बात कहे जा रहा था, "ताकि पहली बार श्रम विद्यालयों की उपलब्धियां दिखा सकें और दूसरे कार्यों की ..."

"तो खोल लो न," रागोज़िन ने उसे टोका, "मेरा इससे क्या वास्ता है?"

"अच्छा जी, आपका कोई वास्ता ही नहीं? तो फिर कहां हैं हमारे पैसे, जो आपने गैरकानूनी ढंग से रोक रखे हैं?" युवती ने गुस्से से कहा।

रागोज़िन ने होंठ भींचकर जवाब दिया:

"इस काम के लिए अभी पैसे नही मिल सकते और मेरे पास अब बात करने का वक्त भी नहीं है। नमस्ते।"

"सुनिये तो! ठीक है हम कैटलाग नहीं छापेंगे, पर निमंत्रण-पत्र ही छपवाने दीजिये!" सहसा विद्यार्थी मिन्नत करने लगा और उसका चेहरा भी अब हब्शी जैसा नहीं रहा।

"अखबार में निमंत्रण छाप दीजिये।"

"पर... पर हमारे पास इसके लिए भी पैसे नही हैं!"

रागोज़िन हंस पड़ा।

"मैं क्या करूं, प्यारे कामरेडो! आप भी समझने की कोशिश कीजिये न कि आजकल तुम्हारे इन बचकाना कामों से ज़्यादा ज़रूरी काम हैं।"

"बचकाना काम?" स्तब्ध युवती चीखी और उसने अपनी छोटी-छोटी मुट्ठियां उठाकर मेज के सिरे पर रखीं। "आप यहां अपने बही-खातों में ऐसे मगन हैं कि आपको यह खबर ही नहीं कि दुनिया में क्या हो रहा है! आप ज़िंदगी से कट गये हैं, सच्चे नौकरशाह की तरह।"

रागोज़िन की आंखें फैल गई। यह चिड़िया क्या चीं-चीं कर रही है? दुनिया में क्या हो रहा है, इसे ज़्यादा पता है? रागोज़िन नौकरशाह है? नहीं, उसकी कल्पना में नौकरशाह की तस्वीर कुछ और रही है—ऐसा थोड़ा गोल-मटोल सा, या फिर कम से कम सोने का दांत तो हो।

"आपको तो बस इन्कार करना ही आता है," युवती रुकने में ही नहीं आ रही थी। "आप क्रांतिकारी पहलकदमियों में बाधा डालते हैं! हम श्रम पर आधारित स्कूल बना रहे हैं, जनतंत्र के लिए नये नागरिक शिक्षित कर रहे हैं! आप आकर देखें तो हमारी प्रदर्शनी, बजाय इसके कि..."

"देखूंगा, देखूंगा," रागोजिन ने फिर से उसे टोका। "देखूंगा किन कामों में तुम लोग पैसा उड़ाते हो।"

उसे सचमुच ही गुस्सा आ गया था और उसने एक तरह से इन जवानों को निकाल बाहर किया।

परन्तु इस भेंट की याद में जवानी की एक उमंग थी, और कुछ दिन बाद निमंत्रणपत्र पाकर उसे खुशी हुई। निमंत्रणपत्र जल रंगों से बनाया गया था, लाल और हरी लालटेनों से सजे कागज़ पर बड़े जतन से ये शब्द अंकित थे, जिनके पीछे उसे बाल स्वर सुनाई दिया: "प्रिय कामरेड, हमारी प्रदर्शनी के उद्‌घाटन में आइये, और हमारे चित्र तथा मूर्तियां देखिये।"

"छपे निमंत्रणपत्रों से कितना सुंदर है! और कितनी होशियारी से बनाया गया है!" हंसते हुए उसने कहा।

उसने फ़ैसला किया कि ज़रूर थोड़ी देर को यह देखने जायेगा कि ये नन्हे अक्लमंद क्या दिखा रहे हैं। "नहीं तो, भई, कहीं सचमुच ही ज़िंदगी से कट जाऊंगा," वह फिर से हंस दिया और निमंत्रणपत्र को उसने संभालकर जेब में रख लिया।

२१

प्रदर्शनी नगर के केंद्र में स्थित हॉल में लगी, और उसके उद्‌घाटन से पहले ही निश्चित क्षेत्रों में उसकी काफ़ी चर्चा रही। नगर में कला की अपनी परम्पराएं थीं – इसे प्रांतीय नगरों में सबसे पुराने अपने रादिश्चेव संग्रहालय और कला विद्यालय पर गर्व था। यहां के कलाकार यूरोपीय कलाकृतियों के आधार पर शिक्षित हुए थे – संग्रहालय में बर्बीज़ोन और बोगोल्यूबोव शैली के चित्र थे। परन्तु क्रांति पूर्व के वर्षों में यहां के कला-जीवन में तरह-तरह की अतिवादी प्रवृत्तियों का बवंडर आया था, और नवीनतम प्रयोगवादियों द्वारा बिछाये गये दस्तरखान में बोरीसोव-मुसातोव के चटकीले रंग कुछ ज़्यादा ही चटपटे लगते थे। यहां परमवादियों (सुप्रीमिस्टों) के चित्र भी थे, जिनकी प्रमुखतया दो रंगों – लाल और काले में बनी ज्यामितीय आकृतियों की पहेलियां देखकर सरातोव वाले चकरा जाते थे।

बाल-प्रदर्शनी पर चर्चा इन चित्रकारों के दायरे में ही चल रही थी, जो खास बड़ा नहीं था। गर्मागर्म बहसों के दो

5*

विषय थे। पहला विषय कला की शिक्षा की विधि का था। इस नई विधि के अनुसार शिक्षक पृष्ठभूमि में चला जाता था, जबकि शिक्षार्थी अग्रभूमि में आता था। बच्चों को इस बात की पूरी आज़ादी थी कि वे संसार को जिस तरह देखते-समझते हैं, वैसे ही उसे अपने साधनों से व्यक्त करें। कल्पना की उड़ान को बहुत महत्व दिया जाता था। पुराने श्रेष्ठ चित्रों की नकलें करना, उनके आधार पर चित्र बनाना यह सब निषिद्ध था, माडल से चित्र उतारना आवश्यक नहीं था। दूसरा विषय था कला का ध्येय। क्या कला का ध्येय अभिरुचि विकसित करना है? किस दिशा में यह अभिरुचि विकसित की जानी चाहिए? या फिर सारी बात यह है कि दर्शक कलाकृति को किस हद तक समझ पाता है? जो लोग सौंदर्यबोध-शिक्षात्मक ध्येय का समर्थन करते थे, वे विभिन्न प्रवृत्तियों के अपने पुराने झगड़े में फंस जाते थे। क्या सौंदर्य शाश्वत है? कला के विकास का क्या अर्थ है? फ़ीडियस या रोदेन? "कला जगत" या भविष्यवादी? जो लोग यह कहते थे कि कला ऐसी होनी चाहिए जिसे सब समझ सकें, उन्हें ये विवादी हीन दृष्टि से देखते थे: "समझ सकें" का क्या मतलब है? – वे पूछते। समझने की ही बात है, तो "पेरेद्वीझनिकी"* शैली के चित्र ही नहीं, ब्रोकर एण्ड कं० के साबुन के रैपर भी समझ में आते हैं। आप नई पीढ़ी को किस दिशा में ले जायेंगे?

अंततः ये मुट्ठी भर दार्शनिक उद्घाटन के समय उन लोगों की भीड़ में खो गये, जो केवल कौतूहलवश यहां चले आये थे, यह देखने कि स्कूलों में क्या हो रहा है, और क्या सचमुच बच्चे रोचक चित्र बना सकते हैं।

रागोज़िन यह देखकर हैरान हुआ कि काफ़ी लोग जमा हुए हैं। हां, अधिकांश लोग उसकी भांति ही दो मिनट को आये थे – किसी के पास इन कामों के लिए समय नहीं था, युद्ध नगर के द्वार पर दस्तक दे रहा था, और यहां बड़े लोग गुड्डे-गुड़ियां खेल रहे थे। लेकिन रागो-जिन इससे भी अधिक चकित तब हुआ, जब वह उजले हॉल में घुसा

---

* रूसी यथार्थवादी चित्रकार, जो प्रदर्शनियों का आयोजन कर कला का प्रचार करते थे। – सं०

और आंखों में दीवारों पर टंगे चित्रों के रंग-विरंगे धब्बे चौंधने लगे – उसकी आंखों के लिए यह एक विचित्र अनुभूति थी।

वह चित्र देखने लगा। पहली नज़रों में ये आम तस्वीरों जैसे ही थे। जिनके अपने बच्चे हैं, वे ऐसी तस्वीरें अच्छी तरह जानते हैं। चिमनियों वाले घर, उनके पास वाड़ें, पेड़, कुत्ते, घोड़ा-गाड़ियां, सूरज, हिम के फायों जैसे तारे। टमाटरी लाल रंग के झंडे उठाये काले-काले छोटे-छोटे लोग। लड़ाई: तोप आग उगल रही है, सारे चित्र पर बैंगनी धुआं छाया हुआ है। फिर से लड़ाई: बिना सींगों की सफ़ेद बकरियों पर रिसाला दौड़ा जा रहा है। एक बार फिर लड़ाई: फ़ीरोज़ी रंग की घास पर मरा हुआ सैनिक पड़ा है और उसके बगल में पत्र, जिस पर बहुत ही छोटे-छोटे अक्षरों में लिखा है: "तुम्हारा बेटा वो-लोद्या ..."

रागोज़िन को हर चित्र में व्यक्त विचार देखने की आदत थी। यहां कुछ और ही बात थी, जो उसे आकर्षित कर रही थी। सहसा दो मिलते-जुलते चित्रों को देखकर वह समझ गया कि यह "कुछ और" क्या है। उसने नींबू के रंग का ऊंट देखा, जो हल्के गुलाबी, पानी मिली अंगूरी के रंग के रेगिस्तान में खड़ा था। इस चित्र में अजीब उदासी थी, रेगिस्तान की सारी निराशा, ऊंट का सारा अकेलापन इस पीले-गुलाबी रंग के मेल में समा गया था। पास ही टंगे चित्र में अरबी नस्ल का लंबी गर्दन वाला, खूनी लाल रंग का घोड़ा कत्थई चट्टान पर चढ़ रहा था। घोड़ा एकदम सीधी चट्टान पर चढ़ रहा था, परन्तु उसके रंग में ऐसी शक्ति थी कि इस बात में कोई संदेह नहीं था कि वह आकाश पर भी चढ़ जायेगा। यह रंग, जिसे नन्हे चित्रकार ने प्रकाश में परिवर्तित कर दिया था, मन को उत्तेजित करता था।

रागोज़िन इन बेजोड़ चित्रों के पास गया और उनके निचले दायें कोनों पर बना बड़ा सा हस्ताक्षर पढ़ा: इवान रागोज़िन।

वह खड़ा-खड़ा ऊंट और घोड़े को देख रहा था और बार-बार हस्ताक्षर को पढ़ रहा था, और उसे लग रहा था कि उसके हाथ-पांव सुन्न होते जा रहे हैं और वह अपनी जगह से हिल नहीं सकता। उसके दिल में भय उत्पन्न हुआ: उसे यह विश्वास कैसे हो गया कि क्सानाने बेटा ही जन्मा था? क्यों उसने यह मान लिया था कि उसे बेटे

को ढूंढना है? हो सकता है अगर वह बेटी को ढूंढता तो कब का पा चुका होता?

लेकिन उसकी आंखें, जो तनाव से नम हो गई थीं, ऊंट और घोड़े तले बने हस्ताक्षरों के अलावा और कुछ नही देखना चाहती थी। चारों ओर सब कुछ लाल-कत्थई, पीला-गुलाबी हो गया, और इस हर्षमय प्रकाश-रंग में अनम्य स्पष्टता के साथ एक नाम लिखा हुआ था – इवान रागोज़िन। उसका बेटा ज़िंदा था! वह पास ही रह रहा था। वह दीवार से रंगों में सना अपना हाथ उसकी ओर बढ़ा रहा था। वह होनहार लड़का था, हो सकता है मेधावी हो! बेशक, रागोज़िन और क्सान का बेटा होनहार नहीं तो और कैसा हो सकता था?

भीड़ को चीरकर तेज़ी से बढ़ते किरील इज़्वेकोव ने रागोज़िन की कोहनी दबाई और ज़ोर से पूछा:

"कमाल है, है न?"

"हां," रागोज़िन ने यों यंत्रवत उत्तर दिया कि उसे स्वयं अपनी आवाज़ दूर से आती लगी।

फिर उसने दोरोगोमीलोव को देखा, जो लड़कों के झुंड के बीच सख्त कफ़ वाला अपना हाथ झुला रहा था। लड़कों में उसे पाव्लिक का लाल से बालों वाला सिर दिखा। रागोज़िन ने अपनी जड़ता तोड़ते हुए, उसका हाथ पकड़ लिया और उसे चित्रों के पास खींच लाया।

"देखो तो। अच्छा लगता ’

"हुं," पाव्लिक बोला, "पर घोड़ा सचमुच का नहीं है। मुझे पता है ये किसने बनाये हैं। रंगैये-कंगाल ने।"

"कैसा कंगाल?" रागोज़िन को यह बुरा लगा। "तुम्हें कैसे पता है?"

"हम वहां किनारे पर साथ घूमा करते थे। सब लड़के उसे रंगैया-कंगाल कहते हैं। वह हर वक्त रंगता रहता है। उसने हमें अपनी तस्वीरें दिखाई थी। इससे भी अच्छे घोड़े उसने बनाये हैं।"

"इधर आओ ज़रा," रागोज़िन ने दृढ़तापूर्वक कहा और लड़के को चित्रों के पास धकेला, "पढ़ो, क्या लिखा है।"

पाव्लिक ने हस्ताक्षर पढ़ा और प्रश्नसूचक दृष्टि से रागोज़िन की ओर देखा।

"वही, जो आपका है," वह हैरान-परेशान सा बोला।

"वही है यह?"

"नाम का क्या है? नाम तो चाहे कोई सा भी लिख दे। पर बनाया रंगैया-कंगाल ने ही है, मुझे पता है।"

"तुम्हें इस लड़के को मेरे पास लाना होगा। वायदा करते हो?"

"कहां से लाऊंगा मैं उसे? वह तो अनाथालय का है।"

"कौन से अनाथालय का?"

"मुझे क्या पता? उसने बताया थोड़े ही था।"

"पर तुम नदी किनारे उससे मिलोगे तो? कहां तुम लोग मिला करते हो? वायदा करो कि लाओगे उसे!"

इसी क्षण एक बूढ़ा पाब्लिक के आगे आ खड़ा हुआ। वह रेतीले पीले रंग के मोटे रेशमी कपडे का मला-दला कोट पहने था। वह उत्सुकतापूर्वक मुस्कराया:

"क्षमा कीजिये, कामरेड रागोज़िन। क्या आप प्रदर्शनी के बारे में अपने विचार बताने की कृपा करेंगे? समाचारपत्र के लिए। मैं यूम नाम से लिखता हूं। शायद कभी पढ़ा हो आपने?"

"हां, हां," अत्यंत गम्भीरतापूर्वक रागोज़िन बोला। "लिख लीजिये कि एक विख्यात कला मर्मज्ञ के नाते मेरा यह विचार है कि यह प्रदर्शनी नवीनतम चित्रकला के विकास में एक युगांतरकारी चरण है।"

मेत्सालोव का नोटबुक वाला हाथ नीचे लटक गया। उसकी गंजी खोपड़ी की पीली चमड़ी धीरे-धीरे तनी भौंहों की ओर रेंगने लगी।

"आप तो इस पर अच्छा लेख लिख लेंगे। अब तो वह... तीव्र सामाजिक दृष्टि वाले पत्रकार हैं न। अभी कुछ दिन पहले आप ही का वह लेख छपा था न 'नक्काशी आरी कहां खरीदें?'"

मेत्सालोव का मुंह और भी अधिक खुल गया, पर उसकी नज़रों में क्रोध और अपमान था।

"या नहीं, मुझे गलतफ़हमी हो रही है!" रागोज़िन बोला, और फिर मेत्सालोव से सटकर उसने अपना गुस्सा उगला: "आपने ही वह बकवास छापी थी न कि पास्तुखोव क्रांतिकारी पर्चे बांटता रहा था। छापी थी न? पर आपको पता है कि पास्तुखोव सफ़ेद गार्डों

के पास भाग गया है? नहीं? आपको अखबार से निकाल बाहर करना चाहिए! आप ..."

अपनी बात पूरी किये बिना ही वह तेज़ी से मुड़ा और मानो तुरंत ही मेत्मीलोव को भूल गया।

वह भीड़ में पाब्लिक को ढूंढ़ना चाहता था, पर उसे वह अमेज़ोन रणबांकुरी सी लगती युवती दिखाई दी, जो पैसों के लिए उससे झगड़ी थी। प्योत्र पेत्रोविच ने उसे इवान रागोज़िन के चित्रों के पास आने को कहा।

"यह किसका कमाल है?"

"क्यों? अच्छे हैं न?" युवती ने उल्लासमय स्वर में कहा और अपना सिर यों पीछे को झटका, मानो कह रही हो 'देखा, किसकी जीत हुई?'

"हां, हां। पर आप यह बता सकती हैं कि इस रंगसाज़ को मैं कहां ढूंढ सकता हूं?"

"मुझे बड़ी खुशी है कि आप अच्छे-बुरे चित्रों में भेद कर सकते हैं। देख रहे हैं कैसी भव्य सरलता है इस रेखा में?" उसने अपनी छोटी सी मुट्ठी घोड़े के अयाल, पीठ और पूंछ पर फेरी। "यह लोक चित्रों से अधिक श्रेष्ठ है, क्योंकि इसमें लोक चित्र से अधिक सामान्यीकरण और स्पष्टता है। आप समझते हैं न कि हम यहां ऐसी कला का आदि स्रोत देख रहे हैं, जो विभिन्न प्रभावों से दूषित नहीं हुई है।"

"मैं सब समझता हूं," रागोज़िन अधीर हो रहा था, "सिवाय एक बात के: आप मेरे सवाल का जवाब क्यों नहीं देतीं? चित्र तो आपने खूब अच्छी तरह टांगे हैं, पर ये बनाये किसने हैं, इससे आपको कोई वास्ता नहीं है।"

"इस दीवार पर अनाथालयों के बच्चों के चित्र हैं। अगर आप चाहते हैं, तो मैं पूछताछ कर देखूंगी कि आपको जो चित्र पसंद आये हैं, उन्हें बनानेवाला कहां है।"

"हां, हां, इन्हीं चित्रों का! यही चित्रकार! ज़रूर चाहता हूं, प्यारी कामरेड! और जितनी जल्दी हो सके!"

उसने जोर से युवती का हाथ हिलाया। पहली बार वह मुस्करायी।

"और हमारे पैसों का क्या होगा?"

"पैसों का कुछ नहीं होगा," रागोज़िन भी मुस्करा दिया। "अब आपको पैसों की क्या ज़रूरत है? सारा काम तो हो गया। और बहुत अच्छा हुआ है।"

यही वाक्य दोहराता हुआ वह जल्दी-जल्दी बाहर निकलने लगा, अब न लोगों और न चित्रों की ओर ही उसका ध्यान जा रहा था।

इस क्षण से उसके लिए जीवन में सब कुछ थम गया था, एक ही प्रश्न मानो दीवार बनकर सामने खड़ा हो गया: क्या बेटा मिल गया है या नहीं?

तीसरे दिन ज़ातोन से लौटते हुए उसने नगर सोवियत की इमारत के बाहर दो लड़कों को खड़े देखा। बाड़ से सटे वे सूरजमुखी के बीज खा रहे थे। वह फ़ौरन ही पाव्लिक को पहचान गया और फ़ौरन ही समझ गया कि उसके साथ कौन है।

"हम कितनी देर से आपकी राह देख रहे हैं और आप आ ही नहीं रहे थे," पाव्लिक ने उसे उलाहना दिया।

"चलो, अंदर चलें," प्योत्र पेत्रोविच ने कहा और ज़्यादा जल्दी कदम न बढ़ाने का जतन करते हुए चलने लगा।

अपना कमरा अंदर से बंद करके वह एक कोने से दूसरे कोने में गया, उसे समझ में नहीं आ रहा था कि कैसे करना ठीक होगा: लड़कों को अपने पास बिठा ले या उन्हें खड़ा रहने दे और खुद बैठा रहे, या फिर वे बैठ जायें और वह कमरे में चक्कर लगाता रहे। "धत् तेरे की! क्या फ़र्क पड़ता है इससे," चलते-चलते ही उसने सोचा, और सहसा उसे यह अहसास हुआ कि वह उस लड़के की ओर देखने का साहस नहीं जुटा पा रहा है, जिसे पाव्लिक लाया है। तब तुरंत उनके सामने खड़े होकर उसने प्यार से मुस्कराने की कोशिश की। पाव्लिक बेफ़िक्र सा इधर-उधर देख रहा था। दूसरा लड़का बिल्कुल अविचलित खड़ा था। पयाल के रंग के उसके बाल अस्त-व्यस्त थे, माथा ऊंचा, भौंहों के सिरे तेज़ी से ऊपर को उठे हुए, भूरी आंखें गोल और थोड़ी उभरी हुई सी। लंबी-लंबी टांगों और लम्बी सी बांहों वाला दुबला-पतला लड़का कोहनियां बाहर को निकाले खड़ा था, मानो हमले का सामना करने को तैयार हो।

"वो... तुम्हारी ही तस्वीरें देखी थीं मैंने?" रागोज़िन ने पूछा,

साथ ही उसे यह अहसास हुआ कि वह जिस तरह बात करना चाहता था, नहीं कर रहा।

"पता नहीं।"

लड़के की आवाज़ में धृष्टतापूर्ण आत्मविश्वास था।

"वो ऐसी... लाल-लाल घोड़ा भी था वहां।"

"अरे हां, तेरा ही घोड़ा था," पाव्लिक ने कहा। "डरता क्यों है? प्योत्र पेत्रोविच को तस्वीरें पसंद आई हैं।"

"मैं क्यों डरने लगा।"

"मैं काटता नहीं हूं," रागोज़िन मानो खुशामद करते हुए बोला। "मुझे सचमुच पसंद आई हैं। ऐसे शोख रंग हैं... अच्छी हैं... तुम्हारा नाम क्या है?"

"इवान।"

"इवान रागोज़िन, है न? और उम्र कितनी है? दसवां लगनेवाला है, है न?"

"हो सकता है, ज़्यादा ही हो।"

"ज़्यादा ही होगी," पाव्लिक ने हामी भरी। "मुझे ग्यारहवां लगनेवाला है, और यह तो मेरे से ज़्यादा ताकतवर है।"

"अच्छा?" प्योत्र पेत्रोविच ने मानो राहत की सांस ली। "दिखाओ तो।"

उसने हौले से लड़के के सूखे से, पतले-पतले डौले छुए और उसकी उंगलियां अनचाहे ही वहां टिकी रह गईं, जब तक कि लड़का अपनी बांह छुड़ाकर एक कदम पीछे नहीं हट गया।

"वान्या," रागोज़िन धीरे-धीरे बोला, "वो... तेरा बाप है?"

"कोई तो रहा होगा, मेरे ख्याल में," लड़के ने बड़ों की तरह व्यंग्यपूर्वक मुस्कराते हुए जवाब दिया।

"हूं, मेरा भी यही ख्याल है," रागोज़िन सकपकाकर पीछे हट गया और उसने फिर से कमरे का चक्कर लगाया।

"मां याद नहीं है?" चलते-चलते उसने पूछा।

"वह तो बाप को याद होगी," वान्या ने और भी अधिक तीखा जवाब दिया।

वह रागोज़िन की ओर बगल किये खड़ा था। उसका सिर और भी

ऊपर उठा हुआ था तथा कोहनियां अधिक फैली हुई थीं। प्रत्यक्षत: वह मां-बाप के बारे में सवाल पूछे जाने का आदी था, इसलिए उसके पास सब जवाब तैयार थे। लड़के के ऐसे कठोर जवाब सुनकर रागोज़िन भौचक्का रह गया। और फिर उसे गुस्सा आने लगा कि वह अपने आप पर नियंत्रण नहीं रख सकता। उसने गुस्से से लड़के की ओर नज़र उठाकर देखा। नज़र उठाते ही उसे वान्या के चेहरे के पार्श्व में हूबहू क्साना की नक्ल दिखी – वैसी ही तीखी, ज़रा सी ऊपर को उठी हुई नाक और वैसी ही गोल, थोड़ी उभरी-उभरी सी आंख। उसकी ज़बान पर बड़ी देर से जो शब्द था – बेटे! मेरे बेटे! – वह निकलते-निकलते रह गया, उसने अपने आप को रोक लिया।

"आपने मुझे किसलिए बुलाया था?"

"मैं तुमसे मिलना चाहता था, अच्छी तरह जान-पहचान करना चाहता था..." प्योत्र पेत्रोविच ने कहा और लड़के की बदरंग स्लेटी कमीज़, पेटी की जगह बंधी डोरी और घिसे हुए जूतों पर नज़र डा-ली।

"आप तस्वीरें खरीदते हैं क्या?" वान्या ने अचानक पूछा।

"क्या मतलब?"

"मैंने सोचा, आप... वो, जो प्रदर्शनी में तस्वीरें हैं, खरीदना चाहते हैं।"

"तुम बेच रहे हो?" रागोज़िन ने अब मुस्कराते हुए पूछा।

"नकदी काम आयेगी।"

"क्या काम आयेगी? तुम तो बालघर में रहते हो, न?"

"जब जहां अच्छा रहे। आजकल गर्मियों में हर जगह अच्छा है।"

"और रोटी कहां मिलती है?"

"मिलती है।" वान्या ने कंधे बिचकाये। "मैं कोई नमकखोर नहीं हूं जो रोटी मिला करे!"

"वोल्गा पर हमेशा पेट भरा जा सकता है," पाव्लिक ने नदी तट के पुराने जानकार के अंदाज़ में कहा।

"नौसैनिकों के यहां या और जहां मौका लगे," वान्या ने अपनी ओर से जोड़ा।

"तेरा तो गुस्योल्का में भी मौका लगा है?" प्योत्र पेत्रोविच ने अचानक सख्ती से पूछा।

वान्या ने मुंह बना लिया।

"बोलता क्यों नहीं? गया था गुस्योल्का?"

"गया था। तो क्या हुआ? ऐसे ही झूठमूठ मेरा नाम लगा दिया कि मैंने बालघर के स्लीपर बाज़ार में बेच दिये, और बस मुकदमा चलाने लगे! पर वो तो एक चोट्टे ने मार लिये थे... मैं बस चुगल-खोरी नहीं करना चाहता था।"

"ठीक है, जो हो गया, सो हो गया। अब तू कहां रह रहा है?"

वान्या ने छाती पर हाथ बांध लिये, धीरे-धीरे मुड़कर दरवाज़े की ओर देखा, मानो सवालों से तंग आ गया हो, फिर अनमना सा बोला:

"मुझे वापस आश्रम में भेज रहे हैं। कागज़ात भी वहां भेज दिये।"

"ठीक, ठीक," रागोज़िन जल्दी-जल्दी बोला, "अच्छी बात है... मैं तुझे कहना चाहता था, अगर तू मेरे साथ रहे तो? मैं अकेला हूं, इकट्ठे हमारी अच्छी बनेगी। तू स्कूल जायेगा... चित्रकारी सीखेगा..."

वान्या चुप खड़ा था। पाव्लिक ने आंखें सिकोड़कर रागोज़िन की ओर देखा और हौले से सीटी बजाई।

"आहा... मुझे कुछ पता है!"

"कुछ पता-वता नहीं," रागोज़िन मानो चिल्ला ही पड़ा। "मैं काम की बात कर रहा हूं!"

उसने वान्या की ओर कदम बढ़ाया, अपनी चौड़ी हथेलियां उसके कंधों पर रखीं।

"आज शाम को यहां आ जाना, ठीक है? या चाहो तो सीधे घर चले आना, समझ गया?"

उसने उसे अपना पता समझाया। ऐसा करते हुए वह लड़के की आंखों में झांकने की कोशिश कर रहा था, पर वह नज़रें चुरा रहा था। पाव्लिक शक्की नज़रों से वान्या की ओर देख रहा था, मानो डर रहा हो कि वह बहलावे में आ जायेगा, या उनके किसी आपसी समझौते को तोड़ देगा।

"अच्छा, तो पक्की बात रही: शाम को तुम मेरे यहां आ जाओगे," रागोज़िन हठपूर्वक दोहराता जा रहा था।

"सोचने की बात है," पाव्लिक बोला, मानो कोई सौदा कर रहा हो।

रागोज़िन ने मज़ाक में उसे धमकाया:

"मैं तेरा सोचना कर दूंगा!"

पर सहसा वह वान्या का सीधा प्रश्न सुनकर सकपका गया:

"पर आप यह क्यों चाहते हैं कि मैं आपके साथ रहूं?"

प्योत्र पेत्रोविच को एकदम समझ में ही नहीं आया कि क्या कहे, और उसने मन में उठती पीड़ा को छिपाते हुए ज़ोर से वान्या की पीठ थपथपाई:

"ज़्यादा जानेगा, तो बाल जल्दी सफ़ेद हो जायेंगे। शाम को आना, मैं सब कुछ बता दूंगा। अच्छा, अब बहुत हुआ। जाओ अब।"

उसने लड़कों के पीछे दरवाज़ा भिड़ाया, पर तुरंत ही खोलकर वान्या को आवाज़ दी।

"यह ले, ले ले," अपनी जेबें टटोलते हुए और फिर मुड़े-तुड़े नोट वान्या की मुट्ठी में ठूंसते हुए वह जल्दी-जल्दी बोला, "ले ले। खाने को कुछ खरीद लेना। और हां, ज़रूर आना! सुना तूने?"

वह चौकन्ना सा दरवाजे के पास खड़ा था, मानो गलियारों और सीढ़ियों के शोर में खो गई बच्चों के कदमों की आहट सुन सकता हो। पर वह बस यह अनुमान लगा रहा था कि कब बच्चे बाहर पहुंच जायेंगे, और फिर पल भर भी खोये बिना वह दौड़ा-दौड़ा नीचे गया, उछलकर अपनी फ़िटन में बैठ गया और सारे रास्ते, जो खत्म ही होने में नहीं आ रहा था, कोचवान को कहता रहा: "जल्दी करो भई, जल्दी!"

आश्रम में पहुंचकर रागोज़िन ने इवान रागोज़िन के कागज़ात निकलवाये। फ़ाइल में शिक्षकों की रिपोर्टें थीं, डाक्टरी और शिक्षा आयोगों के निष्कर्ष थे, इवान रागोज़िन द्वारा बालघर के स्लीपर बाज़ार में बेचे जाने के मामले में नाबालिगों के सामाजिक-न्यायिक विभाग का फ़ैसला तथा और कई दस्तावेज़ थे। रागोज़िन ने जल्दी-जल्दी उन्हें पलटा और आखिर जब उसे ज़ार के राज-चिह्न और गृह

मंत्रालय की मोहर वाला पीला सा पड़ गया कागज मिला, तो वह उन सबको तुरंत ही भूल गया।

रागोज़िन की दृष्टि ने इस दस्तावेज़ में एकमात्र, निर्णायक शब्द ढूंढ लिया, पर इस क्षण वह यह नहीं कह सकता था कि यह शब्द क्या है। वह उठा, खड़े-खड़े यह दस्तावेज़ पढ़ना चाहता था, पर फिर से बैठ गया। दोनों हाथों से सिर थामकर एक-एक पंक्ति पढ़ने लगा।

जेल के कार्यालय ने अपना मोहर लगा कागज़ अनाथालय सड़क पर स्थित अनाथालय के नाम लिखा था, इसके साथ एक बालक को सरकारी खर्चे पर पालने-पोसने के लिए भेजा जा रहा था। आगे यह कहा गया था कि बच्चे की मां सरातोव नगर की क्सेनिया रागोज़िना है, जो हिरासत में थी, और प्रसव के समय मर गई; बच्चे का पिता, मां के कहने के अनुसार, उसका पति, किसान का बेटा प्योत्र पेत्रोविच रागोज़िन है, जिसपर राजकीय अपराध का आरोप है, पर जिसे पकड़ा नहीं जा सका है। बालक के बारे में कहा गया था कि जेल के गिरजे में उसका बपतिस्मा हुआ है और उसका नाम इवान रखा गया है।

इवान नाम का बच्चा रागोज़िन की नज़रों के सामने ऊंचे ललाट, गोल आंखों वाले लड़के के रूप में खड़ा था, और वह अपनी उंगलियों पर मानो अभी भी उसकी बांह की नरम मांसपेशियों का स्पर्श अनुभव कर रहा था।

"मैं इस लड़के को पालने के लिए ले रहा हूं," रागोज़िन ने उस युवती से कहा, जो उसे फ़ाइल उलटते-पलटते देख रही थी।

"बच्चे को संरक्षण के लिए देने से पहले हमें सामाजिक-न्यायिक विभाग की अनुमति मिलनी चाहिए," युवती ने जवाब दिया।

"संरक्षण का क्या मतलब?"

"आप बच्चे को गोद लेना चाहते हैं?"

"मैं उसका बाप हूं," रागोज़िन ने खुशी से प्रायः चिल्लाते हुए कहा और तनकर खड़ा हो गया।

"इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। अगर आप..."

"मुझे भी इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता कि आप मुझे संरक्षक कहते हैं, या अभिभावक या कुछ और। लड़के को पाने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?"

"आप जन शिक्षा विभाग में जाइये। वहां सामाजिक-न्यायिक विभाग है..."

"अरे बाबा, क्या है वहां!" रागोज़िन मानो मस्ती में चिल्लाया। "बच्चा तो आपके पास नहीं है, है क्या? बच्चा तो मेरे पास है! समझीं आप कि नहीं? मैंने उसे ढूंढ़ लिया है, समझीं?! बेटे को ढूंढ़ लिया है! वाह रे!"

उसने खुशी की लहर में लड़की की बांह थपथपाई और दौड़ा-दौड़ा फ़िटन पर जा चढ़ा।

वह घर गया, मकान मालकिन को पैसे देकर शाम का खाना बना देने को कहा और काम पर चला गया। बाकी सारा दिन उसे यही लगता रहा कि उसने कोई काम अधूरा छोड़ दिया है: बार-बार वह यह याद करता कि सब कुछ खरीदने को कह आया था न, यह पूछताछ करता रहा कि दफ़्तर के भोजनालय से कुछ खाने का सामान पाया जा सकता है कि नहीं, और सांझ घिरने से पहले ही घर चला गया।

वान्या नहीं आ रहा था। प्योत्र पेत्रोविच ने बड़े ध्यान से खाने की सब चीज़ें देखीं, अपनी पसंद से मेज़ पर बर्तन लगाये, कपड़ों की टोकरी में से चादर, लिहाफ़ वग़ैरह निकाले, मालकिन की मदद से एक और गद्दा कमरे में घसीट लाया। फिर वह मेज़ के पास बैठ गया, सोचने लगा कि और क्या किया जा सकता है। उठकर बार-बार खिड़की के पास जाता, कई बार बाहर सड़क पर भी गया। सारी रात उसे नींद नहीं आई, अपने आप को कोसता रहा कि लड़के को क्यों जाने दिया, जबकि उसे तभी घर ला सकता था।

अगले दिन सुबह पहली बार वह ज़ातोन नहीं गया। वह समझ गया कि उसने पाव्लिक का पता न पूछकर गलती की है, अब फिर से वान्या को कैसे ढूंढ़े? हां, दोरोगोमीलोव की मदद से यह गलती सुधारी जा सकती है। रागोज़िन को अपने आप पर हैरानी हुई: पहले क्यों उसे यह ख्याल नहीं आया कि वान्या को ढूंढ़ने में आर्सेनी रोमानोविच से अच्छा मददगार और कोई नहीं हो सकता।

पिता-पुत्र की कहानी सुनकर दोरोगोमीलोव गद्गद हो गया। वह प्रदर्शनी में देखे असाधारण चित्र और रंगैये-कंगाल के बारे में अपने

नन्हे दोस्तों से सुनी बातें याद करने लगा, और कहने लगा कि वह भी इस लड़के को ढूंढ़ना चाहता था और तुरंत ही इसके लिए सब कुछ करेगा।

सचमुच ही दोपहर के खाने के वक्त जब रागोज़िन यह पता लगाने के लिए घर गया कि वान्या आया था या नहीं, तो मालकिन ने उसे खुशखबरी सुनाई – घंटा भर पहले लड़का आया था, मालकिन ने उसे खाना खिलाया और फिर वह सो गया।

प्योत्र पेत्रोविच ने दरवाज़ा थोड़ा सा खोला और हौले से अपने कमरे के अंदर सरक गया। वह दबे पांव खिड़की के दासे तक गया और वहां बैठ गया।

वान्या कमरे के बीचोंबीच फ़र्श पर बिछे गद्दे पर लेटा हुआ था। प्योत्र पेत्रोविच बड़े ध्यान से उसे देख रहा था। लड़के के नंगे पांवों पर मक्खियां रेंग रही थीं, पर वह गाढ़ी नींद सो रहा था। धूल से काले तलवों पर चीरों, खरोंचों के निशान दिख रहे थे। पैरों की उंगलियों के सिरे चपटे से थे। सहसा रागोज़िन को यह ख्याल आया कि ये चपटी उंगलियां और चपटा सा तलवा उसके अपने पैरों जैसे ही हैं। वह वान्या के पास खिसक गया और उसके हाथ देखने लगा। उंगलियों की गांठों पर हड्डियां चौड़ी थीं, नाखून छोटे-छोटे थे और सिरों पर फैले हुए। ये हूबहू प्योत्र पेत्रोविच के हाथ थे, उनकी छोटी नकल। कैसी अजीब बात थी कि प्रकृति पृथ्वी पर एक बार बन गई आकृतियों को किन्हीं कारणों से दोहराती रहती है। चेहरे से वान्या क्साना पर गया था। बंद आंखों से यह समानता और भी अधिक स्पष्टतया उभरती थी। क्साना को जब वह चैन से सोते हुए देखा करता था, तो उसका चेहरा भी ऐसा ही कोमल और कुछ विचारमग्न सा होता था।

प्योत्र पेत्रोविच को प्यास लगी। वह बाल्टी के पास गया, अनजाने में मग का खटका हुआ, उसने झट से मुड़कर देखा: नहीं, वान्या पहले की ही भांति चैन से सो रहा था। रागोज़िन ने उसे चादर ओढ़ा दी, तौलिये से हवा की ताकि मक्खियां कमरे में से निकल जायें और खिड़की पर कम्बल से पर्दा कर दिया।

वान्या जब जागेगा, तो वह उससे बातें कैसे शुरू करेगा? वह

कहेगा : तू मेरा बेटा है। बेटा बाप से पूछेगा : पहले तुम कहां थे? बाप को उसे यह बताना होगा कि कैसे पुलिस उसके पीछे लगी हुई थी, कैसे उसकी मां मर गई। बेटा कहेगा, तुम अपनी जान बचा रहे थे, पर मां को क्यों नहीं बचाया? मैं अपने को नहीं, उस महान ध्येय को बचाता रहा जिसकी मैं सेवा करता था और आज भी कर रहा हूं। लेकिन तुम्हें मालूम था कि मेरा जन्म होनेवाला है, तो फिर मुझे क्यों नहीं ढूंढ़ा? इससे महान ध्येय में बाधा पड़ सकती थी – बाप कहेगा। मतलब तुम्हें यह महान ध्येय मुझ से ज़्यादा प्यारा है – बेटा पूछेगा – तुम्हें मेरी क्या ज़रूरत है? तुम बेटे को नहीं जानते थे और जी रहे थे। मैं बाप को नहीं जानता था और जी रहा था। तुम्हें मेरी क्या ज़रूरत है?

हां, सोचना चाहिए कि बातचीत कैसे की जाये, सोचना चाहिए। सबसे बड़ा खतरा इस बात का है कि वह बेटे को सहज ही डराकर अपने से दूर कर सकता है। अपने आप को अनाथ समझनेवाले बच्चे के लिए बाप क्या है? उसकी आज़ादी में बाधा, निरीक्षक की सत्ता, बड़ों के नियम – इस सब का कड़वा घूंट तो वान्या पहले ही पी चुका था, और अब एक अनजान, गंजा सा आदमी, जो शायद वान्या को अप्रिय लगता हो, उसे अपना बेटा कहेगा। नहीं, पिता को उसके मन में ऐसी भावनाएं जगानी होंगी, जो कोई शिक्षक नहीं जगा सकता। पिता को उसके लिए जीवन का आदर्श और जीवन की उमंग होना चाहिए।

रागोज़िन चुपके से कमरे से बाहर निकल आया। उसने सोचा, जब तक बेटा सो रहा है, वह उसके लिए रंग और ड्राइंग की कापी खरीद लाये। उसने मालकिन से कहा कि अगर लड़का जाग जाये, तो उसे जाने न दे।

पास की दुकान में उसे न रंग मिले, न कापियां। रागोज़िन शहर के केंद्र में चला गया। वह जल्दी में था। उसके मस्तिष्क में उठता हर विचार एकदम नया था और उसके विचार उससे भी ज़्यादा जल्दी में लगते थे। उसने यह पाया कि पहले कभी भी उसने बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के बारे में नहीं सोचा है। नहीं, वह शिक्षा के बारे में सोचता तो रहा है, पर अन्य कई विषयों की भांति ही। यह और बहुत

से प्रश्नों में से एक था, जो अमूर्त रूप से कमोवेश सफलता के साथ हल किये जाते थे। अब रागोज़िन को कोई सिद्धांत नहीं गढ़ना था, बल्कि बर्ताव की योजना तैयार करनी थी – पिता के नाते अपना बर्ताव तय करना था। बच्चे को पिता का बर्ताव, उसका चाल-चलन देखना चाहिए, ताकि वह यह जान सके कि जीवन में उसका अपना चाल-चलन कैसा होना चाहिए। बेशक, बच्चे की शिक्षा का दायित्व समाज पर है। बच्चा हर हालत में समाज के व्यवहार का अनुकरण करेगा। अनुकरणीय समाज के निर्माण के लिए तो समय चाहिए। लेकिन रागोज़िन बेटे को यह तो नहीं कह सकता ठहर जा बेटे, हम अनुकरणीय उदाहरण बना लें, तब तुझे पता चल जायेगा कि कैसा व्यवहार करना चाहिए। अभी तो हम तेरे भविष्य के लिए संघर्ष कर रहे हैं, सो अभी हमारे पास तेरे लिए समय नहीं है, जैसे ही हम जीत जायेंगे, हम तेरी ओर ध्यान देने लगेंगे। इसका मतलब तो यही कहना होगा: बढ़ना बंद कर दो। नहीं, नहीं, बच्चे को ज़रा भी देर किये बिना वह सब मिलना चाहिए, जिसकी उसके विकास के लिए आवश्यकता है।

रागोज़िन दूसरी दुकान में गया और वहां उसे पता चला कि रंग तो शायद ही कहीं मिलें, क्योंकि आजकल रंगों से कहीं ज़्यादा जरूरी चीजों की कमी है, और रही कापियां, तो उनके लिए तीसरी दुकान में जाना चाहिए – वहां अभी कुछ दिन पहले, लगता है, बिक रही थीं।

बाहर आकर वह तुरंत ही यह याद नहीं कर पाया कि उसके विचारों का तांता कहां टूटा था। हां, वह यह सोच रहा था कि सबसे पहले शिक्षा के ध्येय स्पष्टतः निर्धारित होने चाहिए। उदाहरण के लिए, हम चाहते हैं कि सोवियत नागरिक चाहे वह कहीं भी हो, अपनी मातृभूमि का मान बनाये रखे। सो हमें हर दिन उसमें यह मान की भावना विकसित करनी चाहिए, बचपन से ही यह भावना उसके चरित्र का अभिन्न अंग बन जानी चाहिए और रोज़मर्रा की छोटी-छोटी बातों से इस पर चोट नहीं आनी चाहिए। या फिर हम लाल सेना का यह आह्वान करते हैं कि उसमें साधारण सैनिक और कमांडर के बीच भाईचारा हो, युद्ध में वे परस्पर दायित्व और निष्ठा बनाये रखें। प्रत्यक्षतः, स्कूल में ही भाईचारे की यह भावना पाली जानी चाहिए, परिवार में मैत्री भावना होनी चाहिए, दैनंदिन जीवन में –

दूसरों का ध्यान रखने, विनम्रता और शिष्टता की भावना होनी चाहिए। ठहरो, ठहरो! – रागोज़ीन ने स्वयं को टोका। शिष्टता? पर इस शब्द में से तो पुरानी धारणाओं की बू आती है। आम तौर पर दोस्ती? धर्म के रूप में दोस्ती? ये कैसी धारणाएं हैं? दूसरी ओर, अगर दोस्ती मौके की हो, किसी इरादे से, किसी खास हित में हो, तो क्या बच्चे में आत्मा का यह महान गुण विकसित किया जा सकता है? नहीं, इससे पहले कि वेटा अपने दोस्त वना ले, उसे इस वात को समझ लेना चाहिए। उसे इसका फ़ैसला अभी कर लेना चाहिए, जब तक कि वान्या जागा नहीं है। हो सकता है वह जाग गया हो? जल्दी करनी चाहिए। उसे वेटे के हर सवाल के लिए तैयार रहना चाहिए। उसके बारे में और उसकी तरफ़ से सोचना चाहिए। हां, हां, उसे यही करना है।

तीसरी दुकान में भी न रंग थे, न कापियां। "कैसी कापियां? कहां से आयेंगी कापियां? आजकल तो स्कूल में छुट्टियां हैं," रागोज़िन को उल्टे ये सवाल सुनने पड़े।

पर उसने यह सपने में तो नहीं देखा था कि वाल चित्रों की प्रदर्शनी में रंगों से भरे कागज़ दीवार पर टंगे हुए हैं? प्रदर्शनी पास ही थी, सो रागोज़िन ने वहां जाने का फ़ैसला किया।

वहां उसे अपने परिचित मिले – हब्शी जैसा विद्यार्थी और गर्वीली युवती। वे किसी वात पर वहस कर रहे थे, पर रागोज़िन को देखकर दोनों उसकी ओर मुड़े। उसने उन्हें अपनी मुसीवत वताई। उन्होंने जवाब दिया कि वह वेकार ही परेशान हो रहा है, क्योंकि सव कुछ ठीक-ठाक है: रंग और कापियां वच्चों को स्कूलों और वालघरों में मिलते हैं और वहां उन्हें इन चीज़ों की कोई तंगी नहीं है।

"पर यह इंतज़ाम तो कोई वहुत ठीक नहीं लगता," रागोज़िन ने आपत्ति की। "घर के काम का क्या होगा?"

"हमारे वच्चों के लिए 'घर' जैसी कोई धारणा नहीं रहनी चाहिए," विद्यार्थी ने कहा।

"घर पर काम देना – यह पुरानी शिक्षा पद्धति है," युवती वोली।

"इन सब बातों पर तो लंवी वहस की ज़रूरत है। अभी आप

6*

मुझे बस इतना बता दीजिये कि मैं अपने बेटे के लिए रंग कहां खरीद सकता हूं?"

"हम बेचने का काम नहीं करते," युवती भड़क उठी।

"हम बच्चों में निजी सम्पत्ति की भावना मिटाने की कोशिश कर रहे हैं, हम इस बात के विरुद्ध हैं कि बच्चों को घर पर नवाबज़ादों की तरह उपहार दिये जायें," विद्यार्थी ने कहा।

"सुनो," तेज़ी से दरवाज़े की ओर मुड़ते हुए रागोज़िन ने जवाब दिया, "या तो आप लोग ज़रूरत से ज़्यादा पढ़ गये हैं, या आपने कुछ भी नहीं सीखा है!"

वह जल्दी-जल्दी अपने लंबे-लंबे डगों से सड़कें नापता जा रहा था। वान्या शायद जाग गया होगा। अभी रागोज़िन उसे देखेगा। इस बात में कोई संदेह नहीं कि वान्या जैसे बच्चे के लिए आज़ादी की भावना ही उसकी चेतना का मर्म स्थल है। उसे यह नहीं ज़ाहिर होने देना चाहिए कि बाप उसकी आज़ादी पर कोई अंकुश लगाना चाहता है। उसे नन्हे हृदय के कपाटों को झटके से खोलना नहीं चाहिए, ज़्यादा सवाल नहीं पूछने चाहिए कि वान्या क्या करता है, कैसे रहता है। नहीं, पहले उसे विश्वासपूर्वक अपने जीवन में लाना चाहिए, उसे अपने काम के बारे में, अपने संघर्ष और भविष्य की योजना के बारे में बताना चाहिए।

सहसा रागोज़िन के कदम ढीले पड़ गये। शुरूआत बुरी नहीं है! देखो तो, आज ज़ातोन भी नहीं गया, दफ़्तर का काम भी छोड़ रखा है, और छोटी-मोटी चीज़ों के पीछे शहर का चक्कर लगा रहा है। वह वान्या को क्या कहेगा? बेटा, आज मैंने अपने काम से छुट्टी मार ली है। तुझे पाकर मैं इतना खुश हूं कि मुझे काम की सुध ही नहीं। इसका मतलब अगर बहुत बड़ी खुशी हो, तो काम पर लात मारी जा सकती है? —बेटा पूछेगा।

प्योत्र पेत्रोविच इस विचार से इतना शर्मिंदा हुआ मानो सचमुच ही वान्या ने यह बात कही हो। पर आज का दिन तो अपवाद है—वह सोच रहा था—सारी ज़िंदगी में पहली बार! वह काम की कसर खूब अच्छी तरह पूरी कर लेगा। काम तो रागोज़िन के लिए पहले की ही तरह सर्वोपरि है।

वह मोड़ मुड़ा, सोचा, काम पर कहता जाये कि और एकाध घंटे तक बाहर रहेगा।

दरवाज़े के पास ही उसके आगे-आगे चल रहा आदमी, जो रागोज़िन को ज़रा बेढब सा लग रहा था, अचानक गिर पड़ा। उसे उठने में मुश्किल हो रही थी, रागोज़िन ने उसकी मदद की।

"धन्यवाद। कोई खास बात नहीं। तरबूज़ के छिलके पर पैर फिसल गया, वह रहा छिलका।"

"चोट लगी क्या?"

"नहीं, कोई खास नहीं। ज़रा कोहनी पर," उस आदमी ने अपना सफ़ेद कोट झाड़ते हुए कहा।

उसने कृतज्ञतापूर्वक रागोज़िन की ओर देखा और सहसा पीछे हट गया।

"कैसा संयोग है! मैं आपसे मिलने ही जा रहा था। नमस्ते, कामरेड रागोज़िन।"

रागोज़िन ओज़्नोबिशिन को पहचान गया।

"क्या काम है? माफ़ कीजिए, मैं बहुत व्यस्त हूं।"

"निजी मामला है। ज़्यादा समय नहीं लूंगा। चाहें, तो यहीं एक ओर को हटकर बता देता हूं।"

"आपका अपना काम है?"

"जी नहीं, आपका," ओज़्नोबिशिन ने कहा।

"मेरा?"

वे दरवाज़े से परे हट गये और धीरे-धीरे बाड़ के पास चलने लगे।

"ज़रा जल्दी से बता दीजिये।"

"बस, छोटी सी बात है। मैं आपका बहुत आभारी हूं कि आपने तब मेरी ओर ध्यान देकर मेरे बारे में भ्रम दूर कर दिया और मुझे नाज़ुक स्थिति से उबारा।"

"आप भूतपूर्व अभियोक्ता हैं न?"

ओज़्नोबिशिन मुस्कराया:

"अगर ऐसा होता, तो अब मैं आपसे बातें न कर रहा होता... मेरा मतलब यहां सड़क पर। मैं सचमुच आपका कृतज्ञ हूं कि आपने इतने धीरज से मामले की जांच की और मेरे अतीत के बारे में संदेह दूर कर दिये।"

"अच्छा, मेरा काम क्या है?"

"आपने तब साफ़-साफ़ तो नहीं कहा था, परन्तु मैं समझ गया कि आपके लिए यह जानना बहुत महत्वपूर्ण है कि आपकी पत्नी का क्या हुआ, यही नहीं, यह जानना कि क्या उनके बच्चा हुआ था या नहीं और वह जीवित है कि नहीं।"

"हुं-हुं," रागोज़िन ने थमते हुए कहा।

"तब मैंने अपनी सेवाएं प्रस्तुत करने की हिम्मत नहीं की थी, परन्तु मन ही मन शपथ ली थी कि एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाकर आपकी सेवा का यत्न करूंगा।"

"तो?"

"काफ़ी खोज-बीन के बाद मैंने एक दस्तावेज़ ढूंढ़ा है, जिससे कुछ परिस्थितियों पर प्रकाश पड़ता है, हैं तो वे दुखद, पर साथ ही हमें इससे कुछ आशा भी मिलती है। यह दस्तावेज़ अब पाया जा सकता है, आप चाहें तो ले सकते हैं।"

"कहां से?"

"अभिलेखागार से।"

"है क्या उसमें?"

"दुर्भाग्यवश, उसमें इस बात की पुष्टि की गई है कि जेल में आपकी पत्नी का देहांत हुआ। वह स्थान भी इंगित है, जहां उन्हें दफ़नाया गया है।"

"अच्छा?"

"जी हां। परन्तु साथ ही दस्तावेज़ में यह भी उल्लिखित है कि उनकी मृत्यु प्रसव के समय हुई, इस प्रकार, आपका... कम से कम यह मान सकते हैं कि बच्चा हुआ था।"

"अच्छा, यह बात है," रागोज़िन बोला।

"जो भी हो। यह बात मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि आपके बच्चे का सुराग मैंने पा लिया है।"

"सच? और इस सुराग से क्या पता चलता है?"

"इसके लिए निश्चित प्रयास करने की आवश्यकता है, और यदि मुझे आपका समर्थन मिले, तो मैं सहर्ष ऐसा करूंगा।"

"किस बात में समर्थन?"

"और आगे खोज करने में।"

"और अगर मैंने आपकी मदद की, तो आप अवश्य ही बच्चे का पता लगा लेंगे?"

"निस्संदेह!" ओज़्नोबिशिन बड़े उत्साह से बोला। "यह तो मेरे लिए बड़े सम्मान की बात होगी! मैं जेल के अभिलेखागार से, बच्चे के जन्म के वर्ष से प्रारम्भ करूंगा।"

"और अगर मैं आपको यह बता दूं कि आपका सुराग आपको मेरे क्वार्टर पर ले आयेगा?"

"कैसे क्वार्टर में?"

"जहां मैं अपने बेटे के साथ रहा हूं।"

"बेटे के साथ... आपने उसे ढूंढ़ लिया..."

ओज़्नोबिशिन मानो डर ही गया। उसके चेहरे का रंग उड़ गया, उसने हाथ थोड़ा ऊपर को उठाये, हौले से चोट लगी कोहनी सहलाई, पर तुरंत ही सारा धड़ रागोज़िन की ओर बढ़ाकर उसके मुंह पर राहत की सांस ली:

"बधाई हो, मेरी हार्दिक बधाई! क्या सच? बेटा आपके पास है? वही बेटा..."

"यह बात है," रागोज़िन ने उसे टोक दिया। "पर यह तो बताइये कि आप मेरे लिए इतनी कोशिश क्यों कर रहे हैं?"

"जी, क्या... केवल आपके लिए कुछ करने की इच्छा से ही। आपका अहसान चुकाना चाहता था।"

"मेरा आप पर कोई अहसान नहीं है।"

"मुझे आपकी सेवा करके खुशी होती।"

"यह कोई आसान काम नहीं। मैं किसी की सेवाएं स्वीकार नहीं करता।"

रागोज़िन ने हाथ उठाकर कनपटी पर रखा, सिर झुकाया और दरवाज़े की ओर चल दिया। चलते-चलते वह मुड़ा और हंसकर बोला:

"फिसल गये... तरबूज़ के छिलके पर!"

वह सीढ़ियां चढ़ ही रहा था कि उसके विभाग के एक आदमी ने से रोका:

"आप समिति में गये हैं? आपका बुलावा आया था।"

ऊपर, अपने कमरे में जाने के बजाय वह गलियारों में से होता हुआ पहली मंज़िल के एक सिरे की ओर चल दिया।

ब्यूरो के उस सदस्य ने, जिससे रागोज़िन लेनिन के पत्र की व्याख्या पर बहस करता रहा था, सिर हिलाकर उसका स्वागत किया और कहा:

"लो भई, तुम्हारी मनोकामना पूरी हो गई। तुम्हें फ़ौजी काम पर भेजने का फ़ैसला हुआ है। वोल्गा बेड़े में स्क्वैड्रन कमिसार नियुक्त किया गया है। जहाजों पर जो स्थिति है उससे तो तुम थोड़े-बहुत वाकिफ़ ही हो।"

"थोड़ा-बहुत वाकिफ़ हूं," कुर्सी पर बैठते हुए रागोज़िन ने जवाब दिया। "मुझे कब जाना होगा?"

"फ़ौजी कमिसार को फ़ोन कर लो। स्क्वैड्रन का कमिसार बीमार पड़ गया है, तुम उसकी जगह लोगे। रवानगी शायद कल है।"

"कल?"

रागोज़िन कुछ देर तक खामोश रहा और फिर दूसरी ओर को देखने लगा।

"मेरे विभाग का क्या होगा?"

"तुम्हें चिंता किस बात की है? अपने डिप्टी को सारा काम सौंप जाना।"

"कुछ घंटों में ही?"

"पता नहीं। हो सकता है कुछ मिनटों में। सफ़ेद गार्ड लेस्नोई करामिश के पास पहुंच गये हैं।"

"अच्छा, तो..." रागोज़िन ने धीरे-धीरे उठते हुए कहा।

"तुम कुछ नाखुश से लग रहे हो?"

"नहीं तो।"

"तो ठीक है... सही सलामत लौटना..."

उन्होंने हाथ मिलाये।

रागोज़िन ने फ़ौजी कमिसार को फ़ोन किया, पता चला कि उसे तुरंत ही कागज़ात लेने के लिए उसके पास जाना चाहिए। फिर फ़िटन मंगाई और कोचवान से घर चलने को कहा।

अपने कमरे में जाते हुए उसने जानबूझकर ज़ोर से दरवाज़ा

ोला ताकि वान्या जाग जाये। जिस कम्वल से उसने खिड़की पर पर्दा ाला था, वह उतरा हुआ था, सिर्फ़ एक कील पर टंगा हुआ था। द्दा खाली था, चादर फ़र्श पर पड़ी हुई थी।

रागोज़िन मालकिन की ओर मुड़ा। वह भी हैरान-परेशान थी। सने वान्या के उठने की आवाज़ सुनी थी – कैसे लड़के ने उठकर ानी पिया था; वह उसके लिए चाय वनाना चाहती थी, पर जव ंदर झांककर देखा, तो वहां कोई नहीं था। पता नहीं वह दरवाज़े ं से वाहर गया था या खिड़की में से कूद गया था। उसे वस यही र है कि कहीं कोई चीज़ खो तो नहीं गई?

रागोज़िन ने भर्त्सना की दृष्टि से उसे देखा, पर फिर अनचाहे ी कमरे में नज़र दौड़ा ली – कि सव कुछ अपनी जगह पर तो है? व कुछ सही-सलामत था।

क्षण भर को वह कमरे में खड़ा रहा। कमरा उसे अजीव सा ूना-सूना और वेगाना लग रहा था, मानो वह कभी भी यहां अकेला रहा हो। वह समझ गया कि उसका सारा व्यवहार गलत था: हली भेंट में ही उसे वान्या को सच्चाई वता देनी चाहिए थी। क्या ड़का यह भांप गया है कि उसे वाप मिल गया है? अव आगे उसके ाथ क्या होगा? क्या सव कुछ ऐसे ही खत्म हो जायेगा? रागोज़िन मली-दली चादर को जतन से तह किया और अपने विस्तर पर सिर- ाने तले रख दिया।

"मुझे शायद वहुत जल्दी ही कहीं जाना पड़ेगा," विचलित मन उसने मालकिन से कहा, "थोड़े दिनों के लिए। आप एक काम रेंगी: अगर यह लड़का आया, तो आप उसे भगाना नहीं, यहीं हरा लेना। मेरे कमरे में। वह इस लायक है। मैं आपको सारा खर्चा दूंगा, इस ओर से आप चिंता न करें। अच्छा, मैं चलता हूं।"

वह लपककर वाहर आया और कोचवान से कहा कि फ़िटन ौड़ा ले चले, इतनी तेज़ जितनी उसने पहले कभी नहीं चलाई।

फ़ौजी कमिसार के यहां उसे वोल्गा वेड़े की उत्तरी स्क्वैड्रन के ेडक्वार्टर जाने की चिट्ठी मिली। वहां उसे यह आदेश मिला कि गले दिन सुवह छह वजे वह गनवोट 'अक्तूवर' पर हाज़िर हो, ो रेतियों के पार लंगर डाले खड़ी है।

सारी शाम और सारी रात वह वित्त-विभाग का काम सौंपता रहा और वहां से सीधे वोल्गा तट को चला गया। इस क्षण से यह नौकरी उसके लिए अतीत की बात हो गई थी और अब इसके बारे में सोचने की उसे कोई ज़रूरत नहीं थी, ठीक वैसे ही जैसे कि उसने इससे पहले के अपने सभी कामों और नौकरियों को छोड़ने पर उनके बारे में कुछ नहीं सोचा था।

फ़ौजी नाव उसे वोल्गा के बड़े पाट पर ले गई। वह 'अक्तूबर' के डेक पर चढ़ गया, जहां ड्यूटी के अफ़सर ने उसका स्वागत किया। घंटे भर बाद स्क्वैड्रन कमांडर के साथ वह चार जहाज़ों का निरीक्षण करने निकला, जो टापुओं के बालुई तटों के समानांतर एक कतार में खड़े थे। सबसे आखिर में थी गनबोट 'जोखिमी'। उसकी चिमनी छोटी कर दी गई थी, अड़वाल नीचा ही था और उस पर पानी जैसे हरे-मटमैले रंग का रोगन किया गया था। टगबोट बड़ी जुझारू लग रही थी। उसके दल में प्रायः सभी नौसैनिक ही थे, पर कुछ वोल्गा के पुराने नाविक भी थे, जिनके साथ रागोज़िन ने ज़ातोन में काम किया था। जाने-पहचाने जहाज़ पर जाने-पहचाने लोगों की इस मुलाकात में न केवल रागोज़िन खुश हुआ, बल्कि मल्लाहों ने भी उसे "अपने" आदमी के तौर पर स्वीकार कर लिया: सभी जहाज़ों पर यह खबर फैल गई कि स्क्वैड्रन में ऐसा जहाज़ भी है, जिसे बख्तरबंद करने में कमिसार ने हिस्सा लिया था, और वह कमिसार हर तरह के औज़ार से काम करना जानता है।

दोपहर को डेक केबिन में स्क्वैड्रन स्टाफ़ की बैठक शुरू हुई, और प्योत्र पेत्रोविच रागोज़िन ने जीवन में पहली बार यह देखा कि फ़ौजी नक्शा कैसे पढ़ते हैं, और उसने खुद हल्की सी परकार हाथ में ली। फिर जहाज़ों के कमिसारों ने उसे रिपोर्ट पेश की।

दिन ढले थकावट से एकदम चूर रागोज़िन डेक पर निकला। जहाज़ पर आये उसे बारह घंटे से ऊपर हो चले थे, पर अब कहीं जाकर उसने वोल्गा देखी।

नदी एकदम सपाट और गुलाबी थी, बाईं ओर चरागाह वाले तट के पास यह गुलाबी रंग धीरे-धीरे सुनहरे रंग में बदलता जा रहा था, और उससे भी आगे इस पिघले सोने के ऊपर कारवां के ऊंटों

के सिरों और कोहानों जैसे लगते पोक्रोव्स्क के ऊंचे-नीचे कोठार धूप में पीले-पीले दिखाई दे रहे थे।

सहसा रागोज़िन के स्मृति पट पर गुलाबी रेगिस्तान और पीला ऊंट स्पष्टत: उभर आये – वह चित्र जिसने उसे इतना उद्वेलित किया था। "तो सचमुच ही ऐसा होता है," उसने सोचा, "ऐसे रंग, ऐसा सूनापन और – नहीं, क्या यह मुमकिन है? – ऐसी निराशा भी।" सहसा उसे अपने दिल की धड़कन सुनाई दी। आराम करना चाहिए था: दो रातें वह सोया नहीं था। मानव मस्तिष्क की एकसाथ ही कई चित्र देखने की अबोध क्षमता के फलस्वरूप गुलाबी-पीले रंग में व्यक्त हुई बेटे की याद के साथ-साथ उसे एक और दृश्य याद आ रहा था: रेत के पीलेपन और पानी की गुलाबी सतह में रागोज़िन को एक बार फिर सूर्यास्त की वह घड़ी उभरती लगी, जब वे मछली पकड़ने बैठे हुए थे और उसने टापू की ओर तेज़ी से बढ़ती आ रही मोटरबोट देखी थी। अब फिर से उसे वही मोटरबोट साफ़-साफ़ दिखाई दे रही थी, उसने ज़ोर से आंखें रगड़ीं, यह सोचते हुए कि थकावट के कारण उसे दृष्टि-भ्रम होने लगा है। लेकिन आंखें खोलने पर उसे मोटरबोट और भी अधिक स्पष्टतया दिखाई दी, जो मानो दोहरे फाल से सुनहरी लहरों को जोतती चली आ रही थी।

"यह क्या, मोटरबोट आ रही है?" उसने ड्यूटी पर खड़े मल्लाह से पूछा।

"जी हां, कामरेड कमिसार।"

मोटरबोट तेज़ी से पास आती जा रही थी, वह आकार में बड़ी होती जा रही थी और उसका शोर भी बढ़ता जा रहा था। फुर्ती से चक्कर लगाकर वह बहाव के विपरीत 'अक्तूबर' के साथ आ लगी। गनबोट से सीढ़ी नीचे उतारी गई और रागोज़िन ने आखिर उस आदमी को देख लिया, जो फटाफट ऊपर चढ़ रहा था।

"किरील!" वह चिल्लाया और नीचे दौड़ चला।

निचले डेक पर इंजन की कोठरी के पास वे मिले। तेल और गैसोलिन की गंध से भरे तंग गलियारे में वे गले मिले। रागोज़िन किरील को अपनी केबिन में ले चला। वहां उन्होंने एक दूसरे की आंखों में आंखें डालकर देखा और खुशी से हंस दिये। रागोज़िन की नींद रफ़ूचक्कर हो गई।

"यह क्या ले आये?" उसने पूछा।

किरील सरकंडे की टोकरी लिये खड़ा था। ऐसी टोकरियां लेकर औरतें बाज़ार जाती हैं। वह सकुचाते हुए बोला:

"मां ने कुछ बनाया है। मैंने उन्हें कल बताया था कि तुम जा रहे हो।"

"तुम तो जैसे मरीज़ से मिलने आये हो," रागोज़िन ने कहा।

"कैसा मरीज़?"

किरील ने टोकरी में टटोलकर नीचे से बोतल निकाली, और वे फिर हंस पड़े। अखबार पर लाल, खस्ते रूसी समोसे रखकर और गिलासों में शराब उंडेलकर वे तंग चारपाई पर कंधे से कंधा सटाकर बैठ गये। एक दूसरे की ओर देखकर उन्होंने सिर हिलाया और चुपचाप पहला जाम पी लिया। समोसे खाते हुए वे खुली खिड़की में से जल-दर्पण में उठती सूर्यास्त की लपटों को देखते रहे। यहां से बाहर का पानी सिर से ऊपर लगता था और उसका बहाव असली बहाव से सौ गुना तेज़।

"आज रवानगी है?" किरील ने पूछा।

"आधी रात को।"

"मैं जल्दी कर रहा था, सोच रहा था कहीं पहुंचने में देर न हो जाये।"

"तुम उन लोगों में से नहीं हो जिन्हें देर होती है," रागोज़िन ने कहा और किरील के घुटने पर हाथ रख दिया।

"पर देखो न, तुम तो कभी फ़ौज में रहे नहीं, फिर भी मुझसे आगे निकल गये।"

"जल्दबाज़ी मत करो। तुम्हारा वक्त भी आ जायेगा। तुम्हें सबसे जरूरी काम के लिए संभाले हुए हैं।"

"सबसे ज़रूरी काम क्या है? हर घड़ी अपने काम की चिंता ही सबसे जरूरी है।"

"सो तो ठीक है। सबसे ज़रूरी काम और कम ज़रूरी काम भी। सबसे जरूरी काम तुरंत ही किया जाना चाहिए, मामूली काम... टाला जा सकता है।"

रागोज़िन ने गहरी सोच में यह बात कही, और किरील ने ध्यान से उसकी ओर देखा।

"क्या बात है?"

रागोज़िन उछलकर खड़ा हो गया, घर की आदत के अनुसार अंगड़ाई ली, पर केबिन नीची थी, सो उसकी मुट्ठियां छत से टकराईं।

"धत् तेरे की!" वह बोला, फिर से किरील के घुटने पर हाथ रखकर उसे दबाया। "एक काम है मेरा, माफ़ करना, हो सकता है... अभी टाल देना चाहिए... पर... मैं तुम्हें पहले बता नहीं सका। बात यह है कि मुझे मेरा बेटा मिल गया है।"

किरील और भी अधिक आश्चर्य से उसकी ओर देख रहा था।

"हां, बेटा। मेरा और क्सेनिया अफ़ानास्येव्ना का। वह तब वहां जेल में पैदा हुआ था। मुझे अभी थोड़े दिन पहले पता चला है।"

"कहां है वह?"

"वह... बात यह है कि मैंने उसे खोज तो लिया है, पर पूरी तरह नहीं... उसे ढूंढ़ना पड़ेगा। पर इसमें कोई मुश्किल नहीं है! (रागोज़िन जल्दी-जल्दी कहने लगा और अपना सारा बदन उसने किरील की ओर मोड़ लिया।) अगर तुम तैयार हो... मैं उसका इंतज़ाम नहीं कर सका। वक्त नहीं था। समझ रहे हो न? मैंने उसे पाया ही था, कि बस यह..."

"ठीक तरह से बताओ न, बात का सिर-पैर ही समझ में नहीं आता।"

"तुम्हें याद है वह पाव्लिक पारावुकिन? उसी का दोस्त है। तुम पाव्लिक से कह देना कि वह... या नहीं, इससे अच्छा दोरोगोमीलोव से कहना कि तुम इवान रागोज़िन को ढूंढ़ रहे हो। समझ गये? वह सब काम कर देगा। तुम तो जानते ही हो सब लड़के उसकी जेब में हैं। तुम बस उसे कह देना, किसी से कहलवा देना... ठीक है? है न?"

किरील ने रागोज़िन को कभी ऐसी हालत में नहीं देखा था — प्योत्र पेत्रोविच के चेहरे में कुछ इतना विरोधाभास भरा भाव था, उसमें मर मिटने के दृढ़ निश्चय के साथ क्षमापूर्ण अनुनय-विनय का ऐसा अस्वाभाविक मेल झलक रहा था कि किरील अब उसकी ओर देख नहीं सकता था।

किरील ने रागोज़िन का सिर झुकाकर अपने कंधे से लगा लिया और भावपूर्ण तथा दृढ़ स्वर में बोला :

"मैं सब समझ गया और सब कुछ कर दूंगा। तुम परेशान मत होओ। मैं लड़के को ढूंढ़ लूंगा और उसे अपने पास रखूंगा। मेरा मतलब मां के और अपने पास। और उसकी ज़िम्मेवारी मेरे ऊपर होगी। मेरा मतलब मां और मेरे पर। ठीक है? और तुम यह भूल जाओ कि यह मामूली काम है, बकवास है यह। मैं इस काम को इतना ही ज़रूरी मानता हूं, जितना हमारा दूसरा काम ज़रूरी है, जिसे निभाने तुम आज आधी रात को जा रहे हो। और तुम चैन से यह काम करने जाओ। अपने बेटे के लिए भी और अपने ध्येय के लिए भी अब तुम्हें लड़ना है। और राज़ी-खुशी लौटना!"

वे थोड़ी देर और बैठे रहे, शांत होकर कुछ बातें कीं और जब झुटपुटा हो गया, तो उन्होंने विदाई का जाम पिया।

इंजन की कोठरी के पास तंग गलियारे में से सीढ़ी की ओर जाते हुए उनका एक भीमकाय नौसैनिक से सामना हुआ। वह रागोज़िन से ऊंचे कद का था और छाती उसकी इतनी बड़ी थी कि जब वह दीवार से सटकर खड़ा हो गया, तो भी गलियारे में से गुज़रने का रास्ता मुश्किल से बन पाया। उसके पास से जैसे-तैसे निकलते हुए किरील ने सिर उठाकर उसके चेहरे की ओर देखा, जो छत से लटकते बिजली के लैम्प के पास ही था। लैम्प की नारंगी रोशनी में किरील को उसके उभरे हुए कल्ले, उसका असाधारण माथा और नाक के इर्द-गिर्द छोटे-छोटे तिलों जैसी बिंदियां दिखाई दीं। नौसैनिक मुस्करा दिया और उसकी यह शांत मुस्कान देखकर किरील को ख्याल आया कि उसने पहले भी कहीं यह चेहरा देखा है। तत्क्षण उसे अर्खांगेल्स्क नगर का वह मल्लाह याद हो आया, जिससे वह अस्पताल में मिला था, जब दीबिच को देखने गया था, और वह भी मुस्करा दिया :

"कामरेड स्वारनोव?"

"कामरेड इज़्वेकोव, आप क्या हमारे साथ चल रहे हैं?" नौसैनिक ने अपनी भारी आवाज़ में पूछा।

"नहीं, मैं इनसे मिलने आया था। मेरे दोस्त, कामरेड रागोज़िन, तुम्हारे कमिसार होंगे। इनका ख्याल रखना।"

"ज़रूर!"

"देखो, इनका ज़िम्मा तुम पर होगा," किरील ने हंसते हुए कहा।

"हां, हां, हम पर भरोसा रखिये।"

"ठीक," किरील ने जवाव दिया, उसे याद आया कि अस्पताल में भी मल्लाह ने यही बात कही थी और यह कि वहां से चलते हुए उसे ऐसा लगा था मानो अभी-अभी सफलतापूर्वक इम्तहान देकर आया हो।

"ठीक हो गये?"

"भूल भी गया, कहां दर्द हुआ था।"

किरील ने मुस्कराकर नौसैनिक से हाथ मिलाया।

प्योत्र पेत्रोविच से विदा होकर वह मोटरवोट पर उतर गया, ऊपर देखकर चिल्लाया: "जीत कर लौटना!", पर मोटर के शोर में उसे जवाव सुनाई नहीं दिया।

रागोज़िन काफ़ी देर तक नाव की गलही पर लगी वत्ती को दूर होते देखता रहा। काफ़ी अंधेरा हो गया था, और पानी कत्थई-काला लग रहा था। उसकी सतह पर गनवोटों की शांत वत्तियां झलक रही थीं। गनवोटें निश्चल खड़ी थीं। यहां नदी पर अगस्त की शाम की ठंडक महसूस हो रही थी। आधी रात होने में दो घंटे से कुछ अधिक समय वाकी था। थोड़ा सो लेना चाहिए था। रागोज़िन अपनी केविन में लौट गया।

२२

वसंत और गर्मियों के दौरान देनीकिन की सेनाओं के हमलों से लाल सेना के लिए वहुत गम्भीर स्थिति वन गई थी। ऐसी परिस्थितियों में दक्षिणी मोर्चे की कमान ने सेनाध्यक्ष के निर्देशों के अनुसार जवावी हमले की योजना तैयार की। इस योजना का प्रमुख विचार यह था कि दक्षिणी मोर्चे के वायें पक्ष की सेनाएं दोन स्तेपी को पार करते हुए त्सरीत्सिन से नोवोरोस्सीइस्क की दिशा में सफ़ेद गार्डों पर गहरी चोट करें। इस उद्देश्य से दो सेनाओं को मिलाकर प्रहारक सैन्य-दल वनाया गया, जिसे त्सरीत्सिन पर प्रहार करने और वहां से

आगे बढ़कर दोन पार करने का प्रमुख कार्यभार सौंपा गया। इसके पास वाले सैन्य-दल को, जो प्रमुख दल से पश्चिम की ओर था, सहायता के तौर पर कुप्यान्स्क और खार्कोव पर हमला करना था। इन अभियानों के लिए लाल सेना के पास देनीकिन की सेनाओं से कहीं अधिक पैदल सैनिक, तोपें और मशीनगनें थीं, किन्तु रिसाले की संख्या पहले की ही भांति सफ़ेद गार्डों के पास अधिक थी।

अक्तूबर-नवम्बर में शुरू हुई जिन कार्रवाइयों से देनीकिन की किस्मत का फ़ैसला हुआ था, उनसे यह पता चला था कि प्रमुख कमान और दक्षिणी मोर्चे की कमान ने गर्मियों में दोन पार करके नोवोरोस्सीइस्क पर हमला करने की जो योजना बनाई थी, वह अगस्त में इसे क्रियान्वित करने के पहले प्रयास के बाद ही अपना महत्व खो बैठी थी।

लाल सेनाओं की इस योजना को विफल करने के उद्देश्य से देनीकिन ने पहले ही धावा बोल दिया। उसने प्रायः एक साथ ही दो कार्रवाइयां कीं। ये कार्रवाइयां उसने प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों के पुराने और वफ़ादार चाकरों – कज़्ज़ाकों के जनरल मामोन्तोव तथा वालंटियरों के जनरल कुतेपोव को सौंपीं।

मामोन्तोव की कमान में लगभग छह हज़ार घुड़सवार, बहुत सी तोपें, बख्तरबंद मोटरगाड़ियां और प्रायः तीन हज़ार पैदल सिपाही भी थे। इस चौथी दोन कैवेलरी कोर ने अगस्त में नोवोखोपेर्स्क के पास सोवियत मोर्चा तोड़ दिया। देनीकिन ने लाल सेना के दक्षिणी मोर्चे के पीछे, चंडावल में तोड़-फोड़ करने के उद्देश्य से इस कोर के सम्मुख आरम्भ में कोज़्लोव जंक्शन पर कब्ज़ा करने का कार्यभार रखा। परन्तु बाद में उसने यह कार्यभार बदल दिया और कोर को वोरोनेज की ओर बढ़ने को कहा, ताकि वह नोवोखोपेर्स्क से उत्तर-पश्चिम की ओर स्थित लाल सेना के लीस्कीन सैन्य-दल को छिन्न-भिन्न कर दे। मामोन्तोव ने देनीकिन के आदेश का पालन नहीं किया और मोर्चा भेदकर अपनी कोर को सीधे उत्तर की ओर, तम्बोव की दिशा में ले गया। देनीकिन ने मामोन्तोव को पश्चिम की ओर मोड़ने के प्रयास किये पर ये प्रयास विफल रहे। मोर्चे पर केंद्रित लाल सेना की शक्ति से वह दिन पर दिन दूर होता जा रहा था, मोर्चे के पीछे के क्षेत्रों में तेज़ी

से घुसता जा रहा था और अपने मार्च के आठवें दिन उसने तम्वोव पर कब्ज़ा कर लिया।

जुलाई में लेनिन का लिखा पत्र जिन लोगों ने पढ़ा था, वे दोन कज़्ज़ाकों की इस आकस्मिक और खतरनाक चढ़ाई के पहले दिनों से ही यह देखकर विस्मित हुए कि लेनिन के शब्दों में कैसी अचूक सच्चाई थी। मामोन्तोव द्वारा मोर्चा भेदने के ठीक एक महीना पहले लेनिन ने लिखा था: "और हां, देनीकिन की सेना की एक विशेषता यह है कि उसमें अफ़सरों तथा कज़्ज़ाकों की भरमार है। यह एक ऐसा तत्व है, जिसके पीछे जनता की कोई शक्ति नहीं है, इसलिए वहुत अधिक संभावना इस वात की है कि यह वहुत तेज़ी से हमले करने पर, दुस्साह-सिकता पर, सव कुछ की वाज़ी लगाने पर उतर आये ताकि वौखलाहट फैला सके और केवल तवाही की ख़ातिर तवाही मचा सके।"

किरील इज़्वेकोव भी यह देखकर विस्मित था कि लेनिन के शब्दों में घटनाओं का कितना ठोस पूर्वानुमान था। उसे लग रहा था कि उसके साथियों को और स्वयं उसे भी एक तरह से चौथी दोन कैवेलरी कोर की ही चढ़ाई की सीधे-सीधे चेतावनी दी गई थी और यह उनका अक्षम्य अपराध है कि उन्होंने इस चेतावनी की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। किरील का मन कहता था कि न उसके साथी और न वह स्वयं ही इस वात की कोई सफ़ाई पेश कर सकते हैं कि मामोन्तोव का हमला उनके लिए इतना अप्रत्याशित था, कि वे उसके लिए विल्कुल तैयार न थे: आखिर वे इसकी उम्मीद तो नहीं कर सकते थे कि उन्हें पहले से ही वह तिथि और स्थान वता दिया जाता, जहां मोर्चा भेदा जायेगा। उसी पत्र में ही तो लेनिन ने असाधारण सतर्कता वरतने का आह्वान किया था: "ऐसे शत्रु के खिलाफ़ लड़ने के लिए उच्चतम कोटि के सैनिक अनुशासन तथा सैनिक सतर्कता की आवश्यकता है। अचक्के में पकड़े जाने या हतप्रभ हो जाने का मतलव सव कुछ खो देना है।"

अपने काम को मन ही मन परखते हुए किरील यह पा रहा था कि जिस पद पर वह था वहां उससे जो कुछ हो सकता था वह उसने किया था। लेकिन वह सोच रहा था कि उसे इससे कहीं अधिक करना चाहिए था, और यह कि उसने ही दूसरों के साथ "मौका खो दिया"

है और उस मुसीबत का कारण बना है, जो मामोन्तोव की चढ़ाई से मोर्चे तथा चंडावल पर आई है।

रगोजिन के मोर्चे पर चले जाने के बाद किरील का यह विश्वास दिन पर दिन बढ़ता गया था कि उसके लिए भी और उनके ध्येय के लिए भी यही बेहतर होगा कि वह लाल सेना में हो। यह बात उसे दिन-रात बेचैन किये रहती थी। सफ़ेद गार्डों द्वारा मोर्चा भेदने की नई खबर के बाद तो यह बेचैनी बौखलाहट बन गई।

कुतेपोव की कमान में पहली वालंटियर कोर ने दक्षिणी मोर्चे के केंद्रीय भाग में दो सोवियत सेनाओं के संधि स्थल पर हमला करके मोर्चा भेद दिया और एक सेना को कूर्स्क की दिशा में तथा दूसरी को वोरोनेज्श की ओर पीछे हटने पर विवश किया। इसका नतीजा यह था कि जिन सैनिकों को कुप्यान्स्क पर लाल सेना के सहायक हमले में भाग लेना था, उनका एक भाग अब ऐसा करने में असमर्थ था।

इस सब के बावजूद मामोन्तोव द्वारा मोर्चा भेदने के पांच दिन बाद और कुतेपोव द्वारा मोर्चा भेदने के तीन दिन बाद, अगस्त के मध्य में लाल सेना की प्रमुख कमान और दक्षिणी मोर्चे की कमान ने इन घटनाओं से पहले तैयार की गई अपनी योजना के ही अनुसार देनीकिन के विरुद्ध अपना अभियान आरम्भ किया।

अधिकांश सोवियत कर्मियों की ही भांति (जिनमें सैनिक भी थे) इज़्वेकोव को यह पता नहीं था कि दक्षिणी मोर्चे की नई परिस्थितियों को देखते हुए इस अभियान को छेड़ने का समय निकल चुका था। उल्टे, उसे यह जानकर बहुत खुशी हुई कि लाल सेना ने दक्षिण में सक्रिय कार्रवाई आरम्भ कर दी है, और उसे यह बात एक शुभ लक्षण तथा लाल सेना की शक्ति का प्रमाण लगी कि सफ़ेद गार्डों की जवाबी कार्रवाइयों के बावजूद हमला किया गया है और उसकी शुरुआत सफल हुई है। उसे बस इस बात पर ही थोड़ी परेशानी हो रही थी कि मामोन्तोव के रिसाले को पछाड़ने का काम प्रमुख प्रहारक सैन्य-दल की कमान को सौंपा गया था और उसने इस काम के लिए दो राइफ़ल डिविजनें भेजी थीं : इससे तो वोल्गा के निचले इलाकों तथा दोन की ओर लाल सेना के प्रहार की शक्ति कम हुए बिना नहीं रह सकती थी। और वह बड़ी बेचैनी के साथ मामोन्तोव के रिसाले के हमले की

खबरें देख रहा था, जो अब तम्बोव के इलाके में खेतों और लोगों को रौंद रहा था।

मोर्चे से कोई नया समाचार पाते ही किरील सारा काम छोड़ देता और स्कूली नक्शों से लेकर खेती के बड़े नक्शों तक में से जो भी नक्शा हाथ लगता उसे खोलकर सेनाओं की गतिविधियों का ठीक-ठीक पता लगाने और आगे की कार्रवाइयों का अनुमान लगाने की कोशिश करता। आरम्भ में ज्यों-ज्यों लाल सेना को सफलता मिलती गई, त्यों-त्यों उसके मन में रागोज़िन से ईर्ष्या बढ़ती गई।

एक दिन शाम को आनोच्का ने उसे ऐसे ही नक्शा देखने में मगन पाया। वह दरवाज़े पर दस्तक दिये बिना ही उसके दफ़्तर के कमरे में चली आई थी और अब असमंजस में खड़ी थी, क्योंकि किरील ने उसे अपनी सेक्रेटरी समझा और सिर उठाये बिना ही पूछा – क्या बात है? उसके बढ़ गये बाल भौंहों पर गिरे हुए थे, लैम्प-शेड की परछाई में वे सदा से अधिक काले लग रहे थे, कसे हुए होंठों और ठोड़ी पर लैम्प की तेज़ रोशनी पड़ रही थी और साफ़ दीखता था कि उसने दाढ़ी नहीं बनाई है।

"क्यों, क्या बात है?" उसने ऊंची आवाज़ में फिर से पूछा और नक्शों से नज़र हटाई।

तुरन्त ही वह मेज़ के पीछे से निकलकर आनोच्का के पास दौड़ आया, उसका हाथ पकड़ लिया और अभिवादन करने के पश्चात बदली हुई, झिझक भरी आवाज़ में पूछा:

"आप यहां कैसे आ पहुंचीं?"

"बाहर मुझे कहा गया था कि अंदर जा सकती हूं... नहीं आना चाहिए था क्या?"

"क्यों नहीं, क्यों नहीं! मेरा मतलब यह नहीं। मैं यह नहीं समझा कि आप कहां से प्रकट हो गईं। मुझे आपकी प्रतीक्षा थी... मेरा मतलब मैं मिलना चाहता था। एक काम है... बहुत ज़रूरी..."

वह आम तौर पर इतनी जल्दी-जल्दी नहीं बोलता था। उसका ध्यान इस बात की ओर भी गया कि वह ठीक से बोल नहीं पा रहा है। उसने मुड़कर आखिरी सहारे की तरह नक्शों की ओर देखा और फिर से आनोच्का का हाथ पकड़कर उसे मेज़ की ओर खींचा।

7*

"रोज़ सोचता था कि आज बात करूंगा, पर वक्त ही नहीं मिलता। कितना अच्छा हुआ कि आप आ गई। हां, यह देखिये, क्या हो रहा है।"

बायें हाथ से वह उसे पकड़े हुए था और दायां हाथ उसने सारी मेज़ पर फैले नक्शे के ऊपर बढ़ाया।

"यह रही वोल्गा। देखा? हमारा बेड़ा अब यहां है। बस और एक दिन में कमीशिन हमारे हाथों में होगा। समझीं? व्रांगेल पीछे हट रहा है। इधर से हमारा रिसाला ज़ोर डाल रहा है (उसने पश्चिम की ओर इशारा किया और आनोच्का के कंधे पर झुकते हुए उसे बाई ओर को धकेला।) बुद्योन्नी की कैवेलरी कोर। सुना है उसका नाम? नहीं? यह देखिये, यह कोर किधर बढ़ रही है। सुतूलोव के दोन कज़्ज़ाक रिसाले से जूझने। अगर हमने उसे हरा दिया, तो..."

उसने आनोच्का को और आगे धकेला और वह सहसा परे हट गई। किरील ने उसकी ओर नज़र उठाकर देखा और धीरे से कहा: "तब बहुत अच्छा होगा।"

वह आनोच्का को केवल वही बातें बता रहा था, जिनसे उसका मन उत्तेजित हो रहा था, आशा बंधती थी, पर मन में दबी चिंता पर वह चुप्पी साधे हुए था, नक्शे में उत्तर की ओर आंख नहीं उठा रहा था, ताकि कहीं आनोच्का भी ऐसा न कर बैठे। वोल्गा की उत्सा-हवर्द्धक घटनाओं के बारे में बताते हुए अनचाहे ही वह सरातोव से उत्तर-पश्चिम की ओर हो रही घटनाओं के खतरे के बारे में सोचता जा रहा था। वहां तम्बोव प्रदेश में मामोन्तोव के घुड़सवार इस दिन तक कोज़्लोव पर कब्ज़ा कर चुके थे और मास्को का सीधा रास्ता कट गया था, अब पेंज़ा का चक्कर लगाकर ही राजधानी तक पहुंचा जा सकता था। उसने निश्चय किया कि वह हर हालत में आनोच्का का ध्यान इन दुखद घटनाओं की ओर नहीं जाने देगा, उसे पूरा विश्वास था कि वह केवल इन घटनाओं को ही आनोच्का से छिपा रहा है, इनके अलावा और कुछ भी नहीं। वह कभी यह स्वीकार न करता कि आनोच्का को यों अप्रत्याशित ही इतना निकट पाकर उसके मन में जो उद्गार उठ रहे हैं, उन्हें छिपाने की भी चिंता उसे कम नहीं है।

अपने नक्शे उलट-पलटकर उनमें से एक छोटा नक्शा निकालकर

उसने ऊपर रखा और फिर से आनोच्का के पास आ गया।

"यह तो मैंने कमीशिन – त्सरीत्सिन की दिशा दिखाई थी। अब इससे पश्चिम की ओर देखिये। यहां हमारा दूसरा सैन्य-दल है। देख रही हैं, पांच दिन पहले मोर्चा कहां था? अब देखिये हम कहां घुस गये हैं। यह रही लाल लाइन। है न बढ़िया बात? अगर आगे भी ऐसे ही चलता रहा, तो हफ़्ते भर बाद हम कुप्यान्स्क में होंगे। यह देखिये।"

वह आनोच्का को मेज़ पर ज़रा झुकाना चाहता था, पर वह बोली :

"मुझे अच्छी तरह दिख रहा है। पर यह क्या बात है – कमीशिन में हम एक दिन बाद होंगे, और कुप्यान्स्क में हफ़्ते भर बाद? कमीशिन तो अभी इतनी दूर है, और कुप्यान्स्क बिल्कुल पास ही।"

"हुं," एक ओर को हटते हुए किरील बोला, "हां, यह तो काफ़ी बुरी बात है। पर सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि ... नक्शे अलग-अलग माप के हैं।" (उसने अपने ऊपरी होंठ को छुआ।) "छोटे नक्शे पर दूर की जगह भी पास लगती है।"

"तो फिर छोटे नक्शों से ही लड़ाई लड़नी चाहिए," आनोच्का मुस्करा दी।

किरील हंस पड़ा। आनोच्का ने गम्भीरता से और साथ ही कुछ चंचलता से पूछा :

"आप कह रहे थे कि मुझसे मिलना चाहते थे। रणनीति समझाने के लिए क्या?"

"नहीं, नहीं, रणनीति के बिना ही।"

"यह कैसे हो सकता है, आप तो रणनीतिज्ञ हैं न?"

"मैं कमज़ोर रणनीतिज्ञ हूं। नहीं तो मैं छोटे नक्शों से लड़ाई लड़ता ... कम से कम आप से?"

"आप मुझ से लड़ना चाहते हैं?"

"नहीं, आप से नहीं, आपके लिए।"

वह फिर से मुस्कराई। उसकी इस मुस्कान में न चंचलता थी, न अठखेली, परन्तु उस स्त्री का विजयपूर्ण संतोष था, जो इस बात का आनन्द ले रही हो कि मज़ाक-मज़ाक में ही उसने पुरुष का सारा

ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया। पर तभी लगा, उसने अपने आप को टोका और बातचीत में हल्के से नखरे का जो पुट आ गया था, उसे बदलते हुए कहा :

"आपको सचमुच मुझसे काम है? मैं भी ज़रूरी काम से आई हूं।"

"मुझे आपके भाई से बात करनी है।"

"पाव्लिक से?"

"उसके दोस्त इवान रागोज़िन के बारे में। आपको याद है वह रागोज़िन, जिसके पास आप तब पैसों के लिए गई थीं... त्स्वेतुख़िन के साथ? उसका एक बेटा है..."

"अरे!.." आनोच्का ने मानो घबराते हुए उसकी बात काटी। "कैसा अजीब संयोग है! मैं भी पाव्लिक के सिलसिले में आपसे बात करने आई हूं। वह गायब है।"

"गायब है?"

"परसों सुबह घर से निकला था और फिर नहीं लौटा।"

"आपने ढूंढा है कहीं?"

"पिता जी ने मिलीशिया में रिपोर्ट की है, वोल्गा पर जिस किसी से पूछ सकते थे पूछा है..."

"शायद दोरोगोमीलोव को कुछ पता हो?"

"आर्सेनी रोमानोविच ने पाव्लिक के सभी दोस्तों से पूछा है, पर कुछ पता नहीं चला... कोई अता-पता नहीं। हे भगवान!"

"हां, हां, आपके दिमाग में तो तरह-तरह की बातें आ रही होंगी: मारा गया, या और पता नहीं क्या हो गया," किरील ने आनोच्का को ढाढ़स बंधाने के लिए जानबूझकर रूखे अंदाज़ में कहा। "वह तो बस मोर्चे पर भाग गया है। धमकी दे तो रहा था कि भाग जायेगा।"

"पर मुझे इससे क्या तसल्ली? छोटा सा तो है, ज़रूर उसे कुछ न कुछ हो जायेगा।"

"आप क्या सोचती हैं कि ऐसे लड़कों को सचमुच मोर्चे पर जाने दिया जाता है?"

"पर वह अगर भाग गया है, तो?"

आनोच्का ने कुर्सी की पीठ का सहारा लिया और उसकी सुकोमल देह सहसा कुर्सी पर ढह गई।

"सुनिये आनोच्का," किरील कहने लगा, पर आनोच्का ने उसे बोलने नहीं दिया।

"मुझे पता है कि कसूर मेरा है, मेरा ही! मां के होते कभी ऐसा न होता! वह पाव्लिक को इतना प्यार करती थीं! और मैंने उसे बिल्कुल अकेला छोड़ रखा है। वह तो अभी बच्चा ही है, बिल्कुल बच्चा!"

उसने अपनी कोहनी के मोड़ में मुंह छिपा लिया, उसका हाथ कुर्सी की पीठ पर ही था।

"आप खुद अभी बच्ची हैं," उसके पास आते हुए किरील ने कहा।

इससे वह मानो पसीज गई, रुआंसी सी होकर वह सुबकी रोकते हुए बड़बड़ायी:

"मैं आपको रिहर्सल पर बुलाना चाहती थी, हमारी ड्रेस रिहर्सल होनेवाली है, पर अब मुझे पता है, मेरे से कुछ न होगा, कुछ न होगा!"

किरील और अधिक सख्ती से बोला, इस डर से कि कहीं आनोच्का रो न पड़े:

"बेकार की बातें मत करिये। रिहर्सल ही तो है, ऐसी कौन सी बड़ी बात है! बन जायेंगी आप लुईज़ा, या और क्या बनना है आपको? और मैं आकर तालियां बजाऊंगा। क्या रखा है लुईज़ा बनने में! मेरा मतलब है—आपकी इस लुईजा का पार्ट कोई मुश्किल नहीं है। और रहा पाव्लिक... मुझे एक लड़के को ढूंढना था, अब दो को ढूंढूंगा। मुझे यकीन है मिलीशिया वाले उसे घसीट लायेंगे। वह कोई पहला ऐसा सूरमा नहीं है।"

आनोच्का ने सिर ऊपर उठाया।

"'पहला ऐसा सूरमा नहीं है! थोड़ी धुनाई हो जाये बस उसकी!'" किरील की भारी आवाज़ की काफ़ी अच्छी नकल उतारते हुए आनोच्का ने कहा, और किरील ने गम्भीरता बनाये रखने के लिए मुंह मोड़ लिया।

"कल सुबह ही मैं मिलीशिया को इस काम में लगा दूंगा, सब कुछ करूंगा," पहले से मृदु स्वर में उसने कहा।

"सच?" आनोच्का ने मानो खुश होते हुए पूछा। "आपके ख्याल में मैं सचमुच ही अपना पार्ट अच्छी तरह अदा कर लूंगी?"

किरील को बातचीत में ऐसा मोड़ आने की आशा नहीं थी।

"अगर अभी तक अदा करती आई हैं..."

"आपको कैसे पता है कि मैं लुईज़ा का पार्ट कर रही हूं?"

"मां से पूछा था।"

"अच्छा, तो आखिर आप मुझे भूले नहीं थे?"

"हां, भूला नहीं था।"

"इसीलिए दो महीने तक नहीं मिले?"

"दो महीने? नामुमकिन है!"

"सात हफ़्ते और तीन दिन।"

"आप गिनती रही हैं?" किरील और भी अधिक हैरान हुआ।

"और आप गिनती भूल बैठे?"

उसने विवशता दिखाते हुए कागज़ों और नक्शों की ओर इशारा किया।

"हां, मैं समझती हूं," आनोच्का बोली। "फ़ुरसत नहीं थी..."

उसकी भौंहें धीरे-धीरे ऊपर उठ गई, और उसकी इस अनचाही गति में इतनी निराशा थी कि किरील से कुछ कहते नहीं बना।

"अच्छा, अब चलना चाहिए। धन्यवाद। पाव्लिक की बड़ी चिंता है मुझे!"

"मैं आपको छोड़ने चलूंगा।"

"नहीं, नहीं, आप कैसे?.." आनोच्का ने कहा और ठीक किरील की तरह ही हाथ घुमाते हुए मेज़ की ओर इशारा किया।

"ठहरिये, ठहरिये," वह बोला, इधर-उधर देखता हुआ वह अपनी टोपी ढूंढ रहा था, पर पा नहीं रहा था। "मैं आपके साथ घूमना चाहता हूं, उस दिन जैसे ही।"

"और फिर दो महीने के लिए गायब हो जाना?"

"तब तो जरूर ही जाना चाहिए। चलिये चलें।"

उसे टोपी नहीं मिली और वह नंगे सिर ही बाहर आ गया।

शीतल अंधकार ने उन्हें अपने आलिंगन में समेट लिया – सांझ ढले अब शरद ऋतु के आने का आभास होने लगा था और इससे संध्याओं की मोहकता में उदासी का पुट आ गया था। हवा में ताज़गी और खुनकी थी। सीधी सड़क पर स्टीमर के भोंपू की लंबी आवाज़ मानो आह्वान करती चली आ रही थी।

किरील ने आनोच्का की बांह में बांह डाली। दूसरी बार उसने यह कोमल हाथ पकड़ा था, जिसकी एक-एक हड्डी का आभास होता था। उसे यह ख्याल आया कि शायद अक्सर यह हाथ सहारा ढूंढता होगा और थकावट से गिर जाता होगा। परन्तु हाथ के नुकीले मोड़ों में उसे हठधर्मी का अहसास हुआ।

"आपको ठंड लग रही होगी... टोपी के बिना?"

"आप यह तो नहीं पूछना चाहती थीं," किरील ने कहा।

"क्यों, आप ऐसा क्यों सोचते हैं?" आनोच्का ने तुरंत उसकी बात काटी, पर आगे नहीं बोली। उसके उत्तर की प्रतीक्षा में वह कुछ कदम चली। "पता नहीं क्यों मुझे आप से बात करने का कोई बहाना ढूंढना पड़ता है," उसे कुछ न कहते देखकर वह आगे बोली। "शायद इसलिए कि आप सबसे महत्वपूर्ण विषय पर बात नहीं करना चाहते। ठहरिये, ठहरिये! मुझे पता है, आप ज़रूर अभी पूछेंगे: सबसे महत्व-पूर्ण क्या है? है न?"

हौले से हंसकर किरील ने पूछा:

"हां, सचमुच सबसे महत्वपूर्ण क्या है? इस वक्त तो शायद पाव्लिक को ढूंढना ही सबसे महत्वपूर्ण है, है न?"

"बेशक," बहुत ही जल्दी से आनोच्का ने हामी भरी। "पर तब, कार में आपने अपनी बात पूरी नहीं की थी, याद है?.. आप को इस बात का बिल्कुल अफ़सोस नहीं कि आप लीज़ा से जुदा हो गये?"

"अच्छा, तो यह है सबसे महत्वपूर्ण विषय!.. मुझे बीती बातें याद करना पसंद नहीं है।"

"उसने दूसरी बार शादी कर ली है। अभी हाल ही में। आपके सरातोव लौटने के बाद। आपने सुना है? यह अतीत नहीं, वर्तमान है।"

"पर यह ऐसा वर्तमान है, जिसका मुझसे कोई वास्ता नहीं होना चाहिए।"

"नहीं होना चाहिए? या सचमुच नहीं है?"

"आप इस मामले में ही बाल की खाल उतार रही हैं या सदा ऐसा करती हैं?"

"सदा!" निर्ममता से उसने पुष्टि की।

किरील फिर से हंस दिया, पर मानो अनिच्छापूर्वक, और काफ़ी देर तक चुप रहा।

"चूंकि आपको इस मामले में इतनी दिलचस्पी है, तो इसे सदा के लिए खत्म किया जाये," दबी-दबी आवाज़ में वह बोला, "मैंने सचमुच लीज़ा को याद करना छोड़ दिया है। पहले इसके लिए अपने को विवश करता था और फिर यह आदत ही हो गई।"

"तो इसका मतलब है आपको अभी भी लीज़ा से प्यार है?" आनोच्का ने अधीरता से पूछा और हाथ को झटका दिया, मानो उसे छुड़ाना चाहती हो, पर तुरंत ही इरादा बदल दिया।

"क्यों, यह मतलब कैसे हुआ? वह लीज़ा जिससे मुझे कभी, याद भी नहीं कितने साल पहले, प्यार था, हो सकता है, वह लीज़ा कभी थी ही नहीं।"

"पर यह तो बिल्कुल बेमतलब बात हुई," आनोच्का ने कुछ आहत से स्वर में कहा, और इस बार उसकी उंगलियों से अपना हाथ छुड़ा लिया।

"बेमतलब क्यों? वे हमारे यौवन के दिन थे, हमारे सपने थे।"

"बेमतलब ही तो है। अगर तब प्यार था, तो अब भी है। और अगर नहीं, तो इसका मतलब है आपका कोई भरोसा नहीं।"

"हां, यही बात है! मेरा कोई भरोसा नहीं।"

किरील को इस बात में बड़ा मज़ा आया और वह ज़ोर से हंसने लगा। आनोच्का ने सहसा अपना हाथ उसकी हथेली में रख दिया, मानो हटाया ही न हो, और वे आगे चल दिये। अब वे कुछ नहीं बोल रहे थे, उनके कान बस एक दूसरे पर ही लगे हुए थे, हालांकि पैरों तले सड़क पर रेत की सरसर के अलावा और कुछ नहीं सुनाई दे रहा था।

जब वे आनोच्का के घर तक पहुंचे, तो उसने गेट पर ही किरील को विदा कर देना चाहा, पर वह बोला कि उसे आंगन में दरवाज़े

तक पहुंचायेगा। आनोच्का रोशन खिड़की पर दस्तक देने गई और सहसा चिल्ला उठी:

"हे भगवान! देखिये तो!"

किरील उसके पास गया।

चारपाई पर पाव्लिक वैठा हुआ था। धुंधली रोशनी में भी उसके गालों पर आंसुओं से वने धव्वे दिखाई दे रहे थे – रोते-रोते उसने गंदे चेहरे पर आंसू पोंछे थे। उसके लाल से वाल किसी चिड़िया के लड़ाई में नुचे परों की तरह खड़े थे। वह जल्दी-जल्दी रस्सी का टुकड़ा उंगली पर लपेटता और फिर झटके से उसे उतार देता।

उसके सामने मेज़ के पीछे पारावुकिन विराजमान था – नालायक वेटे को डांट पिलाते बाप की साक्षात मूर्ति वना। वह उंगलियों से मेज़ पर पटापट कर रहा था और वेटे की ओर क्रोध भरी नजरें फेंक रहा था।

दरवाज़ा खोलकर उसने आनोच्का को अंदर आने दिया और इज़्वेकोव की ओर ध्यान दिये विना ही तुरंत वोलने लगा।

"आ गया नवाबज़ादा, आ गया! भूख खाला जी का घर नहीं। यह वाप ही है, जो इस निकम्मे का पेट भरता है। समझ में नहीं आता, नालायक गया किस पर है? मां इसकी इतनी मेहनती थी, सूअर के वच्चे को नहलाती, धुलाती रहती थी। और वहन इतनी समझदार लड़की है, कल को मां वरावर होगी। वाप... वाप भी क्या?"

पारावुकिन ने तिरछी नज़र से वेटी और उसके साथी की ओर देखा, तनके खड़ा हो गया, तेज़ी से हाथ उठाकर अपने अस्त-व्यस्त वालों और दाढ़ी पर फेरा, इसी क्षण यह दिखा कि चाहते हुए भी वह सीधा नहीं खड़ा रह पा रहा है।

"वाप भी कोई वेहया नहीं है, सारी उम्र घरवालों के लिए दुख के घूंट पीता रहा है..."

"ठहरिये भी न पिता जी," आनोच्का वोली। "कहां गायव रहा था तू, पाव्लिक?"

जव से वह अंदर आई थी, एकटक भाई की ओर देख रही थी। उसकी नज़रों में ऐसा प्यार, विह्वलता और सच्चे मन से उठता उलाहना था कि पाव्लिक ने सिर नीचा कर लिया था और रस्सी लपेटना वंद कर दिया था।

"ठहरना क्या? मैंने इससे सब उगलवा लिया है," पारावुकिन ने कहा और अपनी मांसल हथेली खोलकर बड़े गर्व से हिलाई। "बता दिये इसने मुझे अपने सब जहाज़ी सपने। कहता है फ़ौजी बेड़े में जहाज़ी बनना चाहता था। बना दिया है मैंने इसे जहाज़ी!"

आनोच्का पाव्लिक की ओर लपकी, उसे अपनी छाती से लगा लिया। राहत की सांस लेकर उसने अपना मुंह बहन की छाती में छिपा लिया। वह थरथराया और फिर शांत हो गया, उसकी उंगलियां फिर से रस्सी लपेटने लगीं।

"जहाज़ के खाव में जा छिपा, उवेक तक पहुंच गया, वहां खलासियों ने ड्रमों के साथ इसे भी बाहर निकाल लिया। मैंने पूछा क्यों गया था? कहता है, समुद्री लड़ाई देखना चाहता था। कौन से समुद्र में या झील में? कहता है—यह फ़ौजी राज़ है!"

"कैसे तुमने ऐसी हरकत की, पाव्लिक?" आनोच्का ने पाव्लिक के बिखरे बालों पर हाथ फेरते हुए कहा। वह अभी भी उत्तेजित थी।

"आखिर में कहता है कि मैंने क्रांति के लिए अपनी जान न्योछावर करने का फ़ैसला किया है। देखो तो इस लड़ाके को! क्या करोगे भला इसका?"

"मैंने क्या कहा था?" इज़्वेकोव बोला। "समय की पुकार है। बच्चे इसे हम बड़ों से ज़्यादा अच्छी तरह सुनते हैं—मोर्चे पर चलो! मोर्चे पर!"

किसी अजनबी की आवाज़ सुनकर पाव्लिक ने बहन की छाती से सिर हटाया, तेज़ी से उस ओर देखा और तुरंत ही किरील को पहचान लिया। अचानक ही मिले इस समर्थन से उसका हौसला बढ़ा और उसने शिकायत और चुनौती भरी नजर बाप की ओर फेंकी।

"मैं अकेला होता तो कोई बात भी थी। यह तो सब उस वान्या रंगैये-कंगाल की करनी है। खुद तो वह मोटरबोट में सीधे बेड़े पर चला गया होगा, पर मुझे कह गया: तू किसी जहाज़ पर जैसे-तैसे उवेक पहुंच जा। वहां बेड़ा डीज़ल लेने आयेगा, वहीं मैं तुझे ले लूंगा। मैं दो दिन तक राह देखता रहा, पर बेड़ा तो उवेक आनेवाला ही नहीं था। क्या ज़रूरत है उन्हें उवेक आने की!"

"च-च-च! कैसा साथी मिला तुझे, ज़रा भी भरोसेमंद नहीं!" इज़्वेकोव ने गम्भीरतापूर्वक कहा। "कौन है यह वान्या? रागोज़िन तो नहीं?"

"और कौन? उसके तो मज़े हैं। उसे सब नौसैनिक जानते हैं!"

"तुझे क्या अपने किये का ज़रा भी अफ़सोस नहीं?" आनोच्का भाई से परे हट गई।

पाव्लिक ने फिर से सिर झुका लिया: वहन की वेदना ही उसके लिए सबसे बड़ा उलाहना थी।

इतनी आसानी से ही एक भगोड़ा मिल गया था, और मानो ओस पर दूसरे के पदचिह्न उभर आये थे। किरील खुश हो सकता था। उसने चलने की सोची, पर तभी पाराबुकिन ने, जिसे रोबीले बाप की भूमिका से वंचित कर दिया गया था, अकड़ते हुए पूछा:

"माफ़ कीजिये, आप मेरी वेटी के साथ थियेटर में काम करते हैं, या कोई और हैं?"

"यह वेरा निकान्द्रोव्ना के वेटे हैं," आनोच्का बोली, "आप जानते तो हैं इन्हें।"

पाराबुकिन फ़ौरन सातवें आसमान से ज़मीन पर आ गिरा, उसने अपना वोरे सरीखा कुर्ता झटककर ठीक किया और बड़े अदव से बोला:

"आपके ऊंचे ओहदे से ही आपको ज़्यादा जानता हूं, क्योंकि तकरीबन हर फ़रमान पर आपके दस्तखत देखता हूं। और फिर आपका मातहत हूं—पुरानी चीजों के महकमे में काम करता हूं।"

"हां, अरसे से आपका यह महकमा देखने की सोच रहा हूं," किरील ने कहा। "क्या हो रहा है आपके यहां? सुना है आप लोग किताबें तबाह करते हैं?"

"इजाज़त के बिना एक पन्ना भी नहीं! जैसा हुक्म है, बिल्कुल वैसा ही करते हैं। मज़हबी किताबों या ज़ारशाही कानूनों की रद्दी ज़रूर फाड़ते हैं। या फिर वो सरमायेदारों की छपाई—शेयर कम्पनियों की रपटें या इश्तहार वगैरा।"

"और वो भूगोल की किताब के लिफ़ाफ़े नहीं बनाये थे क्या?" पाव्लिक बाप को डंक मारने का मौका पाकर तुरंत बोल उठा।

"चुप रह, बे! बड़ा आया है समझनेवाला। जुगराफ़िये की नहीं इतिहास की किताब थी। क्योंकि यह पुराना इतिहास है, जो अब नहीं होगा। यह इतिहास रद्द हो गया है। तू क्या सोचता है हमारे महकमे में किसी को किताबों का कुछ इल्म नहीं? सब छांटना जानते हैं: काम की किताबें—सब एक तरफ़, जो काम की नहीं—वे रद्दी में। किताबों की जिल्दें—पतावों के लिए, छपे हुए पन्ने—लिफ़ाफ़ों के लिए, साफ़ कागज़ लिखने के लिए।"

"ज़रूर आऊंगा आपका महकमा देखने। बड़ी दिलचस्पी हो रही है मुझे इसमें," किरील ने कहा।

"हमारे यहां बड़े-बड़े जानकार लोग आते हैं, और कोई इसे अपनी तौहीन नहीं समझता। पूरी की पूरी लैबरेरियां बना ले जाते हैं हमारी किताबों से।"

"हां, हां, मैं भी देखूंगा", किरील ने मुस्कराते हुए पाव्लिक की ओर हाथ बढ़ाया। "अच्छा तो, सूरमा! वक्त आयेगा, तो हम भी लड़ लेंगे, हमारे जीवन में अभी जाने कितने युद्ध आयेंगे। पर अभी आनोच्का को सताना नहीं, ठीक है?"

पाव्लिक किरील से हाथ मिलाते हुए झिझक रहा था, फिर उसने धीरे से हाथ ऊपर उठाया, पर कोहनी बगल से सटाई रखी, और सिर घुमा लिया।

आनोच्का अपने अतिथि को छोड़ने बाहर आई। वह अब शांत हो गई थी। किरील जब पाव्लिक से बात कर रहा था, उस बीच उसने अपने कटे बाल संवार लिये थे।

बाहर के खुले दरवाज़े के पास अंधकार में क्षण भर को वे रुके, तो आनोच्का ने चंचल स्वर में पूछा: "अब कब तक?"

"कल तक। ठीक है—कल मिलें?" किरील ने कहा। उसे यह याद हो आया कि पिछली बार वह कितने दिनों तक आनोच्का से मिलना टालता रहा था और अब उसने यह गलती न दोहराने का फ़ैसला किया।

एक बार फिर वह यह देखकर विस्मित था कि उसका छोटा सा हाथ कितना कोमल है, और सहसा वह इस हाथ पर, जैसा दुनिया में कोई दूसरा न था, झुक गया, और दो बार जल्दी-जल्दी बेढब से चुम्बन लिये।

"अरे यह क्या!" आनोच्का चीखी, ड्योढ़ी में हट गई और फिर दरवाज़े के पीछे से सहसा इतना और जोड़ा: "कितने चुभते हैं!"

वह तुरंत ही छोटे-छोटे, पर दृढ़ कदम भरता वहां से चल दिया। वह इस वात पर स्तब्ध था और साथ ही खुश भी कि उसने आनोच्का का हाथ चूमा है। पहले कभी वह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि किसी स्त्री का हाथ चूमेगा : उसके लिए यह या तो अभिजात वर्ग का कृत्रिम शिष्टाचार या ऐसी तुच्छतापूर्ण, दासीय हरकत थी, जिसे वे लोग करते थे, जो इज़्वेकोव से ज़मीन-आसमान की तरह दूर थे। स्टेशन, आदि पर कहीं जव किरील किसी को ऐसा करते देखता, तो उसे घिन होती, और पहले कभी उसे यह सोचकर ही अपने आप पर हंसी आती कि वह स्त्री के लिए अपमानजनक और पुरुष के लिए मानमर्दक इस रस्म की नकल करेगा। अव जवकि स्त्री अंधविश्वासों और हीनता के सभी वंधनों से मुक्त हो रही थी, हाथ का चूमना उसे विशेषतः असंगत लगता था। नहीं, अगर कोई हाथ चूमने की इस रस्म को पुरुष शौर्य के प्रतीक के रूप में वनाये रखने का समर्थन करता है, तो फिर इसमें भी स्त्री का समानाधिकार हो, और वह भी पुरुष के प्रति लगाव व्यक्त करने के लिए अपने होंठों से उसके हाथ का स्पर्श करे। नहीं, नहीं, किरील हाथ चूमने के विलकुल खिलाफ़ है। वह तो केवल इसलिए खुशी से ओत-प्रोत हो रहा है कि उसने आनोच्का का हाथ चूमा है–अनोखी युवती का इतना प्यारा-प्यारा हाथ! उसका यह चुम्वन छवीलों की भोंडी रस्म से सर्वथा भिन्न है। उसने आनोच्का का हाथ नहीं चूमा है, वल्कि उसके उस आकर्षण को, जो उसके हाथ में घनीभूत है, उसने आनोच्का को चूमा था, स्वयं आनोच्का को!–क्या उसकी देह का हर अंग–चेहरा, गर्दन, मुंह या हाथ, सभी एकसमान ही इस योग्य नहीं कि उन्हें चूमा जाये? कल वह आनोच्का को यह वतायेगा कि उसके लिए आनोच्का की देह का हर अंश एकसमान है, कल ही, हां कल ही–कितनी अच्छी वात है कि कल ही वह वता सकेगा!

वह उसी रास्ते से वापस जा रहा था, जिस पर थोड़ी देर पहले वे दोनों चल रहे थे, और हर कदम के साथ उसमें आनोच्का की समीपता की अनुभूति फिर से जाग रही थी, अंधेरी सड़कों पर पैरों

तले रेत की सरसराहट इसे सजीव बना रही थी। वे जब इकट्ठे जा रहे थे, तब भी रेत ऐसे ही सरसरा रही थी। आनोच्का के पैरों तले ऐसी ही सरसराहट हो रही थी। वह अस्पष्ट से मंद स्वर में कुछ गुनगुना रहा था। उसे सुर की पहचान नहीं थी, लेकिन जब वह अपने लिए गाता था, तो उसे यह अच्छा लगता था और उसे लगता था कि उसमें संगीत की अनुभूति है। उसकी गुनगुनाहट का एक ही अर्थ था—कल, कल। चुम्बन के बारे में अपने विचारों के उत्तर में वह कह रहा था—कल, कल। हां, कल ही, कल ही।

अपने कमरे में उसने कुछ साथियों को बैठे पाया। कुछ खिड़कियों के दासों पर बैठे सिगरेट पी रहे थे, कुछ वे नक्शे देख रहे थे, जो किरील ने आनोच्का को दिखाये थे। वह सब को जानता था और तुरन्त ही समझ गया कि किसी अप्रत्याशित घटना के कारण वे यहां जमा हुए हैं।

"कहां गायब थे इतनी देर से?" एक साथी ने पूछा।

"कहीं नहीं। यों ही ज़रा बाहर निकला था, देख तो रहे हो, टोपी पहने बिना गया था," उसने कहा और सदा की भांति चलने की कोशिश करते हुए अपनी मेज़ तक गया और उस पर नज़र दौड़ाई।

उसकी नज़र तुरंत ही कलमदान के पीछे रखे तार पर पड़ी। जब तक वह तार पढ़ता रहा, कोई कुछ नहीं बोला। उसका मुंह भिंच गया और लगा वह बूढ़ा हो गया है। उसने तार को दोहरा किया और धीरे से कुर्सी में बैठ गया।

"बैठो नहीं," उससे कहा गया। "अध्यक्ष हमारा इंतज़ार कर रहे हैं, उन्होंने मीटिंग बुलाई है।"

"अच्छा। चलो चलें," उसने ऐसे विश्वास के साथ कहा कि सब तुरन्त उसके पीछे चलेंगे ही, मानो स्वयं उसने ही यह मीटिंग बुलाई हो, और जल्दी-जल्दी अपने कमरे में होता हुआ अगले कमरे में चला गया।

२३

अगले दिन के अंत में ही कहीं किरील को आनोच्का को रुक्का भेजने का वक्त मिला, जिसमें उसने लिखा था कि वह दो-एक दिन बाद ही उससे मिल सकेगा। जब वह दो-एक दिन लिख रहा था,

तो उसे विश्वास नहीं था कि ऐसा ही होगा, पर वह और कुछ नहीं लिख सकता था। हां, उसने आगे यह भी लिख दिया कि आनोच्का से मिलने का उसका वहुत मन है। उसका ख्याल था कि इतना लिख देने पर और कुछ समझाये विना ही उसका पश्चाताप हो जायेगा।

दो दिन तो क्या, दो घंटे वाद क्या होनेवाला है, इसका भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता था। सारी रात उनकी मीटिंग चलती रही थी, टेलीफ़ोन और तार लगातार काम कर रहे थे: नगर के लिए उत्तर की ओर से नये वलवे का खतरा पैदा हो गया था तथा इससे मास्को के साथ पेंज़ा होते हुए अंतिम रेल सम्पर्क टूट जा सकता था।

दोन कज़्ज़ाकों की लाल डिविजन के कमांडर, भूतपूर्व कज़्ज़ाक कर्नल मिरोनोव ने पेंज़ा प्रदेश के सरान्स्क नगर में कैवेलरी कोर गठित करने के पश्चात क्रांतिकारी सैनिक परिषद की सत्ता मानने से इन्कार कर दिया था। इससे पहले ही वह डिविज़न के राजनीतिक विभाग को नज़रंदाज़ करने लगा था और अपनी मनमर्ज़ी से कज़्ज़ाकों और किसानों को जमा करके यह कहते हुए कि वह क्रांति की रक्षा कर रहा है, उन्हें वोल्शेविकों और सोवियतों के विरुद्ध उकसाता रहा था। क्रांतिकारी सैनिक परिषद की ओर से जब उसे पेंज़ा वुलाया गया, तो इसके जवाव में उसने अपनी टुकड़ियों को हथियारों से लैस कर दिया और यह अल्टीमेटम भेजा कि उसे वेरोक-टोक मोर्चे पर जाने दिया जाये। उसका लक्ष्य यह था कि जैसे भी हो देनीकिन से जा मिले। मामोन्तोव इस समय अपने हमले में सबसे उत्तरी विंदु तक पहुंच चुका था और इससे वलवे के लिए अनुकूल परिस्थितियां वन गई थीं। ऐसी हालत में मिरोनोव अगर लाल सेना के चंडावल में उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ता आता, तो इससे मामोन्तोव को वहुत मदद मिलती। यह गद्दार मख़्नो जैसा ही दुस्साहसपूर्ण काम था जो वसंत में ही सफ़ेद गार्डों से जा मिला था।

नगर सोवियत के सभी कर्मियों को गिरफ़्तार करके और जेल में वंद करके मिरोनोव अपनी कज़्ज़ाक टुकड़ियों के साथ सरान्स्क से पेंज़ा की ओर चला। रास्ते में उसने अपने एजेंटों को गांवों में भेजा

8–60

ताकि वे किसानों को बगावत के लिए उकसायें। मकार्येव्स्कोये बस्ती में वह तकरीबन एक दिन के लिए रुका रहा, और इससे सोवियत कमान को उसे मोर्चे के निकटवर्ती क्षेत्र में पहुंचने से रोकने तथा चंडावल में ही उसका अंत कर देने के लिए अपने सैनिक जमा करने का अवसर मिल गया।

पेंजा प्रदेश में घेरेबंदी की स्थिति की घोषणा कर दी गई। सैनिक परिषद ने सारी सत्ता अपने हाथों में ले ली, और ज़िलों में क्रांतिकारी समितियां गठित की गई। गांवों के कम्युनिस्ट कुल्हाड़ियां और जेलियां लिये शहरों में जमा होने लगे, ताकि संगठित होकर विश्वासघाती डिविज़न का मामना कर सकें। टोह लेने का इंतज़ाम किया गया, हथियारों की मरम्मत के लिए वर्कशापें खोली गई। घोड़ों और ज़ीनों की फ़ेहरिस्त बनाई जाने लगी। पेंज़ा में मज़दूर रेजीमेंट के लिए वालंटियरों के नाम लिखे गये। प्रदेश के दूर-दराज़ के भागों में भी बोल्शेविकों की लामबंदी हुई और सैकड़ों लोगों ने हथियार संभाले।

सरान्स्क से चलने के चार दिन बाद मिरोनोव की कुछ टुकड़ियों ने मूरा नदी पार करने की कोशिश की, जहां मशीनगनों से गोलियों की बौछार ने उनका स्वागत किया और उनमें भगदड़ मच गई। इसके तीन दिन बाद मिरोनोव के लगभग एक हज़ार सिपाहियों ने हथियार डाल दिये और अपने प्रतिनिधियों द्वारा यह कहलवाया कि वे फिर से लाल सेना में लौटना चाहते हैं।

मिरोनोव शेष बगावतियों के साथ दक्षिणी मोर्चे की ओर बढ़ता रहा। पेंज़ा से उन्हें परे खदेड़ दिया गया था और वे उधर से बचते हुए सरातोव प्रदेश के उत्तरी ज़िलों से होते हुए बलाशोव की ओर बढ़ रहे थे। मिरोनोव की शक्ति दिन पर दिन कम पड़ती जा रही थी, मामोन्तोव के हमले के मुकाबले उसका बलवा बेदम था, वह सावधानी बरतता हुआ बढ़ रहा था, शहरों में घुसने का साहस नहीं कर पाता था। कुछ मुठभेड़ों की वजह से और कुछ लड़ने से बचने के लिए कज़्ज़ाकों के छोटे-छोटे गिरोह उससे अलग होते जाते थे, जंगलों में छिप जाते और गांवों, बस्तियों में चले जाते थे। जिस इलाके से मिरोनोव गुज़रा था, उस सारे इलाके में इन गिरोहों ने आतंक फैला रखा था। स्वयं मिरोनोव को उसके पांच सौ लोगों के साथ लाल अश्वारोही सैनिकों

ने वलाशोव ज़िले में घेरकर गिरफ़्तार कर लिया। यह उसके विश्वास-घात के तीन हफ़्ते बाद सितम्बर के मध्य में हुआ।

वलवे के पहले दिनों में यह कल्पना करना असम्भव ही था कि वलवा कितना फैलेगा और कब खत्म होगा। इस वलवे से सरातोव को केवल इसीलिए खतरा नहीं था कि पेंज़ा के हाथ से निकल जाने पर मास्को के साथ रेल सम्पर्क विल्कुल खत्म हो जाता (उन दिनों मास्को का सीधा रास्ता भी कटा हुआ था, क्योंकि मामोन्तोव ने कोज़्लोव पर कब्ज़ा कर लिया था), वल्कि इसलिए भी कि सरातोव प्रदेश के उत्तरी ज़िले वलवे की परिधि में थे। इन निकटवर्ती उत्तरी क्षेत्रों में वलवे की आग भड़क सकती थी, जवकि दक्षिण में देनीकिन के मोर्चे की ज्वालाएं पहले से धधक रही थीं। यह वलवा किसी भी क्षण पेंजा की घटना के साथ-साथ सरातोव की घटना वन सकता था।

दक्षिणी मोर्चे पर लाल सेना के अभियान में अभी-अभी कुछ जान आने लगी थी। जिस दिन मिरोनोव का वलवा भड़का, उसी दिन वोल्गा वेड़े के नौसैनिकों ने कमीशिन के सामने वाले तट पर निकोलाये-व्स्काया मुहल्ले में प्रवेश किया था और अगले दिन पैदल सिपाहियों ने कमीशिन जीत लिया था। इसलिए मिरोनोव के दुस्साहस की खवर सुनकर किरील को और भी अधिक क्रोध आया। मामोन्तोव के हमले से भी वह इतना स्तम्भित नहीं हुआ था, जितना उत्तर में अचानक ही उठे इस खतरे से। विपदाओं से लगातार संत्रस्त सरातोव किरील को किसी ऐसे रोगी जैसा लग रहा था, जो एक रोग से पूरी तरह ठीक न होने पाता कि उसे दूसरा रोग आ धरता। पहले "खंदकों के दिन" हुए, जव सारे नगरवासी खंदकें खोदने निकले थे, फिर "मोर्चा सप्ताहों" की घोषणा हुई, जिनमें अनगिनत लामवंदियां हुईं। संकट में संकट उठ रहे थे।

इस सव के वावजूद उन्हें वहां से नई शक्ति पानी थी, जहां लगता था अव कोई शक्ति नहीं रही।

नगर का गैरिज़न पहले व्रांगेल का सामना करने में और फिर जवावी हमला करने में ही इतना कमज़ोर हो गया था कि मिरोनोव के खिलाफ़ लड़ने के लिए मुश्किल से कुछ छोटी टुकड़ियां ही दे सकता था।

8*

ऐसी एक टुकड़ी ख्वालीन्स्क ज़िले को भेजी जा रही थी। फ़ौजी कमिसार के शब्दों में वह "शायद बुरी नहीं थी"। इसमें कोई डेढ़ सौ वालंटियर और नये रंगरूट थे जिनकी एक कम्पनी बनाई गई थी। अब यह सवाल हल करना था कि इसका कमांडर किसे बनाया जाये: मिरोनोव के विश्वासघात से ज़ारशाही फ़ौज के अफ़सरों को लाल सेना में सैनिक विशेषज्ञों के रूप में स्वीकार करने के प्रश्न पर फिर से विवाद उठ खड़ा हुआ था। नया कमांडर किसे नियुक्त लिया जाये, इस प्रश्न पर विचार करते हुए फ़ौजी कमिसार ने दीविच का नाम लिया, जिसने नई टुकड़ियां गठित करने में बहुत अच्छा काम किया था, पर लाल सेना में ज़्यादा अरसे से नहीं था और लड़ाई में अभी परखा नही गया था।

"ख़ैर, मैं आपको क्या बता रहा हूं," अंत में फ़ौजी कमिसार ने कहा, "दीविच की सिफ़ारिश कामरेड इज़्वेकोव ने की है, वही बतायें।"

किसी ने मज़ाक में कहा कि अगर इज़्वेकोव ने सिफ़ारिश की है, तो उसे ही अपनी सिफ़ारिश परखने दो: उसे दीविच का कमिसार बना दो! यह बात शायद यों मज़ाक में ही उड़ जाती, पर इस वक्त सबके दिमाग मे यह प्रश्न था कि कहां से ऐसा दृढ़निश्चयी व्यक्ति ढूंढा जाये, जिसे कम्पनी कमिसार का ही नहीं, बल्कि उससे ज़्यादा बड़ा ज़िम्मा सौंपा जा सके, यहां तक कि उसे आवश्यकता पड़ने पर क्रांतिकारी समिति बनाने का भी अधिकार सौंपा जा सके। इस छोटे पद पर इज़्वेकोव की नियुक्ति से बड़ी समस्या हल होती थी, सो यह मजाक सटीक बैठा।

किरील ने संक्षेप में कहा:

"दीविच को मैंने जर्मनों से लड़ते देखा है। वह साहसी कमांडर है, कोई झांसापट्टी करनेवाला आदमी नहीं है। हमारे ध्येय पर सोच-विचार करके, उसे स्वीकार करके ही वह लाल सेना में भरती हुआ है, सफ़ेद गार्डों के पास नहीं गया। मैं उसकी ज़िम्मेवारी लेता हूं।"

इसके बाद यह सवाल नहीं उठाया गया कि दीविच पर विश्वास किया जाये या नही, – इसलिए नहीं कि ऐसा कोई नहीं था जो भूतपूर्व अफ़सर के गड़े मुर्दा न उखाड़ना चाहता हो, बल्कि इसलिए कि तुरन्त

ही इज़्वेकोव की वात चल पड़ी। उसे तुरंत ही कमिसार नियुक्त कर दिया गया, और अव सवकी नज़रों में उस पर न केवल दीविच या कम्पनी का उत्तरदायित्व था, वल्कि मानो उन सब घटनाओं का भी जो ख़्वालीन्स्क ज़िले में हो सकती थीं।

घंटे भर वाद वसीली दनीलोविच दीविच कम्पनी कमांडर की हैसियत से इज़्वेकोव के पास आया, आगामी अभियान की तैयारी के सिलसिले में वातचीत करने।

"ज़रा देखो तो, आदमी अपनी जगह पर हो तो क्या से क्या हो जाता है," किरील ने उसका स्वागत किया, "चेहरा निखर आया है! हम दोनों फिर से एक ही टुकड़ी में आ गये!"

"हां, पर आपको तरक्की मिली है, और मैं पुराने ओहदे तक भी नहीं पहुंच पाया," दीविच वोला।

"अफ़सोस हो रहा है? आपको तो खुश होना चाहिए, मौका खुद आपके हाथ में आ रहा है: हफ़्ता वीतते न वीतते अपने घर में होंगे, ख़्वालीन्स्क में।"

"और सो भी कितने सम्मान के साथ", दीविच मुस्कराया, "हथियार उठाये! पर कहीं अपने घर को भी लड़कर न जीतना पड़े।"

"तो क्या हुआ? जीत लेंगे!" किरील ने कहा। "यह लीजिये पेंसिल, वैठिये।"

उसने वोल्गा का नक्शा खोला और सहसा उसकी आंखों के सामने यह दृश्य सजीव हो उठा: कैसे आनोच्का इस नक्शे पर झुकी हुई थी, नक्शे पर चलती किरील की उंगली पर नज़रें टिकाये, और कैसे वह दक्षिण में हो रही कार्रवाइयों की ओर उसका ध्यान ले जाने की कोशिश कर रहा था, ताकि वह उत्तर की ओर नज़रें न उठाये। अव उसने नक्शे के दक्षिणी भाग को नीचे मोड़ दिया।

पर उनकी वातचीत नक्शे से नहीं शुरू हुई। दीविच ने यह वताया कि जिस कम्पनी को "शायद वुरी नहीं" वताया गया था, वह असलियत में क्या थी। नये रंगरूट मोटी-मोटी ट्रेनिंग भी नहीं पा सके थे, पुराने सैनिक कम्पनी में आधे से कम थे। लोगों के पास ढंग की वर्दी, जूते, वंदूकें नहीं थीं। वे वर्दियों, हथियारों, गोला-वारूद, रसद, आदि की फ़हरिस्त वनाने लगे। आखिर में यह हिसाव लगाया कि साथ

सामान जमा करने के लिए कितना समय चाहिए, तो पता चला कि कम से कम तीन दिन। तब किरील बोला:

"यह तो कुछ बात नहीं बनती। हमें इसे आधा करना होगा।"

"क्या मतलब?"

"यह कि परसों सुबह हम कूच कर सकें।"

"मैं तो अभी कूच करने को तैयार हूं, पर कैसे? जंगल में डंडे काटने के लिए भी वक्त चाहिए और यहां तो गोदामों का एक-एक कोना छानना होगा।"

"जल्दी-जल्दी छानना होगा।"

"हमने तो पहले ही मिनटों तक का हिसाब लगाया है।"

"अब सेकंडों में हिसाब लगाना पड़ेगा!"

"कहना आसान है। मैं यह पहली कम्पनी नहीं तैयार कर रहा।"

"हमारी कम्पनी खास है।"

"तो इसे और भी अच्छी तरह लैस करना चाहिए।"

किरील ने अपनी सिकुड़ी भौंहों तले से दीविच की ओर देखा।

"देखिये, वसीली दनीलोविच। हमें यह मान लेना चाहिए कि लड़ाई शुरू हो गई है, और लड़ाई में तो हम में मतभेद नहीं हो सकता, ठीक है न?"

"यह मतभेद नहीं, सीधा-साधा अंकगणित है।"

"तो सीधे अंकगणित से काम नहीं चलेगा। हमें खास अंकगणित से हिसाब लगाना होगा। सबसे मुश्किल काम का ज़िम्मा मैं लेता हूं। आपके ख्याल में कौन सी चीज़ें पाना सबसे मुश्किल है?"

"दो मशीनगनें चाहिए? और संचार साधन? पर आजकल तार कहीं ढूंढे नहीं मिलता।"

"ठीक है। मैं कोशिश करूंगा। संचार साधन मेरे जिम्मे रहे। और कुछ न हुआ तो यह टेलीफ़ोन ही यहां से काट लूंगा," किरील ने सहसा जाने क्यों अपने टेलीफ़ोन पर हाथ मारते हुए कहा।

"एक टेलीफ़ोन से संचार थोड़े ही बनेगा," दीविच ने आपत्ति की।

"जितनी जरूरत होगी ढूंढ लेंगे। और क्या चाहिये?"

उन्होंने अपनी फ़ेहरिस्तें दुबारा देखीं, उन पर निशान लगाये, सारा काम आपस में बांटा और फिर नक्शा देखने लगे।

कम्पनी को सड़क से वोल्स्क तक और वहां से ख्वालीन्स्क जाना था। यह कुल सौ मील का फ़ासला था। दीविच के हिसाब से पड़ावों समेत इसमें कुल पांच दिन लगने थे। अच्छे स्टीमर पर वे एक दिन में ही पहुंच सकते थे। पर स्टीमर सव दक्षिणी अभियान में लगे हुए थे, संयोग से ही कोई मिल जाता, तो मिल जाता। इज़्वेकोव ने रेलगाड़ी पर वोल्स्क तक जाने का सुझाव रखा (इससे फ़ासला दुगना पड़ता, पर समय कम लगता) और वहां से ख़्वालीन्स्क तक मार्च करते हुए जाने का। इस तरह वे तीन दिन में ख़्वालीन्स्क पहुंच सकते थे।

"अगर इंजन दगा न दे गया तो," दीविच ने कहा, "भाप तो लकड़ियां जलाकर वनाते हैं।"

"कोई वात नहीं, ज़रूरत पड़ने पर लकड़ियां काट लेंगे," इज़्वे-कोव बोला।

"और अगर मिरोनोव पेंज़ा से दक्षिण को न वढ़ आया और उसने कहीं पेत्रोव्स्क के पास हमारा रास्ता न काट दिया, तो!"

"हमें भेजा किसलिए जा रहा है? जहां दुश्मन टकरा गया, वहीं उससे लड़ेंगे।"

"हमें ख़्वालीन्स्क भेजा जा रहा है। पेत्रोव्स्क में दूसरों को भेजा जायेगा। हमें अपना काम पूरा करना चाहिए।"

"हमारा काम है मिरोनोव की टांगें तोड़ना, किस स्टेशन पर हम उसकी टांगें तोड़ेंगे, इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता।"

"आप ख्वाहमखाह ऐसा सोच रहे हैं। कौन किस पर लड़ाई थोपता है, कौन लड़ाई का समय और स्थान चुनता है, इससे बहुत फ़र्क पड़ता है। हमारा वास्ता रिसाले से है, और वह कूच कर चुका है। और हम तीसरे दिन कहीं कूच के लिए तैयार होंगे। उनके लिए हमारी कार्रवाई का पहले से ही अंदाज़ा लगा लेना आसान होगा।"

"तीसरे दिन नहीं, वल्कि डेढ़ दिन वाद," किरील ने उसकी वात ठीक की। "और अगर हम कम्पनी को रेल से भेजेंगे, तो उनकी गतिविधि का अंदाज़ा लगाने में पहल हमारी रहेगी।"

"मुझे कोई आपत्ति नहीं है। दो या तीन दिन में स्थिति क्या होगी, यह तो किसी को भी पता नहीं," दीविच ने बहुत ही धीमे मे कहा और चुप हो गया।

सहसा उसका चेहरा पीला पड़ गया और वह उत्तेजित स्वर में बोला :

"आपने मतभेद की बात छेड़ी है। आइये, अभी फ़ैसला कर लें। आपको मुझ पर भरोसा है या नहीं? अगर नहीं, तो वक्त मत गंवाइये – आपको दूसरा कमांडर चाहिए।"

"मुझे आप पर भरोसा है," किरील ने शांत स्वर में कहा।

"पूरा?"

"पूरा।"

"धन्यवाद। एक सवाल और है। कमान हम दोनों में से किसके हाथों मे होगी?"

"आपके।"

"मैं यह नहीं पूछ रहा कि सैनिकों को हमले में कौन ले जायेगा, बल्कि यह कि लड़ाई कैसे लड़ी जाये, यह कौन निर्धारित करेगा – आप या मैं?"

"हम दोनों मिलकर।"

"इसका मतलब है कि आप जो फ़ैसला करेंगे, वह मुझे स्वीकार करना होगा, यही न?"

"नहीं। इसका मतलब है कि हम दोनों एक दूसरे की बात को समझने की कोशिश करेंगे और सहमति ढूंढेंगे। और मैं यह चाहूंगा कि आप भी मुझ पर उतना ही भरोसा रखें, जितना आप अपने लिए चाहते हैं।"

"और अगर मतभेद हुए तो?"

दीविच अधीरता से जलती आंखों से किरील की ओर देख रहा था, उसका चेहरा अभी भी पीला था। किरील को यह याद आया कि इस कमरे में पहली बार उसने दीविच को किस हालत में देखा था – बीमार, किस्मत की चोटों से बेहाल और इन चोटों से बिलकुल ही टूट न जाने के लिए अपने निश्शक्त शरीर के अंतिम बल से जूझता हुआ।

"आप लाल सेना में हैं, इसके नियम और कायदे आपसे छिपे नहीं हैं," उसने जवाब दिया। "पर मुझे उम्मीद नहीं कि हमारे बीच कोई मतभेद हो। पहली बात, मैं जानता हूं कि आपका सैनिक ज्ञान मुझसे अधिक है और मैं उसका सहारा लूंगा। दूसरे, हमारे ध्येय तो एक ही हैं।"

उसके पास खिसककर किरील ने स्नेहपूर्ण स्वर में इतना और जोड़ा :

"विश्वास मानिये मैं कभी भी आपके गर्व पर चोट नहीं आने दूंगा।"

दीविच का चेहरा सुर्ख हो गया और उसने हाथ झटका।

"नहीं, नहीं, मैंने यह बात इसलिए नहीं छेड़ी थी... बस सदा के लिए सब स्पष्ट हो जाये... और फिर यह सवाल न उठे... और आप यह जान लें कि मैं अपनी जान की बाज़ी लगा रहा हूं।"

"बाज़ी?" किरील चिल्लाया। "पर क्यों? हम कोई जुआरी नहीं। आपकी जान तो बड़े-बड़े काम करने के लिए है।"

"मैं समझता हूं, सब समझता हूं!" दीविच भी वैसे ही जोश में बोला। "मैं चाहता था कि आप यह जान लें कि मैं सदा अपने विश्वास, अपनी धारणाओं के अनुसार काम करूंगा, अपने गर्व की संतुष्टि या किसी और कारण से कदापि नहीं... इसलिए अगर कभी हमारा मतभेद हो, तो..."

"पर क्यों, क्योंकर हमारा मतभेद हो?" किरील ने कहा और उठकर दीविच के बिल्कुल पास आ खड़ा हुआ। "चलिये, हम कदम मिलाकर चलें।"

"चलिये," दीविच ने दोहराया, "कदम मिलाकर चलें।"

वे मुस्करा रहे थे। उनके हृदयों में एक दूसरे के प्रति स्नेह की नई भावना उमड़ रही थी और वे हर अच्छी नई भावना की भांति इस पर खुश हो रहे थे।

"मैंने एक बात और सोची है," किरील बोला। "अगर रसद जमा करने में अचानक कहीं देर हो गई, तो आप रेलगाड़ी पर चले जाना, मैं सारा काम पूरा कर लूंगा और कार में वोल्स्क पहुंच जाऊंगा।"

"कार कहां से आयेगी?"

"यह ज़िम्मा भी मेरा रहा।"

"ओह, आपके जैसा सप्लाई एजेंट पाकर तो सारा काम फटाफट हो जायेगा!" दीविच हंसा।

जब वह जा रहा था, तो इज़्वेकोव ने उसे क्षण भर को रोका।

"मैं पूछना चाहता था, यह ज़ूविन्स्की कैसा आदमी है, आप जानते हैं उसे? फ़ौजी कमिसार हमें उसे संचार के लिए दे रहा है।"

"पुराने जमाने में रेजीमेंट का एडिकांग था। बड़ा बनता है। पर हुक्म ठीक बजाता है—कम से कम चंडावल में।"

"फ़ौजी कमिसार कहता है वह पक्की दीवार जैसा भरोसेमंद है।"

"उसके ख्याल में हम दीवार पीछे छिपने जा रहे हैं?" दीविच ने चुटकी ली।

"तो फिर लें उसे या नहीं?"

"लोगों की कमी है। मेरे ख्याल में ले लेना चाहिए।"

इस क्षण से अभियान की ज़ोरदार तैयारियां होने लगीं। दो रातों तक नींद की सोचने तक की फ़ुरसत नहीं थी, और उनके बीच का दिन भी रात जैसा था, सब कुछ जैसे सपने में हो रहा था, जिसमें देर हो जाने के डर से आदमी जल्दी-जल्दी चीज़ें समेटता जाता है, समेटता जाता है, और समेटने को बाकी बची चीज़ें बढ़ती ही जाती हैं, मानो कोई घटा का सवाल कर रहा हो और जिस संख्या में से घटाया जा रहा है, वह बढ़ती ही जा रही हो।

ज़ूविन्स्की उम्दा नस्ल के काले घोड़े पर अंग्रेज़ी ज़ीन कसे शहर में इधर-उधर घोड़ा दौड़ाता नजर आता था। वह पैदायशी एडिकांग था, उसे हुक्म सुनना पसंद था और उन्हें जिस बारीकी से, जितने उत्साह से वह पूरा करता था, वह अक्सर निष्ठुरता की हद तक पहुंच जाता था। जिस किसी पर वह चीख-चिल्ला सकता था, उस पर चीखता-चिल्लाता था, जिस किसी को गिरफ़्तार कर सकता था, उसे गिरफ़्तार कर लेता था, अपने से बड़े अधिकारियों के नाम पर यों काम करता था कि मानो वे सब, जिनके वह अधीन था, स्वयं उसके अधीन थे या उसके लंगोटिया यार थे। बांके-छबीलों जैसा तलवार का पटका बांधे और कूल्हे पर चरमराता होल्स्टर लटकाये वह अपने घोड़े जितना ही आलीशान लगता था। क्षण भर को भी अपने अनगिनत कामों

को रोके बिना वह हर वक्त तस्वीर जैसी अपनी आकृति को संवारता-निखारता रहता था: लोगों से बातें करते हुए नाखून साफ़ करता; घोड़े पर खूब तेज़ दौड़ते हुए अपनी टोपी उतारकर अपने चिकने-चुपड़े बाल ठीक करता; कागज़ों पर दस्तखत करते हुए खाली हाथ से अपनी वर्दी के बटन या अपनी सज्जा और बकलस टटोल-टटोलकर देखता रहता। हर वक्त, उठते-बैठते, चलते-फिरते वह कभी अपने कपड़ों को साफ़ करता, कभी कुछ ठीक करता, कभी कुछ झटकता, मानो परेड की तैयारी कर रहा हो।

"हां तो, नौजवान," उम्र में उससे कम से कम ड्योढ़े बड़े क्वाटरमास्टर सार्जेंट से वह कहता, "अगर दोपहर ऐन एक बजे गोदाम से मुझे पचास फ़ील्ड किट न मिले, तो आप ठीक अड़तालीस घंटे के लिए जेल में बंद होंगे! यह बात इतनी ही पक्की है, जितनी यह कि हम सोवियत राज में रह रहे हैं।"

अपनी धमकियां पूरी करने में उसे मज़ा आता था। लोग यह जानते थे, सो वह अपना काम करवा लेता था। निश्चित परिस्थितियों में ऐसा व्यक्ति निस्संदेह उपयोगी हो सकता था।

कम्पनी के कूच करने से पहले की शाम को इज़्वेकोव ने मां से मिलकर उससे विदाई लेने का निश्चय किया। उसने ड्राइवर को उस रास्ते से चलने को कहा, जहां पारावुकिन परिवार रहता था। वह उस रास्ते को देख भर लेना चाहता था, जिस पर वह अभी उस दिन आनोच्का के हाथ में हाथ डाले चला था।

कार के आगे-आगे सफ़ेद प्रकाश-पुंज दौड़ रहा था, और इस प्रकाश में सड़क की ऊबड़-खाबड़ लीकें हवा में उठती लहरों सी लग रही थीं। मकानों के सामने बनी क्यारियों पर कार की रोशनी पूर्णिमा की चांदनी की तरह पड़ रही थी। पेड़ जल्दी-जल्दी अपना स्थान बदलते प्रतीत होते थे। किरील मुहल्लों को पहचान नहीं रहा था, बस उनका अनुमान ही लगा पा रहा था। सहसा उसने ड्राइवर की कोहनी छुई और कहा: "ठहरो"।

क्षण भर को वह असमंजस में रहा और फिर कार का दरवाज़ा खोलकर नीचे उतर गया।

"ज़रा रुकना। मैं अभी आया।"

कार की तेज़ रोशनी के बाद अहाते में घुप्प अंधेरा लग रहा था, आनोच्का के साथ जब वह आया था तब भी ऐसा ही अंधेरा था और उस दिन की ही भांति आज भी तुरंत ही उसे अहाते में रोशन खिड़की दिखाई दे गई। खिड़की के पास जाने से पहले उसे ख्याल आया कि यह अच्छी बात नहीं, कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिए। परन्तु उस दिन उसे यहां जो अनुभूति हुई थी, एक बार फिर उन्ही क्षणों की अनुभूति पा लेने की उसकी कामना इतनी प्रबल थी कि उसके कदम धीरे-धीरे खिड़की की ओर बढ़ गये और वह छोटे से पर्दे के ऊपर से अंदर झांकने लगा।

आनोच्का कमरे में अकेली ही थी। यह छोटा सा कमरा किरील को उस कमरे से कहीं बड़ा लगा, जो उसके स्मृति-पटल पर स्पष्टतया अंकित था।

आनोच्का चारपाई के पास खड़ी थी। लैम्प की टिमटिमाती रोशनी में उसके चेहरे का पीलापन कभी कम हो जाता, कभी बढ़ जाता, मानो रह-रहकर उसके गालों पर खून चढ़ आता हो और फिर उतर जाता हो। उसके होंठ कांप रहे थे। वह कुछ बुदबुदा रही थी। उसकी लंबी गर्दन और भी अधिक नाजुक लग रही थी। हंसली के ऊपर उभरी नस ऐसे खिंची हुई थी, जैसे कोई गायक अपनी क्षमता के सबसे ऊंचे सुर में गाने की कोशिश कर रहा हो। लगता था कि वह बड़े जतन से चीख दबाये हुए है और किसी भी क्षण उसके मुंह से यह चीख निकल सकती है।

वह सचमुच ही चीखी। उसने एक झटके से हाथ पसार दिये और यों दौड़ चली, मानो कोई याचना में फैले उसके हाथों से उसे बेरहमी से खींच रहा हो, और दौड़ते-दौड़ते ही घुटनों के बल गिर पड़ी।

वह छोटी सी गोल मेज के सामने घुटनों पर गिरी थी। मेज़ पर जालीदार मेज़पोश बिछा हुआ था और बक्से में बंद सिलाई की मशीन रखी हुई थी। उसने बक्से की ओर बाहें फैलाई, हाथ जोड़कर अनुनय करने लगी। उसके आहत मन से पीड़ा के शब्द एक के बाद एक बेतहाशा निकल रहे थे। प्रत्यक्षतः, वह बावली हो उठी थी, उसकी वेदना और नहीं देखी जाती थी।

किरील ने खिड़की का पतला सा चौखटा कसकर पकड़ लिया, मानो अभी उसे उखाड़कर अंदर कूद पड़ेगा। पर तभी आनोच्का की विचित्र गति ने उसे रोका: आनोच्का ने खिड़की की ओर मुंह मोड़ा, कमरे की रिक्तता में नज़रें गड़ाकर कुछ देखती रही, अपने छोटे कटे बालों में उंगलियां डालकर लड़कों की तरह बाल ठीक किये और फिर से मेज़ की ओर मुंह मोड़ लिया।

तत्क्षण ही उसने हाथों से चेहरा ढांप लिया, फिर दुबारा से हाथ फैलाये, अनबूझ तेज़ी से उठ खड़ी हुई और दुख से मारे व्यक्ति की तरह बंधे-बंधे कदमों से खिड़की की ओर चल दी। बालिकाओं जैसे उसके कंधे दुख के बोझ से झुक गये थे, अपलक आंखों में भय की जड़ता थी। किरील कभी कल्पना भी नहीं कर सकता था कि आनोच्का की आंखें इतनी बड़ी और इतनी भयावह हो सकती हैं।

वह चलती ही जा रही थी, मानो इस कोठरी जैसे कमरे का कोई आर-पार ही न हो, उसकी निश्शक्त, कांपती उंगलियां मानो खिड़की की ओर खिंचती जा रही थीं। वह रोशनी से परे हट गया। उसने देखा कि पर्दा हिला: आनोच्का ने अपनी उंगलियों के सिरों से उसे छुआ था। उसके कराहने की आवाज़ आई: "मत जाओ! मत जाओ! कहां जा रहे हो? पिता जी! मां! इस मुसीबत की घड़ी में यह हमें छोड़े जा रहे हैं..."

किरील ने ज़ोर से माथे पर हाथ फेरा।

"हे भगवान! यह तो अभिनय कर रही है। शायद अपनी लुईज़ा के पार्ट की रिहर्सल कर रही है!"

बरबस ही उसकी हंसी फूटी और उसने ज़ोर से दरवाज़ा भड़भड़ाया।

तुरंत ही अंदर से आवाज़ आई:

"पाव्लिक, तू है?"

"मैं हूं, मैं!" वह चिल्लाया।

आनोच्का ने चुपचाप दरवाज़ा खोलकर उसे अंदर आने दिया। किरील ने आनोच्का के गालों को गुलाबी होते देखा और उसका रोम-रोम इस ख़ुशी से सिहर उठा कि उसके आने पर आनोच्का यों लजा उठी है।

"कितने अच्छे हैं आप, आ ही गये," आनोच्का ने मानो उसकी खुशी की पुष्टि की।

"मुझे आना ही था।"

"आपका रुक्का मिला, तो मैं समझ गई थी कि आप नहीं आयेंगे। क्या बात है, बड़े खुश नजर आ रहे हैं?"

"खुश?" किरील ने हंसते हुए पूछा।

वह हंसते हुए अंदर आया था और अब तक उसके होंठों पर मुस्कान बनी हुई थी।

"बस, यह समझिये कि मैं वैसी सूरत नही बनाना चाहता, जैसी लोग विदा होते समय बनाते हैं।"

"विदा होते समय?" आनोच्का ने चिंतित स्वर में पूछा।

"घबराइये नहीं। कोई खास बात नही है। एक काम से जा रहा हूं।"

"मोर्चे पर?"

"नहीं। यों ही। एक छोटा सा अभियान है।"

"उस मिरोनोव के खिलाफ़?"

उसके मुंह से यह बात सुनकर वह हैरान रह गया और उसने कुछ जवाब नही दिया।

"आप भी कैसे मित्र हैं, जो मुझसे भेद रखते हैं?"

"कैसे भेद?"

"अगर आप को मुझ पर भरोसा है, तो मुझसे कुछ छिपाना नही चाहिए।"

आनोच्का ने बच्चों की तरह शिकायत करते हुए यह बात कही, किरील से कुछ कहते न बना, और वह परे हट गया, पर तुरंत ही उसके पास लौट आया और कोहनी से ऊपर उसकी बांह पकड़ ली। तब वह परे हट गई और जालीदार मेज़पोश वाली उस मेज़ के पास बैठ गई, जिसके सामने किरील ने उसे घुटनों के बल बैठे देखा था।

"तो आप हमारी रिहर्सल देखने नहीं आयेंगे," वह उदास सी बोली।

"मैंने आपको रिहर्सल करते देख लिया है।"

आनोच्का की भौंहें तन गईं।

"अभी-अभी," फिर से मुस्कराते हुए किरील ने इतना और कहा।

"मज़ाक कर रहे हैं?"

"बिलकुल नहीं। कहें, तो आपके शब्द दोहरा दूं।"

उसने आनोच्का की कराह की नकल करने की असफल कोशिश की: "मत जाओ! मत जाओ! कहां जा रहे हो?"

आनोच्का ने झट से हाथों से चेहरा ढांप लिया और चीखी: "आप चोरी-चोरी खिड़की में से देख रहे थे!"

किरील उसकी इस चीख से डर गया और जड़वत खड़ा रहा। आनोच्का ने मेज़ पर सिर झुका लिया।

"आप कैसे ऐसा कर सकते हैं!" वह बड़बड़ाई।

"सच मानिये, मैं बस पल भर को ही झांका था," वह असमंजस में बोला।

आनोच्का ने पीठ सीधी कर ली और फिर से वैसे ही निश्चिंतता-पूर्वक, मानो लड़कों के से अंदाज़ में अपने बाल ठीक किये।

"अच्छी बात है। रिहर्सल आपने देख ली है, तो नाटक के पहले शो में तो आना। आप तब तक लौट आयेंगे न? कहां जा रहे हैं? मैंने ठीक अनुमान लगाया है न? आप किस हैसियत में जा रहे हैं?"

न जाने क्यों उसने जवाब में कह डाला:

"मैं क्रांतिकारी समिति का अध्यक्ष हूंगा। सुना है आपने यह क्या होता है?"

आनोच्का ने पलकें थोड़ी झुकाकर बड़े ध्यान से उसकी ओर देखा और पूछा:

"आपको सत्ता से ही सबसे अधिक प्रेम है?"

"और सत्ता से प्रेम सबसे बड़ा पाप है न?" किरील मुस्करा दिया।

"नहीं, यह पाप नहीं है, बशर्ते... सत्ता मानवजाति के हित में हो।"

"हमारी सोवियत सत्ता तो मानवजाति के हित में है। इस बात से आप सहमत हैं?"

"हां।"

"तो फिर मुझे सत्ता से प्रेम हो सकता है?"

"बेशक। पर मैं यह नहीं पूछ रही थी... आप समझे नहीं। मैंने पूछा था—आपको सत्ता सबसे बढ़कर प्यारी है?"

पहले तो वह सख्ती से उसकी ओर देख रहा था, परन्तु फिर मानो प्रकाश किरणों से तपकर यह सख्ती पिघल गई और उसके चेहरे पर भोलेपन का भाव आ गया, जैसा विरले ही कभी होता था। मस्तिष्क में कौंधे किसी विचार से नहीं, बल्कि मन की हलचल से वह यह समझ गया कि इस वक्त आनोच्का के लिए बातचीत का विषय बिल्कुल मानी नहीं रखता, शब्दों के पीछे जिन भावनाओं का हल्का सा आभास होता था, वे ही उसके हृदय तक पहुंच रही थीं।

"नहीं," वह भी अब अपनी भावनाओं के आवेग में पूरी तरह बहता हुआ बोला, "मैं आपकी बात समझ गया।"

आनोच्का ने जल्दी से मुंह मोड़ लिया और फिर इससे भी अधिक जल्दी से उसकी ओर वापस मुड़ी—उसका चेहरा दमक रहा था और उस पर संशय की कोई छाया न थी। किरील ने उसकी ओर कदम बढ़ाकर सहज भाव से उसे अपनी सशक्त बाहों में भर लिया। पल भर को वे निश्चल रहे। फिर आनोच्का ने दृढ़तापूर्वक उसे परे हटा दिया, और उसे मानो कहीं दूर से आती उसकी आवाज़ सुनाई दी:

"जब आप लौटेंगे... जब लौटेंगे... अभी नहीं..."

इस भेंट में पहली बार किरील ने उसे मुस्कराते देखा, सदा की ही भांति उसकी मुस्कान चंचलता भरी थी, पर साथ ही सहसा उसमें उदासी घुल गई प्रतीत होती थी।

"सच में, मैं आपसे भी वही बात कह सकती हूं, जो आपने खिड़की में से सुनी थी: 'मत जाओ! मत जाओ!..'"

वह स्वयं उसके पास चली आई, उसकी अब तक फैली बांहों में सिमट गई, और उसे आनोच्का के चेहरे की गर्माहट और अनजानी गंध का आभास हुआ।

थोड़ी देर बाद वह उसे बाहर छोड़ने आई। ड्राइवर ने गाड़ी स्टार्ट की। संध्या की नीरवता में इंजन का शोर गूंजा, इस धमाके में आगामी बेचैनी की चेतावनी थी। आनोच्का के होंठ किरील के कान से छुए और उसने कहा:

"पहले शो में मैं आपकी राह देखूंगी।"

वह सहसा पूछ बैठा:

"त्स्वेतुख़िन ने यही नाटक क्यों चुना?"

"क्यों क्या? यह तो हर कोई समझ लेगा, कैसे गरीब लोग अमीरों के अत्याचारों का शिकार होते थे।"

"अरे हां!" मज़ाकिया अंदाज़ में उसने कहा, पर सहसा छात्र को प्रोत्साहन देते शिक्षक की भांति बोला: "बिल्कुल ठीक, हर कोई समझ लेगा।"

विदा होते हुए किरील ने उसकी उंगलियां दबाईं।

कार में जाते हुए यह विचार उसका पीछा नहीं छोड़ रहा था: मैं तो जा रहा हूं और आनोच्का यहां त्स्वेतुख़िन के साथ रह जायेगी। एक बार फिर वह मन ही मन इस व्यक्ति पर झुंझला रहा था, और फिर से अपने आप को यह समझा रहा था कि झुंझलाने का कोई कारण नहीं है। सबसे अधिक उसे यह बात चुभ रही थी कि जीवन में एक बार फिर वैसा ही मौका आया था, जिसमें त्स्वेतुख़िन उससे श्रेष्ठ स्थिति में था। यह यहीं रहेगा, और किरील को जाना होगा, हालांकि किरील जी-जान से जीना चाहता था, सचमुच जी-जान से, क्योंकि उसका हृदय इस विचार से प्रदीप्त हो उठा था कि वह प्यार करता है और कोई उससे प्यार करता है! पर क्या यह बक्की त्स्वेतुख़िन इसीलिए इस दुनिया में आया है कि किरील के जीवन के सबसे सुखद क्षणों पर अपनी मनहूस छाया डाले।

"नहीं, कभी नहीं! हर्गिज़ नहीं!"

"क्या कहा आपने?" ड्राइवर ने पूछा।

"पूछ रहा हूं गाड़ी चलाते कितना अरसा हुआ?"

"क्यों? क्या ठीक नहीं चलाता?"

"नहीं, ठीक ही चलाते हो... इंजन की अच्छी समझ है?"

"बहुत अच्छी तो नहीं कह सकता। हां, काम चला लेता हूं।"

"हुं-हुं।"

किरील घर पहुंचा तो वेरा निकान्द्रोव्ना घर पर नहीं थी। वह किसी सभा में भाग लेने गई हुई थी, जल्दी ही लौटनेवाली थी।

किरील ने अपना सामान बांध लेने का निश्चय किया। बड़ी देर

तक वह अपना अटैची ढूंढ़ता रहा, आखिर मां के पलंग के नीचे वह मिला। किरील जल्दी-जल्दी उसमें से चीज़ें निकालने लगा, पर फिर उसके हाथ धीरे चलने लगे और आखिर उन चीजों पर आकर वह बिल्कुल ही रुक गया, जो उसकी कल्पना को अतीत में ले गई।

नीले कागज़ पर, जिसका रंग उड़ चुका था, नदी के स्टीमर की अनुप्रस्थ और अनुलम्ब काटों का सफ़ेद रेखाओं में बना आरेख सम्भालकर रखा हुआ था, प्र्जेवाल्स्की और तोलस्तोय के छवि-चित्र थे। ये दो विद्वान कितने भिन्न और कितने समान थे, एक ने अपने मस्तिष्क की नजरों से पृथ्वी की गहराइयों को टटोला था और दूसरे ने मानव-आत्मा की गहराइयों को। ये कागज़ उसे उसके कैशोर्य के जगत में ले गये। उसे याद आया कैसे वह तब अपनी कल्पना में भांति-भांति की नौकाएं और जहाज़ बनाया करता था और उन पर भविष्य के अज्ञात देशों की यात्राएं किया करता था। उसे यह भी याद आया कि कैसे उसने वास्तविक जीवन में इन देशों का मार्ग ढूंढ़ने की कोशिश की और कैसे पहले कदम उठाते ही उसका रास्ता रोक दिया गया था। उसे घर की तलाशी याद आई और वह पुलिसवाला, जिसने प्र्जेवाल्स्की का छवि-चित्र दीवार से उखाड़कर फ़र्श पर फेंक डाला था। उसे यह याद आया कि गिरफ्तारी की वह शाम लीजा के साथ अंतिम भेंट की शाम थी। वह जानता था कि उस शाम से सारा रास्ता, कल्पना से वास्तविकता तक का सारा मार्ग उसने पूरी तरह अपनी इच्छा के अनुसार ही तय किया है तथा वह नहीं चाहता कि किसी और रास्ते पर चला होता, तो भी यह सोचकर उसका मन दुख रहा था कि जीवन में इतने अधिक समय तक और इतनी अधिक बार उसने अपने आपको बिल्कुल अकेला पाया है।

अटैची के तले पर उसे एक लिफ़ाफ़ा मिला। इसमें पुराने फ़ोटो रखे हुए थे। उसने अपने बचपन का फ़ोटो देखा, इसमें वह डेढ़ साल से ज्यादा का न रहा होगा, वह लेस के कालर वाला लंबा फ़्राक पहने था। यह शायद उसके जीवन की पहली याद थी – कैसे काली दाढ़ी वाले आदमी ने उसे सुर्ख़ी तोरी की दुम वाला घोड़ा दिया, "कू-कू" कहा और काली चादर तले छिप गया, फिर चादर तले से निकलकर उसने घोड़ा छीन लिया था और किरील ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा था,

खिलौना देना ही नहीं चाहता था। फ़ोटो में किरील वह घोड़ा कसकर पकड़े बैठा था, और उसके चेहरे पर मासूमी भरे गुस्से का भाव था।

सहसा किरील को सीढ़ियों पर कदमों की आहट सुनाई दी। वह जल्दी से दूसरे कमरे में चला गया। यहां खड़े होकर ही उसे यह आभास हुआ कि उसकी सांस ज़ोर-ज़ोर से चल रही है।

चित्त शांत हो गया, तो वह उस कमरे में लौटा, जहां अटैची में से चीज़ें निकाल रहा था।

वेरा निकान्द्रोव्ना मेज़ पर निकाल रखी चीज़ों के पास निश्चल खड़ी थी। वह मां के पास गया और चुपके से उसके कंधों पर हाथ रखा। बड़ी देर तक वे दोनों कुछ नहीं बोले, उनकी नज़रें चीज़ों के इस बेतरतीब ढेर पर लगी हुई थीं, जो मानो उनके मौन वार्तालाप में भाग ले रही थीं। फिर किरील ने मां की ठंडी और कुछ नम सी कनपटी चूमी।

"बताते क्यों नहीं कब जा रहे हो?" मुश्किल से बोलते हुए वेरा निकान्द्रोव्ना ने पूछा।

"आज रात को। ठीक वक्त अभी पता नहीं।"

मां उसे एक ओर को, खिड़की के पास ले गई। उसके कंठ से स्वर नहीं निकल पा रहे थे, वह फुसफुसाई:

"बैठ जाओ... थोड़ी देर बैठो मेरे पास..."

गहरा सन्नाटा छाया हुआ था और कमरे में पुरानी चीज़ों की गंध फैली हुई थी। मेज़ पर एकसार जलते लैम्प से गर्माहट का अहसास होता था। फ़र्नीचर पर कहीं-कहीं पड़ती उसकी झलक भी मानो गर्माहट लिये थी और सारे कमरे में घर का सुखद, शांत वातावरण बना रही थी।

मां और बेटा ऐसे ही कुछ क्षण तक चुपचाप बैठे रहे। फिर वेरा निकान्द्रोव्ना ने किरील का सामान बंधवाया और वे दोनों बाहर आ गये। यहां विदा होते समय वेरा निकान्द्रोव्ना ने कहा कि वह कब से इस घड़ी की प्रतीक्षा कर रही थी, लेकिन फिर भी इसके लिए तैयार नहीं थी। किरील उसके कहे बिना ही यह देख रहा था। इसलिए वह जाने की जल्दी कर रहा था, ताकि मां के संयम पर अधिक ज़ोर न पड़े। वेरा निकान्द्रोव्ना दूर जाती कार की बत्तियां देखती रही और

जब वे नजरों से ओझल हो गई, तब भी वह देर तक घने अंधकार में मूर्तिवत खड़ी रही।

पौ फटने पर किरील इज्वेकोव ने अपनी कम्पनी को रवाना किया। दीबिच की कमान में सिपाही रेलगाड़ी पर जा रहे थे। जैसा कि पहले से तय हो चुका था किरील को दिन में कार पर जाना था और वोल्स्क में कम्पनी से मिलना था। उसे अपने साथ दवाइयां, दूरबीनें और रिवाल्वर की गोलियां ले जानी थी—वे सब चीज़ें, जो तैयारी के थोड़े से समय में वे अभी तक पा नहीं सके थे। उसके साथ ज़ूबिन्स्की और एक बोल्शेविक वालंटियर, जिसे किरील अपना सहायक बनाना चाहता था, जा रहे थे।

चलने से थोड़ी देर पहले ज़ूबिन्स्की ने रपट दी कि सब कुछ तैयार है, पर कार नखरे दिखा रही है, सो नौसिखिये ड्राइवर के साथ जाना जोखिम का काम है।

"अनाड़ी हाथों में 'मर्सीडिज़' देना खतरनाक है। कहीं बीच रास्ते में कार खराब हो गई तो?"

"तो क्या किया जाये?" किरील ने पूछा।

"अगर आप कोशिश करें, तो आपको ऐसा ड्राइवर मिल सकता है, जो अच्छा मैकेनिक भी हो।"

"है ऐसा आदमी?"

"हां, है। आपके गैराज का मैकेनिक शुब्निकोव। ड्राइवर भी बहुत बढ़िया है। एक जमाने में कारों की दौड़ों में हिस्सा लेता था।"

कुछ जवाब देने से पहले किरील बड़ी देर तक चुप रहा। उसे बीती शाम को ड्राइवर के साथ हुई बातचीत याद हो आई: ऐसे आदमी के साथ जाना, जो खुद यह स्वीकार करता है कि उसे इंजन का बहुत अच्छा ज्ञान नहीं है, वो भी सैर पर नहीं, मोर्चे पर जाना, बेवकूफ़ी ही होगी। पर शुब्निकोव के नाम से किरील के मन में विरोध और नफ़रत की भावना उठ रही थी। उसने तीखी नज़रों से ज़ूबिन्स्की की ओर देखा। वह आदेश की प्रतीक्षा में सावधान खड़ा था, और उसकी आंखों से सेवा करने की तत्परता का भाव फूटा पड़ रहा था।

"ठीक है, मैं अभी फ़ोन किये देता हूं," किरील ने कहा और मन ही मन सोचा: "भाड़ में जाये शुब्निकोव—जरूरी है तो क्या करूं?"

आधे घंटे बाद टाइपिस्ट को यह आदेश लिखवा दिया गया कि वीक्तोर सेम्योनोविच शुब्निकोव को कामरेड इज़्वेकोव का ड्राइवर-मैकेनिक नियुक्त किया जाता है।

२४

लीज़ा से शादी के बाद शुब्निकोव की ज़िंदगी जिस तरह चली, उसमें बहुत से अमूल्य तथ्य पाये जा सकते हैं। मिसाल के तौर पर पत्रकार मेर्त्सालोव उसे ऐसा व्यक्ति मानता था, जिसकी तसवीर क्रांति की पूर्ववेला में रूसी आचार-व्यवहार के वृत्तांत में पेश की जानी चाहिए। और छोटे-मोटे पत्रकारों में मेर्त्सालोव ऐसा आदमी माना जाता था, जो इन वृत्तांतों में बहुत कुछ जोड़ सकता है, जिनकी रूसी साहित्य में अभी काफ़ी कमी है। परन्तु शुब्निकोव के जीवन का संक्षिप्त विवरण ही एक पूरा अध्याय ले लेगा। यहां इस व्यक्ति के कार्यकलापों के एक दो पहलुओं का उल्लेख ही पर्याप्त होगा। यह व्यक्ति उन बहुत बड़े तो नहीं, पर खासे तेज़ कारोबारियों में से था, जो अब या तो लुप्त हो गये थे, या जिन्होंने अपना रूप बदल लिया था।

वह नगर में सबसे पहले कार खरीदनेवालों में से था। बग्घी की शक्ल की कार घोड़ों को डराती थी, छोकरे उसे देखकर खुशी से सीटियां बजाते और उसके पीछे भागते थे। निठल्ले छोकरे रबड़ के काले गोले वाले भोंपू की तीखी आवाज़ की नकल उतारते थे। यह भोंपू बॉडी के बाहर ब्रेक और गियर के लीवरों के साथ लगा हुआ था, जो रेलवे की कैंचियों जैसे लगते थे। जब अधिक आरामदेह कारें आईं, तो शुब्निकोव ने नई कार खरीद ली और पुरानी को टैक्सी बना दिया।

'उद्धारक ज़ार' के स्मारक के निकट रबड़ के टायरों वाली "तूफ़ानी" घोड़ागाड़ियों के अड्डे के पास ही यह "बिना घोड़े की बग्घी" घंटों तक रोमांच के प्यासे ग्राहकों का इंतज़ार करती खड़ी रहती थी। घोड़ागाड़ियों के कोचवानों को अभी यह अहसास नहीं था कि आंतरिक दहन इंजन का निष्ठुर युग उनके पेशे का सफ़ाया करनेवाला है और वे खड़े टैक्सी ड्राइवर पर हंसा करते थे, जो अपनी

गाड़ी पर किराये की पट्टी लटकाया करता था। वे अलग से झुंड बनाये स्मारक के उस ओर खड़े रहते थे, जहां ज़ार के घोषणापत्र* के शब्दों "प्रभु का आभार प्रकट करो, ईसा के भक्त रूसी लोगो..." के प्रतीक कांस्य किसान की ऊंची सी मूर्ति थी। टैक्सी ड्राइवर अपनी किराये की पट्टी के साथ स्मारक के दूसरी ओर न्याय देवी की मूर्ति के पास अकड़ से भरा अकेला खड़ा रहता था। यह मूर्ति इस मामले में न्याय का प्रतीक कम थी, इतिहास की निष्पक्षता का अधिक, और अपनी आंखों पर पट्टी बांधे दो युगों के इस मुकाबले को देखना नहीं चाहती थी। जीत कोचवानों की हुई। वीक्तोर शुब्निकोव ने प्रत्यक्षतः अपने स्वभावगत उतावलेपन के कारण अल्पविकसित मशीन के आकर्षण का अतिमूल्यांकन किया था। ट्रामों के साथ दौड़ लगाने के शौकीनों को "तूफ़ानी" घोड़ागाड़ियों में ही ज़्यादा मज़ा आता था, सो टैक्सी का कारोबार ठप्प हो गया।

विश्वयुद्ध के दौरान शुब्निकोव घर में ही बैठा रहा। भरती आयोग ने उसे मिरगी के मरीज़ के नाते छूट दे दी। मिरगी के दौरे उसे सचमुच ही पड़ते थे, पर तभी जब वह चाहता था और उतनी ही देर के लिए, जितनी देर वह लीज़ा को सताना चाहता था या बुआ दार्या अन्तोनोव्ना के मन में रहम जगाना चाहता था। फ़ौजी क्लर्कों और डाक्टरों के साथ उसने मेल-मिलाप बढ़ा लिया और रसद अधिकारियों के साथ दोस्ती गांठ ली।

लड़ाई के दूसरे साल में दार्या अन्तोनोव्ना चल बसी और उसकी सारी दौलत वीक्तोर को विरासत में मिल गई। अब उस पर बिल्कुल ही कोई लगाम न रही। वह पहले से भी ज़्यादा गुलछर्रे उड़ाने लगा और अपनी बनावटी डाह से लीज़ा को बिल्कुल ही चैन नहीं लेने देता था। जैसा कि बिगड़े स्वार्थी जीवों के साथ प्रायः होता है, वह किसी भी बहाने लीज़ा से सचमुच ही डाह खाने लगता था, इस हद तक कि रोने-कलपने लगता।

आखिर लीज़ा उसे छोड़कर चली गई। शुब्निकोव ने तुरंत ही

---

* १८६१ में भूदास प्रथा समाप्त करने के लिए जारी किया गया ज़ार का घोषणापत्र। — सं०

न्याय की शरण ली। वह मुंसिफ़ों और वकीलों से यारी करने लगा, और उसके मामले का फ़ैसला हो ही चला था, उसे आशा थी कि किसी भी दिन उसकी पत्नी और बेटे को उसके घर वापस लाया जायेगा और पति के मान को जो बट्टा लगा है, उसके लिए उसे हरजाना मिलेगा। परन्तु तभी फ़रवरी क्रांति हुई, मामला ढीला पड़ गया, और फिर अक्तूबर क्रांति के साथ तो पुरातन गृहस्थी ढांचे को बहाल करने पर उसका खर्चा बेकार हो गया।

यह बात नहीं कि बुआ की मौत के बाद शुब्निकोव केवल गुलछर्रे उड़ाने और अपनी पारिवारिक यातनाओं में ही मशगूल रहा हो। इसके विपरीत उसके उद्यमी स्वभाव को पूरी छूट मिल गई थी और वह बड़े-बड़े कामों में हाथ डालने लगा था। वह मास्को से शानदार मर्सीडिज़-बेंज़ कार ले आया, जिसे देखकर न केवल आटा मिलों के अमीर मालिक, बल्कि सरकारी अधिकारी भी चकरा गये – वे अभी तक घोड़ागाड़ियों पर, या बहुत हुआ तो लड़ाई के पहले के माडलों की कारों पर ही चला करते थे। फिर उसने घुड़साल बनवाई, अपना पुराना सवारी घोड़ा बेच दिया और दौड़ के घोड़ों का जोड़ा खरीद लिया, जिनमें से एक ने तुरंत ही घुड़दौड़ में पहला पुरस्कार जीत लिया। उसने डाक टिकटों और सिक्कों के अपने संग्रह तथा पाल नौका बेच दी और नई मोटरबोट खरीद ली। हरे टापू पर पिकनिक के समय उसने एक कम्पनी में साझेदार होने का फ़ैसला कर लिया, जो कपड़ा मिल बनाना चाहती थी। चेहरे पर अथाह गम्भीरता लिये वह इस भावी मिश्रित पूंजी कम्पनी की सभाओं में भाग लेता।

पर एक दिन कहीं दावत उड़ाते हुए मास्को के 'सुबह तड़के' नामक अखबार के एक रंगीले स्तम्भ लेखक से उसकी बहस हो गई और उसने शर्त लगाई कि वह सस्ता अखबार निकालेगा और दो महीनों में ही सभी प्रतिद्वंद्वियों को पछाड़ डालेगा। और फिर वह जी-जान से इस काम में लग गया।

उसने लाल-लाल नाकों वाले पियक्कड़ पत्रकारों का एक दल जमा किया, जिन्हें वोल्गा के घाटों, बैरकों, बाज़ारों और रैन-बसेरों की ज़िंदगी की खूब अच्छी जानकारी थी। स्तम्भ लेखक ने यह हिसाब लगाया कि उसके लिए शर्त हारना ही बेहतर होगा और वह शुब्निकोव के अखबार के लिए

धारावाहिक जासूसी उपन्यास लिखने लगा। ओरेखोवो-जूयेवो का कुख्यात डाकू वसीली चूर्किन अखबार का भाड़े का हीरो बन गया। उसके बारे में प्रचलित किस्से, चुटकले, गाने जमा करके अखबार में छापे जाते, चूर्किन के किस्सों पर बने विभिन्न लोक-नाटकों और कठपुतली तमाशों के बारे में छद्म वैज्ञानिक लेख तक छापा गया।

स्वयं वीक्तोर में कोई साहित्यिक रुझान नहीं था, और न ही अपने ज्ञान की डींग हांकने का उसका कोई इरादा था। उसके लिए फ़ेर्मोपील और फ़िलीपीन में कोई फ़र्क नही था, और वह यह कभी भूलता नहीं था। हां, वह अखबार की दिशा निर्धारित करता था, इस दिशा का नाम उसने 'राजनीतिसेबचोवाद' रखा था और उसका अपना आदर्श वाक्य था: 'लोगों को चटपटा मसाला पसंद है'। इसलिए उसके अखबार में छुरेबाज़ी, दिवालों, आगज़नी, तलाकों, ट्रामों के पटरी से उतरने आदि घटनाओं को खूब नमक-मिर्च लगाकर पेश किया जाता था। अखबार के लिए थियेटर का कोई अस्तित्व नही था, लेकिन अभिनेत्रियों के निजी जीवन की तस्वीरें उसमें हमेशा उतारी जाती थीं। बहुत शीघ्र ही सरकस के पहलवानों और फ़िल्मों की सफलता वीक्तोर के अखबार पर निर्भर करने लगी। पाठकों के लिए सस्ता यह अखबार मानव कौतूहल से पैसा कमानेवालों के लिए बड़ा कीमती हो गया।

अक्सर वीक्तोर अपने कर्मचारियों को तनख्वाह के बदले 'वोल्गा स्टेशन' में वोद्का की दावत दिया करता था। नदी तट पर बने इस भठियारखाने में ऐसी काव्य-प्रेरणा जागती थी कि ग्राहकों के मजे के लिए छुटभैये शर्लोक होम्स के किस्से यहां पर ही धड़ल्ले से गढ़े जाते थे। प्रकाशक की कल्पना भी साहित्य के मज़दूरों के साथ इस काम में पूरा भाग लेती थी। कलम के ये कारनामे देखकर तो शायद शुब्निकोव से कम घमंडी कोई व्यक्ति भी इस बात का कायल हो जाता कि बड़े से बड़े काम करनेवाले भी इन्सान ही होते हैं, कोई खुदा नहीं। और जब वह तरंग में आ जाता, तो यह कसमें खाने लगता कि उपन्यास और कविताएं सिर्फ़ इसलिए नहीं लिखता कि उसके पास वक्त नहीं है। एक बार जब किसी ने साहित्य देवता अपोलो के मान की रक्षा करने की कोशिश की तो शुब्निकोव ने अपनी एकमात्र कविता लिखकर

सबको चकित कर दिया। कविता उसने 'ऊबीकोन' उपनाम से लिखी और उसकी पहली पंक्तियां इस प्रकार थीं:

उड़ चली मेरी आत्मा
पृथ्वी के बंधन तोड़,
अंतरिक्ष में विचरती
मन के दाह को पीछे छोड़।

परन्तु शीघ्र ही शुब्निकोव का यह जोश ठंडा पड़ गया और उसने बड़े मौके पर अखबार बेच दिया। इसका एक कारण यह था कि मुनाफ़ा कम हो गया था (क्रांति से पहले विज्ञापन कम मिलने लगे थे), और एक यह भी था कि शहर में एक नया नारा गूंज रहा था, जिससे शुब्निकोव को अपने अनिष्ट का अस्पष्ट सा पूर्वाभास हो रहा था और जिसने बाद में अंतरिक्ष में विचरते खिलाड़ी पत्रकारों को ज़मीन पर ला पटका। यह नारा था: "सारी सत्ता सोवियतों की हो!"

इस सत्ता की स्थापना के साथ शुब्निकोव की सारी सम्पत्ति राज्य द्वारा हस्तगत कर ली गई। एक एक करके वीक्तोर को उसके बैंक-खातों, उसकी दुकानों, घोड़ों, मकानों और मर्सीडिज़-बेंज़ कार से वंचित कर दिया गया। सबसे ज़्यादा अफ़सोस उसे कार का था। जब कार लेने आये, तो वह दो चार आंसू भी टपकानेवाला था, पर तभी पता चला कि नौसिखिया ड्राइवर इंजन स्टार्ट नहीं कर पा रहा है। तब भूतपूर्व स्वामी ने इस नौसिखिये को तिरस्कार से देखा और क्रोध से तिलमिलाते हुए कार में जा बैठा और फर्राटे से चलाते हुए उसे नई जगह पर ले जा खड़ा किया। अपनी प्यारी कार से जुदा होते हुए उसने उसका शीशा चूमा।

इस क्षण से वह चुपके-चुपके कार पर नज़र रखने लगा। उसे हमेशा पता होता था कि कौन कार इस्तेमाल कर रहा है, और अगर कभी सड़क पर कार को देख लेता, तो मानो बुत सा बना देर तक उसे जाते देखता रहता। कार के ड्राइवरों से उसने दोस्ती कर ली थी और उन्हें सलाह-मशविरा देता रहता था कि उसे कैसे ठीक-ठाक रखें। एक दिन यह जानकर उसे भारी सदमा पहुंचा कि मर्सीडिज़ की एक ट्रक से टक्कर हो गई। उसे कार की मरम्मत के लिए बुलाया

गया और उसने इस काम में अपना हुनर दिखाया। क्रांति के कोई साल भर बाद उसे नगर सोवियत के गैराज में नौकरी पर लगा लिया गया और शीघ्र ही वह वहां सबसे काबिल मिस्त्री के रूप में मशहूर हो गया।

शुब्निकोव में अब पहले की शान का नामोनिशान न रहा था। उसके पास छैलों के कुछ कपड़े बचे हुए थे, लेकिन वह मज़दूरों का ओवरआल ही पहनता था। अपनी तावदार मूंछें उसने अब कूंची जैसी बना लीं, और अकसर तेल में सने हाथ मेज़ पर रखकर कहता कि हम भी काम करने के आदी हैं।

मेरकूरी अव्देयेविच अपने भूतपूर्व दामाद को देखकर हैरान होता – कितनी जल्दी वह वक्त के मुताबिक बदल गया था। जब तक शुब्निकोव को यह उम्मीद थी कि लीज़ा लौट आयेगी, तब तक वह अक्सर खिलौने-बिलौने लेकर बेटे से मिलने जाया करता था और चुपके-चुपके उसे मा के खिलाफ़ भड़काता था। तलाक के बाद उसने यह तमाशा छोड़ दिया और मन ही मन खुश था कि क्रांति आने पर वह परिवार के बंधनों से मुक्त था। पर ससुर से मिलने वह जाया करता था। उसके लिए वीक्तोर के मन में कृतज्ञता थी, क्योंकि मेश्कोव ने बाप के नाते लीज़ा को क्षमा तो कर दिया था, पर फिर भी यही मानता था कि वीक्तोर का दोष कम है। यद्यपि शुब्निकोव मेश्कोव के विचारों से सहमत नहीं था, परन्तु उसे उस पर भरोसा था और सिर्फ़ उसके साथ ही वह जी खोलकर बातें करता था। वे दोनों एक दूसरे को सीख देने की कोशिश करते थे, लेकिन मेश्कोव जहां नतमस्तक होकर सब कुछ स्वीकार करने में ही मुक्ति समझता था, वहीं शुब्निकोव हार मानने को तैयार नहीं था, उसे पूरा विश्वास था कि इतिहास का यह सबक जल्दी ही खत्म हो जायेगा और लोगों को एक बार फिर से समाज में अपना उचित स्थान मिल जायेगा।

"आप को तो कूटनीति ज़रा नहीं आती," वह कहता, "आप यह नहीं समझते कि आज हवा का रुख किधर है। जब तक वे ऊपर हैं, हमें उनकी हां में हां मिलानी चाहिए। ज़्यादा देर तो यह चलेगा नहीं। सोचने दो उन्हें कि हम उनकी बुद्धिमत्ता की वाहवाही कर रहे हैं। और आगे जो होगा देख लेंगे।"

"अरे नहीं, बेटा, यह हमारे पापों की सज़ा है," मेश्कोव

आपत्ति करता। "प्रभु का धीरज चुक गया है। और तुम कहते हो–आज हवा का रुख है! तुम्हारा क्या ख्याल है कि आज भगवान ने सज़ा देने का फ़ैसला किया और कल माफ़ कर देगा? नहीं, तुम यह सज़ा कबूल करो, पश्चाताप करो, मेहनत करो, रोटी का अपना टुकड़ा पाने के लिए खून-पसीना बहाकर काम करो। तब, हो सकता है, कृपासिंधु परमेश्वर को तुम पर दया आ जाये।"

"काम करना भी कोई नई बात है क्या? आपने सारी उम्र मेहनत की, काम किया, और मिला क्या? मेहनत तो बस आत्म-रक्षा का साधन है। और वैज्ञानिक दृष्टिकोण तो यह है कि मेहनत करने में कोई दिमाग-विमाग नहीं लगता, मेहनत तो बस मजबूरी ही है। और कोई उच्च विचार उसमें नहीं है।"

"तुम क्या उनसे ज़्यादा चालाक बनना चाहते हो? हमने शुरू में जितना समझा था, वे उसे बहुत ज़्यादा चालाक हैं।"

"ऐसी क्या चालाकी है उनमें? मुझे तो कुछ दीखती नहीं।"

"उनकी चालाकी यह है कि उन्होंने तेरी गाड़ी छीनकर तुझे ही उसमें जोत दिया, और अब तू उन्हें ढो रहा है।"

"मैं उन्हें ज़्यादा देर नहीं ढोऊंगा।"

"अरे लाला, वे तुझे ज़्यादा देर तक नहीं जोते रखेंगे–जब तक तू ढह नहीं जाता, बस तभी तक जुता हुआ है।"

कभी-कभी यह बहस झगड़े में बदल जाती, पर शुब्निकोव थोड़े दिन बाद फिर से ससुर के पास चला आता और उससे बहस छेड़ता।

मठ में जाने से पहले मेश्कोव ने एक बार फिर शुब्निकोव के सामने मन का गुबार निकाला, और इस बार उसे यह पक्का विश्वास हो गया कि उसका नया दामाद अनातोली मिख़ाइलोविच ओज़्नोबिशिन, पुराने दामाद से कहीं अधिक समझदार है। ओज़्नोबिशिन भी मेश्कोव की भांति वर्तमान स्थिति को प्रभु के कोप का परिणाम बताता था, जबकि शुब्निकोव कहता था कि परमपिता का काम हमारी ज़िंदगी में गड़बड़ी पैदा करना है, और हमारा काम है अपनी समझ से जहां तक बन पाये अपनी परवाह करना।

"मैं कभी यह नहीं मान सकता कि आप को भगवान की सज़ा पसंद

है। और अगर आपको पसंद नहीं तो आप इसे नतमस्तक होकर स्वीकार कैसे कर सकते हैं? यह सब पाखण्ड है।"

"तोबा, तोबा, वीक्तोर, तुम भगवान की बुराई करते हो!" विदा होते हुए मेरकोव ने कहा। "अब मैं खुश ही हूं कि लीज़ा ने बेटे को तुम्हारे पास नहीं रहने दिया। तुम तो उसे नास्तिक बना डालते। बचकर रहना, कहीं तुम्हें अपनी जान के ही लाले न पड़ जायें।"

"जान देनी ही पड़ी, तो सस्ते में नहीं दूंगा।"

"सस्ता या महंगा, तुम्हें इससे क्या फ़र्क पड़ता है? तुम तो रहोगे नही।"

"देख लेंगे, कौन रहेगा..."

ड्राइवर बनकर ख्वालीन्स्क जाने की खबर शुब्निकोव के लिए वज्रपात के समान थी। अभी उसे यह पता चला ही था कि किसलिए उसे जाना पड़ रहा है, तभी कार की बैटरी बैठ गई। मर्सीडिज़ उसकी चहेती थी, पर इतनी नहीं कि उसे बचाये रखने के लिए वह मिरोनोव का बलवा कुचलने जाये।

सरातोव में शुब्निकोव को सब अच्छी तरह जानते थे, सो उसके लिए नगर से बाहर होना अधिक निरापद था। लेकिन यह बात शांति के दिनों के लिए सच थी, जब चारों ओर स्थिति एक जैसी होती। पर अब मोर्चे और चंडावल की तुलना करने पर सारी बात ही बदल जाती थी। सरातोव में ज़्यादा से ज़्यादा कोई वीक्तोर की अमीरी याद कर सकता था, या उसका अखबार, या उसकी एय्याशी, जबकि मोर्चे पर गोलियों को लोगों की जीवनियों से कोई वास्ता नहीं होता—गोलियां चाहे गृहयुद्ध में चलें या किसी और युद्ध में, गोलियां ही हैं।

फ़ौज के रसद अधिकारियों के साथ रात-रात भर मौज मारने के दिनों में ज़ूबिन्स्की की शुब्निकोव से दोस्ती हुई थी। इस वक्त मोर्चे की सम्भावनाओं के बारे में उसके विचार शुब्निकोव से बिल्कुल भिन्न थे।

"बुद्धू मत बनो," वीक्तोर को डरते देखकर उसने कहा। "समझदार लोग सब अपनी बिसात समेट रहे हैं। यहां का खेल खत्म हो रहा है, इस पर बाजी लगाने में कोई तुक नहीं। अगर सफ़ेद गार्ड

सरातोव में आ धमके तो वे सिर्फ़ इतना ही पूछेंगे: 'सोवियतों की नौकरी की थी?' और बस छुट्टी। पढ़े-लिखे आदमी के लिए और भी ज़्यादा मुसीबत है: कहेंगे तुम तो समझते थे कि क्या कर रहे हो। और मोर्चे पर संकट की घड़ी आई तो वहां खेत भी हैं, जंगल भी, कहीं क़िसी किसान का घर भी होगा, अपनी खंदक भी और दुश्मन की भी... जहां चाहो, जा सकते हो।"

"मोर्चे में कोई आंख-मिचौनी तो खेली नहीं जाती। वहां गोलियां चलाते हैं।"

"तो क्या हुआ? तुम भी बुद्धू मत बनो। चलाओ... अपनी मर्सीडिज़," ज़ूविन्स्की हंस दिया और फिर अपने कफ़ पर चिपका एक रोयां झाड़कर हुक्म सा देते हुए बोला: "खैर, कार बिल्कुल ठीक हालत में तैयार होनी चाहिए!"

वीक्तोर समझ गया कि उसकी हालत बाल्टी में गिर पड़ी चुहिया जैसी है, और वह यह उम्मीद नहीं कर सकता कि कोई बाहर निकलने में उसकी मदद करेगा। उल्टे, ऐसे मौके पर अधिकारी कुछ नहीं सुनेंगे, सख्ती ही बरतेंगे। इसलिए शुब्निकोव ने ठीक समय पर गाड़ी पेश कर दी, बड़े जतन से सामान बंधवाने में मदद की और जब इज़्वेकोव वहां आया, तो ज़ूविन्स्की की ही भांति ठसक से उसे सल्यूट मारा।

किरील ने कार का चक्कर लगाया।

"सब ठीक है?"

"पैट्रोल की टंकी भरी हुई है और एक कनस्तर भी साथ में है। दो टायर भी ले लिये हैं। इंजन इतनी अच्छी हालत में नहीं, बहुत घिस गया है, पर खैर, भगवान राखा है..."

पिछले एक वर्ष में वीक्तोर ने चेहरे पर सदा ऐसी मुस्कान बनाये रखने का अभ्यास कर लिया था, जिसमें एक साथ ही साफ़ दिल सादगी का और चापलूसी का भाव व्यक्त होता था।

किरील ने एकटक उसकी ओर देखते हुए कहा:

"कार की ज़िम्मेवारी आपके सिर पर है, न कि भगवान पर..."

"बेशक। वो तो बस यों बात की बात में कहा था।"

जूबिन्स्की ने किरील को आगे की सीट पर बैठने को कहा, पर वह वालंटियर के साथ पिछली सीट पर बैठा। घड़ी देखकर उसने चलने का आदेश दिया।

गाड़ी में सफ़र करते हुए घटनाओं को समझने, शांत दृष्टि से उन्हें समग्र रूप में देख पाने का पर्याप्त समय होता है। रास्ते के दोनों ओर फैला विस्तार ही चिंतन-मनन की प्रेरणा देता है।

सरातोव के बाहर फैला विस्तार उदासी भरा है और कहीं-कहीं तो इसकी एकरसता मनहूस लगने लगती है। उपनगर में पंद्रह-बीस साल पुराने पेड़ों के कुंज पार करते ही आगे बूचे टीले ही टीले नज़र आते थे, जिनके बीच-बीच में गहरे खड्ड थे। कई-कई मील बाद कहीं किसी बस्ती के पास पॉप्लर और बेद के पेड़ों के छोटे-छोटे झुरमुट दिखाई दे जाते। रास्ते के दोनों ओर भोज वृक्ष लगाने चाहिए और निचाइयों में बलूत व चीड़ के पेड़, ताकि ज़मीन की यह लाल-पीली नग्नता ढकी जा सके। अगर स्तेपियों की झुलसती गर्मी के बजाय हवाएं जंगलों की नमी खेतों मे लायें, तो वे कैसे हरे-भरे हो उठें! कैसे खड्डों मे चश्मे चमक उठेंगे, भोर को ओस झिलमिलायेगी और छोटी-छोटी नदियां कैसे कलकल करती बहेंगी! किरील की आंखों के सामने फैले इस निर्जल विस्तार का यह सदियों पुराना सपना था। बचपन से ही किरील अपने इलाके की इस प्यास को अनुभव करता आया था, इस असीम पठार पर फैले घने वनों की कल्पना करता आया था। अब यह याद करते हुए कि बचपन में वह इन भावी वनों की कल्पना किस रूप में करता था, किरील हैरान हो रहा था। तब उसकी कल्पना उसे उष्णकटिबंधीय वृक्षों के अनोखे उद्यानों में ले जाती थी, जो मानो धरती के ऊपर हवा में लटकते होते और उनके शिखर धरती को शीतल छाया प्रदान करते होते। ये अजीबोगरीब उद्यान उसकी कल्पना में एक छलांग में ही बन जाते थे — उसकी कल्पना बूची स्तेपी को देखकर उड़ान भरती और सीधे बेलों के विचित्र गुंथन पर जा पहुंचती। स्वप्नदृष्टा को इस बात से कोई वास्ता नहीं था कि यह परिवर्तन कैसे हुआ। सहसा स्तेपियों में वन-उद्यान उग आते। ये उद्यान और वन कैसे बने — इसमें उसकी कोई दिलचस्पी नहीं थी। कल्पना तो पके फल का मज़ा चखती है, किसने फल का पौधा उगाया, उसे

सींचा – इससे उसे क्या लेना-देना। फल तोड़ो, लो और खाओ, फल मीठा है, सुगंधित है, भले ही यह दूर भविष्य का फल हो; मनहूस चिकनी मिट्टी पर उगते नागदौन के झंखाड़ों से तो वितृष्णा ही होती है। अब किरील को उसके बाल-मस्तिष्क को अभिभूत करनेवाली उष्णकटिबंधीय सजावट शैल स्तरों की अश्मिभूत वनस्पतियों जैसी लग रही थी। इस समय वह उस बात में मग्न था, जिसका बचपन में कल्पना के लिए कोई अस्तित्व नहीं था। वह परिवर्तनों के बारे में सोच रहा था – यह कि स्तेपियों को हरा-भरा कैसे बनाया जाये, कैसे उनकी प्यास बुझाई जाये? निचाइयों में कैसे पेड़ उगाये जायें और टीलों पर कैसे? कौन सी ऐसी किस्में हैं, जो स्तेपी की शुष्क गर्म हवाएं सह सकती हैं? ज़िले में सिंचाई का कितना लम्बा-चौड़ा जाल बिछाना होगा, ताकि इस वृक्षहीन धरती पर जंगल उगने लगें? कैसे गांवों, बस्तियों को संगठित करके धरती के कायाकल्प के काम में लगाया जा सकता है? क्या एक करोड़ पेड़ों की देखभाल के लिए दस हज़ार लोग काफ़ी होंगे? एक करोड़ पेड़ बहुत हैं या कम? कितने समय बाद जंगल मनुष्य से पानी नहीं मांगेंगे, और खुद आर्द्रता के स्रोत बन जायेंगे? नहीं, यह धरती के कायाकल्प की कल्पना नहीं थी, इसे तो विचार भी नहीं कहा जा सकता, यह तो समस्या के हल की खोज थी, कच्चा हिसाब-किताब था। भविष्य के निर्माण का स्वप्न अब निर्माण कार्य बन रहा था, और स्वप्नदृष्टा निर्माता। "पर फिर भी, फिर भी!" किरील के मस्तिष्क में सहसा घने बलूत वन उग आते और दूर कहीं, वनों की नीलिमा के पीछे से धरती के ऊपर बचपन के अनोखे वन उठे दिखते।

और रास्ता दायें, बायें घूमता, ऊपर-नीचे बल खाता बढ़ता जा रहा था, उसे न लोगों की ऊब से कोई वास्ता था, न उनके विचारों से। कहीं पीले-पीले और कहीं खड़िया के रंग के गोल टीले धरती के उदर पर उभर आये फफोलों जैसे लगते थे। खेतों में कटाई हो चुकी थी, और गांवों के पास ही कहीं-कहीं बदरंग से गांज दिखाई दे रहे थे।

ज़ूविन्स्की धीरे-धीरे पीछे को मुड़ा, मानो इस असमंजस में कि इतनी लम्बी चुप्पी भंग की जा सकती है या नहीं।

"कामरेड इज़्वेकोव, मैं पूछना चाहता था कि मुझे क्या कहकर पुकारा जायेगा?"

किरील को अपने विचारों के क्रम को यों तोड़ा जाना बुरा लगा, वह चुपचाप ज़ूबिन्स्की के लंबे चेहरे को देखता रहा, जो पीछे मुड़े होने के कारण वक्राकार लग रहा था। कौन है यह आदमी? किस कारण से इसने वही मार्ग चुना है, जो इज़्वेकोव ने चुना था? किसने उन्हें इस रास्ते पर मिलाया है – सामान्य मित्रों ने या सामान्य शत्रुओं ने?

"आपके नाम से बुलाया जायेगा," अंततः किरील ने जवाब दिया और हौले से हंसा।

"सो तो मैं समझता हूं!" ज़ूबिन्स्की ने ठहाका मारा। "मेरा मतलब था मेरा ओहदा क्या होगा?"

"आपके ख्याल में आपका ओहदा क्या है? आपका काम क्या होगा?"

"मैं तो यह समझता हूं," ज़ूबिन्स्की ने पूरे विश्वास से कहा तथा थोड़ा और घूमकर, सीट की पीठ पर कोहनी रखकर आराम से बैठ गया, "मैं आपका एडिकांग हूंगा। रिपोर्टें लिखा करूंगा।"

"कैसी रिपोर्टें?"

"युद्ध का वर्णन। सैनिक कार्रवाइयों की डायरी। आप कमांडर के नाते..."

"मैं कमांडर नहीं हूं..."

"मैं समझता हूं। पर साफ़-साफ़ कहें, तो असली कमांडर के नाते आप आम आदेश देंगे, कमांडर सैनिकों को लड़ाई में ले जायेगा, और मैं आपको रिपोर्ट पेश करूंगा।"

किरील देर तक हंसता रहा – कार के हिचकोलों से डोलता हुआ; फिर उसने ज़ूबिन्स्की की आंखों में आंखें डालकर ऐसे मस्ती से देखा कि उसने कोहनी हटा ली और तनकर सीधा बैठ गया।

"आप वे काम करेंगे, जिसका आदेश हमारे कमांडर कामरेड दीबिच देंगे, या मैं दूंगा।"

ज़ूबिन्स्की का विश्वास मानो कम हो गया था, पर ठसक नहीं। वह बोला:

"बेशक, आदेशों का पालन करना मेरा कर्तव्य है... पर मैं

चाहता था कि आप यह वता दें कि मेरे काम के दायरे में क्या कुछ आता है, ताकि मुझे पता रहे। पुराने ज़माने में रेजीमेंट का एडिकांग मिसाल के तौर पर, संचार का काम संभालता था; उसके अधीन होते थे – अरदली, टोही, टेलीफ़ोन आपरेटर ..."

"वस यही काम मैं भी आपको दूंगा," उसकी वात काटते हुए इज़्वेकोव ने कहा, और फिर से ज़ूविन्स्की को घूरकर देखा, "सिवाय टोहियों के ..."

फिर से वे देर तक चुप रहे। कार की डोलायमान गति से झपकी आ रही थी, पर ऊवड़-खावड़ जगहों पर लगते धचकों की वजह से आंख लग भी नहीं पा रही थी। शुब्निकोव कभी-कभी वड़वड़ाता, पर कार खूब अच्छी तरह चला रहा था। ज़ूविन्स्की फिर से पीछे मुड़ा।

"आपने तो कामरेड इज़्वेकोव, कमाल कर दिया। इतनी जल्दी कम्पनी तैयार करके भेज दी। कहीं कोई ज़िच नहीं आई, कुछ नहीं हुआ। ऐसे काम संगठित करना भी हुनर है। किसी-किसी में ही यह पाया जाता है।"

इज़्वेकोव ने कोई जवाव नहीं दिया।

"आपके हाथों में तो पूरी सेना की कमान होनी चाहिए," ज़ूविन्स्की कहे जा रहा था। "सच मानिये! शहर में लोग समझ ही नही पा रहे थे: इतने ऊंचे ओहदे पर थे और अचानक आपको एक मामूली सी कम्पनी सौंप दी ..."

"क्या मेरे लिए रंज हो रहा है?"

"नहीं, सो तो नहीं, पर हैरान हैं। मेरे विचार में यह प्रतिभा का अपव्यय है। वड़े लोगों को वड़े काम सौंपने चाहिए। ज़रा देखिये न विश्व क्रांति में कैसी सफलता हो रही है। वहां है असली अखाड़ा! हमारे इस पिछवाड़े में तो यह कौए हंकाना ही है।"

"वड़ा दिलचस्प विचार है," इज़्वेकोव वोला। "आपका क्या रणनीति पर भी अपना अलग दृष्टिकोण है?"

"मैं यह सोचता हूं," अत्यंत गम्भीर भाव से ज़ूविन्स्की वोला, "मैं यह सोचता हूं कि उक्रइनी प्रतिक्रांतिकारियों के विरुद्ध सारी शक्ति केन्द्रित करना ज़्यादा सही होता, उनका सफ़ाया करके सारा

मोर्चा पश्चिम की ओर मोड़ना चाहिए। और वहां हम विश्व क्रांति से जा मिलेंगे।"

"बड़ी दिलचस्प बात है," इज्वेकोव ने फिर से कहा। "इधर देनीकिन और कोल्चाक की ओर से पीठ मोड़ लें, ताकि वे आपस में मिल जायें और हमारी पीठ में छुरा घोंप दें। यही सोचते हैं आप?"

"बेशक, पूरब की ओर पीठ मोड़ने से हमें कुछ नुक्सान जरूर होगा। पर अब हम जो पश्चिम की ओर पीठ मोड़ रहे हैं, यह हमें और भी ज्यादा महंगा पड़ेगा: मौका हाथ से निकल जायेगा और फिर यह वक्त लौटकर नहीं आयेगा। विश्व क्रांति का उबाल ठंडा पड़ जायेगा।"

"वाह, आपके पास तो पूरी योजना है। वैसे यह काफ़ी प्रचलित है: दूर के ढोल सुहावने!"

ज़ुबिन्स्की ने आपत्ति करनी चाही, पर इसी क्षण कार को ज़ोर से झटका लगा और वह सड़क के किनारे की ओर बढ़ चली, ब्रेकों की चीं-चीं के साथ आखिर वह रुक गई।

"पंक्चर हो गया!" शुब्निकोव ने झुंझलाकर कहा और झटके से दरवाजा खोल दिया।

सब लोग कार से उतरने लगे।

वे नदी के ऊंचे कगार पर खड़े थे। कगार कहीं-कहीं कट गया था और धीरे-धीरे सरकता हुआ नदी तक चला गया था, कहीं-कहीं वह नुकीले टीलों जैसा लगता था, जो मानो ऊंघते हुए पहरा दे रहे थे। सूर्य अस्ताचल को जा रहा था। टीलों की परछाइयों से आस-पास के स्थान जड़ और शोकग्रस्त प्रतीत होते थे। हवा ज़रा भी नहीं चल रही थी। दूर कहीं इड़ना गुलू क्रंदन कर रहा था।

असली ड्राइवर की भांति, ज्यादा सोच-विचार में पड़े बिना शुब्निकोव पहिया बदलने लगा। इज्वेकोव को यह देखकर अच्छा लगा कि वह ज़रा भी बौखलाये बिना, सधे हाथों से काम कर रहा है। ज़ुबिन्स्की बड़े जतन से अपनी पेटियां खोल-खोलकर कस रहा था। किरील का सहायक वालंटियर, जो सारे रास्ते एक शब्द भी नहीं बोला था, शक्की नज़रों से ज़ुबिन्स्की को देख रहा था।

किरील ने कगार के सिरे पर टहलकदमी करते हुए कुछेक बार

घड़ी देखी। वे आधे से ज़्यादा रास्ता पार कर चुके थे, पर इस पंक्चर की वजह से किये-कराये पर पानी फिर रहा था। धीरे-धीरे किरील को इस बात पर झुंझलाहट हो रही थी कि शुब्निकोव यों पहिये से लगा हुआ है। किरील को यह लगने लगा था कि ऐसे सधे-सधे काम करने के बहाने वह जानबूझकर देर कर रहा है, इतनी देर से उससे हवा ही नहीं भरी जा रही थी।

"ज़रा जल्दी करो! चलो बारी-बारी से हवा भरें," किरील ने कहा।

"क्यों नहीं?" ज़ूबिन्स्की ने हामी भरी और बड़े जतन से अपना पटका खोलने लगा।

उसकी इन मंद-मंद गतियों को देखते हुए किरील के मन में इस बने-ठने बांके के प्रति घिन उठ रही थी।

"सो आप कौए हंकाना नहीं चाहते?" उसने ज़ूबिन्स्की से पूछा।

"मैं अपनी बात नहीं कर रहा था। मेरा तो काम बस हुक्म बजा लाना है, और मेरा ओहदा ही ऐसा है कि मैं अपनी ओर से कोई पहलकदमी नहीं कर सकता।"

"यह बात तो नहीं। पहलकदमी दिखाने में आप कम नहीं। वो दोरोगोमीलोव का घर खाली कराने की क्या सोची थी आपने?"

"अच्छा-आ! आप तक शिकायत पहुंच गई? यह काम तो मुझे फ़ौजी कमिसार ने सुझाया था। हमारे पास लामबंदी के लिए जगह कम पड़ रही है। मैंने सारा शहर छान मारा। और दोरोगोमीलोव का घर तो सरकारी घर है। बड़ी अच्छी जगह पर है।"

"आपके लिए अच्छी जगह है?"

"मेरे लिए नहीं, पर..."

"आपका अपना बंदोबस्त अच्छा है?"

"रिहायश का? बहुत ही बेकार!"

"और आपको दोरोगोमीलोव का घर पसंद आ गया?"

"मेरी समझ में नहीं आता कि मैं लाल सेना का अधिकारी क्यों किसी कोठरी में रहूं..."

10*

"जबकि दोरोगोमीलोव के पास खासा अच्छा घर है," किरील ने उसकी बात पूरी की।

"मैं घर अपने लिए तो नहीं ले रहा। यह सब चुगलखोरों की बातें हैं। हां, मुझे उम्मीद थी कि फ़ौजी कमिसार लामबंदी केंद्र में मुझे एक कमरा लेने देंगे।"

"आपने कमिसार को अपनी यह योजना बताई थी?"

ज़ूबिन्स्की ने कंधे बिचका दिये। उसने जैकट उतार ली थी, उसे उलटाकर तह किया और सड़क के किनारे करीने से रखी अपनी पेटियों और होल्स्टर के ऊपर रख दिया। कार के पास जाकर उसने शुल्लिकोव से पम्प ले लिया, उसकी हत्थी ऊपर खींचकर कोहनियां फैलाये रुक गया और किरील से कहा:

"कामरेड इज़्वेकोव, आप मुझे अच्छी तरह नहीं जानते। ज़ूबिन्स्की रपट देने से पहले काम पूरा करता है। अगर मैं आपको अभी यह बताऊं कि ड्राइवर हवा भर रहा है, तो इसमें क्या तुक होगी? जब सब तैयार हो जायेगा, तो मैं रपट दूंगा: कामरेड कमिसार, गाड़ी ठीक हो गई, आगे चल सकते हैं!"

वह ज़ोर-ज़ोर से पम्प चलाने लगा।

इसके बाद और घंटा भर तक कार ठीक चलती रही, पर फिर अचानक इंजन में कुछ गड़बड़ी होने लगी। अब शुल्लिकोव को इंजन देखना पड़ा (स्पार्क ठीक नहीं आ रहा था) और एक बार फिर से सब कार से उतर गये।

सड़क के दोनों ओर गांव के घरों के सामने उगते पेड़-पौधों की कतारें चली गई थीं। सांझ के झुटपुटे में लोग अपने घरों के बाहर आराम कर रहे थे। शीघ्र ही लड़कों का झुंड कार के पास जमा हो गया।

ज़ूबिन्स्की ऊबता हुआ थोड़ी दूर खड़े किसानों के पास चला गया। जब वह लौटा तो काफ़ी उत्तेजित लग रहा था, सदा से अधिक जतन से बन-संवर रहा था।

"कोई खबर सुनी?" इज़्वेकोव ने पूछा।

"सब बासी खबरें हैं, कामरेड कमिसार। सोच रहा था थोड़ा दूध मिल जाये, पर पैसे नहीं लेते, दूध के बदले नमक मांगते हैं।

ओफ़, जल्दी से वोल्स्क पहुंचें! क्यों, शुब्निकोव, ठीक हुआ इंजन कि नहीं अभी।"

वीक्तोर बड़बड़ाया कि चलने से पहले अगर इंजन को ओवरहाल करने का वक्त मिल जाता तो यों बार-बार रुकना न पड़ता, कि अब सारे कोंटेक्ट देखने पड़ेंगे।

"ऐसे चलाने से तो मर्सीडिज़ का भट्ठा बैठ जायेगा!"

खैर, इंजन स्टार्ट हो गया और सब अपनी-अपनी जगह जा बैठे। कोई कुछ नहीं बोल रहा था। वे पूरब की ओर बढ़ रहे थे, जहां अंधेरा छा गया था। अकसर रास्ते में छोटे-छोटे जंगल आ रहे थे, कुछ काफ़ी घने थे। कार की हेडलाइट जला दी गई। सहसा सारा संसार रोशनी की सफ़ेद पट्टी तक सीमित हो गया, जिसमें सामने से तार के खम्भे धीरे-धीरे बढ़ते आते थे और फिर झट से अंधेरे में खो जाते थे।

वे नगर के पास पहुंच रहे थे, स्टेशन की बत्तियां दिखाई देने लगी थीं, तभी फिर से इंजन बंद हो गया। शुब्निकोव के मुंह से गाली निकली। हेडलाइट बुझाते ही कार अंधेरे में डूब गई। शुब्निकोव हुड उठाकर इंजन देखने लगा, ज़ूबिन्स्की टार्च से रोशनी कर रहा था।

किरील मन में उफनते क्रोध को दबाते हुए सड़क के किनारे आगे-पीछे चल रहा था, कभी वह हाथ छाती पर बांध लेता और कभी पीठ पीछे ले जाता। सहसा वह थम गया।

इंजन के ऊपर झुके शुब्निकोव और ज़ूबिन्स्की के चेहरों पर टार्च की रोशनी पड़ रही थी। ज़ूबिन्स्की पलकें झुकाये गुस्से में शुब्निकोव से कुछ कह रहा था, जो प्रत्यक्षतः उसकी बातों से खुश नहीं था और संक्षिप्त से उत्तर दे रहा था। बिल्कुल साफ़ था कि वे इंजन ठीक करने में नहीं लगे हुए हैं। किरील को ज़ूबिन्स्की के नथुने विचित्र लगे – वे इतने उभरे हुए थे, मानो बाहर को निकल पड़ रहे हों।

किरील ने वालंटियर को बुलाया, उसे चुपके से कहा कि वह दूर न जाये, और खुद ज़ूबिन्स्की के पास चला गया।

"जब तक यहां इंजन ठीक नहीं होता, क्यों न हम यह पता

लगा लें कि कम्पनी की रेलगाड़ी कहां है। जाइये, जाकर स्टेशन से पूछताछ कर आइये।"

"जैसा हुक्म, कामरेड कमिसार!"

"टार्च मुझे दे दीजिये। मैं ड्राइवर को रोशनी दिखाता रहूंगा।"

"पर मैं अनजान रास्ते पर अंधेरे में कैसे जाऊंगा?"

"कोई बात नहीं। स्टेशन की बत्तियां तो नज़र आ ही रही हैं।"

ज़ूबिन्स्की चुपचाप चला गया।

किरील इंजन के पास गया।

"क्या हो रहा है आखिर यहां?"

"कुछ समझ में नहीं आता," शुब्निकोव हताश स्वर में बोला।

"कोशिश करो समझने की," किरील ने कहा।

"स्पार्क प्लग ठीक लगता है, पर स्पार्क नहीं आ रहा। घिसे-पुराने इंजन से बढ़कर कोई मुसीबत नहीं। कभी-कभी ऐसी पहेली बुझा डालते हैं कि शैतान तक न बूझ सके!"

"ज़रा पकड़ो तो," किरील ने टार्च शुब्निकोव को थमाई और खुद मैग्नेटो पर झुका।

"मैग्नेटो ठीक है!" शुब्निकोव ने जल्दी से कहा और टार्च की रोशनी एक ओर को हटा दी।

"इधर पास रोशनी करो," किरील ने हुक्म दिया।

वह डिस्ट्रीब्यूटर का ढकना खोलने लगा।

"यहां देखने को कुछ नहीं है, मैं देख चुका हूं," शुब्निकोव ने ज़ोर से कहा और अपना हाथ भी ढकने की ओर बढ़ाया।

किरील ने उसका हाथ परे धकेल दिया और चाबी लेकर ढिबरी खोलने लगा। शुब्निकोव ने टार्च बुझा दी। उसी क्षण उसे अपनी उंगलियों पर मजबूत पकड़ महसूस हुई: वालंटियर ने पीछे से हाथ बढ़ाकर उससे टार्च छीन ली। टार्च फिर से जल उठी। किरील ने निश्चिंत होकर ढिबरी खोलकर ढकना उतारा और शुब्निकोव की ओर देखा: रोटर गायब था।

वालंटियर ने शुब्निकोव के चेहरे पर रोशनी डाली: उसका निचला

होंठ फड़फड़ा रहा था, मानो वह कुछ कहना चाह रहा हो, पर कह न पा रहा हो।

"रोटर किसने निकाला?" इज़्वेकोव ने पूछा।

"मैं क्या... अपना ही दुश्मन हूं?" सहसा फटी-फटी आवाज़ में शुब्निकोव बोला।

"अपने तो दुश्मन नहीं हो।"

"मुझे खुद कुछ समझ में नहीं आता," शुब्निकोव ने खांसते और मुस्कराने की कोशिश करते हुए कहा।

"मैं खूब समझता हूं," किरील ने कहा। "रिवाल्वर है?"

"नहीं।"

किरील ने उसकी जेबें टटोलीं।

"गाड़ी में बैठो... नहीं, ड्राइवर की सीट पर नहीं! पीछे बैठो!"

शुब्निकोव कुछ कहे-सुने बिना कार में जा बैठा। जब तक वह कार में चढ़ रहा था और बैठ रहा था, टार्च की रोशनी उसके पीछे-पीछे चल रही थी, फिर टार्च बुझ गई। कार के एक ओर इज़्वेकोव और दूसरी ओर उसका सहायक वालंटियर खड़े हो गये।

बड़ी देर तक कोई कुछ नहीं बोला। एक निशाचर पंछी उनके सिरों के ऊपर उड़ता निकल गया। उसके पंखों की फड़फड़ाहट से आह जैसा स्वर हुआ और फिर दो बार उसकी कर्कश चीख सुनाई दी। मैदानों में टिड्डों का समवेत स्वर ज़ोरों से गूंज उठा। शीतल पवन के साथ गर्म ईंटों की गंध आ रही थी। स्टेशन से इंजन की उदासी भरी सीटी की आवाज़ आई। स्टेशन की बत्तियां अब ज़्यादा साफ़ दिखने लगी थीं। किरील धीरे-धीरे बोला:

"सोचा नहीं था कि मुझे भी इंजनों के बारे में कुछ पता है, है न?"

"क्यों नहीं सोचा था!" शुब्निकोव ने मानो राहत के साथ कहा। "मुझे अच्छी तरह याद है कि आपने तकनीकी शिक्षा पाई है।"

"अच्छा! तो फिर किस भरोसे थे?"

"ईमान कसम, मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा!"

"मतलब, रोटर जूबिन्स्की ने निकाला है? क्या बातें हो रही थीं उससे?"

"कोई बात नहीं हो रही थी। वह मुझे डांट रहा था कि मैं गड़बड़ी का पता नहीं लगा पा रहा। कह रहा था कि मैंने कामरेड इज़्वेकोव से तुम्हारी सिफ़ारिश की थी और तुम निरे भोंदू निकले।"

फिर से चुप्पी छा गई, और रात मानो अधिक गहरा गई।

"वाकई किसी को बिल्कुल भोंदू समझकर ही रोटर निकाला जा सकता है," शुब्निकोव बोला।

किरील ने कोई जवाब नहीं दिया।

"आप खामख्वाह मुझ पर शक कर रहे हैं, मुझे अपनी इज़्ज़त प्यारी है," उलाहना के स्वर में शुब्निकोव ने कहा। "आप तो बस मुझसे खार खाये हुए हैं। निजी मामले को लेकर।"

"क्या बकवास कर रहे हो!" किरील ने कहा।

"मैंने भी सोचा था बकवास है, बेकार की बात है। सब कुछ कब का भुलाया जा चुका है। पर लगता है ऐसा नहीं है।"

"क्या ऐसा नहीं है?"

"आप शुब्निकोव को माफ़ नहीं कर सकते कि उसने आपका रास्ता काटा था। कब की बात है, कितना वक्त गुज़र चुका है। पर लगता है आप भूलनेवालों में नहीं हैं।"

"बंद करो यह बकवास।"

"मैं तो कब का उस सुख को तिलांजलि दे बैठा हूं, जिसके लिए कच्ची जवानी में हमारी टक्कर हुई थी। मैं येलिज़ावेता मेरकूर्येव्ना को छोड़ चुका हूं, कामरेड इज़्वेकोव। अब मुझसे बदला लेने में क्या तुक है! कौन जाने, येलिज़ावेता मेरकूर्येव्ना के साथ अपने दुर्भाग्य से मैंने आपको बहुत बड़ी निराशा से बचा लिया हो।"

"बहुत हुआ! चुप हो जाओ!" किरील गुस्से से खौलते हुए चिल्लाया।

सारा समय चुप रहा वालंटियर गुर्राया:

"अबे ओ! चुप होता है कि नहीं!"

कम से कम आधा घंटा बीता होगा, जब सड़क पर फ़ौजियों

की तरह मार्च करते आदमी की परछाईं का आभास हुआ। ज्यों-ज्यों वह पास आता जा रहा था, उसकी आकृति स्पष्ट होती जा रही थी – उसका कोट कमर से नीचे घंटी की शक्ल में फैला हुआ था, पतलून जांघों पर दो हंसियों के फालों और पिंडलियों पर हंसियों की मूठों जैसी लगती थी।

किरील ने ज़ूबिन्स्की को कार के बिल्कुल पास आने दिया और तब हेडलाइट जला दी। ज़ूबिन्स्की की आंखें चौंधियाईं, भौंहों के ऊपर हाथ रखते हुए वह बोला:

"मैं हूं, कामरेड कमिसार, मैं!"

"क्या पता चला?" इज़्वेकोव ने पूछा।

"सैनिक गाड़ी कोई बीस मिनट में पहुंचनेवाली है। कार ठीक हो गई?"

"धन्यवाद," किरील ने कहा। "अपनी पिस्तौल उतारिये।"

"क्या मतलब?"

"कहा न, पिस्तौल इधर दीजिये।"

"मज़ाक कर रहे हैं क्या, कामरेड इज़्वेकोव?"

ज़ूबिन्स्की ने रोशनी से परे हटते हुए एक ओर को कदम बढ़ाया। किरील ने जेब में से अपना रिवाल्वर निकाल लिया।

"उतारिये पिस्तौल!"

ज़ूबिन्स्की सदा की भांति बहुत बनते हुए, धीरे-धीरे भारी भरकम होल्स्टर खोलने लगा। चमड़े का चौड़ा पटका चरमरा रहा था।

"क्या आप यह बताने की कृपा करेंगे कि आखिर हुआ क्या है?" चुनौती के स्वर में और साथ ही मटकते हुए अंदाज़ में उसने पूछा।

जैसे ही उसने होल्स्टर खोला, किरील ने उसकी पिस्तौल झपट ली।

"यह आप बतायेंगे कि क्या हुआ है। जब मैं आपसे पूछूंगा ..."

गिरफ़्तार व्यक्तियों को कार सड़क के किनारे धकेल देने का हुक्म हुआ। उसे कुछ देर के लिए यहां अंधेरे में ही छोड़ना पड़ रहा था।

फिर वे दो जोड़ियों में चल दिये—इज़्वेकोव और उसका सहायक पीछे-पीछे चल रहे थे। सहायक की बंदूक आगे चल रहे जोड़े की ओर सधी हुई थी।

वे अभी स्टेशन से काफ़ी दूर थे, जब घड़घड़ाती हुई गाड़ी गुज़री। डिब्बों की संख्या से किरील पहचान गया कि यह दीविच की कम्पनी की गाड़ी है। ये लोग जब स्टेशन पर पहुंचे, तो सैनिक गाड़ी से सामान उतारने में व्यस्त थे।

दीविच इज़्वेकोव को देखकर इतना खुश हुआ, मानो वे पिछली सुबह नहीं, वरन कब के बिछुड़े हुए हों। अचानक एक दूसरे को देखकर वे गले मिलने लगे।

"कम्पनी में सब ठीक-ठाक है। आप लोगों का सफ़र कैसा रहा?"

"अपनी कार से पहले पहुंच गये।"

"क्यों? कुछ खराबी हो गई, क्या?"

"हां, मामूली सी। वैसे तो हम उस पक्की दीवार से जा टकराये। याद है?" किरील ने मुस्कराते हुए कहा।

"पक्की दीवार?" दीविच की तुरन्त समझ में नहीं आया, पर फिर उसकी आंखें फैल गई: "ज़ूबिन्स्की?"

"हां। ज़रा दो घोड़े भेज देना, मर्सीडिज़ स्टेशन पर ले आयें। अभी तो उसे स्टेशन के पहरेदारों के हवाले छोड़ना होगा।"

किरील ने दीविच को सारी बात बताई और अंत में कहा कि उन्हें क़ैदियों को अपने मुकाम तक साथ ले जाना होगा, और वहां पहुंचकर मामले की जांच-पड़ताल करनी होगी।

"लो, यहीं सैनिकों से हाथ धोना पड़ गया," सारी बात सुनकर दीविच ने कहा।

"हमें नहीं, हमारे शत्रु को हाथ धोना पड़ा है," किरील ने उसकी बात को सही करते हुए कहा।

"हमारे टोही सफल रहे," दीविच प्रोत्साहन भरी नज़रों से इज़्वेकोव की ओर देखकर मुस्कराया।

"नहीं, टोही धोखा खा गये," किरील भी मुस्कराया, "खुशकिस्मती से हमने गलती वक्त रहते ठीक कर ली।"

"मुझसे गलती हुई। मुझे आपसे कह देना चाहिए था कि ज़ूविन्स्की को साथ न लें।"

"गलती मेरी है, जल्दबाज़ी में रहा," किरील ने गम्भीरतापूर्वक कहा। "आगे से ज़्यादा चौकस रहूंगा। चलिये अब काम करें। पौ फटने से पहले ही हमें कूच करना होगा।"

२५

ख़्वालीन्स्क तक अब उन्हें एक दिन से भी कम मार्च करना था, तभी सुबह तड़के दीविच के टोहियों की भेंट लाल सेना के एक गश्ती दल से हुई, और उससे पता चला कि पास ही के कस्बे रेप्योव्का पर किसी गिरोह ने कब्ज़ा कर लिया है। यह गश्ती दल गिरोह को कुचलने के लिए ख़्वालीन्स्क से भेजी गई छोटी सी फ़ौजी टुकड़ी का भाग था।

ऐसे बलवे प्रायः होते थे। इनके पीछे थीं प्रतिक्रांतिकारी पार्टियां, जो अमीर किसानों के बूते पर चलती थीं और जिन्हें किसानों के समर्थन की आशा थी। कहीं-कही तो ये बलवे कस्बे अथवा तहसील तक ही सीमित होते थे और कभी ज़िला या प्रदेश तक में फैल जाते थे।

उस साल वसंत के आरम्भ में वोल्गा के बिचले मैदान में सिम्बीर्स्क और समारा प्रदेशों के पास-पास के ज़िलों में बलवा काफ़ी फैल गया था। इसे चपानी बलवा कहा जाता था। (किसानों का कोट, जिसे कुछ इलाकों में अज़्याम या अर्म्याक कहा जाता है, वोल्गा के मैदानों में चपान कहलाता है। इसके बारे में एक चुटकुला मशहूर है: "हम घोड़ागाड़ी पर सैर करने गये थे?"–"गये थे।" "मैंने चपान पहना हुआ था?"–"हां, पहना हुआ था।" "मैंने चपान उतारा था?"–"हां, उतारा था।" "गाड़ी पर रखा था?"–"हां, रखा था।" "तो कहां है वह?"–"क्या?" "चपान!"–"कैसा चपान?" "अरे, हम घोड़ागाड़ी पर गये थे कि नहीं?"–"गये थे।" "मैंने चपान पहना हुआ था?"–"पहना हुआ था..." और इस तरह, बार-बार वही बात चलती रहती है।) चपानियों के पीछे दक्षिणपंथी और वामपंथी समाजवादी-क्रांतिकारी पार्टियां थीं, जिन्होंने रूसी सो-

वियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र के संविधान की रक्षा के नाम पर "सोवियतों को कम्युनिस्टों के चंगुल से छुड़ाने" का नारा दिया था। अपनी हरकतों को और अधिक गूढ़ बनाने के लिए वे किसानों में ऐसे झंडे बांटते थे, जिन पर उकसावे भरे नारे लिखे होते थे: "बोल्शेविक ज़िंदाबाद! कम्युनिस्ट मुर्दाबाद!" इसके अलावा विद्रोही कुलक अपने प्रचार में रूसी आर्थोडोक्स धर्म की रक्षा का नारा भी लगाते थे। स्तावोपोल नगर के चपानी कमांडेंट दोलीनिन ने किसानों के नाम अपना आह्वान इन शब्दों से आरम्भ किया था: "समय आ गया है, सब आर्थोडोक्स रूसी जाग उठे हैं," और इन शब्दों में खत्म किया: "उठो, विद्रोह करो, भगवान हमारे साथ है।" भगवान, देवचित्रों और दूसरी धार्मिक बातों के लिए संघर्ष चपानियों के बलवे में बहुत बड़ा सम्बल था, उसी दोलीनिन ने अपनी एक घोषणा में कहा था: "सभी नागरिकों को यह आदेश दिया जाता है कि वे सरकारी कार्यालयों में घुसते ही टोपी उतारें, क्योंकि यह हर ईसाई का पहला कर्तव्य है।" चपानी बलवा भड़कने के एक सप्ताह बाद ही स्थानीय सेनाओं ने इसे दबा दिया। परन्तु इसकी प्रतिध्वनि काफ़ी देर तक वोल्गा तट के स्तेपी वाले और वन-प्रांतों के दूर-दराज़ के गांवों में गूंजती रही।

भगवान के नाम पर यह चपानी लूटपाट रूसी प्रतिक्रांति का ही एक अंग थी। गृहयुद्ध के दिनों में वोल्गा के मैदानों, उक्रइना और मध्य रूस के तम्बोव प्रांत में किसानों को प्रतिक्रांतिकारी खेमे में ले आने की भरसक कोशिशों के बावजूद रूसी प्रतिक्रांति एक संयुक्त शक्ति नहीं बन पाई। कई बलवे काफ़ी लंबे और खतरनाक थे, इनमें बहुत खून-खराबा हुआ, परन्तु ये निर्णायक संघर्ष का रूप धारण नहीं कर पाये। भविष्य की बागडोर लाल सेना अपने हाथों में संभाले हुए थी, और इसके सबसे शक्तिशाली शत्रु थे सफ़ेद गार्ड, जिनकी अपनी सेनाएं थीं। कुलकों के विद्रोह मोर्चों की घटनाओं के अनुरूप ही भड़कते और ठंडे पड़ते थे, इनकी आग सुलगाती रहती थी और अक्सर यह युद्ध के बवंडर में उड़कर दूर-दराज़ के गांवों में जा गिरी चिनगारी के समान ही थे।

- दीबिच के टोही जब रेप्योव्का में दुश्मन के होने की खबर लाये, तो तुरंत ही ख्वालीन्स्क से बलवे को कुचलने आई टुकड़ी के साथ

सम्पर्क स्थापित किया गया। इस टुकड़ी का संचालन फ़ौजी कमिसार और ज़िला सोवियत की कार्यकारिणी समिति का एक सदस्य कर रहे थे, जिन्हें सरातोव से आ रही कम्पनी के बारे में पता था। टुकड़ी और कम्पनी के कमांडरों की मुलाकात रेप्योव्का से दक्षिण में स्थित एक टीले पर हुई, जहां से आस-पास का सारा स्थान अच्छी तरह दिखाई देता था।

रेप्योव्का कस्बा घाटी में स्थित था, उत्तर और दक्षिण में ढलुवां टीलों से घिरा हुआ। कस्बे में घने बगीचे थे, जो पश्चिम में जंगल में जा मिले थे। पूर्व में वोल्गा तट के ऊंचे कगारों वाले टीले थे। इस घाटी के आर-पार बड़ी सड़क चली गई थी, उत्तरी और दक्षिणी टीलों से उतरती कच्ची सड़क इस बड़ी सड़क से जा मिली थी। यह कच्ची सड़क बगीचों में खो जाती थी और आगे चलकर कस्बे की बड़ी गली के रूप में दिखाई देती थी, जो रेप्योव्का को दो हिस्सों में बांटती थी। दूरबीन में कस्बे के बीचोंबीच बाज़ार का चौक दिखाई देता था, जहां तहसील का कार्यालय, सराय, स्कूल, अनाज का गोदाम और नीले गुम्बदों वाला गिरजाघर था।

टीलों से घिरी इस निचाई में विद्रोहियों की स्थिति अत्यंत असुविधा-जनक लगती थी। हां, एक ही बात का उन्हें फ़ायदा था कि कस्बे में घने बगीचे थे और जंगल पास ही था। विद्रोहियों की तादाद के बारे में आस-पास के गांव वाले तरह-तरह की अटकलें लगा रहे थे: कोई कहता वहां पचास लोग हैं, कोई कहता सौ। यह भी ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता था कि गिरोह किसका है। कोई कहता कि ये भगोड़े फ़ौजी हैं, कोई कहता मिरोनोव के सिपाही हैं, और कुछ लोगों का कहना था कि यह रेप्योव्का के ही कुलक थे, जिन्होंने अपना अतिरिक्त अनाज सरकार को देने से इन्कार कर दिया था। शायद सच्चाई किसी न किसी हद तक इन सब बातों में ही थी, हालांकि मिरोनोव के बलवे के बारे में कोई खबर नहीं मिली थी, सिवाय ख्वालीन्स्क की टुकड़ी की बताई इस अफ़वाह के कि मिरोनोव को सूरा नदी पर हरा दिया गया है और उसके रिसाले के सिपाही इधर-उधर भाग रहे हैं।

यह फ़ैसला किया गया कि कम्पनी और टुकड़ी मिलकर दीविच की कमान में कार्रवाई करेंगी। साथ ही क्रांतिकारी सैनिक समिति गठित करने का निश्चय किया गया, जिसमें इज़्वेकोव, ख्वालीन्स्क

का फ़ौजी कमिसार और कार्यकारिणी का सदस्य – ये तीन लोग होंगे। दीविच घुड़सवारों को लेकर तुरंत ही मोर्चा चुनने निकल पड़ा। उधर क्रांतिकारी समिति फ़ौरी मामलों पर गौर करने लगी, जो सदा की भांति जमा हो गये थे।

सबसे पहले इज्वेकोव ने ड्राइवर शुब्निकोव और जारशाही सेना के भूतपूर्व अफ़सर ज़ूविन्स्की द्वारा तोड़-फोड़ का मामला पेश किया। यह मामला सैनिक ट्रिब्यूनल के अधिकार क्षेत्र में आता था। विद्रोह की स्थिति में ऐसे ट्रिब्यूनल का दायित्व क्रांतिकारी सैनिक समिति पर पड़ता था और समिति ने माना कि मामले की तुरंत ही जांच-पड़ताल करनी चाहिए।

दसियों मोर्चों के बीच सहसा बन गये इस एक और मोर्चे के सत्ता निकाय ने एक किसान की झोंपड़ी में स्थान ग्रहण किया, जिसकी खिड़कियों में से वोल्गा तट के लहरदार सूर्यस्नात टीले दिखाई दे रहे थे।

ज़ूविन्स्की को जब झोंपड़ी में लाया गया, तो काफ़ी देर तक सन्नाटा छाया रहा। पैदल मार्च के दौरान ज़ूविन्स्की का चेहरा मुरझा गया था। उसकी वर्दी धूल से सनी थी, तो भी लगता था, मानो थोड़ी देर पहले इस्तरी की गई हो। उसके सुडौल शरीर पर वर्दी एकदम फ़िट थी। उसका चमड़े का चौड़ा पटका और होल्स्टर गायब थे और टोपी पर लाल सितारा भी नहीं चमक रहा था। वह टकटकी लगाये इज्वेकोव को देख रहा था।

किरील बोला:

"आपको क्रांतिकारी सैनिक समिति के सामने पेश किया गया है, जो सोवियत सत्ता के विरुद्ध अपराध करने के लिए आप पर मुकदमा चलायेगी। अपना पूरा नाम और सामाजिक मूल बताइये।"

ज़ूविन्स्की ने बिना किसी झिझक के यह आदेश पूरा किया और अंत में भृकुटि तानकर अपनी अधीनता दर्शाते हुए पूछा:

"क्या मुझे यह जानने की इजाज़त है कि मुझ पर क्या आरोप लगाया गया है?"

"आप पर जानबूझकर तोड़-फोड़ करने का अभियोग है। लाल सेना को क्षति पहुंचाने के उद्देश्य से आपने अपनी कम्पनी की कार जानबूझकर खराब कर दी।"

"कैसे?" जूविन्स्की ने आश्चर्य प्रकट किया।

"अदालत को यह वताइये कि आपने कार खराव करने के लिए क्या किया।"

"जो काम मैंने किया नहीं उसके वारे में कैसे वता सकता हूं?"

"मैग्नेटो में से रोटर निकालने में आपका क्या उद्देश्य था?"

"मैं पहली वार सुन रहा हूं कि रोटर नाम की कोई चीज़ होती है। कहां होती है यह? हो सकता है ड्राइवर के पास वैठे हुए मेरा पांव कहीं लग गया हो? मुझे कारों के वारे में कुछ पता नहीं है, मुझे तो घोड़ों की पहचान है।"

"जवाव दीजिये: कार क्यों खराव की?" फ़ौजी कमिसार ने अधीरता से पूछा।

"मैं इसका जवाव नहीं दे सकता, क्योंकि कार ख़राव करना वहशियत है! मुझे पैदल चलने के वजाय कार पर सवारी करना ज़्यादा पसंद है।"

इज़्वेकोव ने आग्रहपूर्वक कहा:

"इस वक्त हम मोर्चे पर हैं। आप सैनिक हैं और अच्छी समझते हैं कि क्या हो रहा है। युद्ध में जांच-पड़ताल के लिए अधिक समय नहीं होता। संक्षेप में उत्तर दीजिये: आखिरी वार जव शुब्निकोव इंजन में खरावी के वहाने कार रोककर इंजन देख रहा था, तो आप उससे फुसफुसाकर क्या वात कर रहे थे?"

"मैं ज़ोर से यह नहीं कहना चाहता था कि वह गधा है। मैं उससे कह रहा था कि अगर वह इंजन की गड़वड़ी का पता नहीं लगा पायेगा, तो उसके लिए अच्छा नहीं होगा। मैं आपके सामने शर्मिंदा हूं, कामरेड कमिसार..."

"मैं आपका कामरेड नहीं हूं।"

"हां, मैं समझता हूं, इस वक्त आपको न्यायाधीश कहना चाहिए शायद? मैं शुब्निकोव से कह रहा था कि मैं कामरेड इज़्वेकोव के सम्मुख उसके लिए जवावदेह हूं, क्योंकि मैंने उसकी सिफ़ारिश की थी।"

"आपने किस इरादे से शुब्निकोव की सिफ़ारिश की थी?"

"वह वढ़िया मैकेनिक माना जाता है। मैंने सोचा था कि यह

वात सही है। और फिर मुझे यह उम्मीद थी कि शुब्निकोव अपनी गाड़ी की ठीक तरह देखभाल करेगा। वह उसे विगड़ता न देख सकेगा!"

जूविन्स्की ने कंधे उचकाये और उसके होंठ एक सिरे से ज़रा खिंच गये। किरील ने सतर्क नज़रों से उसकी ओर देखा।

"अपनी कार का क्या मतलव?"

"क्रांति से पहले मर्सीडिज़ उसकी थी।"

"आपने पहले मुझे यह क्यों नहीं वताया था?"

समिति के दोनों दूसरे सदस्यों ने एक साथ ही इज़्वेकोव की ओर सिर घुमाया। वह पेंसिल उठाकर घुमाने लगा, कभी उसका एक सिरा मेज़ पर ठकठकाता, कभी दूसरा।

"दो दिन तक मैं काठी से उतरा तक नहीं," जूविन्स्की ने जवाव दिया। "ज़्यादा सोचने-विचारने का समय नहीं था। मुझे उम्मीद थी कि शुब्निकोव हमें मुसीवत में नहीं डालेगा, पर हुआ..."

"क्या हुआ?" फ़ौजी कमिसार ने पूछा।

इस नई सूचना से इज़्वेकोव परेशानी में पड़ गया था। वह पेंसिल से मेज़ पर ठकठक करता जा रहा था। अव यह वात उसके ही खिलाफ़ जा रही थी कि उसने शुब्निकोव को इस अभियान में अपने साथ लिया। उसे शुब्निकोव के वारे में पूरी जानकारी हासिल करनी चाहिए थी; उसे निजी तौर पर शुब्निकोव पसंद नहीं था, केवल इसलिए ही उसे ठुकराने की कोशिश नहीं करनी चाहिए थी। यह सच है कि समय कम था, लेकिन यह पूछने के लिए कि कार से उसका क्या सम्बन्ध है, ज़्यादा समय नहीं चाहिए था। अव जांच-पड़ताल मुश्किल हो रही थी। पर हो सकता है उलट वात हो? क्या इससे मामला आसान नहीं होता? जांच-पड़ताल करनेवाले का कर्तव्य क्या है? स्वयं तर्क-वितर्क करके किसी निष्कर्ष पर पहुंचना? अभियुक्तों को यह समझाना कि मामले के क्या-क्या परिणाम हो सकते हैं? किरील ने और चाहे जो कुछ किया हो, जांच-पड़ताल के काम के लिए अपने को कभी तैयार नहीं किया था। और अव वह जांच-पड़ताल कर रहा था और साथ ही उसे न्याय भी करना था। पहले तो ये दायित्व अलग-अलग लोगों के होते थे। पर शायद देखने में ही ऐसा लगता था? न्यायाधीश भी तो जांच-पड़ताल करता है, और मामले को समझकर

फ़ैसला सुनाता है। किरील को जांच-पड़ताल करनी थी, न्याय करना था और फ़ैसला सुनाना था। यह क्रांति के सम्मुख उसका उत्तरदायित्व था। यह पूछताछ नहीं थी, पहले ज़माने जैसी जांच-पड़ताल नहीं थी, ज़ारशाही कानूनों के अनुसार न्यायिक कार्रवाई नहीं थी। यह क्रांति का न्याय था। और किरील कोई जांच-पड़ताल अधिकारी या जन-अभियोक्ता नहीं था। वह क्रांतिकारी था। उसे कानून के अक्षरशः पालन की चिंता नहीं करनी थी, बल्कि उन हितों की, जिनके लिए वह काम कर रहा था, क्रांति के हितों की। सो, यह शुब्निकोव और ज़ूबिन्स्की द्वारा तोड़-फोड़ का मामला था...

सहसा उसने उत्तेजना में चलते अपने हाथ को रोका। वह पेंसिल पकड़े हुए था और उसके बारीक घड़े सिक्के को देख रहा था, सिक्के से उसकी उंगलियों के सिरे काले पड़ गये थे। वह हौले से मुस्कराया।

"तो हुआ क्या?" फ़ौजी कमिसार के बाद उसने भी पूछा और रूमाल निकालकर अपनी उंगलियां पोंछने लगा।

"हुआ क्या... लगता है, गलती हो गई..." ज़ूबिन्स्की ने भी हौले से मुस्कराते हुए कहा।

"गलती नहीं, अपराध हुआ है," इज़्वेकोव ने सख्ती से कहा।

"अगर अपराध हुआ है, तो मुझसे नहीं।"

"किससे? साफ़-साफ़ बोलिये।"

"मुझे नहीं पता। चर्चा मेरी और शुब्निकोव की है। मैंने कोई अपराध नहीं किया है।"

"तो आप शुब्निकोव पर आरोप लगा रहे हैं?"

"उस पर आरोप लगाने के लिए मेरे पास कोई कारण नहीं है।"

"क्या आप उसे काफ़ी अरसे से जानते हैं?"

"किसी ज़माने में उसे घुड़दौड़ का शौक था, मुझे भी। फिर वह कारों में दिलचस्पी लेने लगा, कभी-कभार ही हमारी मुलाकात हो जाती थी। वह खिलाड़ी है।"

"खिलाड़ी है!" कार्यकारिणी का सदस्य चिल्लाया और तिरछी नज़र से इज़्वेकोव की ओर देखा, मानो उसे किसी बात पर खेद हो और साथ ही उसने कुछ अनुमान लगा लिया हो।

"यह तो सोचा भी नहीं जा सकता कि शुब्निकोव ने कार जान-

बूझकर खराब की हो। यह तो वैसे ही होगा, जैसे मैं अपने घोड़े के चारे में कांच के टुकड़े डाल दूं।"

"पर फिर भी उसने कार खराब कर ही दी, की कि नहीं?" इज़्वेकोव ने पूछा।

"हो सकता है, उसने अपनी कार बचाने की सोची हो," ज़ूबिन्स्की ने मानो बात की बात में कहा, "शायद डर रहा होगा कि मोर्चे पर कार बेकार हो जायेगी।"

"ठीक," फ़ौजी कमिसार पहले से भी अधिक अधीरता से बोला, "सो आपका यह बयान है कि कार इसलिए खराब की गई, ताकि वह मोर्चे पर काम न आ सके।"

ज़ूबिन्स्की ने अपनी शानदार वर्दी के पैड लगे कंधे ऊपर उठाये।

"अगर मुझे इस बात पर रत्ती भर भी विश्वास होता, तो मैं खुद उसी वक्त शुब्निकोव को गोली से उड़ा देता!"

"मेरे ख्याल से मामला साफ़ है," फ़ौजी कमिसार ने कहा।

समिति के सदस्यों ने एक दूसरे की ओर देखा, और किरील ने ज़ूबिन्स्की को ले जाने का आदेश दिया।

शुब्निकोव से पूछताछ के समय वातावरण दूसरा ही था। स्वयं अभियुक्त के व्यवहार से ही वातावरण में यह परिवर्तन आया था। वीक्तोर शुब्निकोव भयभीत था। वह मुड़-मुड़कर गार्डों की ओर देखता, मानो डर रहा हो कि अभी कुछ हो जायेगा, खुद अपनी ही बात काटता और वाक्य अधूरे छोड़ देता। लगता था वह यह तय नहीं कर पा रहा कि किस लहजे में बोले। एक बात वह खूब अच्छी तरह समझ रहा था (और उसकी आंखों में छाये भय से यह स्पष्ट था) कि सवाल उसकी ज़िंदगी का है, और यहां पलक झपकते ही उसकी जीवन की लौ दियासलाई की भांति बुझाई जा सकती है। अपना नाम, उम्र वगैरह बताते हुए वह सहसा थम गया और बिल्कुल हैरान-परेशान सा पूछने लगा:

"यह क्या राह-रास्ते में भी कोई अदालत होती है? अदालत शहर में होती है, कायदे के मुताबिक। आपके पास तो कलम-दवात तक नहीं है!"

उसे समझाया गया कि वह सेना में है, किन्तु उसने आपत्ति की:

"नहीं, बिल्कुल नहीं! मुझे छूट मिली हुई है, मिरगी की वजह से। मैं मिरगी का मरीज़ हूं। मेरे पास छूट का कार्ड है। यह देखिये।"

अंदर की जेब में से उसने ढेर सारे, नये-पुराने कागज़ निकाले और उन्हें मेज़ पर बिखेरकर कार्ड ढूंढ़ने लगा, जो उसे मिल ही नहीं रहा था, उसकी उंगलियां उसके वस में नहीं थीं।

कार्यकारिणी के सदस्य ने कागज़ समेटकर शुब्निकोव को दे दिये और कहा:

"मैं अभियुक्त से एक सवाल पूछना चाहता हूं, वैसे इस मामले से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। यों ही मुझे दिलचस्पी है, क्योंकि मैं भी खेलों का शौकीन हूं। शुब्निकोव, यह बताइये, ज़ूबिन्स्की यहां डींग हांक रहा था कि सरातोव में कारों की दौड़ में उसकी टक्कर का कोई दूसरा नहीं है, क्या यह बात सच है?"

"झूठ!" हाथ झटकता हुआ शुब्निकोव चिल्लाया। "सब झूठ बोलता है वह! कभी गाड़ी चलाई तक नहीं उसने! कैसा खिलाड़ी है वह! घोड़ों की भी तो उसे कोई पहचान नहीं! हमेशा चोरी-चोरी यह पता लगाया करता था कि मैं कौन से घोड़े पर बाज़ी लगा रहा हूं। सरातोव में पूछ देखिये... मैंने कहा न सही मुकदमा तो शहर में ही हो सकता है। वहां गवाह हैं। वे बता देंगे हमारे यहां कौन कारों की दौड़ में सबसे बढ़कर है!"

"कौन है?" कार्यकारिणी के सदस्य ने पूछा।

"गवाह बतायेंगे कौन है! शुब्निकोव है, और कौन!"

"मतलब ज़ूबिन्स्की को कारों के बारे में कुछ पता नहीं है?"

"उसे अगर कुछ पता है तो दर्ज़ियों के बारे में!" शुब्निकोव घिन से चिल्लाया, पर फिर सहसा उसने जीभ काट ली, इज़्वेकोव की ओर टकटकी लगाकर देखा और धीरे से बोला: "आजकल कारों तक सबकी पहुंच हो गई है। कोई बड़ी बात नहीं कि सीख लिया हो।"

इज़्वेकोव की ओर धुंधली नज़रों से देखते हुए उसने खीसें निपोरीं:

"ऐसा भी होता है कि आदमी ने गाड़ी कभी चलाई नहीं, पर इंजन के बारे में जानता है। हो सकता है ज़ूबिन्स्की भी ऐसा ही हो... वह मेरे लिए एक पहेली है।"

"आप अपनी मर्सीडिज़ पर ही कारों की दौड़ों में हिस्सा लेते थे?" कार्यकारिणी के सदस्य ने पूछा।

शुब्निकोव ने मुड़कर दरवाजे की ओर देखा और कुछ देर सोचता रहा।

"अलग-अलग मार्के की कारों पर।"

"जो मर्सीडिज़ आपने खराब की, वह पहले आप ही की थी?"

"मैंने कार खराब नहीं की। मैं क्यों खराब करता? और अगर आप सचमुच खिलाड़ी हैं, तो आपको पता होना चाहिए कि कार का मार्का मर्सीडिज-बेंज़ है, मर्सीडिज़ नहीं।"

"सवाल का जवाब दीजिये मर्सीडिज़ आपकी है?" इज़्वेकोव ने पूछा।

"मेरी नहीं, सोवियत की है," शुब्निकोव फिर से चिल्लाने लगा। "ज़ूबिन्स्की ने चुगली खाई है क्या? हां, थी मेरी, और तब घड़ी की तरह चलती थी।"

"और फिर आपने उसे खराब कर दिया?"

"मैंने, मैंने! सब कुछ मैं ही तो करता हूं! मेरे बिना सरातोव नगर सोवियत का गैराज कब्रिस्तान होता। मैं अकेला सारा मरम्मत का काम करता हूं, और आप मेरा नाम लगाते हैं–मैं कार खराब करता हूं। मैं सोवियत गाड़ियों की देखभाल करता हूं। सोवियत गाड़ियां निजी गाड़ियों से चार गुना जल्दी खराब होती हैं। ये सरकारी आंकड़े हैं, अगर आपको पता नहीं। मैंने कामरेड कमिसार से चलते वक्त कहा भी था कि इंजन की हालत खस्ता है। किसने उसकी यह हालत की? मैंने की क्या? मैं सोवियत गाड़ियों की देखभाल के लिए गैराज में काम करने लगा। मेरा तो यह देखकर कलेजा मुंह को आता है कि कैसे सोवियत गाड़ियां ..."

"बस कीजिये," इज़्वेकोव ने उसे टोका। "ज़ूबिन्स्की ने यह कहा है कि आपने रोटर निकाल दिया था ताकि कार मार्च में काम न आ सके।"

"ज़ूबिन्स्की झूठा है! आप देखते नहीं, वह निरा बक्की है?" जल्दी हथेली से मुंह पोंछते हुए शुब्निकोव चिल्लाया। "उसे इंजन के बारे में कुछ पता नहीं, ऊपर से कहता है कि मैंने कुछ कर दिया। झूठ बोलता है वह!"

"चूंकि जूबिन्स्की को इंजन के बारे में कुछ पता नहीं, सो वह रोटर नहीं निकाल सकता था," इज़्वेकोव ने अपनी बात जारी रखी। "मतलब उसका यह कहना सही है कि आपने यह काम किया। क्या आप अपना अपराध स्वीकार करते हैं?"

शुब्निकोव ने इधर-उधर नज़र दौड़ाई, क्षण भर को जड़वत हो गया, फिर जल्दी-जल्दी हाथ से होंठ पोंछने लगा, मानो थूक की वजह से वह बोल न पा रहा हो। उसकी आंखें धुंधली पड़ गईं।

"अगर आप खुद नहीं बताना चाहते कि आपने ऐसा क्यों किया, तो फिर हमें जूबिन्स्की की बात पर भरोसा करना होगा। उसका कहना है कि आप अपनी भूतपूर्व सम्पत्ति को बचाना चाहते थे, इसलिए इंजन खराब कर दिया। अब जवाब दीजिये: क्या आप फ़ौज छोड़कर भागना चाहते थे?"

"ठीक है," शुब्निकोव ने हौले से कहा और सिर झटका। "ठीक है। जूबिन्स्की ने मुझे मरवाने के लिए झूठ बोला। वह सोचता है कि मैं व्यापारी तबके का हूं, इसलिए मेरी बात पर विश्वास नहीं करेंगे। वह भी कोई मज़दूर घर का पला नहीं है। ठीक है।"

"साफ़-साफ़ बोलिये।"

"मैं साफ़ बोल रहा हूं," शुब्निकोव ने अधिक ऊंचे, परन्तु अभी भी अस्फुट स्वर में कहा। "शपथ से कह रहा हूं। समझ लीजिये बाइबल की शपथ खाकर। और आप सब लिख लीजिये, पेंसिल से ही सही, लिख लीजिये।"

उसने कमीज़ के कालर का बटन खोला। उसके होंठों पर गाढ़ी थूक के दो बिंदु उभर आये। वह ज़ोर-ज़ोर से सांस ले रहा था और जल्दी-जल्दी बोल रहा था।

"ज़ूबिन्स्की भागकर सफ़ेद गार्डों से जा मिलना चाहता था। मैं नहीं चाहता था। वह मुझे डरा-धमका रहा था, कहता था कि मेरी खोपड़ी में गोली दाग देगा, और किसी को पता तक न चलेगा। कहता था कि कार पर एक रात में सफ़ेद गार्डों तक पहुंचा जा सकता है।"

"कब कहा था उसने यह सब?" इज़्वेकोव ने पूछा।

"आखिरी बार जब हम रुके थे, तब। गांव में उसे यह खबर

मिली कि सफ़ेद गार्ड पेंजा में पहुंच गये हैं। किसान उनका इंतज़ार कर रहे थे। जब हम गांव के पास रुके थे तब उन्होंने उसे बताया था। और यह भी कि वे सरातोव की ओर बढ़ रहे हैं। किसान कहते थे बोल्शेविकों के दिन चुक गये।"

"कौन बढ़ रहा है सरातोव की ओर?"

"सफ़ेद गार्ड। मिरोनोव और उसके सिपाही। उसने मुझे ठीक तरह से कुछ नहीं बताया। जल्दी कर रहा था। कहता था, अब सोचने का वक्त नहीं है। बस यही है सारी बात। सारा दोष उसका है, ज़ूबिन्स्की का। बस, अब आप जो चाहे कर लीजिये।"

शुब्निकोव ने खूब ज़ोर से उसांस छोड़ी।

"और उसने आपको रोटर निकालने का हुक्म दिया?"

"उसने कहा: निकाल दो कोई पुर्ज़ा-वुर्ज़ा।"

"और आपने रोटर निकाल दिया?"

"कामरेडो!" शुब्निकोव चिल्लाया। "कामरेड इज़्वेकोव! आप यह कैसे कह सकते हैं कि रोटर मैंने निकाला? मुझे तो मौत की धमकी दी गई थी! मुझे यह आज़ादी तो नहीं थी कि निकालूं या न निकालूं।"

"आप को मुझे समय रहते इस विश्वासघात के बारे में बता देने की तो पूरी आज़ादी थी," किरील ने कहा। "ज़ूबिन्स्की जब स्टेशन पर चला गया था, तब तो आपको उससे कोई खतरा नहीं था।"

"पर ज़ूबिन्स्की अपनी जेब में रोटर जो ले गया था!" हताश शुब्निकोव चीखा।

क्षण भर को सब चुप रहे।

"लेकिन आपने मुझे धोखा दिया और ज़ूबिन्स्की का अपराध छिपाया," किरील ने कहा।

शुब्निकोव नीचे को झुका, मानो घुटनों के बल गिरने लगा हो।

"हां, यह मेरा कसूर है। मैं डर रहा था। मैंने सोचा भी नहीं था कि आप मेरी बात पर विश्वास करेंगे। सोच रहा था कि हमारे निजी सम्बन्धों को देखते हुए आप मुझे माफ़ नहीं करेंगे।"

"कैसे सम्बन्ध?" किरील ने रुखाई से कहा और उसका चेहरा पीला पड़ने लगा।

समिति के दोनों दूसरे सदस्यों ने एक बार फिर उसे घूरकर देखा।

"अब मैं यहां तो वो सब बता नहीं सकता," शुब्निकोव चेहरे पर भोली-भाली मुस्कान लाते हुए बुदबुदाया।

"और जो हो सो हो, निर्लज्ज भी हो।" इज़्वेकोव से रहा न गया। "क्या यह स्वीकार करते हो कि सरातोव में ही ज़ूबिन्स्की के साथ सफ़ेद गार्डों से जा मिलने की योजना बनाई थी?"

शुब्निकोव ने हाथ आगे बढ़ा दिये, मानो हमले से बचाव कर रहा है और क्षण भर तक इसी मुद्रा में रहा।

"नहीं, नहीं। कोई योजना नहीं थी! यहां मैंने जो बताया है, वह बिल्कुल सच है, सोलह आने सच! मैं हालात का शिकार हुआ हूं। धमकी में आकर मैंने यह काम किया, बस। खुद कभी भी ऐसा न करता। मैं अपनी बात का पक्का हूं। सोवियतों की नौकरी स्वीकार की है, तो ईमान से कर रहा हूं।"

फ़ौजी कमिसार ने खिन्न स्वर में कहा:

"मेरे विचार में मामला साफ़ है। अभियुक्त ने जान-बूझकर कार खराब की और उसने यह स्वीकार कर लिया है कि ऐसा अपने हाथों ही किया।"

"क्या मतलब अपने हाथों? मुझसे ज़बरदस्ती ऐसा करवाया गया! मैंने खुद यह नहीं किया। मैं तो धमकी का शिकार हूं। आप मुझे ज़ूबिन्स्की के बराबर कैसे रख सकते हैं? मैंने ऐसा क्या जुर्म किया है?"

"आपको फ़ैसले से यह पता चल जायेगा कि किस जुर्म की सज़ा दी जा रही है," किरील ने कहा और गार्ड की ओर देखा: "ले जाओ इसे।"

"फ़ैसले से कैसे?" मेज़ पर गिरते हुए रुंधे गले से शुब्निकोव चिल्लाया। "फ़ैसला सुना दिया, तो फिर जानने को क्या रह जायेगा? मैं अभी जानना चाहता हूं। ताकि साफ़ हो जाये कि दोष किसका है। अगर आप मुझे अपराधी करार दे रहे हैं, तो मैं अभी ज़ूबिन्स्की को यहां पेश करने की मांग करता हूं।"

"मेरे ख्याल में इसकी कोई ज़रूरत नहीं है न?" किरील ने समिति के दूसरे सदस्यों से कहा।

"ज़रूरत नहीं है?" शुब्निकोव सहसा पागलों की तरह चीखा। "हां, हां, शुब्निकोव को जीने की क्या ज़रूरत है? आपके लिए तो

गुब्निकोव की ज़िंदगी की कभी कोई जरूरत नहीं रही। लीज़ा के लिए मुझे माफ़ नहीं कर सकते! अब मैं आपके हत्थे चढ़ गया हूं न? बदला लेना चाहते हैं न?"

"चुप हो जाओ!" किरील ने शांत, दृढ़ स्वर में उसकी चीख-पुकार को काटते हुए कहा।

"हां, हां, मेरा मुंह बंद करोगे! देख नहीं सकते न मुझे! नहीं, तुम्हारी यह चाल नहीं चलेगी!"

गुब्निकोव ने झटके से कमीज़ का कालर फाड़ डाला। उसके होंठ फड़फड़ा रहे थे, नज़र भटक रही थी। सहसा उसने आंखें चढ़ा लीं, वह एकदम पीला पड़ गया और चीख मारकर धड़ाम से सीधा फ़र्श पर गिर पड़ा। उसका बदन ऐंठने लगा, सिर पीछे को लटक गया, सांस प्राय: रुक गई, बस रह-रहकर वह कराह उठता। उसकी जेब में से कागज़ निकलकर फ़र्श पर बिखर गये।

सब खड़े हो गये और चुपचाप उसकी ओर देखते रहे। फ़ौजी कमिसार ने इतमीनान से कागज़ में तम्बाकू लपेटकर सिगरेट बनाई, उसे सुलगाया और कश लेने लगा, बीच-बीच में तिरछी नज़र से गुब्निकोव के विकृत चेहरे की ओर देखता जाता।

"शायद इसे बाहर ताज़ी हवा में ले जाना चाहिये?" व्यथित इज़्वेकोव ने पूछा।

किसी ने जवाब नहीं दिया, और दो मिनट तक सब चुपचाप खड़े यह दौरा देखते रहे। फिर फ़ौजी कमिसार ने शांत स्वर में, पर कुछ घिन के साथ कहा:

"बहुत देखे हैं मैंने ऐसे। इससे भी ज़्यादा अच्छी तरह तमाशा करनेवाले हैं – डाक्टरों तक को पता नहीं चल पाता।"

वह खिड़की के पास चला गया, सिर थोड़ा पीछे को घुमाया और धुआं छोड़ते हुए बोला:

"उठो, गुब्निकोव। मामला साफ़ है।"

लेकिन गुब्निकोव और भी ज़ोर से हाथ-पैर फेंकने लगा।

"ले जाओ इसे ड्योढ़ी में," इज़्वेकोव ने हुक्म दिया। गार्ड ने चौखट पर अपनी बंदूक टिकाई और गुब्निकोव की बगलों में हाथ डालकर उसे कमरे से बाहर घसीट ले गया।

इसके बाद विचार-विमर्श आरम्भ हुआ। समिति के तीनों सदस्य इस बात पर सहमत थे कि शुब्निकोव का दोष सिद्ध हो गया है – उसी ने तोड़-फोड़ की असल कार्रवाई अपने हाथों की थी। जहां तक ज़ूबिन्स्की का सवाल था, तो अपराध में उसके हिस्सा लेने के बारे में इज़्वेकोव का यह परोक्ष सबूत ही था कि तोड़-फोड़ की कार्रवाई जिस वक्त हुई, उस वक्त ज़ूबिन्स्की शुब्निकोव से बात कर रहा था। और शुब्निकोव ने, हो सकता है, अपना दोष कम करने के लिए ही ज़ूबिन्स्की के खिलाफ़ गवाही दी हो। यह भी सम्भव था कि चूंकि ज़ूबिन्स्की ने शुब्निकोव का भेद खोल दिया था, इसलिए उससे बदला लेने के इरादे से शुब्निकोव ने उस पर झूठा आरोप लगाया हो। यद्यपि ज़ूबिन्स्की के दोषी होने में किसी को कोई संदेह नहीं था, तो भी उसके खिलाफ़ सबूत काफ़ी नहीं थे, और साथ ही उन्हें यह भी ख्याल आया कि ऐसे व्यक्ति ने और भी जाने क्या-क्या अपराध किये हों। अगर वे जल्दबाज़ी में मामले का फ़ैसला कर देंगे, तो इन अपराधों का पता न लग सकेगा। इसलिये यह निश्चय किया गया कि ज़ूबिन्स्की का मामला अलग रखा जाये और अगर अनुकूल परिस्थिति हो, तो कैदी को सरातोव पहुंचवा दिया जाये।

इस विचार-विमर्श में कोई मतभेद उत्पन्न नहीं हुआ, परन्तु जब सज़ा तय करने का सवाल आया, तो इज़्वेकोव ने सहसा यह कहा कि शेष दोनों सदस्य शुब्निकोव को जो भी सज़ा देने का सुझाव रखेंगे, उसे वह स्वीकार करेगा, लेकिन स्वयं फ़ैसले पर हस्ताक्षर नहीं करेगा।

किरील इस बात के लिए तैयार था कि उसके साथी हैरान होंगे। लेकिन जब वे यह सुनकर एकदम चुप रहे तो उसने नज़रें झुका लीं और उनकी भांति ही जड़वत खड़ा रहा। फिर इससे पहले कि वे उससे कुछ पूछते, मन मारकर उसने इतना और कहा:

"निजी कारणों से मुझे इन्कार करना पड़ रहा है।"

लेकिन इन शब्दों से तनावपूर्ण खामोशी भंग होने के बजाय और गहरी हो गई।

"आप दोनों ने शुब्निकोव को यह कहते सुना है कि मैं उससे निजी मामले पर बदला ले रहा हूं। मैं नहीं चाहता कि आपके या और किसी के भी मन में कभी यह संदेह उठे कि बात ऐसी ही है।"

"पर तुमने मुकदमे में हिस्सा तो लिया था," आखिर फ़ौजी कमिसार बोला।

"हां, मैं यह सोच ही नहीं सकता था कि न्याय करने के मेरे अधिकार पर संदेह किया जायेगा। अभियुक्त ने तो अदालत की निष्पक्षता को चुनौती दी है।"

"हुं," कार्यकारिणी का सदस्य हंस दिया। "तुम्हें इस चुनौती से क्या? प्रतिक्रांतिकारी तो सारी क्रांति को ही चुनौती देते हैं।"

"मुझे इस वात की चिंता नहीं कि सफ़ेद गार्ड हमारे अधिकार को मानते हैं या नहीं। लेकिन क्रांतिकारी को इस संदेह से परे होना चाहिए कि वह भले ही परोक्ष रूप से अपने निजी स्वार्थ के लिए कुछ करता है।"

"तुम्हारा क्या कोई इश्क-विश्क का झगड़ा है?" फ़ौजी कमिसार ने सपाट सवाल किया।

किरील के सांवले चेहरे का जब रंग उड़ता था, वह एकदम पीला पड़ जाता था, और अब तो मानो उसमें हरा सा पुट आ गया। उसके आंखें दहक उठीं।

"हां, यही वात है," एक-एक अक्षर पर ज़ोर देते हुए उसने कहा।

"वीवी भगा ले गया क्या? लीज़ा का नाम ले रहा था।"

"यह फ़िज़ूल वात है।"

"तुम क्या मौत की सज़ा के खिलाफ़ हो?" कार्यकारिणी के सदस्य ने ज़ोर से कहा।

किरील खिड़की के पास चला गया। दोनों साथियों ने उसकी ओर सिर घुमाया और सवने देखा कि वाहर गार्ड शुब्निकोव को गली के पार लिये जा रहा था। वह फुर्ती से कदम भर रहा था।

"वह देखो, जिसकी तुम वकालत कर रहे हो, वह भला-चंगा चला जा रहा है!" फ़ौजी कमिसार ने कहा।

किरील तेज़ी से उसकी ओर घूम गया।

"मैं उसकी रक्षा नहीं कर रहा – उसके लांछनों से हम सव की रक्षा कर रहा हूं!"

"तुम अपने हाथ नहीं रंगना चाहते?"

"यह कोई गंदा काम है क्या? पर वह कमीना अपनी उल्टी-सीधी

बातों से इस पर लांछन लगाना चाहता है। और मुझे कोई हक नहीं कि मैं ऐसा होने दूं।"

"मतलब, तुम कन्नी काट रहे हो," कार्यकारिणी के सदस्य ने कुछ चुभते हुए से अंदाज़ में कहा। "उसके भड़कावे में आ रहे हो।"

किरील दरवाज़े की ओर बढ़ गया और उसकी मूठ पकड़कर रुका।

"अगर आप चाहते हैं, तो पार्टी मेरे इस व्यवहार पर गौर कर सकती है... क्या मैं मौत की सज़ा के खिलाफ़ हूं? नहीं। मेरे ख्याल में और कोई सज़ा नहीं दी जा सकती। पर शुब्निकोव को सज़ा देने के फ़ैसले पर हस्ताक्षर मैं नहीं करूंगा।"

उसने ठोकर मारकर दरवाज़ा खोला और बाहर चला गया।

इधर-उधर देखने पर उसे ओसारे पर बैठे अरदली के अलावा कम्पनी का कोई आदमी नज़र नहीं आया – अहाता, गली, गांव के बाहर के टीले सब कुछ सूना था। उसने गली पार की, दो-तीन घर आगे बढ़कर उसने अपने आप को एक बाग के सामने पाया, जिसकी बाड़ टूटी हुई थी। वह बाग में घुस गया।

बाग उजड़ा हुआ था। गड्ढों में कंटीला झाड़-झंखाड़ उग आया था, और उनके बीच सेब के पेड़ों के ठूंठ दिखाई दे रहे थे, जो कभी फलों से लदी टहनियों के बोझ से तड़क गये थे; पेड़ों की कतारों के बीच बेरियों की कांटेदार झाड़ियां थीं, जिन पर छोटे-छोटे सफ़ेद फूलों वाली बेलें चढ़ी हुई थीं।

किरील एक टूटे हुए सेब के साल-दो साल बड़े पेड़ के सामने रुक गया। छाती तक ऊंचे टूटे हुए तने से एक बड़ी टहनी निकली हुई थी, जो बिल्कुल आदमी की बांह की तरह बगल से ऊपर को उठी हुई थी, और उस पर खूब सारी पत्तियां उग रही थीं। तने के एक भाग पर छाल बिल्कुल उतरी हुई थी, नीचे की सूखी लकड़ी उभरी हुई थी, दूसरे भाग पर छाल ने अपने सिरे अंदर को मोड़ लिये थे, मानो तने के अभी तक हरे-भरे भाग को अच्छी तरह छिपाये रखने का भरसक जतन कर रही हो।

किरील ने गांठदार तने पर हाथ रखा। उसे लग रहा था कि उजड़े बाग से मन पर पड़ रही छापों पर ही उसका सारा ध्यान केंद्रित है। लेकिन इन छापों के पीछे विचारों का मंथन निरंतर जारी था।

वह सोच रहा था कि कहीं क्षणिक दुर्बलता का शिकार तो नहीं हुआ, हो सकता है उसके साथियों का कहना ठीक हो कि उसने अपना कर्तव्य निभाने से कन्नी काटी है। उसे भी तो अपने इस बर्ताव के लिए किसी के सम्मुख जवाब देना होगा। कोई उसका भी न्याय करेगा, जैसे आज वह शुब्निकोव का न्याय कर रहा था।

उसके स्मृति-पटल पर आनोच्का की उस पर लगी नज़र आश्चर्यजनक स्पष्टता के साथ उभर आई। बेशक, वह शायद यह कहेगी नहीं, पर सोचेगी जरूर कि किरील को लीज़ा के पति से निजी तौर पर घृणा थी। शायद कभी लीज़ा से ही मुलाकात हो जाये। और वह भी शायद किरील को कहेगी तो नही, पर मन ही मन सोचेगी: यही मेरे बेटे के बाप की मौत का कारण बना था। किरील की मां भी शायद चुप रहेगी, पर नज़रें चुरा लेगी और सोचेगी: अच्छा होता अगर किरील ने ऐसी अफ़वाहें फैलने का मौका न दिया होता कि वह अपने निजी कारणों से प्रेरित होकर कुछ कर सकता था। और क्या उसके साथ जिन साथियों ने शुब्निकोव के मामले की जांच-पड़ताल की थी, उन्हें कुछ ऐसा याद नही रह जायेगा कि इस मामले से इज़्वेकोव का कोई अंतरंग मसला भी जुड़ा हुआ था? इश्क की बात, जैसा कि फ़ौजी कमिसार ने कहा था, यानी ऐसी बात जो दूसरों की नज़रों में नहीं आनी चाहिये, छिपी होनी चाहिए, कोई गुप्त बात।

पर क्या उसका फ़ैसले पर हस्ताक्षर न करना दिखावे के अलावा कुछ मानी भी रखता है? शुब्निकोव के अपराध से ही उसकी सज़ा तय हो गई है। किरील का यह अडिग विश्वास है कि शुब्निकोव के लिए मौत की सज़ा सही है। इस बात से सचमुच कुछ फ़र्क पड़ता है कि नहीं कि वह हस्ताक्षर नहीं करेगा? हां, बहुत फ़र्क पड़ता है। फ़र्क यह पड़ता है कि सज़ा के फ़ैसले पर हस्ताक्षर करने से इन्कार करके किरील इस लांछन को झूठा साबित कर देता है कि शुब्निकोव उसका शिकार है। इस तरह उस झूठ का पर्दाफ़ाश होता है, जो क्रांति के सेनानी पर, यानी स्वयं क्रांति पर चोट करना चाहता है। नहीं, नहीं, किरील ने सही फ़ैसला किया है!

सहसा एक नये विचार से वह स्तब्ध हो गया: अगर शुब्निकोव ज़िंदा बच गया, तो? यह भी तो हो सकता है कि उसे मौत की सज़ा

न सुनाई जाये? क्या तब शुब्निकोव खुश नहीं होगा कि उसके उकसावे का तीर निशाने पर बैठा?

किरील ने टूटा तना कसकर मुट्ठी में भींच लिया। तने के स्पर्श की अनुभूति ने उसे इस संसार में लौटाया। उसने फिर से लहलहाती टहनी देखी। यह देखकर बहुत अजीब लगता था कि कैसे टूटा हुआ तना जीवन की इतनी तीव्र लालसा से यह टहनी आकाश की ओर बढ़ा रहा था। वृक्ष का अंत निश्चित था, परन्तु उतनी ही अधिक उत्कट कामना के साथ वह अपने अस्तित्व का पल्ला पकड़े हुए था और उसकी कुरूप छाल का अंतिम टुकड़ा असम्भव सी प्रतीत होती शक्ति के साथ एकमात्र हरी-भरी टहनी को पोस रहा था। क्या यह टहनी बची रहेगी? नहीं। और कुछ समय तक वह पेड़ का शेष रस चूसती हुई नई कोंपलें देती रहेगी, जब तक कि तना बिल्कुल सूख नहीं जाता, लकड़ी का टुकड़ा नहीं बन जाता। फिर उसकी मुरझाई पत्तियां झड़ जायेंगी और वह कभी हरी-भरी नहीं होगी। ऐसे मृतप्राय बाग में अगर फिर से प्राण फूंकने ही हैं, तो सबसे पहले पुराने ठूंठों और खुत्थियों को उखाड़ फेंकना होगा, जमीन को नये सिरे से जोतना होगा।

किरील के मुंह से निकला:

"नहीं, नहीं, मौत की सज़ा ही सुनाई जायेगी..."

सहसा उसे गोली चलने की आवाज़ सुनाई दी।

उसने इधर-उधर नज़र दौड़ाई। बाग के पासवाले अहाते के पिछवाड़ों में उसे कोठार दिखाई दिया, उसके सामने बंदूक उठाये खड़ा सैनिक हड़बड़ाकर कोठार के दरवाज़े की ओर लपका और कुंडा खोलने लगा। उसी क्षण किरील को ख्याल आया कि कैदियों को कोठार में रखा गया है—शुब्निकोव को गार्ड इसी दिशा में ले गया था। किरील मदद करने दौड़ा।

यह लट्ठों की बनी मज़बूत इमारत थी, जिसमें छत के पास झरोखे बने हुए थे। ऐसे छोटे-छोटे, सुघड़ कोठार किसान मवेशियों के छप्पर के पास ही या अहाते के पिछवाड़े में बनाते हैं, और इनमें अनाज रखते हैं।

उस दिन सुबह ही ज़ूबिन्स्की और शुब्निकोव को यहां रखा गया था, और तब गिरफ़्तारी के बाद पहली बार उन्हें खुलकर बातें करने

का मौका मिला था। वोल्स्क से यहां तक मार्च करते समय और पड़ावों के वक्त भी उनके आस-पास काफ़ी लोग होते थे।

जवाबतलबी से पहले शुरू में तो वे खिसियाये-खिसियाये से बातचीत कर रहे थे। शुब्निकोव जूबिन्स्की से कह रहा था कि उसकी जल्दबाजी ने सारा काम बिगाड़ा है, और जूबिन्स्की उसे दोषी ठहरा रहा था, क्योंकि उसने बहुत ही भोंडे ढंग से इंजन खराब किया था, जैसे कि उसके अलावा किसी को इंजन के बारे में कुछ पता ही न हो। पर यह समझते हुए कि एक दूसरे को उलाहना देकर वे अपनी दुखद स्थिति को बदल नहीं सकते, दोनों शांत हो गये और मिलकर सोचने लगे कि कैसे भाग निकलने की कोशिश की जाये। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उन्हें उस क्षण का इंतज़ार करना चाहिए जब कम्पनी काम में लगेगी, और अभी जब तक शांति है, खामख्वाह अपनी किस्मत आजमाने में कोई तुक नहीं। फिर बातचीत में कुछ शायराना पुट आ गया। शुब्निकोव पुराने सुनहरे दिनों को याद करने लगा। बखार में मिले गेहूं के कुछ दाने चबाते हुए वह बड़े जोश में कह रहा था:

"इस कमबख्त आपसी लड़ाई ने कितनी मेधाएं डुबो दी हैं! मुझे ही लो! कैसी मेधा है! ओह, कैसी मेधा है! पर इससे होता क्या है जबकि हमारे इन ऐतिहासिक दिनों में सारी मेधा इसी काम में लगती है कि कैसे जेल से बचा जाये?"

"फिर भी बच नहीं पाये," जूबिन्स्की ने आग में घी डाला।

"तो कसूर किसका है? तुम्हारी ही मेहरबानी है!"

फिर से वे झगड़ने लगे।

अचानक एक गार्ड आया और जूबिन्स्की को न जाने कहां ले गया। वह बस शुब्निकोव के कान में इतना कह पाया: "कुछ भी हो मानना नहीं!" लौटने पर उसने बताया कि क्रांतिकारी समिति मुकदमा चला रही है, और यह कि वह हर बात से इन्कार करता रहा है। "संभलके रहना," उसने शुब्निकोव को सावधान किया।

जवाबतलबी के बाद उन्हें न यह डर था कि उन्हें सतर्क रहना चाहिए और न ही यह आशा कि वे अभी भी एक दूसरे के काम आ सकते हैं। वे अपनी हताशा को गालियां बककर दबाने की कोशिश कर रहे थे। अगर वे गाली-गलौज न करते, तो भय से थरथर कांपते।

अपने भय को उन्होंने क्रोध का रूप दे दिया। शुब्निकोव बार-बार यह कहे जा रहा था कि ज़ूबिन्स्की ने उसके साथ दगा की है।

"क्या रट लगा रखी है? मैंने सच बात कही थी कि मुझे कारों के बारे में कुछ पता नहीं। और कुछ नहीं कहा मैंने।"

"नहीं, तूने झूठ बोला कि तू कारों की दौड़ में सबसे बढ़कर है! और अगर तू सचमुच ऐसा है, तो इसका मतलब तूने ही गाड़ी खराब की।"

"उन्होंने तुझे उल्लू बनाया है, बेवकूफ़!"

"बहका मत मुझे! रोटर कौन जेब में ले गया था?"

"मुझे क्या पता तूने अपनी जेबों में क्या ठूंस रखा है।"

"पर मुझे पता है कि तूने अपनी जेब में क्या रखा था! और यह भी जान ले कि इज़्वेकोव को भी यह पता है!"

"तू क्या उगल आया?" सहसा ज़ूबिन्स्की ने विनम्र बनते हुए पूछा।

"तेरा क्या ख्याल है मैं तेरी खातिर अपनी जान दे दूंगा? बुद्धू मिल गया न तुझे, यह ले, चख ले!"

"तो क्या मैं तेरी खातिर जान दूंगा?"

"तू अपने किये का फल पायेगा!"

"अच्छा, श्रीमान जी, आपने अभी मेरी जेबें अच्छी तरह नहीं देखी हैं।"

"बच नहीं पायेगा! जैसे तूने मुझे डुबोया, वैसे ही मैंने भी! देखो तो, डुबोने चला था! साले मैं तुझे खुद पहले डुबो दूंगा। अब सब पता चल गया है कि मैंने तेरी धमकी में आकर ऐसा किया। और तू गद्दार है।"

"तू सोचता है मेरी जान की कीमत पर अपनी जान बचा लेगा?" ज़ूबिन्स्की ने कहा। "तो जा फिर जहन्नुम में, कुत्ते!"

कोठार के धुंधलके में शुब्निकोव ने देखा कि ज़ूबिन्स्की ने कोट के अंदर हाथ डाला और तुरन्त ही बाहर निकाल लिया। शुब्निकोव बस मुंह ही खोल पाया।

एक ही वार में ज़ूबिन्स्की ने बड़ी सहजता से उसे मार डाला और झरोखे से आ रही रोशनी की ओर दो नपे-तुले क़दम बढ़ाये।

अपनी वर्दी पर नज़र डालकर उसने बायें हाथ से धूल झाड़ी, रिवाल्वर वाला दायां हाथ छाती तक उठाया और यह प्रतीक्षा करने लगा कि कब दरवाज़ा खुलता है: बाहर सिपाही कुंडा खोलने में लगा हुआ था।

कोठार में जैसे ही तेज़ रोशनी हुई, ज़ूबिन्स्की ने गोली दाग दी, पर उसी क्षण सैनिक ने बंदूक का कुंदा उसकी छाती पर मारकर उसे गिरा दिया और धर दबोचा।

तभी किरील दौड़ा आया और ज़ूबिन्स्की के ऐंठे हाथ में से ठंडा, चपटा रिवाल्वर छीनने लगा। एक बार और गोली चली, फिर रिवाल्वर इज़्वेकोव के हाथ में आ गया। ज़ूबिन्स्की को औंधा कर दिया गया और उसके हाथ पीठ पीछे मरोड़ दिये गये। सैनिक ने किरील से कहा कि कोठार के बाहर ताज़ी उतारी छाल की पट्टियां रखी हुई हैं। लिंडन की छाल की लंबी पट्टी से ज़ूबिन्स्की के हाथ बांध दिये।

शुब्निकोव चित पड़ा हुआ था, उसकी टांगें फैली हुई थीं। सिर में हुआ घातक घाव प्रायः रक्तहीन था।

प्रहरी सैनिक का कंधा गोली से छिल गया था, उसकी कमीज़ का बाज़ू लाल हो गया था। किरील फ़र्श पर गिरी बंदूक उठाना चाहता था, पर सैनिक ने उसे परे हटा दिया।

"इसकी इजाज़त नहीं है। कामरेड कमिसार, आप कह दीजिए कि मेरी जगह किसी और को भेज दें। तब तक मैं अपनी चौकी से नहीं हट सकता।"

किरील अकेला ज़ूबिन्स्की को झोंपड़ी में ले गया।

अब जाकर उन्हें यह ख्याल आया कि कैदियों की अच्छी तरह तलाशी नहीं ली गई थी: ज़ूबिन्स्की के वर्दी के कोट में अंदर बगल में जेब थी, जिसमें उसने रिवाल्वर छिपा रखा था। इस घटना की छानबीन में पंद्रह मिनट से ज़्यादा नहीं लगे। क्रांतिकारी समिति ने यह पाया कि मोर्चे पर ज़ूबिन्स्की को गिरफ़्तार रखना खतरनाक है। उसके अपराधों को देखते हुए उसे गोली से उड़ा देने की सज़ा सुनाई गई।

कम्पनी के क्लर्क से स्याही ली गई, पर कलम में मैल फंसी हुई थी। किरील ने बड़े जतन से उसे साफ़ किया।

उसने सबसे पहले अपनी सुस्पष्ट लिखाई में सज़ा के फ़ैसले पर हस्ताक्षर किये।

२६

अगले दिन सुबह इज़्वेकोव और दीबिच घोड़ों पर सवार होकर यह देखने निकले कि कम्पनी और टुकड़ी कहां-कहां तैनात हैं।

दीबिच ने यहां के भूभाग का लाभ उठाते हुए दुश्मन को चारों ओर से घेरने की योजना बनाई थी और क्रांतिकारी समिति ने उसे स्वीकार कर लिया था। ख़्वालीन्स्क की टुकड़ी अपनी उसी जगह पर ही रही थी, जहां कम्पनी के यहां पहुंचने के समय वह थी, हां, वह उत्तरी टीले की ढलान पर थोड़ी नीचे उतर आयी थी, ताकि घने भोज वृक्षों वाले कब्रिस्तान की आड़ ले सके। प्रमुख स्थानों पर कम्पनी के सिपाही तैनात किये गये थे। उसकी कुछ पलटनें रेप्योव्का से पूर्व की ओर बड़ी सड़क के पीछे तैनात थीं और उन्हें सीधे हमला करना था। शेष पलटनें दक्षिणी टीले पर फैली हुई थीं। यहां काफ़ी झाड़ियां उग रही थीं, जो पश्चिम में जंगल से जा मिलती थीं।

पहाड़ी पर फैले इस जंगल में अगल-बगल से पहुंचना कठिन था, क्योंकि जंगल बहुत घना था और उसमें पगडंडियां नहीं थीं। जंगल का एकमात्र रास्ता सीधे रेप्योव्का से जाता था और वह विद्रोहियों के हाथों में था। सुबह पौ फटने के समय टोहियों ने दुश्मन को इस सड़क पर जाते देखा था: गिरोह बगीचों से होता हुआ पीछे हट गया था और जंगल के किनारे ऊंचाई पर डट गया था, रेप्योव्का में दुश्मन आड़ के तौर पर थोड़े से लोग ही रहने दिये थे।

इस तरह यह पता चला कि एक तो पश्चिम में प्राकृतिक बाधा के कारण गिरोह को चारों ओर से घेरा नहीं जा सकता, दूसरे, दुश्मन या तो जंगल में टक्कर लेना चाहता है या जंगल के अंदर तितर-बितर हो जाना चाहता है। इसलिए इज़्वेकोव ने यह सुझाव दिया कि अगल-बगल की टुकड़ियां अधिक मज़बूत कर दी जायें, ताकि जंगल में दुश्मन का पीछा किया जा सके। दीबिच इस सुझाव से सहमत था और वह बड़ी सड़क के पार पूर्वी लाइन से कुछ पलटनों को वहां से हटाने चला गया।

किरील दक्षिणी टीले पर ही रह गया, घोड़े से उतरकर वह झुरमुटों से होता हुआ यहां तैनात सैनिकों की लाइन के बगल-बगल चलने लगा।

सुबह के अलावों का धुआं उड़ गया था और सैनिक कहीं अकेले और कहीं तीन-तीन चार-चार की टोलियों में बैठे अपने-अपने कामों में लगे हुए थे। किरील यह देखकर हैरान हुआ कि ये दल कितने छोटे-छोटे लग रहे थे और दुश्मन को खदेड़ने के लिए उन्होंने जो लाइन बनाई थी, उसमें सैनिकों की कड़ियां कितनी विरली थीं। कम्पनी जब सड़क पर मार्च कर रही थी तो वह खासी बड़ी लगती थी।

कुछ झाड़ियों के पीछे से बुझते अलाव की गर्माहट का आभास हुआ, और उसी क्षण किरील को चहकती आवाज़ सुनाई दी:

"मेरे पास एक कुत्ता था—पूरा अकल का खज़ाना। मैं उसके साथ खरगोशों का शिकार करने जाता था।"

"ठहर, ठहर, कौन से पत्ते से काट रहा है?"—रोबदार आवाज़ सुनाई दी।

"तुरुप से, और किससे?"

"बहका मत! तुरुप हुकुम है, चिड़ी नहीं।"

"अच्छा, हुकुम है!" चहकते सिपाही ने कहा। "हुकुम तुम बजाओ। हमारे पास हुकुम नही है!"

किरील ने आगे कदम बढ़ाया और पत्तियों के पीछे उसे अलाव से थोड़ी दूर दो सिपाही पलथी मारे बैठे दिखे। वे 'भोंदू' खेल खेल रहे थे, खंदक खोदने का बेलचा उनके लिए मेज़ का काम दे रहा था। वह फ़ौरन ही दोनो को पहचान गया।

वोल्स्क से मार्च के पहले दिन ही किरील का ध्यान उन दोनों की ओर गया था, और दीविच ने उसे इन अलग-अलग उम्र के सिपाहियों के बारे में बताया था, जिनमें हमउम्रों से भी ज़्यादा गहरी दोस्ती थी।

इपात इपात्येव और नीकोन कर्नाऊखोव विश्व युद्ध के दिनों में एक ही कम्पनी में थे और एक ही लड़ाई में दोनों घायल हुए। इपात को अस्पताल से पहले छुट्टी मिल गई और वह फिर से मोर्चे पर पहुंच गया। नीकोन अक्तूबर क्रांति के समय मास्को में था, उसने गांव लौटने से पहले कुछ पैसे कमाने की सोची और फेरी लगाने लगा। बेचारा दिन-रात फेरी लगाता रहता, पर पैसे फिर भी हाथ न आते, वह चीजों के दाम इतनी जल्दी नही बढ़ा पाता था, जितनी जल्दी

नोटों की कीमत घट रही थी। फिर भी वह शहर में दिन काटे जा रहा था। एक दिन सुखारेव्का बाजार में गश्ती दल ने घेरा डाला और नीकोन भी आवारागर्दी के लिए पकड़ा गया। इस गश्ती दल में इपात भी था, पुरानी दोस्ती के नाते उसने नीकोन को छुड़वा दिया। शीघ्र ही इपात को चेक कोर के खिलाफ़ लड़ने भेज दिया गया, वहां उसकी आंख को चोट पहुंची थी, इलाज के लिए वह मास्को आया, फ़ौज से उसे सेवामुक्त कर दिया गया और नीकोन ने उसे अपने पास ठहराया। इसके बाद से वे कभी जुदा नहीं हुए।

दोनों सरातोव प्रदेश के थे, पर अलग-अलग ज़िलों के। इपात के गांव पर सफ़ेद गार्डों का कब्ज़ा था और नीकोन के गांव में सोवियत सत्ता स्थापित हो चुकी थी। सरातोव पहुंचने पर इपात को पता चला कि वह घर नहीं जा सकता और उसने नीकोन को इस बात पर राज़ी कर लिया कि वे लाल सेना में भरती हो जायें। नीकोन मन मारकर ही तैयार हुआ – घुमक्कड़ ज़िंदगी से वह आज़िज़ आ गया था और जल्दी से जल्दी घर लौटना चाहता था। पर इपात कायल कराने के लिए इतना आतुर रहता था कि नीकोन सदा न-न करते हुए भी उसकी बात मान जाया करता था।

मार्च के दौरान इपात और नीकोन को देखते हुए किरील ने दीबिच को यह याद दिलाया कि तोलस्तोय ने सैनिकों को कुछ लाक्षणिक किस्मों में विभाजित किया था और इस विभाजन से वह कभी बहुत प्रभावित हुआ था। किरील और दीबिच ने नीकोन को आज्ञाकारी किस्म का माना और इपात को नेतृत्वकारी किस्म का। परन्तु रूसी सैनिकों के पुराने लक्षणों के साथ-साथ नीकोन और इपात दोनों में ही प्रत्यक्षतः कुछ नये लक्षण भी आ गये थे। नीकोन जोड़-तोड़कर स्वप्न देखता था और जैसी परिस्थितियां होतीं, उन्हें स्वीकार कर लेता ताकि अपना स्वप्न बनाये रखे और किसी न किसी दिन उसे साकार कर ले। इपात में अपने युग के विशिष्ट नेतृत्वकारी लक्षण थे – वह क्रांतिकारी था, पक्का लाल गार्डी, जिसका आदर्श मज़दूर सैनिक था। उसने लड़ते हुए कार्पेथीय पर्वत पार किये, ओर्शा तक पीछे हटा, उक्रइना को जर्मनों से मुक्त करने में भाग लिया और विद्रोही चेकों का पीछा किया – वह युद्ध को पूरी गहराई में समझने को उतावला था और

उसे ऐसी बाधा समझता था, जिस पर उसे झुंझलाहट होती थी, पर जिसे पार करना लाज़िमी था।

पत्तियों के पीछे से उन्हें ताश खेलते देखकर किरील को याद आया कि दीविच ने रतीश्चेवो में इपात से पहली मुलाकात का क्या किस्सा सुनाया था, साथ ही उसे पास्तुखोव के बारे में हुई बातचीत भी याद हो आई।

"वह भी ख़्वालीन्स्क का है," दीविच ने पास्तुखोव के बारे में कहा था।

"पर उसने ख़्वालीन्स्क तो नहीं जाना चाहा," किरील ने कहा था। "इपात ने उसकी असलियत समझ ली थी। पता है, पास्तुखोव सरातोव से सफ़ेद गार्डों के पास भाग गया?"

"मुझे पता है, वह चला गया..."

दीविच ने अपनी बात पूरी किये बिना उदासी भरी उसांस छोड़ी थी:

"पत्नी उसकी कितनी सुंदर है! घर लौटकर मैं भी अपने लिए आस्या ढूंढ लूंगा..."

उसने लजाते हुए तिरछी नजरों से इज़्वेकोव की ओर देखा था और फिर घोड़े को पीछे मोड़कर दौड़ा ले गया था – पीछे छूट रही रसद की घोड़ागाड़ियों को जल्दी चलने को कहने।

इस बीच हाथ नचा-नचाकर बेलचे पर पत्ते फेंकते हुए खिलाड़ी बातें किये जा रहे थे।

"इत्ता रईस था वो, भाई मेरे," चुटकी में दबाये पत्तों को पंखे की तरह खोलते हुए इपात कह रहा था, "इत्ता रईस कि हम्माम में जाकर बीयर से नहाता था। हुं..."

"अरे, क्यूं बेगम से बादशाह को काटे है?"

"नहीं भई, यह तो गुलाम को काटा है... और एक बार तो त्योहार के दिन रम से नहाया... पी है कभी रम? नहीं? अरे स्पिरिट से तिगुनी तेज़ होती है... समझा? सो भेजा नौकर को, जा हम्माम में रम ले आ... ले, फिर तू भोंदू का भोंदू! कल का मिलाके सात बार भोंदू बन गया।"

"कल की गिनो, तो तू भी ख़ास अकलमंद नहीं," नीकोन ने कहा और पत्ते फेंककर ज़मीन पर कोहनी टेक ली।

"और मैं साफ़ हिसाब कर रहा हूं। सात बार तू भोंदू रहा। कमज़ोर है तेरी समझ, जभी तो मास्को में तेरा दिवाला निकल गया था।"

"अरे, तो तेरी समझ कौन सी बहुत बड़ी है!"

इपात ने टांगें सीधी कीं, पीठ के बल लेट गया और आसमान की ओर ताकते हुए बोला:

"मेरी समझ में तो बस दो ही बातें हैं। पहली बात कैसे चोखा शिकार हो। दूसरी–कैसे दुनिया को बदलके ठीक किया जाये।"

"हां, हां, तू ही बदलेगा!"

"हम बदलेंगे।"

"वो कैसे?"

"वो ऐसे। जो कुछ बंटता नहीं–वह सब का हो। अब जैसे घोड़ा है, घोड़े को बांटा नहीं जा सकता, सो वो तेरा भी हो, और मेरा भी, और किसी दूसरे का भी। ताकि हर कोई उससे खेत जोते, काम ले। यही समझ की बात है।"

"तेरे पास घोड़ा है?"

"नहीं है।"

"तभी तो," नीकोन ने आहत स्वर में कहा और खुद भी लेट गया। थोड़ी देर सोचकर उसने पूछा:

"और जो चीज़ बांटी जा सकती है?"

"वह सबको बराबर-बराबर मिले।"

नीकोन फिर चुप हो गया।

"मैंने शहर में देखा है यह सब," उसके दिमाग में मानो कोई नया विचार आया, "सब समझता हूं कहां से यह हवा चली है। सब काट-छांट दो, यह काट दो, वो बांट दो!"

"तू ज़िंदा कैसे बच गया?" सहसा इपात ने गुस्से में पूछा।

"चौकस रहा, इसीलिए बच गया। चौकस न रहता, तो बस दो मिनट में काम तमाम हो जाता! शहर में तो गांव वालों का कचूमर निकाला जाता है।"

"अरे, गांव वाले शहर के बिना क्या करेंगे?"

"और शहर वाले गांव के बिना?"

"फाल के लिए लोहा चाहिए? लोहार शहर गया और ले आया। पाटे के लिए दांते चाहिए? फिर शहर जाओ। पहिये पर हाल चढ़ाना है? चलो शहर।"

"यह तो व्योपार की बात है। पर पहिया कौन चलायेगा? यही है असल बात!" नीकोन ने चालाकी से कहा।

"गांव वालों मे रजामंदी है – बस मिलकर, हाथ में हाथ डालके पहिया चलाया और लो पूरा पहिया घूम गया!"

"हुं, मिलकर!" नीकोन ने व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहा। "घर में या तो मर्द का राज होता है या औरत का। कहता है मिलकर!"

किरील ने झाड़ियों के पीछे से निकलकर उन्हें नमस्ते की। दोनों उठकर बैठ गये। इपात ने खुश होते हुए कहा:

"कामरेड कमिसार।"

"आइये, बैठिये," नीकोन ने सकुचाते हुए कहा और ज़मीन पर बिछे अपने ओवरकोट का दामन खींचकर ताश छिपाने की कोशिश करने लगा।

"हमारी बहस हो रही है," इपात जोश से बताने लगा।

"छोड़ भी न," नीकोन ने हाथ झटका, "बड़ी जरूरत है हमारी बक-बक की!"

"तू ठहर भी। चूंकि आजकल सर्वहारा और ग्रामीण गरीबों में सहबंध है," इपात फर्राटे से उस भाषा में बोलने लगा, जो उसके विचार में कमिसार से बातचीत के लिए अधिक उपयुक्त थी, "तो नीकोन को संदेह हो रहा है कि शासन की बागडोर किसके हाथ में होगी? यह कहता है कि घर में या तो मरद का राज होगा, या औरत का, मिलकर काम नहीं हो सकता।"

"एक पुरानी कहावत है," किरील ने जवाब दिया। "पनचक्की पानी से ही चलती है, पानी से ही टूटती है।"

"इसका क्या मतलब?" नीकोन ने झिझकते हुए पूछा।

"यही तो मतलब है!" इपात तुरंत ही खुशी से चिल्लाया। "जनता है न... वही सारा काम चलाती है। पर तुम उसे ठीक तरह से पहिये की ओर बढ़ाओ। गलत दिशा में बढ़ा दिया, तो बस सारा बांध ही बह जायेगा।"

"तू क्यों बीच में टांग अड़ाता है? कामरेड कमिसार को समझाने दे।"

"इपात ठीक कहता है," किरील ने कहा। "ठीक दिशा में ले जाने के लिए ऐसी शक्ति होनी चाहिए, जिसमें ऐसा करने की बुद्धि हो। ऐसी शक्ति मज़दूरों के हाथ में है।"

"देखा?" मानो अपनी जीत पर खुश होते हुए इपात फिर से बीच में बोल उठा। "इन सफ़ेद गार्डों को ही लो। ये किसानों से मदद मांगने जाते हैं, पर राज ज़मींदारों का कराना चाहते हैं। लोगों को गलत दिशा में ले जाते हैं, इसीलिए उनकी सारी बाज़ी उल्टी पड़ रही है।"

वह गर्व से इज़्वेकोव की ओर देखने लगा, उसके प्रोत्साहन की प्रतीक्षा में। किरील ने सिर हिलाया। तब प्रोत्साहन पाकर उसने विश्वासपात्र बन गये व्यक्ति की भांति एक व्यक्तिगत प्रश्न पूछा:

"आप तो पढ़े-लिखे लगते हैं। हमें यह कौतूहल हो रहा है कि आप जो मेहनतकशों की क्रांति में भाग लेने लगे, इसके पीछे आपका कोई खास इरादा था, या कि यों ही?"

किरील जवाब नहीं दे पाया।

निचाई में बंदूक से गोली दागी गई और जंगल में उसकी आवाज़ कई बार प्रतिध्वनित हुई। फिर रेप्योव्का के बाहरी भाग से टीलों पर और बड़ी सड़क पर तेज़ी से गोलियां दागी गईं। एक गोली पास ही सन्न से पत्तियों को चीरती हुई निकल गई।

नीकोन उछलकर खड़ा हो गया, एक कदम पीछे हटा, पर फिर रुककर बोला:

"कामरेड कमिसार, आप पेड़ के पीछे हो जाइये। यहां खड़े हैं, तो दूर से दिखाई देता है।"

इपात ने हौले से ओवरकोट का दामन समेटा, घास पर पड़े पत्ते उठाये और मुड़े-तुड़े पत्तों की जितनी अच्छी गड्डी बन सकती थी, बनाकर जेब में रख ली और ऊपर से बटन बंद कर दिया।

"हमारी लाइन का पता लगाना चाहते हैं," सहसा वह बड़े-बूढ़ों के से अंदाज़ में बोला। "और ऊपर से धोखा भी दे रहे हैं, जैसे कि गांव में जमे हुए हैं और खुद वहां पर हैं।"

उसने अंगूठा घुमाकर जंगल के किनारे की ओर इशारा किया।

"तुम्हारी ओर की कमान खुद कम्पनी कमांडर के हाथ में है," किरील ने कहा, "मेरी जगह उधर बड़ी सड़क के पार है। आज हमें इस गिरोह का सफ़ाया कर ही देना है।"

"आप जब कहेंगे, तभी सफ़ाया कर देंगे," इपात ने फिर से अपनी चहकती आवाज में कहा।

वह किरील को घोड़े तक छोड़ने गया, आगे बढ़कर रकाब पकड़ ली और घोड़े पर बैठने मे किरील की मदद की।

रास्ते मे किरील को दीविच मिला, वह बड़ी सडक से सैनिकों के एक दल को इधर ला रहा था। दीविच उमंग में दूर से ही चिल्लाया:

"दुश्मन परेशान हो रहे है! खामोशी नही सही जा रही उनसे। कोई बात नही, अभी बोलेंगे हम!"

पल भर को थमकर किरील और दीविच ने अपनी घड़ी मिलाई, फिर कमांडर ने हाथ आगे बढ़ाया, कमिसार ने उसकी खुली हथेली पर जोर से हाथ मारा और मुस्कराते हुए दोनों अपने-अपने रास्ते पर बढ़ गये।

रात को ही सुरमई बादल घिरने लगे थे और अब सारे आसमान पर छा गये थे। बूंदाबांदी होने लगी थी। हवा बिल्कुल नहीं चल रही थी और झीनी-झीनी बारिश के कारण क्षितिज से क्षितिज तक कुहासा सा छा गया था, इससे चारों ओर का दृश्य देखते-देखते ही बदलने लगा था। हवा मे ताज़गी आ गई थी और सड़क के पुश्ते की आड़ मे लेटे सैनिक बारिश से बचने के लिए अपने ओवरकोट खोलने लगे थे।

किरील ने अपनी लाइन का चक्कर लगाया और फिर बीचोंबीच जगह चुनकर लेट गया। वह बार-बार घड़ी देख रहा था, और जितना अधिक वह घड़ी देखता, सुइयां उतनी ही धीरे-धीरे बढ़ती लगतीं।

हमला उत्तरी टीले के सैनिकों को आरम्भ करना था। ख्वालीन्स्क की टुकड़ी को रेप्योव्का से जंगल को जानेवाला रास्ता काटने का काम सौंपा गया था, उसके बाद उन्हें बगीचों से होते हुए पश्चिम को जंगल की ओर बढ़ना था। इसी क्षण बड़ी सड़क के पार से रेप्योव्का पर सीधे हमला किया जाना था, ताकि वहां पर विद्रोहियों की आड़ को नष्ट किया जा सके। इस अभियान का तीसरा, निर्णायक काम बायें

पार्श्व के सैनिकों को सौंपा गया था, जिन्हें दक्षिण की ओर से दुश्मन के बड़े दल के चंडावल में निकलना था।

किरील को सारी योजना इतनी स्पष्ट लग रही थी, और उसने चारों ओर के भूभाग को इतने गौर से देख लिया था, उसमें अपनी सारी कार्रवाइयों की इतनी अच्छी तरह कल्पना कर ली थी कि उसे विश्वास था कि सारी कार्रवाई ठीक योजना के अनुसार ही हो सकती है, और किसी तरह नहीं।

ज्यों-ज्यों दायें पार्श्व की टुकड़ी द्वारा हमले का क्षण निकट आता जा रहा था, त्यों-त्यों किरील की बेचैनी बढ़ती जा रही थी। बारिश के कारण टीले धुंधले पड़ गये थे और जंगल तो कुहासे के आवरण के पीछे छिप ही गया था। बाइनोकुलर से कब्रगाह के स्याह से पड़ गये भोज वृक्षों को मुश्किल से देखते हुए किरील यह महसूस कर रहा था कि उसे हिले-डुले बिना लेटे रहने और सैनिकों पर अपनी बेचैनी प्रकट न होने देने के लिए अधिकाधिक यत्न करना पड़ रहा है।

इज़्वेकोव को पास ही जानी-पहचानी आवाज़ सुनाई दी।

"कमिसार कहां है?"

उठे बिना वह बगल पर मुड़ गया।

इपात एक बंदूक कंधे पर लटकाये और दूसरी हाथ में उठाये अपने आगे-आगे निरस्त्र नीकोन को धकेलता ला रहा था।

"आपके पास लाया हूं, कामरेड कमिसार," सड़क के पास रुककर उसने ऊंची आवाज़ में कहा। वह नीकोन की बांह पकड़े हुए था।

"तुम अपनी चौकी छोड़कर कैसे चले आये?" इज़्वेकोव ने जल्दी से पूछा, वह इस अप्रत्याशित दृश्य को तुरंत ही समझ नहीं पाया और इन दोनों सैनिकों को इस हालत में देखकर उसे आश्चर्य हो रहा था।

इपात की उभरी हुई, पथरायी सी आंखों में दुस्साहसपूर्ण संकल्प झलक रहा था। उसके चेहरे का रंग उड़ा हुआ था और उसका सिर कालर में से निकली नंगी, पतली गर्दन पर ऊंचा उठा हुआ था।

"कामरेड कमांडर ने भगोड़े कर्नाऊखोव को आपके पास लाने का हुक्म दिया है, आप इसका फ़ैसला करें।"

"क्या कहा? भगोड़ा?"

"छोड़ भी," ज़मीन में आंखें गड़ाये नीकोन बड़बड़ाया।

"इजाज़त हो तो बताऊं?"

"जल्दी करो!"

"कामरेड कमिसार, मुझे इसकी बातों पर अरसे से संदेह हो रहा था। यहां पास ही के ज़िले में इसका गांव है, कामरेड कमिसार।"

"सीधी बात करो।"

"मैं सीधे ही बता रहा हूं। सो यह कह रहा था कि देख, सारी लड़ाई लड़ आया, ज़िंदा बच गया और अब यहां घर की दहलीज़ पर आकर जान देनी पड़ रही है। कहता था, हर आदमी की कोई न कोई निशानी बच रहती है। कहता है, कोई बेंच बना जाता है, कोई नदी किनारे पैड़ियां। और कहता है, तेरी क्या निशानी बचेगी–सड़ी हुई लाश?"

"पर किया क्या है इसने?" अधीरता से घड़ी देखते हुए इज़्वेकोव ने पूछा।

"मैंने सोचा आंख तो मेरी एक ही है, पर तुझे मैं आर-पार देख रहा हूं। मैंने पूछा, तू धावा बोलने तो चलेगा कि नहीं? कहता है, तू खुद जा। और मुझे गाली भी दी इसने। कहता है मैं तो अपने गांव जाऊंगा। अच्छा बच्चू, यह बात है, मैंने सोचा। झट से इसकी बंदूक झपट ली, और बोला: नहीं, भगोड़े कुत्ते, तू अपने गांव नहीं जायेगा, तू गोली खाने जायेगा। गोली खाने! और बस सीधा कमांडर के पास ले गया। कमांडर ने मुझे हुक्म दिया: जाओ, कमिसार के पास ले जाओ, जो वे कहेंगे, वही होगा। उड़ा देना चाहिए इसे गोली से कामरेड कमिसार, जाये भाड़ में।" निर्ममता से इपात ने अपनी बात खत्म की।

"ठीक है–और क्या बात है?" किरील ने कहा और मुड़कर पहले सड़क के पार नज़र डाली फिर घड़ी देखी।

"आहा! सुना तूने?" इपात ने नीकोन की ओर कदम बढ़ाकर कहा।

"तुम क्या लड़ाई से पहले अपने साथियों से दगा करने चले हो?" किरील ने पूछा।

"ये सब इसकी मनगढ़ंत बातें हैं, कामरेड कमिसार," नीकोन ने गिड़गिड़ाते हुए कहा। "बड़ा गरम मिज़ाज है यह।"

"मनगढ़ंत बातें?" इपात गुस्से में चिल्लाया। "नदी पर पैड़ियां भी मैंने अपने मन से गढ़ी हैं?"

"यह तो कब से मुझे धमका रहा था कि शिकायत कर दूंगा। मेरी बातें इसे पसन्द नहीं आती थीं। ठीक है, बहस होती थी, पर वो तो यों ही बातें करते थे हम, वकत बिताने को, जैसे ताश खेल ली..."

नीकोन परेशान सा खड़ा था, नये बूट पहने आदमी की तरह पांव बदल रहा था, बस कभी-कभी नीची झुकी नज़रें उठाकर उलाहने से इपात की ओर देख लेता।

"तो क्या तुम धावा बोलने नहीं जाओगे, कर्नाऊखोव?" इज़्वेकोव ने पूछा।

"जाऊंगा क्यों नहीं, काम़रेड कमिसार! यही तो हमारा काम है। मैं भी कोई इपात से बुरा सैनिक तो रहा नहीं।"

किरील कुछ कहना चाहता था, पर तभी मशीनगन की प्रश्नसूचक तड़ातड़ भीगी-भीगी हवा को चीरती आई और फिर बंदूकें चलने लगीं। गोलियां दाईं ओर से दागी जा रही थीं–इतना तो किरील भांप गया। पर वह यह नहीं समझ पा रहा था कि वे किस दिशा में दागी जा रही हैं। उसने गहरी सांस खींची और तुरंत ही सांस छोड़ नहीं पाया। एक गहरी टीस से मानो उसके हृदय की धड़कन रुक गई, और इस क्षण उसने जो कुछ देखा उस सबमें असाधारण स्पष्टता और एक विशिष्ट सार्थकता थी।

"तू लड़ किसके लिए रहा है, बताया था न मैंने तुझे?" इपात ने नरम पड़ते हुए पर अभी भी तिरस्कार के पुट के साथ पूछा। "अपने लिये लड़ रहा है। हम नये मानव की सृष्टि करेंगे। समझाया था न मैंने तुझे?"

किरील ने सिर घुमाया। वह मानो एक दूसरी ही दुनिया से इन सैनिकों को देख रहा था, उसने कानों में पड़े अंतिम, अनबूझ शब्द दोहराये और सहसा उनका अर्थ समझ लिया: हम नये मानव की सृष्टि करेंगे। वह पुश्ते पर से उतर आया।

"अगर तुमने लड़ाई में बहादुरी दिखाई, तो तुम्हें माफ़ कर दूंगा। अगर नहीं तो दोष तुम्हारा ही होगा।"

उसने इपात के कंधे पर हाथ रखा।

"बंदूक दे दो इसे। और इस पर नज़र रखना। तुम्हारे जिम्मे सौंप रहा हूं इसे। अब जाओ दौड़कर अपनी-अपनी जगह।"

"खूब नज़र रखूंगा मैं!" इपात ने चहकते हर्षमय स्वर में कहा।

कंधे पर लटकी बंदूक को कोहनी से दबाये वे सैनिकों की लाइन के पीछे छोटे-छोटे कदमों से तेज़-तेज़ दौड़ते चले गये। पर किरील उन्हें नहीं देख रहा था।

बाइनोकुलर में कब्रिस्तान पहले की ही भांति जड़वत दिखाई दे रहा था, मगर वह मानो छोटे-छोटे सुस्पष्ट भागों में विभाजित हो गया था, जिन पर किरील नजरें गड़ाये हुए था। वह अभी भी यह पता लगाने की कोशिश कर रहा था कि गोलियों का निशाना किधर है—कस्बे की ओर या जंगल की ओर? पर उसे कुछ पता नहीं चल पा रहा था, खास तौर पर जब जवाब में रेप्योव्का से इधर-उधर से गोलियां चलने लगीं, और फिर बारिश के आवरण के पीछे जंगल में छिपा गिरोह मिलकर गोलियां चलाने लगा।

किरील ने बाइनोकुलर कस्बे की ओर घुमाया। उसी क्षण, पल भर को थम गई गोलीबारी के बीच उसे अजीब सी चीखें सुनाई दीं, और सड़क तथा रेप्योव्का के बीच फैले खेत पर उड़ते कौओं के झुंड दिखाई दिये। कौए कस्बे के ऊपर मंडरा रहे थे, वे गिरजे के नीले गुम्बदों से दूर उड़ते और फिर वहीं लौट आते। उनकी अजीब चीं-चीं और कांव-कांव मशीनगन और बंदूकों की तड़ातड़ और धांय-धांय में अधिकाधिक ज़ोर से घुलती-मिलती जा रही थी।

इसके बाद जो कुछ हुआ, वह किरील को उस योजना का हर तरह से उल्लंघन लगा, जिसकी कल्पना वह इतनी स्पष्टता से कर रहा था और जिसे बिल्कुल सही-सही पूरा करने का वह हर वक्त जतन कर रहा था।

ख्वालीन्स्क की टुकड़ी गोलीबारी शुरू करने के बाद निर्धारित समय से पहले ही धावा बोलने बढ़ चली। किरील को भोज वृक्षों की पृष्ठभूमि पर कब्रिस्तान में भागती छोटी-छोटी आकृतियां दिखाई दीं, जो ढलान से उतरकर बगीचों की हरियाली में खोती जा रही थीं। योजना के अनुसार इसी क्षण बड़ी सड़क की ओर से हमला आरम्भ

होना चाहिए था। किन्तु यह क्षण किरील के अनुमान से पहले ही आ गया था, और यह सोचते हुए कि अब सब कुछ वैसे नहीं हो रहा जैसे होना चाहिए था, उसने रिवाल्वर सिर के ऊपर उठाया और उसे हिलाते हुए, अपने दायें-बायें नज़र घुमाते हुए चिल्लाया: "बढ़ चलो!" अपनी आवाज़ उसे बिल्कुल वैसी नहीं लगी, जैसी वह सुनना चाहता था। सड़क पर चढ़कर किरील ने उसे पार किया और नीचे उतर गया। पीछे मुड़कर देखने पर उसे सड़क पर दौड़ते सैनिक भीमकाय लगे, उनके खुले ओवरकोट फटीचर से लगते थे। किरील फिर से चिल्लाया: "बढ़ चलो, मेरे पीछे!"

रिवाल्वर सिर के ऊपर उठाये वह खेत में दौड़ने लगा। उसके कान इर्द-गिर्द की आवाज़ों पर लगे हुए थे। पीछे से और अगल-बगल से भारी कदमों की चाप आ रही थी और ऊपर अभी तक मंडरा रहे कौए कांव-कांव कर रहे थे। उसे अपने शरीर का कोई अहसास नहीं था, हालांकि पांव रह-रहकर जुते खेत की लीकों और ढेलों से टकरा रहे थे। वह बार-बार कुछ चिल्ला रहा था।

वे आधा खेत पार कर चुके थे, जब रेप्योव्का के कुछ कोठारों के पीछे से उन पर गोलियां चलाई गई। किरील ने दौड़ते-दौड़ते ही नज़र घुमाई। उसके बाईं ओर से दूसरा सैनिक सहसा ठिठक गया, मानो दौड़ते हुए अदृश्य बाधा से टकरा गया हो, उसका पूरा धड़ पीछे को घूम गया और वह चारों खाने चित गिर पड़ा।

"लेटो!" किरील हाथ नीचे को हिलाकर चिल्लाया और गिर पड़ा। "कोठारों पर फ़ायर करो!"

वह अभी पूरा आदेश दे भी नहीं पाया था और सभी सैनिक अभी लेटे भी नहीं थे कि इधर से भी जवाब में बंदूकें चलने लगीं। किरील ने रिवाल्वर की सारी गोलियां एक कोठार पर दाग दीं और फिर से गोलियां भरीं।

उसके पास वाला सैनिक – भारी-भरकम, घनी मूंछें और टोपी उल्टी पहनी हुई – बोला:

"सन पर गोली चलाइये। देखा, पौधे हिल रहे हैं!"

उसने दूसरी ओर सिर घुमाया और शांत स्वर में चिल्लाया, जैसे मिलकर काम करते हुए कोई चिल्लाता है:

"मन पर नज़र रखो, भाइयो! बगीचों पर!"

उसकी तेज नज़र पर किरील को आश्चर्य हुआ: वह सन के काले से झाड़ तुरंत ही नही देख पाया, जो कहीं-कहीं कोठारों जितने ऊंचे थे। पर सैनिकों ने निशाना देख लिया था और उधर गोलियां बरसा रहे थे।

अचानक किरील को एक आदमी दिखा, जो एक घर के पीछे से निकलकर गली के पार भागा। एक शिकारी की शिकार हाथ से न जाने देने की उत्कट इच्छा के साथ, जैसी उसके मन में पहली बार जागी थी, किरील ने उसका निशाना साधा, पर वह पलक झपकते ही ओझल हो गया। उसके पीछे-पीछे वैसे ही दो आदमी गली के पार भागे, फिर कई और। मुच्छड़ सैनिक बंदूक का घोड़ा चढ़ाते हुए निराशा मिले स्वर में बोला:

"भाग रहे हैं दुम दबाकर।"

किरील उछलकर खड़ा हो गया और उसकी देखा-देखी दूसरे सैनिक भी। सैनिक उससे आगे निकलकर बगीचों तक पहुंच गये, और बंदूकें बाड़ के पार रखते हुए और खुद फांदकर या चरमराती बाड़ पर चढ़कर उसे पार करते हुए बगीचों की क्यारियों में उगी बंदगोभी रौंदते दौड़ चले। सैनिक छितरी कतार में बढ़ते आये थे, पर अब कोठारों के बीच की संकरी गलियों में बढ़ने लगे। गोलियां लगातार चल रही थीं और बीच-बीच में सैनिक बिना किसी आदेश के ही 'हुर्रा' चिल्ला उठते थे। इस एक शब्द में ही शत्रु के प्रति सारी घृणा और अपना सारा जोश वे उंडेल देते।

किरील भी सबके साथ दौड़ रहा था, सबकी भांति ही चिल्ला रहा था और गोलियां चला रहा था। उसे कस्बे की सड़क पर बंदूकें उठाये अंधाधुंध भागते कुछ लोग नज़र आये, उसके मन ने कहा कि वे दुश्मन हैं, पर उनपर वार नहीं कर सका, क्योंकि रिवाल्वर में गोलियां भर रहा था। इस सड़क की ओर जाते हुए रास्ते में दो और लोग दिखे, जो जमीन पर औंधे पड़े हुए थे। वह उन्हें फांदकर बढ़ गया।

उसे बस इतना याद था कि उसे सैनिकों को बाज़ार के चौक में ले जाना है, और वहां कस्बे के बीच में जो कोई भी विरोध करता हो उसे मार देना या गिरफ़्तार कर लेना है।

पर जब वह चौक पर पहुंचा, तो सामने से भी छितरी-छितरी गोलियां चल रही थीं। उसने जल्दी से मुड़कर नज़र दौड़ाई, अपने सैनिकों के छिपने के लिए जगह ढूंढी। उसी क्षण चौक के दूसरी ओर से, तहसील कार्यालय की लकड़ी की टूटी इमारत और गिरजे के पीछे से ख़्वालीन्स्क की टुकड़ी के सैनिक भी उसके सैनिकों की भांति 'हुर्रा' चिल्लाते हुए प्रकट हुए।

यह तो योजना का ऐसा उल्लंघन था, जिसे किरील कतई समझ नहीं पा रहा था। इस टुकड़ी को रेप्योव्का और जंगल के बीच का रास्ता काटना था और कस्बे में घुसे बिना शत्रु के प्रमुख दल की ओर बढ़ना था।

किरील ख़्वालीन्स्क के सैनिकों की ओर दौड़ा यह पता लगाने के लिए कि क्या हो रहा है। पर वे उसकी ओर कोई ध्यान दिये बिना चौक में दौड़े जा रहे थे, दौड़ते-दौड़ते ही बंदूकों में गोलियां भर रहे थे और चिल्ला रहे थे। वह उनमें से आखिरी सैनिक को पकड़ना चाहता था, उसकी ओर रिवाल्वर हिलाने लगा। तहसील कार्यालय के पास वह उसके पास पहुंच ही गया था, पर तभी ठिठककर रह गया।

सड़क पर, कीचड़ भरी लीकों के बीचोंबीच देह पड़ी हुई थी। यह एक युवती की देह थी, उसकी बांहें फैली हुई थीं, उसकी बैंगनी पोशाक फटी हुई थी, बारिश से भीगकर शरीर से चिपक गई थी। उसकी खोपड़ी माथे से गुद्दी तक चिरी हुई थी, एक ओर को छिटकी सुनहरे बालों की चोटी लीक में कीचड़ में धंसी पड़ी थी। चेहरे का ऊपरी भाग — माथे का बच गया हिस्सा, मुंदी आंखें, बांसा — सब कीचड़ और जमे हुए खून से काला पड़ा हुआ था। पर सुघड़ नथुनों से नीचे — मोतियों की लड़ी जैसे दांतों के ऊपर उठा उसका कोमल होंठ, ठोड़ी और सुंदर गर्दन — यह सब साफ़ था और इसमें ऐसी कोमलता थी, मानो युवती सो रही हो और किसी भी क्षण सोते-सोते उसांस छोड़ेगी।

किरील फटी-फटी, जड़ आंखों से यह लाश देख रहा था। उसकी ठोड़ी और गर्दन में, जहां बारिश की बूंदें चमक रही थीं, अनबूझ स्पष्टता के साथ उसे आनोच्का की ठोड़ी और गर्दन दिखीं, जैसी वे उस क्षण होती थीं, जब वह कुछ बात सुनने के लिए अपना सिर ज़रा सा पीछे को हटा लेती थी।

गिरजे के पीछे से उड़ते आये कौओं के झुंड की चीं-चीं और कांव-कांव उसके कानों से टकराई और उसका रोम-रोम सिहर उठा।

चौक खाली पड़ा था। दोनों टुकड़ियों के सैनिक मिलकर कस्बे की सड़क पर दौड़े जा रहे थे, जिसके दोनों ओर घर एक दूसरे से काफ़ी दूर-दूर थे।

अभी तक जो कुछ घट रहा था उसकी तुलना किरील मस्तिष्क में निर्धारित उन कार्रवाइयों से कर रहा था, जिनके लिए उसने अपने को तैयार किया था। अब उसके मन में बस एक ही इच्छा थी कि वह उन सबका खात्मा करता जाये, जो कीचड़ भरी सड़क पर पड़ी उस युवती की मृत्यु के लिए उत्तरदायी थे। वह बड़ी तेजी से अपने सैनिकों के पीछे दौड़ चला।

अब यह स्पष्ट हो गया था कि रेप्योव्का में आड़ देने के लिए रह गये बलवाई दक्षिणी टीले की ओर भागे हैं, इस उम्मीद में कि वहां झाड़ियों में तितर-बितर हो जायेंगे। ढलान पर अलग-अलग बलवाई दिखाई देने लगे, जो पीछे मुड़-मुड़कर गोलियां चला रहे थे और छिपने को दौड़ रहे थे। लेकिन उनका पीछा निर्ममता से किया जा रहा था।

कस्बे के बाहर एक कच्चे रास्ते पर पहुंचकर किरील ने देखा कैसे बिना कमरबंद के खुली कमीज़ पहने तथा नंगे सिर वाले एक लुटेरे ने बंदूक फेंक दी और हाथ ऊपर उठाये, पर उसी क्षण ढह गया। उसके बाद दूसरे भी हाथ ऊपर उठाने लगे, लेकिन सैनिक गोलियां चलाते जा रहे थे – और किरील भी गोलियां दाग रहा था, यह देखे बिना कि जिन पर वह गोलियां दाग रहा है, वे हथियार डाल रहे हैं या बंदूकें चला रहे हैं।

इस बीच जंगल की ओर से भी लड़ाई की आवाज़ आने लगी – कभी लगातार और कभी रुक-रुककर, गोलीबारी की दूरी से यह समझा जा सकता था कि दीबिच के सैनिकों ने भी वहां धावा बोल दिया है।

लगातार दौड़ने के बाद अब कहीं किरील रुका और जब उसकी सांस में सांस आई, तो उसने हथियार डाल रहे लोगों को बंदी बनाने का आदेश दिया। पहले दो बंदियों को उसके पास लाया गया। उनकी आतंकित और गिड़गिड़ाती नज़रों से उसकी नजर टकराई और उसने तुरंत ही मुंह फेर लिया।

"मिरोनोव के हो?" उसने पूछा, अपने गुस्से से भिंचे दांतों को वह खोल न पा रहा था।

"नहीं, नहीं! भगोड़े हैं!" दोनों ने एक साथ हड़वड़ी में जवाव दिया, मानो विजेता को यह आश्वासन दिला देने की जल्दी में हों कि उनका गिरोह विल्कुल घटिया दरजे का है।

"कितनी वंदूकें हैं?"

"सौ से थोड़ी ही कम हैं।"

"मशीनगन?"

"एक है – 'मक्सीम'।"

वंदियों के लिए गार्ड नियुक्त करके किरील ने सव सैनिकों को जमा होने और लाइन बनाने का आदेश दिया। अलग से लाइन में खड़े हो गये ख्वालीन्स्क के सैनिकों की संख्या देखकर कुछ पूछे विना ही वह समझ गया कि टुकड़ी में से इस छोटे से दल को रेप्योव्का पर कब्ज़ा करने में मदद के लिए भेजा गया है। उनमें कोई हताहत नहीं हुआ था। किरील के सैनिकों में से सात नहीं थे। चिकित्सा सहायक ने रपट दी कि उसने चार मामूली घायल सैनिकों की मरहमपट्टी की है, और उनके नाम वताये। फिर खेत रहे सैनिकों के नाम गिनाये जाने लगे, किरील को एक नाम कुछ अजीव सा लगा: पोर्तुगालोव।

"कौन था यह पोर्तुगालोव?"

"मूंछों वाला। अकेला वही ऐसी मूंछों वाला था।"

"अच्छे डील-डौल वाला?" इज़्वेकोव ने पूछा और तुरन्त ही उसे अपने वगल का वह सैनिक याद हो आया, जो इतने शांत स्वर में चिल्लाया था कि सन पर निशाना लगायें।

किरील के मुंह से करारी गाली निकली और उसने उस ओर मुक्का दिखाया जिधर से गोलियां चलने की आवाज़ आ रही थी।

"हमारा काम अभी खत्म नहीं हुआ है," सैनिकों को सम्वोधित करते हुए वह चिल्लाया। "चलो, अपने कामरेडों का वदला लेने!"

उसने सैनिकों को अपने पीछे चलने का आदेश दिया।

चुपचाप, वेमेल कदमों से वे कस्वे से गुज़रने लगे। सभी अहातों के फाटक वंद थे और अहातों के अंदर घरों की खिड़कियों में जीवन का कोई चिह्न नहीं दिख रहा था। यद्यपि वे जंगल के पास पहुंचते जा रहे

थे. वहां कम पड़ती गोलीबारी मानो दूर होती जा रही थी और काफ़ी छितरी-छितरी थी। बगीचों के बाहर उन्हें एक संदेशवाहक सैनिक मिला, जिसे दीविच ने कस्बे की स्थिति का पता लेने भेजा था। किरील उससे बात करने ही लगा था कि जंगल के रास्ते पर घोड़े की टाप सुनाई दी और मोड के पीछे से दीविच प्रकट हुआ।

लड़ाई के दौरान किरील ने यह पहला दमकता, हर्षमय चेहरा देखा था।

"क्या हमारी मदद को आ रहे है? कैसा रहा आपके यहां? कर दिया सफ़ाया? बधाई हो," घोड़े को रोकते हुए एक सांस में ही वह कह गया। "हताहत हैं? धत् तेरे की! बंदी हैं? कितने? मेरे सैनिक इन हरामखोरों को जंगल में पकड़ रहे हैं। अच्छा मज़ा चखाया हमने इन्हें! सरदार का काम तमाम कर दिया। मशीनगन छीन ली। सब कुछ ठीक वैसे ही हुआ, जैसे हमने सोच रखा था!"

दीविच की ओर देखते हुए, जो उसे जवाब देने का मौका ही नही दे रहा था, किरील भी सहसा यह समझ गया कि सब कुछ बिल्कुल योजना के अनुसार ही हुआ था। अब कहीं जाकर उसे यह समझ में आया कि जो कुछ हुआ था, वह योजना का उल्लंघन कतई नही था, बल्कि उसकी असीम बेचैनी थी और यह उत्कट इच्छा कि योजना का जरा सा भी उल्लंघन न हो।

"आप पैदल क्यों है? घोड़ा कहां है?" दीविच सवाल पूछे जा रहा था।

"वाह भई, घोड़े पर सवार होकर मैं खेत में सैनिकों को धावा बोलने ले जाता!"

"अरे हां। मेरा तो सिर फिर गया है!" दीविच हंस पड़ा। "आपने अपनी क्या गत बना ली है! रेंगते आये?"

किरील ने पहली बार अपने कपड़ों पर नज़र डाली। छाती और पेट, घुटने और टांगें – सब कीचड़ में सने हुए थे, हाथों पर खरोंचों से खून निकल रहा था। उसे याद नहीं था कि कब खरोंच आई, और उसे जरा भी दर्द महसूस नहीं हो रहा था।

उन्हें रास्ते से हटना पड़ा: जंगल से बंदियों को लाया जा रहा था। एक बार फिर किरील की नज़र इन नज़रों से टकराई, जिनमें गिड़गिड़ा-

हट के साथ मौत का भय मिला हुआ था। चिथड़ों में लिपटे इन लोगों में, जो कभी सैनिक थे, अब सैनिकों के लक्षणों की शायद कोई हल्की सी झलक ही रह गई थी, और कुछ नहीं। पांव घसीटते, कंगालों के जुलूस से वे चले जा रहे थे। तभी उनके बगल में ही एक और दृष्टि उसकी नज़र से टकराई – हर्षमय, चुनौती भरी दृष्टि। वह उसे पहचान गया।

इपात इपात्येव दूसरे लाल सैनिकों के साथ इन भगोड़ों को बंदी बनाकर ले जा रहा था।

"कामरेड कमिसार, इजाज़त हो तो रपट दूं," चाल धीमी किये बिना ही इपात चिल्लाया। "नीकोन कर्नाऊख़ोव कंधे से कंधा मिलाकर लड़ा, सच्चे लाल सैनिक की भांति!"

"ज़िंदा है?"

"ज़िंदा है, कामरेड कमिसार।"

"अच्छा, बड़ी अच्छी बात है। कह देना उससे – बड़ी अच्छी बात है!"

किरील दीविच की ओर देखकर मुस्कराया, और वे एक दूसरे की बात समझ गये।

"नवदीक्षित!" दीविच ने भी मुस्कराते हुए कहा।

उन्होंने आगे की कार्रवाई तय की और दीविच घोड़ा दौड़ा ले गया ...

तीसरे दिन रेप्योव्का में बलवे का शिकार हुए लोगों को दफ़नाया गया। कस्बा छोड़ने से पहले गिरोह ने कस्बे के कुलकों के साथ मिलकर बंधकों की हत्या कर दी थी। तीन लोगों को उन्होंने बंधक बना रखा था – तहसील सोवियत के अध्यक्ष, नगर से आये खाद्य विभाग के कमिसार तथा स्कूल की अध्यापिका को, जिसकी लाश हमले के दौरान किरील ने सड़क पर पड़ी देखी थी। उनके साथ ही युद्ध में खेत रहे लाल सैनिकों को भी दफ़नाया गया।

लकड़ी के तख्तों से, जिन पर रंदा भी नहीं फेरा गया था, पेटियों जैसे बने आठ ताबूत गिरजे के अलिंद पर रखे गये थे – यही यहां सबसे ऊंची जगह थी, जिसे सब देख सकते थे। आस-पास के गांवों से बहुत सारे लोग आये थे और स्वयं रेप्योव्का के लोग भी इस बलवे

के बाद होश में आने लगे थे—सभी अहातों से लोग निकलकर चौक में जमा हुए, फुसफुसाते बच्चों की टोलियां भीड़ में कौतूहलवश इधर-उधर घूम रही थीं।

हवा बहुत तेज चल रही थी, बारिश कभी थम जाती, कभी फिर होने लगती। खुले ताबूतों के ऊपर झुकाया हुआ लाल झंडा ज़ोर-ज़ोर से फड़फड़ा रहा था। भोज वृक्षों से और अलिंद पर सजावट के तौर पर रखी गई चीड़ की टहनियों की गंध से शरद ऋतु की निकटता का आभास हो रहा था। किसान लड़कियों ने पुराने अखबारों और लिफ़ाफ़ों के पीले कागज़ से बेलबूटे बनाकर ताबूतों को सजा दिया था।

किरील काफ़ी देर तक मृत युवती की ऊपर को उठी कोमल ठोड़ी को देखता रहा। युवती का चेहरा अपनी ओर आकर्षित कर रहा था; उससे नजरें हटाने के लिए उसे मुंह मोड़ना पड़ा। मुंह मोड़कर उसने आसमान की ओर आंखें उठाईं। सुरमई घटाएं काफ़ी नीची थीं, उन्होंने मानो आसमान को आस-पास के टीलों पर टिका दिया था। कस्बा विशाल कड़ाहे की तली पर पड़ा लगता था, जिसमें से उमड़ता-घुमड़ता धुआं उठ रहा था।

किरील को सभा आरम्भ करनी थी। उसने एक बार फिर ताबूतों पर नज़र दौड़ाई। हवा पोर्तुगालोव की मूंछें हिला रही थी, सैनिक का शांत चेहरा मानो मुस्कराना चाहता था।

किरील के मुंह से पहला शब्द "साथियो" निकलते ही सब लोग निस्तब्ध हो गये। परन्तु उसने यह महसूस किया कि इस निस्तब्धता के बावजूद लोग उसकी आवाज़ नहीं सुन पा रहे हैं। जीवन में पहली बार अपनी आवाज़ पर उसका बस न रहा था। सहसा उसका गला रुंध आया।

फिर ताबूतों को कंधों पर उठाया गया और सब लोग चौक के दूसरे सिरे की ओर चल दिये, जहां एक साझी कब्र खोदी गई थी। तीन बार बंदूकें दाग कर सलामी दी गई, और एक बार फिर कौए, जो हाल ही के अपने डर को भूल चुके थे, फिर से चीखने लगे। जंगल से गड़गड़ाती प्रतिध्वनि आई। लोगों ने फिर से सिर ढक लिये।

घंटे भर बाद ख्वालीन्स्क के सैनिक कतारबद्ध बंदियों को लेकर कस्बे से गुजरे। घोड़ों पर सवार इज़्वेकोव और दीबिच उन्हें अपने पास से जाते देखते रहे।

बंदियों में कुछ जान आ गई थी। उनकी चाल-ढाल में अब सभ
सैनिकों वाली वह बात आ गई थी, जिससे वे कुछ-कुछ उन्हें ले ज
रहे लाल सैनिकों जैसे ही लगने लगे थे। उनके कदमों से लगता था कि
वे बिल्कुल पस्त थे, पर मौत का डर अब उनमें नहीं रहा था।

उनमें लाल सैनिकों सी जो समानता आ गई थी, वह किरी
को बुरी लगी, बंदियों के चेहरों से उसे पहले की ही भांति घिन ह
रही थी और मन में दबा-दबा गुस्सा उठ रहा था। भौंहें सिकोड़क
उसने बंदियों को रेप्योव्का के बाहर निकलकर कच्चे रास्ते से हो
हुए शहर की सड़क की ओर जाते देखा। फिर उसने घोड़ा मोड़ा औ
दीविच से कुछ कहे बिना ही चल दिया। अभी रेप्योव्का के कुलक
पर मुकदमा चलाकर उनका निवटारा भी करना था।

२७

उस धुपहले दिन, जब इज़्वेकोव और दीविच ने बड़ी सड़क प
उत्तर की ओर प्रस्थान किया, वर्षास्नात ग्रामीण प्रदेश अत्यंत रमणी
प्रतीत हो रहा था।

शरद ऋतु ने चारों ओर अपने शोख लाल-पीले रंग छिटका दि
थे, परन्तु अभी ग्रीष्म के मटमैले हरे रंग का ही प्रभुत्व था। पिछ
कुछ दिनों की वर्षा से घास में फिर से वैसी ही ताज़ी हरियाली आ ग
थी, जैसी मई में होती है। चटकीली हरी घास के मैदानों पर मेप
वृक्ष के पीले पत्ते उभरे-उभरे लगते थे। बर्डचैरी के वृक्षों पर इक्क
दुक्की सिंदूरी पत्तियां बूंदों सी लटकी धूप में झिलमिला रही थीं
बगीचों की जुती हुई ज़मीन जामुनी सी थी और उसके धुंधले रंग
बगल में बंदगोभियों की फूली-फूली क्यारियां सीपियों सी चमक रह
थीं।

लेकिन चढ़ाई चढ़कर किरील ने काठी में बैठे-बैठे ही पीछे ज
नज़र दौड़ाई, तो वहां ऐसा अंतहीन विस्तार पाया कि उसमें रंग
का यह सारा छुटपुट खेल खो गया।

बाईं ओर वोल्गा तट के कहीं बूचे और कहीं हरे-भरे टीले दू
तक चले गये थे, इन्हीं टीलों से वोल्स्क तक फैली खड़िया की पहाड़िय

आरम्भ होती थीं, जिन्हें देवीच्यी (कुमारी) पहाड़ियां कहा जाता था। इनके पीछे कहीं-कही वोल्गा झलक रही थी। दाईं ओर जंगल का आड़ा-तिरछा किनारा था। ऊंचे मैदान पर जंगल जितनी दूर जाता जा रहा था, उतना ही अधिक बीहड़ और रहस्यमय लगता था। नीचे, बड़ी सड़क से थोड़ा हटकर बगीचों का हरा दुशाला ओढ़े रेप्योव्का था।

नयनाभिराम टीलों और जंगलों के बीच बसे इस छोटे से कस्बे को प्रभाव की शुभ्र किरणें पखार रही थीं और वहां ऐसी शांति व्याप्त थी कि मील भर दूर मुर्गे की बांग सुनाई देती थी। इस दिव्य रमणीयता को किरील ने जो देखा, तो बस देखता ही रह गया। उसे यह कल्पनातीत प्रतीत हुआ कि इस कस्बे में, जिसकी सृष्टि ही मानो चिर शांति के लिए हुई थी, अभी-अभी ऐसी भयावह रक्त-वृष्टि हुई थी, जिसकी चपेट में जो आया वही संत्रस्त हो उठा था, और स्वयं किरील को भी इस रक्त-वृष्टि में नहाना पड़ा था।

लगाम ढीली छोड़े वह काठी पर निश्चल बैठा था। उसके सामने फैला विस्तार इतना असीम था और पिछले तीन दिनों में जिन घटनाओं में वह भाग लेता रहा था, उनका महत्व इतना अपार था कि इनके सम्मुख उसे अपना अस्तित्व धूल के एक कण सा लग रहा था। इस क्षण उसे इस बात की स्पष्ट चेतना थी कि रूस में गृहयुद्ध की जो ज्वाला धधक रही है, उसमें ख्वालीन्स्क के पास घटी यह घटना विस्मृति के गर्भ में ही समा जायेगी, कि जन-स्मृति में वह वैसे ही खो जायेगी, जैसे संसार के मानचित्र पर रेप्योव्का कस्बा। परन्तु वह यह भी स्पष्टतया समझ रहा था कि यह घटना, जिसे विस्मृति के गर्भ में समाना बदा है, उन सहस्रों घटनाओं का सहस्रवां अभिन्न भाग है, जिनसे मिलकर इतिहास बनता है। यों सोचते हुए वह यह भी अनुभव कर रहा था कि अधिकांश लोगों के लिए रेप्योव्का की जो घटना एक मामूली सी घटना है, वही उसके लिए सहस्रों गुना अधिक महत्वपूर्ण है, स्वयं इतिहास का साक्षात रूप है, और वह इस घटना के महत्व की पूरी गहराई को समझने में असमर्थ है, वैसे ही जैसे कि वह यहां टीले की ऊंचाई से उसके सामने फैले अंतहीन विस्तार को एक नजर में नहीं देख सकता। उसे बरबस एक पुरानी कहावत याद हो आई: युद्ध की बातें सुनना और है, युद्ध देखना और।

धीरे-धीरे उसने रेप्योव्का की ओर से आंखें मोड़ लीं। दीविच घोड़े पर उसके पास आ रहा था।

"कैसी शांति है!" किरील ने उससे कहा इस चेष्टा में कि रेप्योव्का में उसने जो कुछ देखा था, उसकी ओर से ध्यान बंट जाये, लेकिन उसके विचार उसी में उलझे हुए थे।

"अनुपम दृश्य है! और हर कदम के साथ मैं घर के पास पहुंचता जा रहा हूं," दीविच ने उल्लासमय स्वर में कहा और खुद भी घोड़ा थाम पीछे नज़र दौड़ाई।

सड़क पर कुछ सैनिक कमर झुकाये, घुटनों पर ज़ोर देते हुए टूटी कतार में चढ़ाई चढ़ रहे थे। यह एक छोटी सी टुकड़ी थी -- लगभग पंद्रह सैनिक। अब यह ठीक-ठीक पता चल गया था कि ज़िले में कोई संगठित मोर्चा नहीं बना है, पर सूरा नदी पर मिरोनोव की हार के बाद उसकी रेजीमेंट के सिपाहियों के छोटे-छोटे दल वोल्गा तक पहुंचने की कोशिश कर रहे थे और रास्ते में गांवों पर हमले बोल रहे थे, किसानों को डरा-धमकाकर और छल-कपट से विद्रोह के लिए भड़का रहे थे। इसलिए दीविच की कम्पनी को कुछ टुकड़ियों में बांटा गया था और इन टुकड़ियों को आस-पास के इलाके में इन लुटेरों का सफ़ाया करने का काम सौंपा गया था। इसके बाद कम्पनी को ख़्वालीन्स्क में जमा होना था। इज़्वेकोव और दीविच की कमान में मार्च कर रही यह प्रमुख टुकड़ी भी ख़्वालीन्स्क की ओर बढ़ रही थी।

रेप्योव्का से कोई तीन मील दूर जाकर टुकड़ी बड़ी सड़क से गांव की सड़क पर मुड़ गई। यहां रास्ते में कई खड्ड थे, जिनमें झाड़ियां और छोटे-छोटे पेड़ों के झुरमुट थे। रास्ता जहां जंगल से होकर गुज़रता था वहां बलूत वृक्षों की ज़मीन से बाहर उभरी जड़ों ने उसे ऊबड़-खाबड़ बना दिया था, जिससे वहां चलने में कठिनाई होती थी।

रात काटने के लिए जब पड़ाव डाला गया, तो कुछ सैनिक थकावट के मारे खाने का इंतज़ार किये बिना ही सो गये। इपात और नीकोन अलाव जला रहे थे। जिस गांव के पास पड़ाव था, वहां के लड़के पहले तो दूर से, और फिर हिम्मत करके अधिकाधिक पास आते हुए देख रहे थे कि यहां क्या हो रहा है। सबसे अधिक कौतूहल उन्हें बंदूकों के कोत से हो रहा था।

किरील सिर तले हाथ रखे घास पर लेटा हुआ था। बलूत की मटमैली टहनियों और चीड़ की चोटियों से संध्याकालीन आकाश पर तीरों का जाल बिछा लगता था। निचाई की नम हवा में खुमियों की गंध थी।

महमा इपात ने चौंककर अलाव जलाना छोड़ दिया।

"सुना ?"

किरील ने कान लगाया, पर गांव में लौटी गायों के रंभाने के अलावा उसे और कोई आवाज़ नही सुनाई दी। इपात ने आंख मारी :

"अभी बोलता है।"

वह खड़ा हो गया। मुंह पर हाथ रखकर वह अत्यंत ऊंचे स्वर मे हुआने लगा। धीरे-धीरे स्वर नीचा आता जा रहा था और उतना ही अधिक गहराता जा रहा था, साथ ही अत्यंत अस्वाभाविक ढंग से मानो अपने आप मे समाता जा रहा था जैसे कि पेट में निगला जा रहा हो, और अंत में यह स्वर लोमहर्षक दहाड़ में बदल गया। ऐसी आवाज़ निकालने के जतन मे इपात का चेहरा लाल सुर्ख हो गया, आंखों मे खून उतर आया, उनके ढेले बाहर को निकले पड़ रहे थे और पुतलियो मे मानो चिनगारियां फूट रही थीं। कै करने जैसी घिनौनी आवाज़ के साथ उसने यह दहाड बंद की।

सो रहे सैनिक उछल खड़े हुए और गालियां देने लगे, दूसरे हंसने लगे। एक लड़का बड़े उत्साह से चिल्लाया :

"अरे, बाप रे! सचमुच भेड़िया बोल पड़ा!"

इपात ने उंगली हिलाकर उसे धमकाया और फिर अपने साथियों को चुप रहने का इशारा किया।

क्षण भर बाद जंगल मे कही दूर से हुआने की आवाज़ आई, जो ठीक उतने ही ऊंचे स्वर से आरम्भ हुई, जितने ऊंचे स्वर में इपात बोला था। और उसी भांति जंगल में दहाड़ गूंजी, जो और भी अधिक घिनौनी आवाज़ में बंद हुई, मानो जानवर ने अपनी अंतड़ियां ही उगल दी हों।

"बूढ़ी बोली है," एक लड़के ने पुराने जानकार के अंदाज में कहा।

"हां, वही है," दूसरों ने भी हामी भरी।

"लगता है, बहुत हैं यहां भेड़िये?" किरील ने पूछा।

"कोई गिनती नहीं! सोते के पास पूरा झोल है।"

"दूर है सोता?" इपात ने बड़ी उत्सुकता से पूछा।

वह कभी किरील की ओर देखता, कभी लड़कों की ओर, फिर उधर जंगल की ओर जहां मानो अभी भी भेड़िये की आवाज़ गूंजती लग रही थी, और उसके बाद फिर से लड़कों और किरील की ओर। अलाव जलाना तो वह भूल ही गया था, और उसके चेहरे पर एक साथ ही एकाग्रता और अन्यमनस्कता के परस्परविरोधी भाव आ गये थे। पुराने जानकार लड़के ने जवाब दिया:

"पास ही है। जंगल के अंदर जाते ही थोड़ी दूर पर वेरियों के झाड़ हैं, उन्हें पार करते ही सोता है, सारे मैदान में फैला हुआ है। वस वहीं भेड़िये का भट है।"

"कामरेड कमिसार, इजाजत हो, तो कल सुबह ही हंकवा लगा दें," इंपात ने उतावली से कहा। "पूरा झोल मार लेंगे। इस साल के पिल्ले तो बड़े हो गये होंगे। हो सकता है पिछले साल के भी मां के पीछे फिरते हों। मैं लड़कपन से ही भेड़ियों का शिकार करता आया हूं।"

यह प्रस्ताव सुनते ही सब सैनिक जोश में आ गये। सब एकसाथ यह कहने लगे कि भेड़िये के पूरे झोल को मारना तो वायें हाथ का खेल है, वस अच्छी तरह यह सोच लेना चाहिए कि शिकारियों को कहां-कहां खड़ा किया जाये और ज़्यादा से ज़्यादा हंकवैयों को जमा कर लेना चाहिए। पता चला कि अकेला इपात ही नहीं, और भी कई लोग भेड़ियों का शिकार करते रहे हैं, कुछ ऐसे भी थे जो साफ़ डींग हांक रहे थे, सो तुरन्त ही वहस छिड़ गई और भेड़ियों के शिकार के किस्से सुनाये जाने लगे।

"क्यों, वहुत सारी भेड़ें मारी गईं तुम्हारे गांव की?" किरील ने फिर से लड़कों से पूछा।

"अरे-ए, पूछो मत! भेड़ें, वत्तखें तो क्या! बसंत से जब ढोरों को चरने के लिए छोड़ने लगे, तो कमबख्तों ने गैया ही मार डाली। वाद में वस सींग और दो खुर मिले। हड्डियां तक भी ले गये।"

"तो मार क्यों नहीं डालते?"

"डंडों से मारें क्या?"

"क्या गांव में वंदूकें नही हैं?" दीविच ने भोलेपन से पूछा और किरील की ओर देखा, जो हौले से हंस पड़ा था।

"थी। पर वसंत में सव ले गये, छर्रेवाली वंदूकें भी, राइफ़िलें भी। चपानी वलवे के वाद।"

"तुम्हारे यहां क्या चपान थे?"

"नहीं, हम तो सोवियत हैं," कई लड़कों ने एकसाथ कहा।

"हमारे यहां चपान नही, अज़्याम हैं," जानकार लड़के ने कहा, और उसके सव दोस्त इस मज़ाक पर मुस्करा दिये।

"सच, कामरेड कमिसार, सुवह घेरा डालने की इजाज़त दे दीजिये," इपात ने फिर से अधीरता से कहा। "मैं हुआं-हुआं करके पता लगा आऊंगा कि उनकी मांद कहां है।"

दीविच की ओर देखने पर किरील ने पाया कि कमांडर भी शिकार में किस्मत आज़माना चाहता है, सैनिकों की भांति वह भी कमिसार की सहमति की प्रतीक्षा में प्रश्नभरी नज़रों से उसकी ओर देख रहा था।

"नहीं, अभी हमें शिकार की वात भुलानी होगी," किरील ऐसे वोला ताकि सव सुन सकें। "हमारे सिर पर ऐसा काम है, जिसे टाला नही जा सकता। शिकार करने लगे तो देर हो जायेगी। लड़ाई खत्म कर लें, फिर जी भरके शिकार करेंगे।"

"ओफ़्फ़ो!" इपात ने हाथ झटका और जल्दी से एक ओर को जाते हुए अपनी चहकती आवाज में वोला: "घड़ी भर में सफ़ाया कर देते सवका! सीधा-सादा काम है। न कहीं झंडियां-वंडियां लगानी हैं, न आड़ में वैठकर भालू की वाट जोहनी है।"

काफ़ी देर तक पड़ाव में इपात की चहकती आवाज़ और सैनिकों के अफ़सोस भरे स्वर गूंजते रहे। वे शिकार का मज़ा पाने की इस सम्भावना से उत्तेजित थे और उन्हें लग रहा था कि यह विरला मौका व्यर्थ ही खोया जा रहा है।

रात चैन से ही वीती। सिर्फ़ दो वार सन्नाटे को चीरती घिनौनी आवाज़ आई, जो शाम की आवाज़ से भी अधिक भयावह थी। तव किरील की आंख खुली थी और अंधेरे में उसने एक सैनिक को सिर उठाते देखा था, जो शायद वेचैन था, सो नहीं पा रहा था।

सुबह की हाज़िरी से पहले किरील का ध्यान फ़ौरन इस बात की ओर गया कि इपात गायब है। पर तभी एक के बाद एक दो संदेश-वाहक सैनिक अपनी-अपनी टुकड़ी की रपट लाये। आस-पास के इलाके में कहीं भी दुश्मन नहीं था, गांवों में अमन-चैन था और टुकड़ियां बेरोकटोक आगे बढ़ रही थीं।

रपट सुनकर इज़्वेकोव और दीविच अपने सैनिकों के पास गये, और तभी इपात दौड़ता हुआ उनके पास आया। उसका हुलिया देखने लायक था: टोपी कान पर खिसक आई थी, पेटी का बकलस बगल में सरक गया था, कालर के दोनों बटन गायब थे और साफ़ दिख रहा था कि उसके बूटों में पानी भर गया है।

"यहीं बगल में ही है। ये जो भोज के पेड़ हैं न, बस इनके पीछे बेरियों के झाड़ हैं, आगे बलूत के झुरमुट हैं और उनके पीछे तर ज़मीन पर चीड़ उग रहे हैं, शुरू में थोड़े-थोड़े, आगे घने हैं। बस वहीं है भट ..."

"ठहरो-ठहरो। हाज़िरी में मौजूद थे?" किरील ने उसे टोका।

"बिल्कुल। जब मेरा नाम ले रहे थे, बस तभी आ पहुंचा," इपात ने अपने कसूर के अहसास से और साथ ही चालाकी से मुस्कराते हुए जवाब दिया।

"बड़े तेज़ हो। तुम्हें पड़ाव से जाने की इजाज़त किसने दी थी?"

"पर, कामरेड कमिसार, मैं गया कहां था? पास ही तो, वो तो बस यही समझो कि सुबह जंगल हो आया।"

"ठीक है। लेकिन अगली बार ..."

"पर ऐसा बढ़िया मौका है! सारा झोल हमारी मुट्ठी में है। हाथ से निकल गया, तो बड़ा अफ़सोस होगा। कामरेड कमिसार, हैं?"

इपात किरील की ओर अनुनय भरी नज़रों से देख रहा था, वह कुछ करने को मरा जा रहा था।

किरील ने कभी भेड़ियों का शिकार नहीं किया था। हां, जब वह उत्तर में निर्वासित था, तो वहां शरद के ऐसे ही गुलाबी दिनों में कई बार किसानों के साथ ओलोनेत्स प्रदेश के जंगलों में गया था। सुनहरे जंगलों की उन सैरों की यादें बड़ी मधुर थीं, जब वह दांतों में

सीटी दबाये पीं-पीं करता और जवाब में पंख फड़फड़ाती जंगली मुर्गियां चहक उठती। किरील ने जंगल की ओर नज़र दौड़ाई। आसमान पर बादल छाये हुए थे, लेकिन हवा नहीं चल रही थी, और भोज वृक्षों की कोमल झूलती टहनियों के पीले पड़ गये सिरे सोने जैसे चमक रहे थे।

"वहां क्या दलदल है?" उसने पूछा।

"नहीं, नही, कैसा दलदल," इपात चट से बोला। वह ताड़ गया था कि बात बन रही है। "दलदल कैसा! बस ज़रा पसीजी ज़मीन है!"

"पसीजी ज़मीन पर तुम घुटनों तक गीले कैसे हो आये?"

"घुटनाडुबान रूसियों के लिए डुबान नहीं है," दीविच मुस्कराया।

"मैं कोई डूबा थोड़े ही! बस ज़रा पांव उलटा पड़ गया था। वहां सोता फैला हुआ है, गड्ढों में पानी भरा हुआ है, मैंने देखा नहीं, बस उसमें पांव पड़ गया।"

"तुम्हारे इन भेड़ियों की वजह से देर हो जायेगी हमें," किरील ने ऊपर से नाराज़गी दिखाते हुए कहा और दीविच की ओर नज़र घुमाई।

"नहीं, हम पीछे नहीं छूटनेवाले," दीविच ने विश्वासपूर्वक कहा। "हमारा रास्ता सबसे सीधा है। सभी टुकड़ियों से पहले ख्वालीन्स्क पहुंच जायेंगे।"

"अच्छा जाओ, करो इंतज़ाम," किरील ने इपात की ओर हाथ हिलाया, पर साथ ही उसे चेता भी दिया। "हां, देखो, सारे काम में दो घंटे से ज़्यादा न लगें।"

"आप बेफ़िक्र रहिये, अभी चुटकी बजाते काम होता है!" इपात की बाछें खिल गई। कभी टोपी उतारता, कभी उसे सिर पर कसता, वह पास ही खड़े सैनिकों की ओर लपका।

पर हंकाबे का इंतज़ाम करना इतना आसान नहीं था। कोई भी सिपाही हांकना नहीं चाहता था, सभी चाहते थे कि उन्हें शिकारियों की कतार में खड़ा किया जाये।

गांव के किसान भी अड़ गये। एक किसान से कहा गया कि, भले आदमी, अगर तेरी गाय को भेड़ियों ने मार डाला, तो तेरा ही नुक्सान होगा, इस पर उसने इतमीनान से थूका और फिर जवाब दिया:

"मेरी गाय को तो मार चुके हैं।"

सौदेबाज़ी होने लगी कि कौन जाये।

"जिसके पास ज़्यादा ढोर हैं, वही जाये," गरीब किसान कह रहे थे।

"कैसे भोंदू हो," इपात चिल्ला रहा था। "कुलक का एकाध ढोर-डंगर कम भी हो गया, तो उसे कोई फ़र्क नहीं पड़ता, पर जिसके पास एक ही गाय है, उसके लिए क्या बचेगा?"

"खाते-पीते घरों से ही काम के लिए पहले बुलाने का हुकुम है, वही हांकने भी पहले जायें।"

किसी ने कहा कि पुराने ज़माने में हंकवैयों को शराब दी जाती थी। इस पर सैनिक बौखला उठे: वे खुद बड़े शौक से पी लेंगे, और सच पूछो तो किमानों को उन्हें शराब पिलानी चाहिए, क्योंकि वे उन्हें भेड़ियों से निजात दिलायेंगे। किसानों के यहां घर की बनी शराब के पीपे भरे पड़े होंगे!

बस लड़के ही थे, जो सब के सब हंकावा लगाने को उतावले हो रहे थे, पर यहां भी कहा-सुनी और यहां तक कि रोने-धोने के बिना काम नहीं चला क्योंकि कुछ लड़कों को तो शिकारी ले चलने को तैयार थे, पर कुछ को छोटी उम्र की वजह से मना कर रहे थे।

आखिर दोनों दल तैयार हो गये – हाथों में डंडे उठाये लगभग तीस हंकवैये और चौदह शिकारी। इपात गम्भीरता से उन्हें समझाने लगा:

"हां तो, काम ऐसे होगा..."

सबने ध्यान से उसकी बात सुनी। उसने शिकारियों को उनकी चौकियों पर खड़ा करने का ज़िम्मा लिया, और नीकोन को हांकने का काम सौंपा।

भोज वृक्षों का झुरमुट पार करके दोनों दल अलग-अलग हो गये। शिकारी बाईं ओर को चले, हंकवैये दाईं ओर को। सब एक दूसरे के पीछे ज़रा भी खटका न करने की कोशिश करते हुए चल रहे थे।

किरील इपात के पीछे-पीछे चल रहा था। बेरियों के झाड़ के पास पहुंचकर किसी-किसी ने झुककर बेरियां तोड़नी चाहीं। पर इपात ने पीछे मुड़कर गुस्से में मुक्का दिखाया। अब वे बलूत के छोटे पेड़ों के

बीच से गुज़र रहे थे, उनके आगे कमर तक ऊंचे चीड़ के पेड़ थे। बड़ी सावधानी से उनकी टहनियां हटाकर उनके बीच से वे बढ़ने लगे। फिर तर ज़मीन आ गई, बूटों से छपछप होने लगी। इपात बार-बार पीछे मुड़ता और घूरता, उसके निःशब्द हिलते होंठों से यह स्पष्ट था कि वह ज़रा सी भी आहट करनेवालों को क्या चुनी-चुनी बातें कह रहा है।

एक वृक्षहीन स्थल पर, जहां केवल सरपत उग रहे थे, इपात सहसा रुक गया, उंगली के इशारे से उसने किरील को अपने पास बुलाया और घास के बीच रुके गेरुए पानी के दर्पण दिखाये।

"पिल्लों ने पानी पीने के लिए कुइयां खोदी हैं," उसने किरील के कान में कहा। "किनारों पर नाखूनों के निशान देख रहे हैं?"

अपनी लंबी गर्दन पर सिर को एक ओर को झुकाये थोड़ी देर तक वह सन्नाटे में कान लगाये रहा।

"अभी आवाज़ लगाते हैं, देखते हैं कहां हैं," वह फुसफुसाया।

एक बार फिर पिछली शाम की ही भांति उसने मुंह पर हथेली रखी और हुआने लगा। धीरे-धीरे यह अतुलनीय आवाज़ जंगल के पेड़ों और झाड़ियों के बीच के रिक्त स्थान भरने लगी, अंततः पूरे जंगल में फैलकर बिखर गई, पेड़ों की ऊंची चोटियों के ऊपर विलीन हो गई। देर तक इस मनहूस आवाज़ का कोई जवाब नहीं आया। फिर प्रतिध्वनि की भांति जंगल में दूर कहीं जानवर हुआने लगा और उसकी घिनौनी लंबी आवाज़ आसमान को उठने लगी। यह मादा की आवाज़ थी।

लेकिन अजीब बात थी – शिकारियों के हिसाब से आवाज़ जिधर से आनी चाहिए थी, आई उससे उलटी दिशा से: मादा शिकारियों की पीठ पीछे थी, हंकवैयों के घेरे से बाहर। इपात तनकर खड़ा हो गया, गौर से सुनने लगा, और यह अनुमान लगाने लगा कि मामला सुधारा जा सकता है कि नहीं, पर तुरन्त ही समझ गया कि अगर मादा अपने साथ बच्चों को भी ले गई है, तो फिर कुछ बात नहीं बन सकती।

सहसा सामने से जवान भेड़ियों के कुत्तों की तरह भौंकने की सी आवाज़ आई, जो मानो मां को जवाब देने में एक दूसरे से होड़ लगा रहे थे।

"यहीं हैं!" इपात प्रायः खुलकर बोल पड़ा।

अपनी खुशी छिपाना उसके बस के बाहर था, उसके चेहरे पर झट से रंग चढ़ आया और वह जल्दी-जल्दी अपने साथियों की ओर सिर हिलाने लगा कि सब ठीक होगा।

जवान भेड़िये हुआते हुए ज़ोर-ज़ोर से भौंक रहे थे, और तेज़ी से शिकारियों की ओर आ रहे थे, सो कई लोग बरबस कंधे से बंदूक उतारकर उनका निशाना लगाने को तैयार हो गये।

"शिकार पाने जा रहे हैं: मां शिकार लाई है," इपात ने फुस-फुसाते हुए समझाया।

तभी किरील ने बंदूक का घोड़ा चढ़ाया। लोहे के टकराने की खटक ज़्यादा ऊंची नहीं थी, लेकिन जंगल की प्राकृतिक ध्वनियों के लिए इतनी अस्वाभाविक थी कि भेड़िये एकाएक चुप हो गये।

इपात ने गुस्से से लाल-पीले होते हुए दोषी की ओर देखा। किरील हतप्रभ मुंह खोले खड़ा था, और उसके माथे पर पसीने की बूंदें चमक रही थीं। क्षण भर को लगा कि इपात की समझ में नहीं आ रहा कि क्या करे। फिर उसने अपने को काबू में पा लिया और जल्दी-जल्दी, परन्तु अत्यंत सतर्कता के साथ शिकारियों को चौकियों पर खड़ा करने लगा।

शिकारी झाड़-झंखाड़ भरी दो पुरानी पगडंडियों पर एक कतार में खड़े थे, जहां पगडंडियां मिलती थीं, वहां इपात ने किरील को खड़ा किया और उसके पास ही दीविच को। यह अचूक जगह थी: पिल्लों के पंजों के निशानों से पता चलता था कि वे हमेशा इधर से आते-जाते थे।

किरील चीड़ के एक छोटे से पेड़ के पीछे छिपा खड़ा था। उसकी झबरीली टहनियों में उसने झरोखा पा लिया था, जहां से अपने हिस्से को देख सकता था। इस झांके में से वह सामने कहीं-कहीं उग रहे वलूतों के मोटे तनों, बेरियों की झाड़ियों और खम्भों की भांति गुल्लों के ऊपर उठते सुनहरे चीड़ों को देख रहा था। फ़र वृक्ष यहां प्राय: नहीं थे, पर एक फ़र वृक्ष, जो आदम-कद से बड़ा नहीं था, सड़ी हुई खुत्थी के पास गिरा पड़ा था, न जाने क्यों किरील का ध्यान इसपर लगा रहा।

उसकी झेंप मिट गई थी, फिर भी कभी-कभी उसे इपात की

गुस्से भरी नज़र याद हो आती और मन इस अप्रिय विचार से परेशान हो उठता कि अगर कहीं हंकावा विफल रहा तो सारा दोष उसी पर मढ़ा जायेगा, क्योंकि उसी ने घोड़ा चढ़ाकर खटका किया था।

वह बंदूक हाथ में उठाये-उठाये थक गया, सो उसे नीचे सरका दिया। अभी तक सन्नाटा किसी भी तरह भंग नही हुआ था। पीली-पीली चित्तियो वाली एक चिड़िया ने पास ही के चीड़ के तने पर बेल की भांति चढ़ते हुए उसका निरीक्षण किया। वह चहकी और गिरे पड़े फ़र वृक्ष पर आ बैठी, और फिर जंगल के अंदर को उड़ गई। उसके पीछे ऐसे ही फुर्तीले पछियों का पूरा झुंड का उड़ चला – न जाने कहां से वे निकल आये थे। किरील को भीग गये पांवों में ठंड लगने लगी थी, उसने इधर-उधर नजर दौड़ाई कि कहीं बैठने की जगह है या नही।

सहसा दूर कही दागी गई गोली ने सन्नाटे को चीर दिया। गोली छूटने की आवाज मानो दो आवाज़ों में बंट गई – आह और सीटी में, आह एक के बाद दूसरे पेड़ से टकराती दौड़ चली, जबकि सीटी की आवाज सीधी आसमान मे उड़ गई।

फिर धीरे-धीरे मानो जंगल की गहराई में समाती हुई और फिर उसके सिरों को उठती हुई चीखें आने लगी, जो मानव कंठ से निकली नहीं लगती थीं। आरम्भ में इसमें लड़कों की चिल्ल-पों और किसानों की जोरदार लो-हो, लो-हो सुनी जा सकती थी। पर चीखें, सीटियां, तनों पर डंडों की ठकाठक – सब आवाज़ें बड़ी तेज़ी से एक कर्णभेदी शोर मे मिलती जा रही थी।

सभी हंकवैये एकसाथ शिकारियों की ओर बढ़ चले।

एक गोली मानो संकेत के तौर पर छूटी, तुरन्त ही किरील ने अपनी बंदूक उठा ली, अपने झांके पर झुक गया और आंखें गड़ाकर सहसा मानो नई उग आई झाड़ियों को देखने लगा। एक-एक टहनी, एक-एक पत्ती असाधारणतया स्पष्ट हो गई। पेड़-पौधों की स्तब्ध निश्चलता का हवा को चीरते कोलाहल से मानो कोई मेल ही नही बैठ रहा था। लगता था जैसे एक साथ ही सारा जंगल उखाड़ा जा रहा हो, और ज़मीन में से खींची जा रही जड़ें और खुद ज़मीन भी कराह रही है, चीख-पुकार रही हैं।

शिकारियों की कतार में एक गोली चली।

कराह क्षण भर को क्षीण पड़ गई, पर तुरन्त ही और भी अधिक तीखी हो गई। किरील महसूस कर रहा था कि उसकी एक-एक मांस-पेशी तन गई है। यकायक उसका सारा शरीर सुन्न हो गया: दाईं ओर को जहां से गोली चलने की आवाज़ आई थी, धड़ाधड़ गोलियां चलने लगीं।

लगता था मानो बच्चे चौड़े पत्तों पर कोड़े मार रहे हों। हर चोट मानो किरील को सटकार जाती। वह बंदूक के कुन्दे को कंधे में ज़ोर से गड़ाये जा रहा था और आंखें फाड़-फाड़कर सामने देखे जा रहा था, पलकें झपकाते हुए भी डर रहा था, जिससे आंखों में भर आये पानी से पलकों में जलन हो रही थी।

तभी गिरे हुए फ़र वृक्ष के पीछे, जिसकी ओर पहले ही किरील का ध्यान गया था, पेड़ की चोटी के ऐन तले सफ़ेद सा धब्बा दिखा। सहसा मानो किरील बहरा हो गया। पल भर में ही न हंकवैयों का कोलाहल रहा, न बंदूकों की ठायं-ठायं – सारा संसार इस धब्बे में सीमित होकर रह गया।

बड़े से माथे के दोनों ओर छोटे-छोटे कानों वाला थूथन काली लाख सी चमकती आंखों से पगडंडी की ओर देख रहा था। ऊंचे उठे कंधों में सिर को दबाये भेड़िया संभल-संभलकर बढ़ रहा था।

अचानक उसने छलांग भरी, उसका लचकीला शरीर फ़र वृक्ष के ऊपर फैल गया, मानो भेड़िये ने अपने शरीर को वृक्ष के पार उंडेल दिया।

किरील ने निशाना इस क्षण से पहले ही साध लिया था, पर उंगली ने लिबलिबी छलांग लगने के क्षण पर ही दबाई। बंदूक की ठायं के साथ ही भेड़िये का चीत्कार गूंजा। छलांग भरते हुए ही उसने पिछली टांग की ओर सिर फेंका, मानो अपना पीछा करनेवाले को काट रहा हो। फिर वह गिर पड़ा। दो बार उसने अपने पुट्ठे पर दांत मारे और उसकी घरघराती सांस के साथ बाल उड़े। अगली टांगें जल्दी-जल्दी चलाते हुए और घायल पुट्ठे को घसीटते हुए वह किरील से बाईं ओर को रेंगने लगा। कभी-कभी वह पिल्ले की भांति किकिया उठता।

किरील देख रहा था कि घायल भेड़िया हाथ से निकल सकता है, और दूसरी बार गोली दागने को तैयार था। लेकिन जब तक भेड़िया

पगडंडी पार कर रहा था, गोली चलाना खतरे से खाली न था, क्योंकि बिल्कुल पास ही कहीं दीविच अपने स्थान पर खड़ा था। इस क्षणिक हिचकिचाहट का लाभ उठाकर भेड़िया शिकारियों की लाइन पार कर गया, घेरे से बाहर निकल गया। वह झाड़ियों में छिप गया।

गोली दागने के तुरन्त बाद ही किरील की सभी इन्द्रियां फिर से सक्रिय हो उठीं। अब गोलियां नहीं चल रही थीं, हंकवैयों का होहल्ला भी कम हो रहा था। अपनी चौकी छोड़कर वह भेड़िये के पीछे लपका। पत्तियों के पीछे उसे भेड़िया दिखाई दिया और उसकी गुर्राहट सुनाई दी। भेड़िया अगली टांगें सामने फैलाये बैठा था। उसकी पीठ के काले बाल खड़े हुए थे। उसकी लटकती जामुनी जीभ और मुंह पर रोयें चिपके हुए थे।

तभी कहीं गोली चली और किरील ने भी निशाना साधे बिना ही गोली दाग दी। भेड़िये का सिर झुका और वह मानो पसर गया।

खेल खत्म हो गया था, पर किरील हिले-डुले बिना खड़ा था।

अपनी चौकी छोड़कर किरील ने नियमों का उल्लंघन किया था। दीविच घायल भेड़िये को देख सकता था और उसके पास जाते किरील से अनजाने गोली चला सकता था। यह काफ़ी बड़ा खतरा था। इसे तुरन्त ही गोली दागकर टाला जा सकता था, हालांकि जल्दी करने की कोई ज़रूरत नहीं थी, क्योंकि भेड़िया बैठ गया था और उसमें इतना दम नहीं रहा था कि दूर निकल जाता। साथ ही किरील के गोली चलाने से दूसरे भेड़िये, जो शायद अन्य चौकियों पर आ निकलते, डरकर भाग जा सकते थे। पर इस खतरे के साथ-साथ कि दीविच किरील को देखे बिना गोली चला सकता है, किरील के मन में यह डर भी उठा था कि कोई और भेड़िये का काम तमाम कर सकता है और तब शिकार उसका होगा। किरील को गोली छोड़नी ही थी!

अब जबकि भेड़िया मारा जा चुका था, किरील बिजली की तरह दिमाग में कौंधे इन सब विचारों की बारीकी में जा रहा था। और अब कहीं जाकर सहसा वह यह समझा था कि इन सब विचारों के अलावा उसने इस अचेतन डर से भी गोली चलाई थी कि घायल जानवर खूंख्वार हो उठा है। और यह मानते ही कि उसे इस बात का डर रहा था, वह शर्मिंदा हो उठा, और उसे लगा वह पसीने से तर हो गया है।

"क्यों? कर दिया काम तमाम?" उसे दीविच की आवाज़ सुनाई दी।

इस आवाज़ में इतना हर्षमय गर्व था, कि सहसा किरील आशंकित हो उठा: घायल जानवर को दीविच ने ही नहीं मारा? दीविच ने ही तो पहले गोली चलाई थी?

"आपके हाथ लगा?" जवाव देने के वजाय उसने पूछा; वह अभी तक ज्यों का त्यों खड़ा था।

"ज़रूर!" दीविच ने वैसे ही सगर्व कहा, और किरील को पास ही झाड़ी की खड़खड़ सुनाई दी।

तब वह अपने शिकार की ओर दौड़ पड़ा। उसका कलेजा वल्लियों उछल रहा था। भेड़िये का कान पकड़कर उसने उसका धड़ी भर का सिर उठाया और ज़मीन पर दे फेंका।

"उफ़, शैतान की औलाद!" किरील फूला न समा रहा था। कभी वह भेड़िये के नरम, खाली पेट पर ठोकर मारता और कभी उसकी गरदन के सख्त वालों पर हाथ फेरता।

झाड़ियों के पीछे से दीविच प्रकट हुआ – फुर्तीला, चेहरा खिला हुआ। भेड़िये की पिछली टांग उठाकर उसने उसे उलटा-पलटा।

"पुट्ठे में लगी गोली? और मैंने अपने को एक वार में ही ढेर कर दिया – कंधे में मारा। सुना था आपने?"

"पर मेरे साथ हुआ यह," किरील झट से वोला और वड़े जोश से विस्तारपूर्वक यह वताने लगा कि कैसे जिस क्षण उसने गोली दागी, ठीक उसी क्षण भेड़िये ने भी छलांग भरी, कैसे भेड़िया निकले जा रहा था और उसे दूसरी गोली से उसका काम तमाम करना पड़ा। वस यह नहीं वताया कि उसने बैठे हुए भेड़िये पर गोली चलाई थी।

उनकी आवाजें सुनकर कुछ हंकवैये उधर आ गये और कौतूहलवश शिकार को घेरकर खड़े हो गये। उनमें से एक के गाल पर खरोंच आ गई थी और कमीज़ का वाज़ू फट गया था। उसने गाल पर उंगली फेरी और खून दिखाते हुए वोला:

"मुई टहनियों ने छील मारा। खाली शराव से आपको छुट्टी ना मिलेगी।"

"खुश होना चाहिए कि इन शैतानों का सफ़ाया कर दिया," किरील ने हंसकर कहा और भेड़िये को ज़ोर से ठोकर मारी।

"किसी को खुशी मिले, किसी को कुछ और," बाजू के फटे सिरों को सटाते हुए हंकवैये ने कहा और फिर आंखें भींचकर किरील की ओर देखा: "भेड़िया तो हाथ से निकल चला था न? लैन से दूर जाके मारा..."

"हाथ से कहां निकला?" किरील ने गुस्से से उसे टोका और फिर से सारी बात बताने लगा। उसका जोश ठंडा नहीं पड़ रहा था, बल्कि बढ़ता ही जा रहा था।

हंकवैयों ने चीड़ का छोटा सा पेड़ तोड़ा, उसकी टहनियां साफ़ करके लंबा डंडा बनाया और उसे भेड़िये की बंधी हुई टांगों के बीच डालकर कंधों पर उठा लिया। किरील उनके पीछे-पीछे चला। विजेता की भांति वह भेड़िये की ज़मीन से टकराती काली नाक को देखे जा रहा था और जंगल में से आते जा रहे हंकवैयों को अपने शानदार पहले वार की कहानी खूब चुस्कियां लेकर सुनाता जा रहा था, पर दूसरे वार के बारे में चुप्पी साधे था।

शिकारियों ने कुल चार दो साला भेड़िये मारे थे। उनका ढेर लगा दिया गया। भेड़िये हूबहू एक दूसरे जैसे थे, जैसे कि जुड़वें ही हो सकते हैं। उनकी खाल प्राय: जाड़ों के रंग की हो चुकी थी – पीली-सुरमई सी, पीठ और पंजों पर काले-काले चिकत्ते, पेट और बगलों पर सफ़ेद रोयें। उनकी आंखें कसकर मुंदी हुई थीं, मानो संसार छोड़ते हुए चारों के चारों उसे न देखने की कोशिश करते रहे हों।

ढेर के इर्द-गिर्द घेरा बनाकर खड़े शिकारियों और हंकवैयों ने जब यह पता लगा लिया कि किसने कैसे अपना शिकार मारा, तभी किसी ने व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहा:

"इपात का क्या हुआ? वह क्या खाली हाथ है?"

इधर-उधर देखा: इपात का कहीं पता न था। वे उसे पुकारने लगे, पर कोई जवाब नहीं मिला। तब यह बहस होने लगी कि इपात खुद कहां खड़ा हुआ था। किसी को ढंग से कुछ पता न था, क्योंकि वही सब शिकारियों को उनकी चौकियों पर खड़ा करता रहा था, और खुद कहां खड़ा हुआ था, किसी ने यह जानने की कोशिश न की थी। जिस शिकारी को उसने सबसे बाद में चौकी पर खड़ा किया था, उसे भी यह याद नहीं था कि इपात किधर गया था: लगता था दाईं

ओर को गया था, पर हो सकता है बाईं ओर गया हो। यह बहस भी छिड़ी कि जब हंकवैये बढ़ने लगे, तो शिकारियों की कतार में सबसे पहले गोली किसने चलाई थी। हर कोई कह रहा था कि पहले किसी और ने गोली चलाई थी।

"पर आप लोग यों अंधाधुंध गोलियां क्यों चलाने लगे?" दीबिच ने पूछा। "इतनी गोलियां बेकार कर दीं – पूरी पलटन के लड़ने के लिए काफ़ी होतीं। वाह रे, शिकारियो!"

"हमने सोचा, कामरेड कमांडर, कि कोई बचकर न निकलने पाये, सो बस दबादब गोलियां चलाने लगे।"

तभी भयभीत नीकोन आगे आया, और बोला कि उसके ख्याल में सबसे पहले गोली इपात ने ही चलाई थी।

"मेरे इशारे के बाद जब हम हांकने लगे, तो थोड़ी देर बाद ही मैंने ठायं की आवाज़ सुनी, साथ ही जैसे सीटी सी बजी। मैंने सोचा इपात ही है, उसी की बंदूक यों सीटी छोड़ती है। परले रोज़ वह मुझसे कह भी रहा था कि बंदूक का गला बैठा हुआ है, नाली में बाल है। उसने गोली चलाई, और फिर सब लगे गोलियां छोड़ने। इपात उधर सिरे पर था।"

इस सारी बातचीत से किरील इतना चिंतित हो उठा कि उसके मन में न विजय की भावना का, न निशाना चूकते-चूकते बचने की झेंप और न ही अपने क्षणिक भय पर लज्जा का ही नामोनिशान रह गया। अब मानो पहली बार वह पूरी तरह से यह समझा कि वही सारे शिकार के लिए और इपात के साथ जो कुछ भी हो उसके लिए भी उत्तरदायी है, बल्कि अकेले इपात के लिए ही नहीं, दीबिच से लेकर गांव के छोकरों तक के लिए, जो मज़ा लेने की खातिर हंकवैयों के साथ हो लिये थे, सबके लिए वही उत्तरदायी था।

कुछ सैनिकों को सारी लाइन देखने के लिए भेजकर, जहां शिकारी खड़े थे, किरील ने नीकोन को अपने साथ लिया और उधर चला, जहां उनके खयाल में इपात खड़ा हुआ था। उन्होंने वे सारी झाड़ियां-बाड़ियां छान मारीं, जहां शिकारी छिप सकता था, उन्होंने आवाज़ें लगाईं, दूर से आती साथियों की आवाज़ों को कान लगाकर सुनते रहे, और आखिर वापस लौट आये। दूसरे सब लोग भी लौट आये थे – इपात कहीं नहीं मिला था।

हकवैयों ने शिकार कंधों पर उठाये और सब लोग उनके पीछे हो लिये।

रास्ते में किरील ने दीविच से कहा :

"क्या यह मुमकिन है कि अनजाने में इपात को गोली लग गई हो? वह तो पुराना शिकारी है। नहीं, ऐसा नहीं हो सकता!"

"मुझे कुछ और ही ख्याल आ रहा है," दीविच ने जवाब दिया। "कहीं इपात हमें गांव में तो नहीं मिलेगा?"

किरील भौंचक्का सा रुक गया।

"कहीं इपात शर्म के मारे तो नहीं भाग गया? कहता था लड़कपन से भेड़ियों का शिकार करता आया है, उसी ने सबको शिकार के लिए तैयार किया, और शिकार उसी के हाथों से निकल गया!"

"नहीं, यह तो कुछ बात नहीं बनती," किरील ने पूरे निश्चय से कहा, पर फिर भी सोचने लगा, और ज्यों-ज्यों वे पड़ाव के पास पहुंचते जा रहे थे, त्यों-त्यों उसके मन में यह आशा बढ़ रही थी कि शायद दीविच की बात ही सही हो।

परन्तु गांव पहुंचकर निराशा उनके हाथ लगी: इपात नहीं लौटा था। शीघ्र ही यह खबर फैल गई कि सैनिकों ने भेड़ियों के झोल को मार डाला है, और साथ ही किसानों को एक शिकारी के लापता होने की बात भी पता चली। इपात को ढूंढ़े बिना वे कूच नहीं कर सकते थे, सो किरील ने दीविच से सलाह-मशविरा करके फिर से कुछ सैनिकों को जंगल में भेजा।

दोपहर हो चली थी। किरील दिन के खाने की प्रतीक्षा में खुली खिड़की के पास बैठा था। छप्पर तले पड़े भेड़ियों के पास शरारतें कर रहे लड़कों की आवाजें आ रही थीं, और जानवरों की गंध पाकर कुत्ते बेतहाशा भौंक रहे थे। शरद के गुलाबी दिनों में जैसा कि प्रायः होता है, सुबह से आसमान पर छाये बादल दोपहर होते न होते छंट गये और सुहावनी धूप निकल आई, जिससे धरती पर कोई छाया नहीं पड़ रही थी।

उसी क्षण किरील को जंगल से निकलकर गांव की ओर आते तीन पथिक दिखे। तीनों अगल-बगल धीरे-धीरे चले आ रहे थे। एक के हाथ में पोटली थी, बाकी दो कंधों पर झोले उठाये थे। जब वे कुछ

पास आ गये, तो यह दिखाई देने लगा कि उनके पीछे एक और आदमी है, जो इन तीनों की पीठ पीछे छिपा हुआ है। फिर यह भी दिखने लगा कि पोटली उठाये आदमी अपने खाली हाथ से छाती से कुछ दबाये हुए है और उसे इसमें कठिनाई हो रही है, क्योंकि वह एक ओर को झुका-झुका चल रहा है।

गांव के पास ही एक गड्ढे से बचकर निकलते हुए तीनों अलग-अलग हुए, और किरील ने देखा कि उनके कोई पांच कदम पीछे चलता चौथा आदमी बंदूक ताने हुए है। किरील उछलकर खड़ा हुआ और धड़ खिड़की से बाहर निकाला – चौथा आदमी इपात था।

बंदियों पर अपनी पीली आंख गड़ाये इपात भारी कदम उठाता चल रहा था और उसकी बंदूक कदमों की ताल पर हिल रही थी।

किरील घर के अलिंद पर आ खड़ा हुआ। किसान और सैनिक अहाते के खुले फाटक के पास जमा हो गये और चुपचाप नवागंतुकों की प्रतीक्षा करने लगे। लड़के एक दूसरे को धकेलते गली से अहाते में दौड़ आये।

इपात तीनों को अहाते में ले आया और फिर फ़ौजी ढंग से आगे बढ़कर उसने बंदूक नीची की। उसकी खुली कमीज़ में से पसीने से गीली छाती नज़र आ रही थी, जो उसके संवलाये ताम्रवर्ण चेहरे की तुलना में बिल्कुल सफ़ेद लग रही थी। सारे अहाते में उसकी रपट गूंजी।

"कामरेड कमिसार! कुल गिनती तीन आदमी मैंने जंगल में गिरफ़्तार किये हैं। एक भागने की कोशिश में मेरी गोली से घायल हुआ है।"

दो बंदी अधेड़ उम्र के थे। उनके दढ़ियल चेहरे उतरे हुए थे और वे काफ़ी थके-मांदे लगते थे, रुकते ही उन्होंने अपने कंधों का बोझा उतारा – एक ने किरमिच का झोला और दूसरे ने रस्सी से बंधी गठरी। तीसरे ने भी अपनी पोटली नीचे रखी, वह मुश्किल से झुका था और फिर तुरन्त ही उसने खून से रंगे कपड़े में लिपटी बांह पकड़ ली थी। इस घायल हाथ को थोड़ा ऊपर उठाकर उसने दूसरे हाथ से अपनी टोपी उतारी, पसीने से तर एकदम गंजे सिर पर हाथ फेरा और नाक पर खिसक आई ऐनक ठीक की।

जैसे ही उसने टोपी उतारी और अलिंद पर खड़े कमिसार को देखने के लिए ऐनक के पीछे नजर ऊपर उठाई, तत्क्षण किरील की भौंहें तन गई, और उसने ठिठककर चौखट पर कंधा टिका लिया।

गंजा आदमी लोहे के पतले फ़्रेम वाली अपनी ऐनक के पीछे से उसकी ओर देखता जा रहा था, उसके चेहरे में कोई परिवर्तन नहीं आया था, बस उसने फिर से अपनी घायल बांह को स्वस्थ हाथ पर टिका लिया था।

"इनके लिए पहरा तैनात कर दो," किरील ने धीरे से आदेश दिया। "और तलाशी लो।"

२८

इपात ने इज़्वेकोव को जो घटना सुनाई वह इस प्रकार थी।

शिकारियों की कतार में अंतिम चौकी पर खड़ा होकर इपात उस ओर ध्यान देने लगा, जिधर से पिल्लों के भौंकने के जवाब में मादा भेड़िये की आवाज आई थी। उसका अनुमान था कि मां बच्चों की आवाज़ सुनकर आयेगी, और यह बात सही निकली। जिस तरह पिल्लों का भौंकना सहसा बंद हुआ था, उससे मां को कुछ शक हो गया था और वह बड़ी सतर्कता से दुबक-दुबककर भट की ओर बढ़ रही थी, पर शिकारियों की लाइन के पास आ निकली। जैसे ही हंकवैयों का हल्ला हुआ, वह पीछे लपकी और उसी वक्त इपात ने उसे देख लिया और गोली दाग दी। इस उम्मीद में कि वह बूढ़े भेड़िये को मार पायेगा, उसने घेरे की परवाह न करके अपनी चौकी छोड़ दी। जिस ओर उसने गोली छोड़ी थी, वहां झाड़ी पर उसे खून के निशान दिखे और वह घायल भेड़िये के पीछे दौड़ा। चौकी से दूर जाते हुए खून के निशान कम होते जा रहे थे और आखिर बिल्कुल गायब हो गये। लेकिन इपात हठपूर्वक भेड़िये को ढूंढ़ता जा रहा था। हंकवैयों के हो-हल्ले के बाद जंगल शांत हो चुका था, पर वह बीहड़ जंगल में बढ़ता जा रहा था। आखिर हेजल की झाड़ियों के घने झुरमुट में उसे एक धब्बा सा दिखा, जिसे भेड़िया समझकर वह गोली दागने ही लगा था। पर यह धब्बा झोला निकला, जिसके पास ही गठरी और पोटली रखी हुई थीं, और उनके

पीछे लोग खुद गठरी से बने छिपे बैठे थे। इपात ने उन्हें बाहर निकलने और अपना-अपना सामान उठाने को कहा। बंदूक कसकर पकड़के वह उन्हें जंगल में ले चला, उनकी सारी आपत्तियों का एक ही, सदियों से परखा हुआ जवाब देता जाता: "वहां पहुंचकर सब पता चल जायेगा!" जब तक उसने यह हिसाब लगाया कि किस दिशा में जाना चाहिए, काफ़ी समय बीत गया। जब वे जंगल में एक खड्ड के पास से गुज़र रहे थे, तो एक आदमी उसमें कूदा। इपात ने गोली चलाई, जो उसकी कलई पर लगी, और फिर से गोली चलाने की धमकी देकर उसे खड्ड में से निकलने पर विवश किया। उसने भगोड़े को गठरी में से बनियान निकालकर हाथ पर पट्टी बांधने दी, और फिर गांव तक आते हुए सारे रास्ते कोई गड़बड़ी नहीं हुई – सूरज निकल आने से इपात को पता चल गया था कि किधर जाना चाहिए।

कैदियों को कोठार में बंद करने से पहले किरील ने उनसे यह पूछने को कहा कि वे कहां से आ रहे हैं और किधर जा रहे हैं। उन्होंने जवाब दिया कि तीनों ख़्वालीन्स्क नगर से वोल्गा के पार जा रहे हैं। इपात से यह सुनकर किरील ने कैदियों को वापस ख़्वालीन्स्क ले जाने का फ़ैसला किया, पर पहले यह पता लगाने की सोची कि वे इस यात्रा पर निकले क्यों। उसने इन तीनों आदमियों में से सबसे पहले उस आदमी को उसके पास लाने का आदेश दिया, जो यह कहे कि वह ख़्वालीन्स्क का पुराना निवासी है। दीविच को अपने मन की बात बताये बिना उसने कमांडर को वहां उपस्थित रहने को कहा।

धीर-गम्भीर से लगते दढ़ियल व्यक्ति को अंदर लाया गया, खासे फटीचर कोट के नीचे वह मफ़लर डाले था। उसने किरील को बताया कि वह ख़्वालीन्स्क का ही रहनेवाला है, वोल्गा के पार मालीय् इर्गीज़ में उसके रिश्तेदार रहते हैं, और वह उन्हीं के पास जा रहा है। यह पूछने पर कि वे लोग जंगल में क्यों छिपे हुए थे, उसने जवाब दिया कि तीनों हो-हल्ले और गोलियां चलने से डर गये थे, सोचा कि जब तक सब शांत नहीं हो जाता, तब तक छिपकर बैठे रहें, और जंगल से इसलिए जा रहे थे कि उधर से रास्ता छोटा पड़ता है। किरील ने यह जानना चाहा कि उसके हमसफ़र कौन हैं और बूढ़ा उन्हें कब से जानता है। इस पर उसने कहा कि वे ख़्वालीन्स्क में नये लोग हैं,

पर वह उन्हें जानता है, और उनमें से एक उसका किरायेदार है।

"जो घायल है वह?" किरील ने पूछा।

नहीं, घायल आदमी को बूढ़ा खास अच्छी तरह नहीं जानता था। उसका कुलनाम वोद्किन है, ख़्वालीन्स्क में कोई दो साल पहले आ बसा है, वैसे पेंज़ा का रहनेवाला है, उसके पास अपना बाग है, जो उसने यहां आकर खरीदा था।

"मतलब क्रांति के बाद ख़्वालीन्स्क में आ बसा?"

"हां, लगता तो यही है। हो सकता है लड़ाई के दिनों में आया हो।"

"अच्छा, आप तो अपने रिश्तेदारों के यहां जा रहे थे पर आपके साथियों के भी क्या वहां कोई सम्बन्धी हैं?"

बूढ़े के शब्दों में उनका साथ संयोगवश ही हो गया था: वह और उसका किरायेदार इर्गीज़ जा रहे थे, क्योंकि वहां आस-पास लड़ाई नही हो रही थी, और वोद्किन इस उम्मीद में उनके साथ हो लिया था कि वोल्गा पार से मधुमक्खियों के दो-तीन छत्ते ले आयेगा – उस ओर की मधुमक्खियां मशहूर थीं। वोद्किन को वह जानता इसलिए था कि वह उसके पास ऐनक का फ़्रेम बदलवाने आया था (बूढ़ा ऐसे छोटे-मोटे काम किया करता था)।

"पहले उसकी ऐनक सुनहरी थी?" किरील ने पूछा।

"जहां तक मुझे याद है फ़्रेम सोने का था।"

"आपका किरायेदार कौन है?"

बूढ़े का किरायेदार आर्थोडोक्स ईसाई धर्म का अनुयायी था, जो सेराफ़ीम मठ में मठवासी होने आया था, पर अभी उसे वहां जगह नहीं मिली थी। मठ में जगह की कमी थी, लोग बहुत आ रहे थे, और मठ छोटा सा था। इस आदमी का कुलनाम था – मेरकोव।

"सरातोव का रहनेवाला है?"

"जी हां।"

"नाम क्या मेरकूरी अव्देयेविच है?"

दीबिच बड़े ध्यान से बातचीत सुन रहा था, और इस क्षण उसके लिए यह कहना कठिन था कि कौन अधिक आश्चर्यचकित है – यह सवाल सुनकर बूढ़ा या सकारात्मक उत्तर पाकर इज़्वेकोव।

किरील जड़वत बैठा था, मानो उसके विचार कहीं दूर भटक गये थे और अब उसके सामने जो था, उस पर उन्हें लाने के लिए उसे बहुत जतन करना पड़ रहा था। फिर उसने बूढ़े को ले जाने का आदेश दिया और दीबिच से कहा:

"मैंने सोचा था इस तिकड़ी में मेरा एक पुराना परिचित होगा, पर निकल दो आये हैं। अजीब बात है।"

"क्या अजीब नाम है, मेरकूरी?"

"पुराने रूसी नाम मेरकूल का ही दूसरा रूप है... अच्छा, देखते हैं," और किरील फिर से अपने विचारों में डूब गया।

वोद्किन को अंदर लाया गया। अपना घायल हाथ छाती से सटाये वह डगमगा रहा था, उसका धड़ आगे-पीछे झूल रहा था।

"क्या मैं डाक्टर को हाथ दिखा सकता हूं? घाव परेशान कर रहा है," बेंच पर बैठते हुए उसने कहा।

किरील बड़ी देर तक गौर से उसे देखता रहा। इस आदमी की उम्र पचास-साठ के बीच थी। उसका सिर विचित्र था – दोनों ओर से दबा हुआ, माथा आगे को निकला हुआ, और गुद्दी पर, जो हूबहू माथे जैसी थी, गुमटे जैसा उभार। पीली सी बरौनियों के वक्रों के बीच जड़ी उसकी आंखों में एकाग्रता और असंतोष था।

"चिकित्सा सहायक पट्टी बांध देगा," काफ़ी देर चुप रहने के बाद किरील ने जवाब दिया। "आपको जब पकड़ा गया, तो भागे क्यों थे?"

"मैंने सोचा बदमाशों के हाथ पड़ गया हूं।"

"तो डरकर भागे थे?"

"हां। सुना है किसी मिरोनोव के सिपाही पास के जिले से इधर आकर लूट-पाट कर रहे हैं।"

"जब चारों ओर ऐसा खौफ़ फैला हुआ है, तो आपने सफ़र पर निकलने की हिम्मत कैसे की?"

"ज़रूरत थी इसलिए। उस ओर कुछ छत्ते मिलने की उम्मीद थी। मैं मधुमक्खियां पालता हूं।"

"अच्छा, मधुमक्खियां पालते हैं? बहुत दिनों से?"

"नहीं, ज़्यादा दिन नहीं हुए। बुढ़ापे में कुछ तो करना चाहिए।"

"पहले क्या करते थे?"

"नरोव्चात में पैरवी करता था।"

"हुं, तो अदालत में थे?"

"दीवानी मामलों की पैरवी करता था।"

"सिर्फ़ दीवानी मामलों की?" थोड़ी देर रुककर किरील ने जानना चाहा।

"सिर्फ़ दीवानी मामलों की।"

"आपके पास कोई दस्तावेज़ है?"

"आपको दिया नहीं गया? अभी तलाशी के वक्त सिपाहियों ने ले लिया था।"

"पासपोर्ट?"

"जी हां, पासपोर्ट।"

"क्या लिखा है उसमें?"

"आप खुद देख लेते। कोई खास बात नहीं। जन्म पेंज़ा में हुआ। रिहायश – नरोव्चात, पेशा – अर्ज़ीनवीस। जब मुझे पासपोर्ट मिला था, तो मैं अर्ज़ीनवीस था, सो यही लिखा हुआ है।"

"मतलब ख़्वालीन्स्क से पहले नरोव्चात में रहते थे?"

"लगभग सारी उम्र वहीं रहा हूं।"

"सरातोव में नहीं रहे?"

"नहीं सरातोव तो नहीं गया। सिम्बीर्स्क, समारा जाना पड़ा था। हां, पेंज़ा में रहा। एक बार मास्को भी गया था। त्रेत्याकोव गैलरी देखी थी। चित्रकला का शौक है।"

"कुलनाम क्या है आपका?"

"वोद्किन। इवान इवानोविच वोद्किन।"

"एक ही कुलनाम है?"

"क्या मतलब?" वह हैरान हुआ।

"मेरा मतलब है, कुछ लोगों के दोहरे कुलनाम होते हैं। एक ही व्यक्ति के दो-दो कुलनाम।"

"हां, हां! होते हैं। ख़्वालीन्स्क का ही एक है, आधा कुलनाम मेरे जैसा ही है उसका – पेत्रोव-वोद्किन। सुना है आपने? मशहूर चित्रकार है।"

"देखा," किरील थोड़ा उठ गया, "कितनी अच्छी मिसाल दी है! आधा नहीं, तकरीबन पूरा ही मिलता है।"

"मिलता कैसे है?" वोद्किन ने आहत स्वर में कहा।

"उसका दूसरा कुलनाम भी 'प' से शुरू होता है!"

किरील अपने स्वर में विजय का भाव मुश्किल से दबा पा रहा था। वोद्किन ने दायां हाथ सूखे खून से सख्त पड़ गई पट्टी पर रखा और फिर से उसका धड़ आगे-पीछे झूलने लगा।

"दर्द हो रहा है?" उसकी उंगलियों को गौर से देखते हुए किरील ने पूछा।

दीबिच बेचैन सा खिड़की की ओर मुड़ गया।

"हां," वोद्किन ने धीरज से उत्तर दिया, पर तुरन्त ही और अधिक आहत स्वर में बोला: "मेरी समझ में नहीं आता, कामरेड कमिसार, आप जानना क्या चाहते हैं। सोवियत नागरिकों के साथ ऐसा बर्ताव नहीं किया जाता। पता नहीं किस बात के लिए गिरफ़्तार कर लिया, और ऊपर से डाक्टरी मदद भी नहीं दे रहे। यह कानून के खिलाफ़ है।"

"हां-हां, कानून आप खूब जानते हैं!" किरील चिल्ला उठा। "घबराइये नहीं, आपकी मरहमपट्टी कर दी जायेगी। और कानून का भी पालन होगा, पर उस कानून का नहीं, जिसका पालन आप करते थे।"

"यह मेरे लिए कोई उलाहना नहीं है। मेरी कोई खास हस्ती नहीं थी, तो भी जो सच्चे थे उनकी रक्षा को मैं सदा तत्पर रहता था।"

"हां, रक्षा करना आप ख़ूब जानते थे," किरील ने हामी भरी, उसकी आंखें अभी भी वोद्किन के हाथ पर लगी हुई थीं। "तब तो आपकी पकड़ कहीं अधिक मज़बूत थी। आप तब नाखून बढ़ाया करते थे न, खूब पालिश हुए नाखून?"

वोद्किन ने धड़ झुलाना बंद कर दिया और सिर हिलाया।

"आप मुझे कोई दूसरा आदमी जाहिर करना चाहते हैं। या शायद सचमुच ही मुझे कोई और आदमी समझ बैठे हैं?"

"नहीं, बिल्कुल नहीं। मैं आपको वही समझ रहा हूं, जो आप असलियत में हैं।"

वोद्किन ने मुस्कराते हुए और मानो कुछ सोचते हुए अपनी मैली उंगलियों पर नजर डाली।

"आजकल तो देहातियों की तरह सब काम खुद ही करने पड़ते हैं। पहले तो हाथ साफ़ होते थे।"

"खैर साफ़-वाफ़ तो खास कभी नहीं रहे।"

"पता नहीं, क्या कहना चाहते हैं आप..."

"हां, वैसे पहले आपकी हर बात में नफ़ासत थी। ऐनक सुनहरी थी।"

"सुनहरी ऐनक मेरे पास कभी नहीं थी।"

"यह कैसे हो सकता है! जब आपने छोटे से शहर ख़्वालीन्स्क में बसने की सोची, तो आपको सब कुछ बदलना पड़ा – कपड़ों से लेकर पासपोर्ट तक। पर नई ऐनक खरीदने की फ़ुरसत नहीं मिली। शायद जल्दी में थे। और यह जो फ़्रेम अब आपका है – यह ख़्वालीन्स्क का है। हां, ऐनक तो देर-सबेर बदली जा सकती हैं, पर सिर तो नहीं बदला जा सकता। यही तो मुसीबत है।"

घाव को भूलकर बोद्किन ने हैरत दिखाने के लिए दोनों हाथ उठाये, पर तुरन्त ही पट्टी वाला हाथ छाती पर दबा लिया।

"लगता है कामरेड कमिसार, आप सचमुच मेरी बाबत गलत-फ़हमी में हैं।"

स्टूल को ठोकर मारकर किरील उठ खड़ा हुआ, भिंचे दांतों में से उसने हवा खींची, मानो अभी चीख पड़ेगा। पर चीखने के बजाय वह बिल्कुल साफ़-साफ़, और पहले से भी अधिक शांत स्वर में बोला:

"हमारी जीवनियां आपस में अच्छी तरह गुंथी हैं, हालांकि देखा जाये तो उनमें... कोई समानता नहीं है। आपने मेरी जीवनी की भूमिका लिखने की कोशिश की थी, और अब मैं आपकी जीवनी का उपसंहार लिखूंगा।" वह क्षण भर को चुप रहा और फिर मानो एक-एक अक्षर टाइप करता हुआ बोला: "राजनीतिक पुलिस के लेफ़्टिनेंट कर्नल पोलोतेन्त्सेव।"

"हे भगवान, कैसी भयंकर गलती है," बोद्किन बुदबुदाया और अपने स्वस्थ हाथ से उसने चेहरा ढांप लिया।

दीबिच सारा समय कष्टदायी तनाव में बैठा किसी अप्रत्याशित अंत की प्रतीक्षा करता रहा था। अब उसने जोर से उसांस छोड़ी और किरील की ओर हाथ बढ़ाये।

"कोई गलती नहीं है," इज़्वेकोव ने उससे कहा, उसका चेहरा पीला पड़ गया था और उसके स्वर में अजीव निश्चिंतता थी। "इस आदमी को बनना खूब आता है। पूरा ऐक्टर है। मैं इसे अच्छी तरह जानता हूं: इसी ने कभी मुझे ओलोनेत्स प्रदेश भेजा था।"

"अगर आपको यकीन है कि यह वही आदमी है, तो... मुझे आप पर हैरानी होती है," दीविच जल्दी-जल्दी वोला। "क्यों आप यह तमाशा कर रहे हैं? कोई मजा आ रहा है क्या इसमें?"

"नहीं, मज़ा तो क्या आना है," किरील हौले से हंस दिया। "उल्टे घिन होती है... पर सच मानो, जब यह सोचता हूं कि ये साहब लोग अभी थोड़े दिन पहले तक क्या कुछ करते रहे हैं, और अव भी कहीं-कहीं कर रहे हैं तो... वाकई मज़ा भी आने लग सकता है!"

पोलोतेन्त्सेव ने चेहरे से हाथ हटाया। चेहरे का भाव ज़रा भी नहीं वदला था, वस हल्की पीली सी भौंहें ऐनक के ऊपर उठ गई थीं। वह अपनी निराशा भरी आवाज़ में मानो मिश्री घोलते हुए बोला:

"आपकी यह भयानक गलती मेरे लिए वहुत महंगी पड़ सकती है। मैं यह भली भांति समझता हूं, और यही कारण है कि मेरे लिए हिम्मत बनाये रखना और भी अधिक ज़रूरी है, भले ही यह असम्भव प्रतीत होता हो। परन्तु यदि आप सचमुच मुझे... राजनीतिक पुलिस का अफ़सर समझ रहे हैं, तो... वे लोग तो दरिंदे थे, जल्लाद थे! आप कैसे... क्षमा कीजिये, मैं आपको कामरेड कहता रहा था, पर अव जबकि आपने विना किसी प्रमाण के मुझ पर ऐसा आरोप लगाया है... (वह मानो नाक से खोखली हंसी हंसा।) हो सकता है, समय बीतने पर महानुभाव और माननीय महानुभाव जैसा कोई सम्बोधन ढूंढ लिया जायेगा। शायद न्यायी महोदय या निर्भ्रान्त महोदय, या कुछ और, ही-ही! सो निर्भ्रान्त महोदय, आपको तो यह शोभा नहीं देता कि आप जघन्य अतीत के उदाहरणों का अनुसरण करें, उन दरिंदों के उदाहरण का, जो असहाय लोगों को सताते थे..."

"नहीं रहा गया न!" किरील चिल्ला पड़ा, पोलोतेन्त्सेव के इस प्रचण्ड वाक्प्रवाह को उसने ठहाका मारकर रोका। "पुरानी आदत बोल पड़ी! याद है मुझे, खूब अच्छी तरह याद है; आप कटाक्ष

करने में ख़ूब तेज़ थे। ख़ूब तीखे व्यंग्य करते थे, उफ़, क्या वाक्पटुता थी! इसने भी आपका राज़ उतना ही खोला है, जितना आपकी गुमटे वाली खोपड़ी ने!"

"यह सब कपोल कल्पना के रूप में रोचक लग सकता है," पोलोतेन्त्सेव ने शांत स्वर में आपत्ति की, "पर यह सब बचकाना है। बिल्कुल परोक्ष, कानून की दृष्टि से निराधार शिनाख़्त है। कोई सीधा प्रमाण नही। और विश्वास मानिये कोई मिलेगा भी नहीं।"

"मिल जायेगा, जब हम आपको आपके निवास स्थान पर पहुंचायेंगे, बेशक, नरोव्चात नहीं, सरातोव में। नरोव्चात आपको वोद्किन के रूप में ठुकरा देगा, पर सरातोव पोलोतेन्त्सेव के रूप में स्वीकार करेगा।"

"इससे कुछ नहीं मिलेगा, सिवाय इसके कि मुझे खामखाह में तकलीफ़ सहनी पड़ेगी।"

"जी नहीं, खामखाह में बिल्कुल नहीं, रत्ती भरी भी खामखाह नहीं," किरील ने दृढ़ विश्वास के साथ कहा।

इपात और उसके साथ तीन दूसरे सैनिक कैदियों की खुली पोटलियां उठाये अंदर आये। दस्तावेज़, पैसे, एक इस्पात की और एक चांदी की घड़ी, जिसके साथ जंजीर पर चाबी बंधी हुई थी – ये सब चीज़ें इपात ने मेज़ पर रखीं, फिर नीकोन के हाथ से टीन की गोल डिबिया ली, जिसे वह श्रद्धामिश्रित भय के साथ उठाये हुए था, और उसी भाव मे दूसरी चीज़ों से परे रख दी।

"तलाशी में हथियार नहीं मिले, पर इसमें बहुत बड़ी ताकत बंद है," डिबिया पर नाख़ून से ठकठक करके उसने कहा, और सैनिकों की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि से देखा।

किरील डिबिया अपनी ओर सरकाना चाहता था, पर उसका हाथ उसपर ठिठक गया और उसने इपात की ओर प्रश्नभरी नज़र उठाई। इपात ने निचला होंठ फुलाकर सिर पीछे को झटका, मानो यह कहते हुए कि ख़ुद देख लीजिये, कहा न छोटी-मोटी चीज़ नहीं है।

यह मामूली डिबिया थी, जिसके ढकने पर स्टर्जन मछली बनी थी और चारों ओर घेरे में लिखा था: अस्त्राख़ान की नमकीन स्टर्जन। पर डिबिया बहुत वज़नी थी। किरील ने एक सिरे से उसका ढकना उठाया और झट मे बंद कर दिया।

"किसके पास मिली?" उसने पूछा।

"इसके अंदर," फटे तकिये की ओर इशारा करते हुए नीकोन ने उत्तेजित स्वर में कहा।

"जिससे आपने जवाब-तलब नहीं किया है, उसी का है यह,' इपात ने बात स्पष्ट की।

किरील ने सिर से पोलोतेन्त्सेव की ओर इशारा किया।

"इपात, तुम इसे लाये हो, तुम्हारे पर ही इसका जिम्मा होगा तुम्हें यह हुक्म दे रहा हूं: चौकस रहना और अपनी आंख के तारे की तरह इसकी संभाल करना।"

"अपनी आंख तो मुझे दुगनी प्यारी है: एक ही तो है..."

जैसे ही पोलोतेन्त्सेव को ले जाया गया और कमरे में रह गय नीकोन दूसरे सैनिकों की मदद से कैदियों की चीजें फ़र्श पर फैलाने लगा, दीबिच ने डिबिया की ओर आंख मारी:

"क्या है – शैतान का खिलौना?"

किरील ने सैनिकों को पास बुलाया। सब उसे घेरकर खड़े हो गये। उसने ढकना उठाया, डिबिया पर हथेली रखी और उलटा दी

सारी हथेली सोने के सिक्कों से भर गई, ऊपर के सिक्के मेज़ पर फिसल गये। उसने हौले से सिक्कों के नीचे से हाथ हटा लिया जब तक ढेरी मेज़ पर फैलती रही, हवा में सोने की खनखनाहट तैरती रही।

"अम्मा री अम्मा! हज़ारों!" नीकोन ने दांतों तले उंगली दबा ली

"पूरा खज़ाना है!" दूसरा सैनिक बोला।

"यह है मेरकूरी, व्यापार का देवता – मर्करी," दीबिच बुदबुद रहा था।

सब फटी-फटी आंखों से सोने के ढेर को देखे जा रहे थे, अकेल किरील ही खोया-खोया सा बारी-बारी से सबको देख रहा था। फिर वह खिड़की के पास गया, थोड़ी देर वहां खड़े रहकर मेज़ के पास लौट आया। मुस्कराते हुए उसने दीबिच से कहा:

"आप कभी यह अनुमान नहीं लगा सकते कि इस वक्त मुझे क्या कुछ याद आ रहा है। अब मैं बहुत सी बातें समझ पा रहा हूं बहुत कुछ..."

और उसने उंगलियों से सिक्कों को छुआ, और वे हल्की सी खनखनाहट के साथ मेज़ पर और अधिक फैल गये।

"अम्मा री अम्मा!" नीकोन फिर से फुसफुसाया।

तीसरे कैदी को जब अंदर लाया गया, तो वह बिल्कुल दुख का मारा लगा। उसका शरीर उसके सूट में धंसा हुआ था, हालांकि यह साफ दिखता था कि सूट उसका अपना ही है, और यह भी कि सूट का स्वामी कभी खूब चुनकर कपड़े सिलवाया करता था। उसने हजामत न जाने कबसे नही कराई थी, और सिर तथा दाढ़ी के बाल उलझे-पुलझे थे, जिनसे उसके निस्तेज, कातर चेहरे पर घबराहट का भाव और भी बढ़ गया था। किन्तु घनी भौंहों तले आंखों में विचित्र, शांतिमय हर्ष की चमक थी, मानो इस व्यक्ति को उचित ही उस न्याय पर हर्ष हो रहा हो, जो इसने पा लिया है और जिसमें इसे कोई संदेह नही है।

अपनी इस विशिष्ट दृष्टि से इज़्वेकोव की ओर देखते हुए वह बेंच पर बैठ गया, मेज़ पर रखे सोने का मानो उसके लिए अस्तित्व ही नही था।

"मेरकोव, मेरकूरी अव्देयेविच?"

"जी हां।"

"सरातोव छोड़े बहुत दिन हो गये?"

"तीन हफ़्ते।"

"यहां किसी से मिलने आये हैं, या सदा के लिए?"

"सोचा तो सदा के लिए ही था।"

"अपना शहर क्यों छोड़ा?"

"मठवासी होने की कामना थी। पर पहुंचने पर पता चला कि जगह नही है। जिस कोठरी का मुझे वायदा किया गया था, वह खाली नही थी, सो मैं शहर में कमरा लेकर रहने लगा।"

"लगता है कमरा पसंद नहीं आया?"

"आपका मतलब है मैं फिर से क्यों दूसरी जगह को चल पड़ा? बेचैनी के कारण। खबर आई थी कि मोर्चा ख़्वालीन्स्क के पास आ रहा है। मैं बुढ़ापे में एकांत चाहता था और डर रहा था कि मेरी यह इच्छा पूरी न हो पायेगी।"

"वोल्गा के पार आपकी इच्छा कौन पूरी करेगा? कज़्ज़ाक?"

"कज़्ज़ाक क्यों?" मेरकूरी अव्देयेविच ने ऐसे स्वर में पूछा, मानो नतमस्तक हो रहा हो। "मैंने तो सोचा तक न था।"

"पर वोल्गा के पार तो कज़्ज़ाक हैं।"

"लेकिन मैं ज़्यादा दूर नहीं जा रहा था। मुझे मालीय् इर्गीज़ का प्रलोभन दिया गया था कि वहां तक मोर्चा नहीं पहुंचेगा। शांत जगह है। हालांकि मुझे खास पसन्द नहीं।"

"ऐसी क्या बात है?"

"वहां ज्यादातर पुरातनपंथी रहते हैं। मेरा मकान मालिक भी पुरातनी है। सो अब पछतावा हो रहा है कि बातों में आ गया: मकान मालिक ने ही मुझे चलने को राज़ी किया था।"

किरील ने सिर से सोने की ओर इशारा किया:

"आपका अपना है?"

"जी हां," मेरकूरी अव्देयेविच ने हामी भरी; वह न केवल सोने की ओर देख नहीं रहा था, बल्कि उसने मुंह और भी परे मोड़ लिया था, फिर भी उसे इस बात में ज़रा भी संदेह नहीं था कि सोने की बाबत ही पूछा जा रहा है।

"सोवियत सत्ता से छिपा रखा था?"

"छिपायी वह चीज़ जा सकती है, जिसे कोई ढूंढ़ रहा हो। मुझ से किसी ने इसके बारे में नहीं पूछा था। सो छिपाया हुआ नहीं, बचाया हुआ है।"

"आत्मा के उद्धार के लिए?"

"मठ को भेंट करना चाहता था।"

एक सैनिक जो सारा वक्त भौंहें सिकोड़े मेरकूरी अव्देयेविच को देखता रहा था, सहसा बोल पड़ा:

"तो फिर किया क्यों नहीं? भेंट कर देता, तो कोठरी भी फ़ौरन मिल जाती।"

मेरकोव ने सिर झुकाकर यह बात सुन ली।

"हमें आपको अदालत को सौंपना होगा।"

"जैसी आपकी मर्ज़ी।"

"सिक्के अभी गिनकर पंचनामा बना देंगे, उसपर आप हस्ताक्षर करेंगे।"

"जैसी आपकी मर्ज़ी," भावहीन स्वर में मेश्कोव ने फिर कहा।

उसने बस आंखें मूंद ली थी और बेंच के ऐन सिरे पर वैसे ही निश्चल बैठा हुआ था, मानो पल भर को बैठा हो और अभी उठकर चल देगा। यह कहना मुश्किल था कि वह क्या सोच रहा है, निस्संदेह पैसों के बारे में भी वह सोचता रहा होगा, विशेषत: जब सोने के सिक्कों की मधुर खनक कमरे में गूंजने लगी: किरील और दीविच एक-एक करके सिक्के गिनने और उनकी ढेरियां बनाने लगे थे। पैसों के बारे में सोचे बिना वह नहीं रह सकता था, क्योंकि उनके बारे में विचार सदा उसके अन्य सभी विचारों से जुड़ा होता था: कभी उनके आगे रहता, कभी पीछे, लेकिन आगे या पीछे चलनेवाली परछाई की भांति सदा साथ रहता। वह सदा वर्तमान की अतीत के साथ तुलना करता रहता था। अतीत में आदमी के पास जितना अधिक धन होता था, उतना ही अधिक उसके पास और आता जाता था। धन में स्वत:वृद्धि का गुण था। कभी पहला सोने का सिक्का पाना ही सबसे कठिन रहा था। उसके बाद का हर सिक्का अधिकाधिक आसानी से प्राप्त होता गया था, जैसा कि रूसो ने कभी कहा था (इस बात में उससे पूर्णतया सहमत होने के लिए मेश्कोव को रूसो की रचनाएं पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं थी)। अब आदमी के पास जितना अधिक धन होता था, उतना ही कम रह जाता था, क्योंकि उससे उतना ही अधिक छीन लिया जाता था।

और अब मेश्कोव से उसके सोने के अंतिम सिक्के छीन लिये गये थे। ये सचमुच ही उसके अंतिम सिक्के थे। वह चुपके-चुपके उन्हें छिपाता रहा था, जबकि वह अपनी प्राय: सारी सम्पदा से हाथ धो बैठा था। उसने उन्हें सबसे छिपाकर रखा था। अगर वह सबसे, पवित्र आत्मा तक से कुछ न कुछ छिपाकर न रखता, तो यह उसके स्वभाव के पूर्णतया विपरीत होता। इन सोने के सिक्कों के बारे में उसने न अपनी पत्नी को, न लीज़ा को, न अपने पादरी को और न ही उस बिशप को कुछ बताया था, जिसने उसे मठवासी होने का आशीर्वाद दिया था। वित्त-विभाग में भी वह उनके बारे में चुप्पी साधे रहा था, हालांकि जब रागोज़िन ने उससे पूछा था कि उसके पास सोना तो नहीं बचा है, तो उसके हाथ-पांव सुन्न हो गये थे। अगर

मनुष्य के लिए अपने कर्मों को अपने से ही छिपा सकना सम्भव होता, तो वह अपने आप को भी इस डिबिया के बारे में न बताता, ताकि कहीं दुर्बलता के क्षण में अपना यह रहस्य किसी के सामने खोल न दे। सोने के सिक्कों से भरी इस डिबिया को उसने अपने बिस्तर में छिपा रखा था और घर से चलते वक्त सिरहाने में उसे रख लिया था। उसने सिक्कों के बीच रूई ठूंस-ठूंसकर भर दी थी, कि कहीं वे खनक न उठें। सोते हुए वह अपना गाल इस डिबिया पर रखता था और यह टीन की डिबिया उसके लिए रोयों से भी अधिक मुलायम थी। जब वह सोता होता, तो सोने के सिक्के उसके कान में मानो फुसफुसाते: हम तेरे हैं, हम तेरे हैं, हम तेरे हैं। और अब उसका रहस्य नहीं रहा था! गिनती खत्म हो गई थी।

हां, गिनती खत्म हो गई थी। दीबिच पंचनामा लिखने लगा। किरील ने पेंसिल के टुकड़े से मेज़ के पटरे पर गिनती लिखी, गुणा की और कहा:

"कुल पांच हज़ार छह सौ चालीस रूबल। ठीक है?"

"नहीं," मेरकूरी अव्देयेविच ने हौले से जवाब दिया, "ठीक नहीं है। गिनती गलत है।"

"क्या मतलब?"

"गिनती ठीक नहीं की। डिबिया में से निकालने की ज़रूरत ही नहीं थी। डिबिया के घेरे में उन्नीस सिक्के आते हैं। हर ढेरी में दस-दस रूबल के तीस सिक्के थे, यानी एक ढेरी में तीन सौ। तीन सौ गुणा उन्नीस हुए पूरे पांच हज़ार सात सौ, पांच हज़ार छह सौ चालीस नहीं। हां, अगर छह सिक्के... तलाशी में कहीं खो नहीं गये तो।"

"ओफ़्फ़ भाड़ में जाये यह सब! छह सिक्के! चलिये, अपने आप गिनिये!" किरील चिल्लाया, उसका चेहरा लाल सुर्ख हो गया।

मेरकूरी अव्देयेविच मेज़ के पास खिसक आया। सिक्कों की ढेरियों पर नज़र डालते हुए उसके गले में जैसे कुछ फंस गया और वह बड़ी देर तक खांसता रहा। फिर वह मानो अपने आप से बातें करने लगा:

"अगर मेज़ सपाट होती, तो यह देखना ज़रा भी मुश्किल नहीं था कि हर ढेरी में सौ रूबल हैं या नहीं। पर मेज़ के पटरे ऊंचे-नीचे

हैं। यह देखिये, यह ढेरी दूसरों से अलग लग रही है। है यह नीची जगह पर, लेकिन एक सिक्का इसमें फ़ालतू है। और इसमें भी। इजाजत हो तो गिनूं।"

"गिनिये।"

मेज्कोव ने ढेरी अपनी ओर सरकाई, उसे उंगलियों से दबाया और सिक्के खनखनाते हुए एक कतार में ढह गये। उसने बाईं हथेली मेज के सिरे के नीचे रखी। दायें हाथ की तर्जनी और बिचली उंगली से दो-दो सिक्के पकड़कर वह ऐसी फुर्ती से उन्हें बाईं हथेली में गिराने लगा कि देखनेवाले विस्मित रह गये।

"ग्यारह," वह बोला और टन से फ़ालतू सिक्का एक ओर को फेंक दिया।

वह जरा भी चूके बिना गलत गिनी ढेरियां ढूंढ रहा था। उन्हें अलग करके वह गिनता और फ़ालतू सिक्के अलग फेंकता। आखिर छह सिक्के निकल आये और सौ की ढेरी पूरी हो गई। उसकी उंगलियों में मानो जवानी आ गई थी।

"देखो तो कैसे मशीन की तरह उंगलियां चलाता है," उसकी दक्षता पर विमुग्ध नीकोन बोला।

मेरकूरी अव्देयेविच मानो सहसा होश में आ गया और उसने भौंहें तानकर नीकोन की ओर देखा। उसकी दृष्टि में अब उस शांतिमय हर्ष का नामोनिशान तक न रहा था, जो यहां आने के समय था। उसकी आंखें धुंधली पड़ गईं थीं और समझदारी का भाव मानो पल भर में ही जाता रहा था।

सब चुपचाप मेज्कोव की ओर देख रहे थे। धीरे-धीरे वह मेज़ से परे मुड़ गया, अचानक उसके कंधे हिलने लगे और वह बेंच पर झुक गया।

"दिल टूट गया," सैनिक बोला, "बड़ा दुख हो रहा है अपने खिलौनों से जुदा होते..."

"गिनती ठीक है कि नहीं?" इज्वेकोव ने तीखी, प्रायः क्रोध भरी आवाज़ में पूछा।

सिसकी भरकर मेज्कोव इतने धीमे से बोला कि आवाज़ मुश्किल से सुनाई देती थी:

"ठीक है, पर आपकी नहीं, मेरी। पूरे सत्तावन सौ। जितने थे। हे भगवान, जितने थे!"

उसने सिर पकड़ लिया और फूट-फूटकर रोने लगा।

दीबिच ने पंचनामे में रकम लिखी। वे सिक्के डिबिया में रखने लगे, ठीक से रख नहीं पा रहे थे क्योंकि जल्दी में थे — इन सब अप्रत्याशित घटनाओं के कारण बहुत अधिक समय बीत गया था। मेश्कोव को पंचनामे पर हस्ताक्षर करने को कहा गया। उसने अपने पर काबू पा लिया और बिना किसी हिचकिचाहट के हस्ताक्षर कर दिये।

उसे जब झोंपड़ी से बाहर ले जाया जा रहा था, तो किरील ने एक और सवाल पूछा :

"अपने घायल साथी को आप सरातोव में जानते थे?"

मेश्कोव रुक गया।

"मैं सिर्फ़ अपने लिए जवाबदेह हूं, और किसी के लिए नहीं।"

"बेशक हर कोई अपने किये का जवाब देगा। पर मैं सोचता हूं अगर आप उसका नाम बता दें, तो आपके लिए अच्छा रहेगा।"

मेश्कोव ज़रा असमंजस में था।

"उसने खुद नहीं बताया।"

"शायद उसके पास अपनी असलियत छिपाने का कारण है। पर मैं आपसे पूछ रहा हूं, उससे नहीं।"

मेश्कोव फिर थोड़ी देर चुप रहा।

"वह मेरा कोई सम्बन्धी नहीं," अभी भी झिझकते हुए वह बोला। "पर मैं चुगली क्यों खाऊं? गलती हो गई तो पाप लगेगा।"

"पर आप गलती मत कीजिये।"

"ठीक है, मैं सच्चाई से नहीं डरता। ठीक-ठीक तो पता नहीं कि उसका ओहदा क्या है। जहां तक मुझे याद पड़ता है वह राजनीतिक पुलिस में लेफ़्टिनेंट कर्नल था।"

"पोलोतेन्त्सेव?"

"हां, पोलोतेन्त्सेव," मेरकूरी अव्देयेविच ने तुरन्त ही पुष्टि की और आंखें झुकाकर जल्दी से बाहर निकल गया।

किरील और दीबिच ने एक दूसरे की ओर देखा।

आखिर उन्होंने कूच किया। दिन ढल रहा था। टुकड़ी के आगे-

आगे कैदी चल रहे थे। सबसे आखिर में भेड़ियों से लदी घोड़ागाड़ी थी। कुत्ते अपने रोंगटे खड़े किये, बेतहाशा भौंकते गांव के बाहर तक टुकड़ी के पीछे-पीछे आये।

इपात घोड़ों पर सवार कमांडर और कमिसार के बगल में ही चल रहा था। वह देख रहा था कि वे लोग बातें नहीं करना चाहते, सो खुद भी चुपचाप चलता जा रहा था।

दीविच एक नई दृष्टि से इधर-उधर देख रहा था, उस व्यक्ति की भांति जो लम्बे अरसे के बाद अपने जन्म स्थान पर लौटा हो, और समय के साथ आये परिवर्तनों के पीछे वहां के जाने-पहचाने दृश्य भांप रहा हो। वह आदतन अपने लड़कपन की कोई सरल सी धुन गुनगुना रहा था। जब-जब वे जंगल से बाहर निकल आते, तो उसे घोड़े पर बैठे दूर तक रास्ता दिखाई देता, और टीलों के बीच कोई मोड़ जब वह पहचान लेता, तो देर तक उसके चेहरे पर विचारमग्न मुस्कान बनी रहती। मैपल वृक्षों से, जो ढलान पर खूब अच्छी तरह उगते हैं, टीले लहरदार लग रहे थे। अब गांव जल्दी-जल्दी आने लगे और रास्ता अधिक चौड़ा होता जा रहा था, जिससे शहर की निकटता का आभास होता था।

किरील आंखें मूंदे काठी में डोल रहा था। उसे झपकी नहीं आ रही थी, पर यह भी मन नहीं था कि कोई उससे बात करे। रेप्योव्का की घटनाएं अब उसकी स्मृति में धुंधली पड़ गई थीं, उनका स्थान अतीत के साथ ऐसी अप्रत्याशित, अनोखी दो भेंटों ने ले लिया था, जो किसी विलक्षण संयोग से एक साथ ही हुई थी। दोनों ही भेंटें उसे चढ़ती जवानी के दिनों की यादें दिलाती थीं, और दोनों में से प्रत्येक उसके विचारों को देर तक उलझाये रखने के लिए पर्याप्त थी। परन्तु साथ ही पोलोतेन्त्सेव का रहस्योद्घाटन, मेरकोव का सोना, सड़क पर पड़ी युवती की लाश, ताबूतों पर कागज़ के बेलबूटों को लहराती हवा, अपने पुट्ठे पर दांत मारता भेड़िया, गोली से उड़ा दिया गया ज़ूबिन्स्की और शुब्निकोव की हत्या, भगोड़े नीकोन को मिली माफ़ी और जीवन को बदलने की दार्शनिक बातें करता इपात – ये सब किसी अदृश्य सूत्र से एक दूसरे से बंधे हुए थे, इनमें कोई अन्योन्य सम्बन्ध था। ये सब बातें एक दूसरे में ऐसे गुंथी हुई थीं, जैसे बेंत से

बुनी टोकरी, और किसी एक बात पर, एक घटना पर विचार करते ही, दूसरी, तीसरी घटनाएं भी मस्तिष्क में आप से आप उभर आती थीं, वैसे ही जैसे टोकरी में से दूसरे बेंतों को छेड़े बिना एक बेंत नहीं निकाला जा सकता। किरील यह देख रहा था कि इन थोड़े से दिनों में उसने उन सब बाधाओं को पार कर लिया है, जो उसके मार्ग में खड़ी की गई थीं, और सभी समस्याओं का सही हल ढूंढा है। यही नहीं, उसका यह विश्वास अब सदा से अधिक दृढ़ था कि वह इन से भी बड़ी बाधाओं को पार कर लेगा, और शायद संसार में कोई ऐसी शक्ति नहीं है, जो उसका संकल्प, उसका मनोबल तोड़ सके। उसने अपने आप से पूछा कि क्या वह अपने काम से संतुष्ट है, और उत्तर दिया कि उसे संतोष होना चाहिए। और जब उसने यों उत्तर दिया, तो तुरन्त ही एक नया सवाल उठा: फिर वह उदास क्यों है? और इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं मिल रहा था, वह बार-बार यह प्रश्न दोहराता, पर उसका मस्तिष्क इसका कोई उत्तर न दे पाता, बस उसका मन उदास था। उसके सामने निरन्तर उन लोगों की सूरतें मंडरा रही थीं, जिन्हें उसने कुछ समय पहले देखा था, जिनके भाग्य का फ़ैसला किया था, और वह फिर से अपने आप से पूछता, कि उसने कोई गलती तो नहीं की, और फिर से उसके इस विश्वास की पुष्टि होती कि नहीं, कोई गलती नहीं की। लेकिन उदासी थी कि जाती ही न थी।

बगल में चलते इपात की अफ़सोसभरी उसांस सुनकर उसने आंखें खोलीं।

"क्या बात है इपात?" मुस्कराते हुए उसने पूछा। "उदास हो रहे हो?"

"सपने में दिखाई देगा कैसे मैं उसके पीछे दौड़ा था! भगवान कसम!"

"किसके पीछे?"

"भेड़िये के पीछे। मरा पड़ा होगा कहीं जंगल में। ऐसी बढ़िया खाल हाथ से निकल गई। सब इन कमबख्तों की वजह से, बेड़ा गरक हो इनका!"

उसने कैदियों की ओर मुक्का दिखाया।

"अगर हमारे यहां पदक होते, तो इन कमबख्तों के लिए मैं तुम्हें पदक दिलवाता," किरील ने कहा।

"मेरे लिए भेड़िया पदकों-वदकों से ज़्यादा कीमती है। मेरे झोले में दो जार्ज पदक* पड़े हैं।"

पल भर को वह चुप रहा, फिर अपनी तेज़ नज़र किरील पर डाली, मानो उसके विचार बूझना चाहता हो।

"कामरेड कमिसार, आप मुझे एक परचा लिख दीजिये कि मैंने मज़दूरों-किसानों की फ़ौज की सेवा की है। मैं उसे जड़ाकर कमरे में टांग दूंगा, ताकि सारे गांव वाले देखें। (उसने आंख मारी।) और आपको भेड़िये के लिए भी मुझे इनाम देना है। कामरेड कमांडर को भी। मैंने आपको बिल्कुल अचूक जगह पर खड़ा किया था। यह भी हुनर का काम है!"

"अगर हिसाब ही करना चाहते हो, तो मेरे भेड़िये की खाल ले लो," किरील फिर से मुस्कराया और एड़ लगाकर दीबिच के पास चला गया।

"कैसा लग रहा है, वसीली दनीलोविच?"

"बहुत खूब!" दीबिच ने जवाब दिया और सहसा वह रकाब पर ज़ोर डालकर यों उठ सा गया कि घोड़े की चाल टूट गई, और वह दुलकी चाल से दौड़ने की तैयारी में जमने लगा।

"वो टीले पर सड़क देख रहे हैं?" दीबिच ने बोलना जारी रखा। हाथ बढ़ाकर उसने ऊंचे टीलों की ओर इशारा किया, जिन पर उगे घने पेड़ डूबते सूरज की किरणों में काकरेज़ी लग रहे थे। "वो देखिये, चीड़ कुंदनी हो रहे हैं। वहां से कोई दो फ़र्लांग आगे निचान है, फिर टीले और उनके बीच निचाई में पुरातनपंथियों के मठ हैं, स्त्रियों और पुरुषों के मठ पास-पास ही। वहां से वोल्गा की ओर थोड़ा और बढ़ें, तो कस्बा शुरू होता है। और उस कस्बे में..."

"क्या है कस्बे में?"

"मेरा घर," कुछ लजाते हुए दीबिच ने हौले से बात पूरी की।

उसके साथ बात छेड़ते समय इज़्वेकोव को उम्मीद थी कि वह अवश्य ही यह जानना चाहेगा कि ये मेश्कोव और पोलोतेन्त्सेव कौन

---

* ज़ार के ज़माने में सैनिकों को वीरता के लिए दिया जानेवाला पदक। —स०

हैं, और वह उसे अपने अतीत के बारे में बताने को तैयार था। लेकिन लगता था दीबिच को उन लोगों में कोई रुचि नहीं रह गई थी, जिन्हें गार्ड टुकड़ी के आगे-आगे ले चल रहे थे। इज़्वेकोव के जीवन के साथ उनका कोई सम्बन्ध न रहा होता, तो उसे दीबिच की यह उदासीनता इतनी न चुभती: ज़ारशाही सेना का भूतपूर्व अफ़सर क्रांति के शत्रुओं से लड़ने को तैयार हो गया था और अपना कर्तव्य ईमानदारी से निभा रहा था; इससे अधिक उससे कुछ आशा करना मूर्खता होती। परन्तु वहां झोंपड़ी में सोने के सिक्कों की ओर इशारा करते हुए इज़्वेकोव ने स्वयं अपने अतीत की चर्चा छेड़ी थी, यह कहकर कि मेरकोव के सोने से उसे अतीत की कितनी बातें समझ में आ गई हैं। किरील की इस तत्परता को नज़रंदाज़ करके दीबिच ने मानो यह कहा था कि प्रत्येक व्यक्ति का निजी जीवन उसका अपना मसला है। किरील को यह उसकी रुखाई लगी और इससे उसके दिल को ठेस पहुंची।

"सो, बस ख़्वालीन्स्क आनेवाला है?"

"दुलकी चाल से बीस मिनट से ज़्यादा नहीं लगेंगे।"

"यहां तो शांति ही होगी – लुटेरे शहर के पास आने की हिम्मत नहीं करेंगे।"

"हां। शायद ही किसी से सामना हो। दूसरी टुकड़ियों का पता नहीं। वे भी मुमकिन है किसी मुठभेड़ के बिना पहुंच जायें।"

"आप संतुष्ट हैं?"

"संतोष की खास बात क्या है? कोई खास लड़ाई तो अभी तक हुई नहीं।"

"आप खास लड़ाई चाहते हैं? इस बात पर संतुष्ट हैं कि हमारे साथ हैं?"

"लाल सेना में? मुझे ये सैनिक अच्छे लगते हैं... और ये कमिसार।"

दीबिच की ठोड़ी का गड्ढा फैल गया और प्रायः अदृश्य हो गया: स्नेह-स्निग्ध मुस्कान से वह किरील को देख रहा था।

"मुझे एक तरह से इसका अहसास ही है," उसने आगे कहा। "साफ़-साफ़ समझा नहीं सकता कि अच्छा क्यों लगता है। यों कहिये कि इसकी कोई दार्शनिक व्याख्या नहीं कर सकता।"

"आजकल दर्शन कोई अमूर्त बात नहीं है, हमारे काम ही दर्शन हैं। आप एक कर्ता के नाते राजनीति को समझ लीजिये। तब सब स्पष्ट हो जायेगा।"

"यों तो मुझे सब स्पष्ट है," वैसे ही स्नेहपूर्वक मुस्कराते हुए दीविच ने कहा। "मैं सोचता हूं मैंने अपने लिए सब फ़ैसला कर लिया है, जैसे होना चाहिए!"

किरील को इस क्षण दीविच अत्यंत सरल हृदय और निश्छल लगा। वह भी उतने ही प्रफुल्ल स्वर में बोले बिना न रह सका:

"छोड़िये भी! आप तो बस खुश हैं कि घर पहुंच गये।"

"पांच साल बाद! और कैसे थे ये पांच साल! बाप रे बाप!" बड़े उत्साह से दीविच ने कहा और तभी सकुचाते हुए, मानो किशोर की भांति बोला: "किरील निकोलायेविच, थोड़ा वक्त निकालकर मां से मिलने चलेंगे, हैं?"

"नहीं, नहीं, मैं खामखाह बीच में आऊंगा..."

"ज़रा भी नहीं, सच मानिये! बहुत अच्छी हैं मेरी मां, देख लेना!"

"नहीं, मैं आपकी जगह कमान संभालूंगा, चला लूंगा काम और आप..."

किरील ने दीविच के उत्तेजित चेहरे पर नज़रें गड़ाईं और फिर सहसा बोला:

"चाहें, तो अभी आगे-आगे घर चले जाइये, सुबह आ जाना? तब तक मेरे ख्याल में सारी कम्पनी जमा हो जायेगी।"

"सच?" दीविच ने मानो डरते-डरते पूछा।

उसने घोड़े की लगाम खींची और किरील की ओर झुका। उसकी आंखें चमक रही थीं, पर वह दुविधा में था – अपने कानों पर विश्वास करे या न करे।

"मुझे कम्पनी सौंपते डर लगता है?" किरील हंसा। "अगर लड़ाई में आपको कुछ हो जाता, तो नियम से मैं ही कमान संभालता। अब तो कोई लड़ाई नहीं हो रही। जाइये। फिर कभी मौका आने पर मैं जाऊंगा, आप अकेले रहेंगे। और हां, आपको मुझे एक छुट्टी भी देनी है। याद है, जर्मन के लिए? अभी मैंने वह छुट्टी ली नहीं है... अच्छा?!"

और किरील ने दीबिच की ओर हाथ बढ़ाया।

दीबिच ने टुकड़ी को रुकने का आदेश दिया और कहा कि वह कमान कमिसार को सौंप रहा है, खुद अगले दिन सुबह आठ बजे हाज़िर होगा।

उसने इज़्वेकोव से हाथ मिलाया, घोड़े को दो बार ज़ोर से एड़ लगाई और काठी में उछलता हुआ दुलकी चाल से टुकड़ी से आगे निकल गया।

शीघ्र ही वह जंगल में मुड़ा। सूने रास्ते पर नीची टहनियों से बचने के लिए बार-बार सिर झुकाते हुए दुलकी चाल से ही उसने पहाड़ी पार की और निचाई में उतरा। यहां कहीं-कहीं रास्ता इतना खुला था कि वह घोड़े को सरपट दौड़ा सकता था, लेकिन जब वह टीलों तक पहुंचा, तो रास्ता पगडंडी में बदल गया, जिसके ऊपर मेपल की आपस में गुंथी टहनियों से मेहराब बना हुआ था। दीबिच घोड़े से उतरा और लगाम पकड़कर चलने लगा।

टीले के ऊपर से उसे नीचे फैला बाग दिखाई दिया, जहां सांझ का झुटपुटा फैल गया था। सेब के पेड़ों के बीच दो-तीन जगहों पर धुआं उठ रहा था। यहां मठवासियों की सबसे दूर की कोठरियां थीं। बरसों पहले दीबिच यहां अपने हमजोलियों के साथ गानेवाली चिड़ियां पकड़ने आया करता था।

घोड़े की सवारी से थकी टांगों को सीधे करते हुए वह तेज़-तेज़ चल रहा था। कुछ कदम आगे झाड़ियों में ज़ोर की खड़खड़ हुई और तुरन्त ही शांत हो गई। घोड़ा भड़का, और उसने लगाम को झटका दिया। दीबिच ने अपने रिवालवर का होलस्टर खोला। अत्यंत अप्रिय, बीभत्स आवाज़ उसके कानों में पड़ी और फिर जंगल झूलता हुआ सा उसके चारों ओर घूम गया। "नहीं! ऐसा नहीं हो सकता!" वह चिल्लाना चाहता था, लेकिन आवाज़ पर उसका बस न रहा था...

...उसी क्षण उसे पत्तियों के पीछे आसमान में उठता बाज़ दिखा। नीचे से काले-काले विशाल तिकोनों जैसे दिख रहे पंखों को निश्शब्द हिलाते हुए पक्षी ऊपर उठ रहा था और अपना छोटा सा सिर टेढ़ा किये चमकीले बटन जैसी आंख से पगडंडी पर तिरछी नज़र डाल रहा था। थोड़ी दूर चलने पर दीबिच को पैरों तले बिखरे पड़े रोयें दिखे

और आगे ढेर सारे चितकबरे पर, जिन्हें देखते ही वह समझ गया कि वे जंगली मुर्गे के हैं। और कोई मौका होता तो वह ज़रूर रुककर झाड़ियों में आहत शिकार को ढूंढ़ता, पर अब उसने अपने कदम भी धीमे नहीं किये। उसके मस्तिष्क में बस यह विचार कौंधा कि पहले भी कभी उसने इस पगडंडी पर जंगली मुर्गे पर झपटे ऐसे ही बाज़ को देखा है।

वह मेपल के जंगल में से निकला, उछलकर काठी में बैठ गया और निचाई में यहां-वहां बनी मठवासियों की कोठरियों और छोटे से गिरजे पर एक नज़र डाले बिना ही उन्हें पार कर गया। जैसे ही कस्बा दिखाई दिया, उसने ढलान पर घोड़े को सरपट दौड़ाया।

एक जैसे ही लकड़ी के मकानों और उनके सामने के बगीचों की लंबी कतार के अंत में रुपहला पाप्लर वृक्ष सिर उठाये खड़ा था, उसकी निचली डाल पहले की ही भांति उजले रंग के मकान की छत को अपने पीछे छिपाये थी।

दीबिच ने घोड़े को रोका। उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था, मानो वह सारे रास्ते सांस लिये बिना ही दौड़ता आया हो। उसने घर तक घोड़े पर न जाने का फ़ैसला किया और उसे पड़ोस के बगीचे की बाड़ से बांध दिया।

फाटक खुला पड़ा था। वह अहाते में घुसा। बड़े दरवाज़े के सामने बरामदे पर अंगूर की बेल घनी फैल गई थी और छत पर चढ़ गई थी। चिमनी में से हल्का-हल्का धुआं उठ रहा था। सारे अहाते में चैरी के पेड़ उग रहे थे, उनकी बूची टहनियां ज़मीन तक लटक रही थीं। फाटक से घर तक पगडंडी पर बिछे पटरे गल-सड़ गये थे और अब पैरों तले चरमराते नहीं थे। कुएं की लकड़ी की जगत एक ओर को झुक गई थी। कुत्ते के खोखे में टूटी बांहों वाली चीनी मिट्टी की गुड़िया पड़ी हुई थी।

दीबिच दबे पांव घर के अंदर चला गया। रसोई में समोवार फ़र्श पर रखा हुआ था, जलती छिपटियों से उसकी टीन की चिमनी में भूं-भूं हो रही थी। जले टीन के छेदों में से आग की लपटें बेलबूटों जैसी लग रही थीं। घर में सब कुछ खिलौनों जैसा छोटा हो गया लगता था, और जब दीबिच उस कमरे में जाने लगा, जिसे वह बचपन से ही हॉल कहता आया था, तो उसे सिर झुकाना पड़ा। सभी चीज़ें

उसे प्यारी थीं, परिचित थीं, फिर भी उन्हें नये सिर से पहचानना पड़ रहा था: सारे घर पर बीते दिनों की धूल जमी लगती थी, जैसे बुझे अलाव पर राख।

लकड़ी की अलमारी पर छोटी सी ढिवरी जल रही थी। पहले मां सोते समय इसे अपने बिस्तर के पास रखा करती थीं। दीविच ने सोने के कमरे में झांककर देखा। पलंग पर वही सफ़ेद चादर बिछी हुई थी। वह हॉल में लौट आया और लैम्प को फ़ोटुओं के पास सरकाया।

उसे अपना अजीब सा चिकना चेहरा दिखा, वह छात्रों की वर्दी पहने था, उसकी उंगलियों के बीच सिगरेट थी। जब वह युद्धबंदी रहा था, तो सिगरेट पीने की आदत छूट गई थी। छात्र की वर्दी उसने मास्को में अपनी मकान मालकिन के पास छोड़ दी थी। आज के दीविच और सिगरेट पकड़े उस किशोर के बीच हज़ारों साल का फ़ासला था। सामने ही बहन का अनजान फ़ोटो था, वह मुंह फुलाये आदमी की बांह में बांह डाले खड़ी थी, इस आदमी की शक्ल पास्तुख़ोव से बहुत मिलती थी।

रसोई में किसी के कदमों की आहट हुई। दीविच ने मुड़कर देखा। उसकी छाती ऐसी पीड़ा से दबी जा रही थी, जैसी उसने पहले कभी महसूस नहीं की थी। फुंदनों वाले लाखी पर्दों को हटाकर छोटी सी औरत दरवाज़े से उसकी ओर देख रही थी। वह डरी नहीं, बस ज़रा हैरान होकर उसने सिर उठाया, और दीविच पहचान गया कि यह उसकी मास्को वाली मकान मालकिन ही है, जिसके पास वह सेना में जाते हुए अपनी छात्रों की वर्दी छोड़ गया था।

"अरे, बेटा, तू लौट आया?" उस औरत ने अभी भी पर्दा पकड़े हुए पूछा, पर्दे के फुंदने हिल रहे थे।

"मां कहां हैं?" दीविच बड़ी मुश्किल से बोल पाया।

"तू उससे मिला नहीं, बेटा?"

"कहां? मैं उनसे कहां मिल सकता था?"

"उसे तो जैसे ही तेरी चिट्ठी मिली कि तू सरातोव में अस्पताल में है तभी से वह तेरे पास जाने की तैयारी करने लगी। पर जहाज़ पर जगह ही नहीं मिल रही थी उसे। अभी हफ़्ता भर हुआ वह घोड़ागाड़ी पर गई है।"

"उसने मेरा इंतज़ार क्यों नहीं किया?"

"वह तो, बेटा, तेरा इंतज़ार करते-करते थक गई।"

"और बहन?"

"उसकी तो कब की शादी हो चुकी।"

"इससे?" दीविच ने फ़ोटो की ओर इशारा करते हुए पूछा।

"हां, इससे। पास्तुख़ोव भी तो ख़्वालीन्स्क का रहनेवाला है।"

दीविच ने असंतुष्ट पास्तुख़ोव को देखा, जो अपनी रूपवती पत्नी की बांह में बांह डाले खड़ा था। पत्नी के चेहरे पर उसकी अद्वितीय मुस्कान खेल रही थी – उजली और साथ ही दोषी भावना का हल्का सा पुट लिये।

"यह मेरी बहन नहीं है। यह तो आस्या है। आप मुझे धोखा दे रही हैं।"

"मैं धोखा क्यों देने लगी, बेटा? यह देखो तुम्हारा कोट, जो तुम मेरे पास छोड़ गये थे। लो पहनकर देखो।"

"आप झूठ बोलती हैं, झूठ!" असहनीय पीड़ा के साथ दीविच चिल्लाया। "मां! कहां हो, मां?!"

"तुम चिल्लाओ मत। मुझे यह बताओ, ताकि मैं तुम्हारी मां को बता सकूं कि उसका बेटा कब से लाल सेना में भरती हो गया है?"

वह लपककर उस औरत को अपने रास्ते से हटाना चाहता था, पर उसने सहसा अपने मुंह के सामने पर्दे बंद कर दिये और छिप गई। वहां छिपी-छिपी वह झरी में से एक आंख से देख रही थी, और पर्दे के फुंदन उसकी दबी-दबी हंसी से हिल रहे थे।

दीविच खिड़की में से कूदकर बरामदे में आ गया, अंगूर की बेल के जाले को तोड़कर अहाते से बाहर भागा।

उसने घोड़े को खोला और लगाम उसकी गर्दन पर डाली। सड़क अंधेरी थी, पर पारदर्शी, मानो बोतल के कांच की बनी हो। उसने रकाब में पैर रखा ही था कि घोड़ा दौड़ चला। वह किसी तरह घोड़े पर चढ़ ही नहीं पा रहा था, व्यर्थ ही दायें पांव पर ज़ोर देकर उचकने की कोशिश कर रहा था, उसे लग रहा था कि उसके हाथ सुन्न पड़ते जा रहे हैं, और काठी, जो उसने पकड़ रखी थी, फिसलती आ रही

है, और सामने से आती तपी हवा उसका दम घोंटे जा रही थी, घोंटे जा रही थी।

"नहीं, नहीं, अभी लड़ाई खत्म नहीं हुई... इज़्वेकोव मेरी राह देख रहा है। अभी आता हूं, अभी!" भिंचे दांतों से वह बुदबुदा रहा था, और इस डर से उसके प्राण सूखे जा रहे थे कि काठी उसके हाथ से अभी छूटी कि छूटी – उसका शरीर अब ज़मीन पर घिसटता जा रहा था।

फिर उसकी उंगलियां हौले से खुल गईं, वह गिर पड़ा और घोड़े ने उसे ऐसी दानवीय शक्ति से दुलत्ती मारी कि वह होश में आ गया...

वह पगडंडी पर अकेला पड़ा हुआ था, मेपल के मेहराब तले। घोड़ा नहीं था। उसने पत्तियों के बीच से आसमान की ओर देखा और सोचा कि बाज़ उड़ गया है। उसी क्षण छाती को चीरती हूक उठी और वह कराह पड़ा:

"ओह, दुःस्वप्न... कैसा दुःस्वप्न है यह... गुंडे!"

चिपचिपे हाथ से उसने अपना बदन टटोला। रिवाल्वर का होल-स्टर खाली था। वह रेंगने लगा, उसकी सांस उखड़ रही थी, वह ढलान तक पहुंच गया। निढाल होकर वह लुढ़क गया, उसका सिर नीचे हो गया, पैर ऊपर। ढलान पर रोड़ी सरसर करती नीचे गिरी। सेब का बाग और उसमें बनी मठवासियों की छोटी-छोटी कोठरियां उसे औंधी दिखीं, मानो पानी में उनका प्रतिबिम्ब देख रहा हो। यहीं पर बरसों पहले वह अपने हमजोलियों के साथ गानेवाली चिड़ियां पकड़ा करता था।

"मां!" उसके मुंह से फटी-फटी आवाज़ निकली। "हे भगवान, मां!"

उसके गले में खून भर आया। उसका दम घुट गया और वह फिर बेहोश हो गया।

२६

"मैं आपका अत्यंत आभारी हूं कि आपने मुझे अपने विश्वास और सम्मान के योग्य समझा," पास्तुखोव ने अपनी मुखौटे जैसी

मुस्कान के साथ कहा, "पर मैं संयोगवश ही आपके नगर में आ पहुंचा हूं, और ऐसे काम में नगर का प्रतिनिधित्व करना मेरे लिए शायद ही उचित हो।"

"यह आप क्या कहते हैं, अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच," भावभीने स्वर में उस व्यक्ति ने आपत्ति की, जिसकी दाढ़ी और जतन से कंघी किये बाल उन ऊंची हस्तियों की याद दिलाते थे, जिनकी निधन सूचनाएं 'नीवा'* में छपती थीं। "यह आप क्या कहते हैं, अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच!"

जनरल मामोन्तोव के पास भेजे जा रहे प्रतिनिधिमण्डल में शामिल होने का अनुरोध करने पास्तुख़ोव के पास आये कोज़्लोव नगर के दो और नेताओं ने विरोध में कंधे बिचकाये।

"अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच, आप हमारे नगर के नहीं, सारे सभ्य रूस के प्रतिनिधि हैं।"

"सच मानिये!" निधन सूचनाओं वाली हस्ती ने बड़े जोश से समर्थन किया। "आपके नाम से हमारे सैनिक अफ़सर भी परिचित हैं। प्रगतिशील सैनिक अफ़सर तो निस्संदेह आपको जानते हैं! हो सकता है, आपका नाम सुनकर स्वयं जनरल के हृदय में वे श्रेष्ठ भावनाएं जाग पड़ें, जो सैनिक परिस्थितियों के कारण सुप्तावस्था में हैं।"

"जिन्हें जनरल ने कम से कम अपने मुक्ति अभियान में प्रकट नहीं किया है," दूसरे नेता ने कटाक्ष किया।

"और जो हमारी एकमात्र आशा हैं," तीसरे नेता ने उसांस छोड़ते हुए कहा। "सो हम आपसे अनुरोध करते हैं, विनती करते हैं, हमारे प्रस्ताव को ठुकराइये नहीं।"

पास्तुख़ोव ने आस्या की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखा।

वह यहीं इसी कमरे में बैठी थी, जिसमें धूल भरे चौक की ओर छज्जा था। सदा की भांति इस समय भी अधिक उत्तेजित होने के कारण

---

* १८७० से १९१८ तक सेंट पीटर्सबर्ग से प्रकाशित साहित्यिक पत्रिका। – सं०

उसका रूप अत्यंत सम्मोहक हो उठा था; बरौनियां और भी अधिक पीछे को मुड़ी लगती थीं, पलकों तले ओस जैसा निर्मल आंसू चमक रहा था।

चारों पुरुष उसे घेरे खड़े थे, अत्यंत विनम्रता से उसके बोलने की प्रतीक्षा करते।

"मेरे विचार में, साशा, अगर कुछ हित हो सकता है... थोड़ा सा भी हित! इन दुष्टों ने तो प्रलय मचा रखी है! कोई तो इन्हें रोके... जनरल ही सही!"

"वे शयनकक्षों में घुस आते हैं," ऊंची हस्ती के मुंह से निकला, "अंतरीय तक उठा ले जाते हैं!"

"पर देखिये, साहबानो, मैं प्रतिनिधिमण्डल का नेतृत्व किसी हालत में नहीं करूंगा," पास्तुख़ोव ने हाथ हिलाते हुए कहा।

"नहीं, नहीं, अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच! नेतृत्व हमारे नगर के सुप्रसिद्ध शिक्षक करेंगे। देखिये, वह भी पहले इन्कार कर रहे थे। लेकिन फिर... नागरिक दायित्व समझकर... आपसे हम बस प्रतिनिधिमण्डल का सदस्य होने का अनुरोध कर रहे हैं। केवल सदस्य होने का! बस आपका समर्थन प्राप्त हो!"

"झुंड में चलने को मैं तैयार हूं," पास्तुख़ोव ने कृपालु होते हुए मज़ाक किया।

सब साभार मुस्करा उठे, पर वह फिर से औपचारिक स्वर में बोला:

"और हां साहबानो, देखिये कोई याचना-पत्र न हो। मैं इसके खिलाफ़ हूं। लिखित में कुछ न हो! और न कोई स्तुतियां हों, न घिघियाना!"

"नहीं, नहीं। सिर्फ़ मुंह ज़बानी। हम आग्रहपूर्वक अनुरोध करेंगे, बल्कि मैं तो कहूंगा, मांग करेंगे, क्यों श्रीमान, ठीक है न? – कि हमारे नगर को, प्रजा को इस लूट-पाट से बचाया जाये। तुरन्त बंद की जाये यह लूट-पाट!"

"और यह सारी हिंसा!" आस्या ने घिन से कहा, और छोटी उंगली परे को किये अपना हाथ कनपटी पर रखा।

16*

"मुझे कोई आपत्ति नहीं है," पास्तुखोव ने फिर से कहा।

"अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच, आप बस तैयार रहना। जैसे ही जनरल प्रतिनिधिमण्डल से मिलने का समय देंगे, हम आपको खबर कर देंगे।"

मुलाकाती विदा होने लगे, लेकिन उनमें जो सबसे जवान था, वही, जिसने जनरल के मुक्ति अभियान के बारे में कटाक्ष किया था, खड़ा रहा।

"ज़रा एक मिनट ... एक निजी काम है ..."

"मैं जाती हूं छोड़ने," आस्या ने कहा और पति को नौजवान के साथ अकेले छोड़कर कमरे से बाहर निकल गई। नौजवान बेचैनी से दरवाज़ा बंद होने का इंतज़ार करता खड़ा रहा।

"आप शायद ... कवि हैं? कविता दिखाना चाहते हैं?" पास्तुखोव ने सहानुभूति दिखाते हुए पूछा।

"नहीं, नहीं। वैसे तो मैं अखबार में काम करता हूं। मुझे भी प्रतिनिधिमण्डल में शामिल होने पर राज़ी किया गया है। पर साफ़-साफ़ कहूं, तो ... मैं यह जानना चाहता था कि अगर ... वे लौट आये, तब आप क्या करेंगे?"

"बोल्शेविक?"

"जी हां।"

पास्तुखोव बेझिझक इस फूंक-फूंककर कदम रखनेवाले नौजवान को देख रहा था, मानो वह कोई अध्ययन योग्य जीव हो। इस जीव का एक कान छोटा था और दूसरा खासा बड़ा, जिसकी लोलकी नीचे को खिंची हुई थी और गर्दन से जुड़ी हुई थी, लगता था जैसे वह खास तौर पर दूसरों की बातों पर कान देने के लिए बना हो, और पास्तुखोव के दिमाग में एक नया फ़िकरा आया "वाह रे कान फाड़कर सुनने-वाले!"

"बहुत मुमकिन है कि तम्बोव की तरह यहां भी ये ज़्यादा दिन न टिकें। और एक कामचलाऊ प्रशासन के अलावा इनकी यहां कोई सत्ता न बने। और फिर वे लोग लौट आयेंगे।"

"आपके ख्याल में ऐसा हो सकता है?"

"बिल्कुल। वे लौट आयेंगे और उन्हें यह पता चलेगा कि हम लोग जनरल से मिलने गये थे।"

"पर हम तो जनता के हितार्थ जा रहे हैं," पास्तुख़ोव ने कोई सफ़ाई ढूंढ़ने की कोशिश की और जीव के अध्ययन की ओर से उसका ध्यान हट गया।

"अजी हां, कहते फिरना जनता के हितार्थ! कौन सुनेगा?!"

पास्तुख़ोव ने चेहरे पर हाथ फेरकर मानो चिंता की छाप पोंछी और मस्तिष्क में सहसा कौंधी बात कह डाली:

"पता है, सबसे बढ़िया बात क्या होगी? पागलखाने में छिप जाया जाये। जी हां! एक बोरी आटे की खरीद ली जाये और पागल-खाने में छिप जाया जाये। एक बोरी काफ़ी देर चलेगी। बिल्कुल सही बात है, पागलों के बीच छिप जाया जाये! बिल्कुल सही बात है।" पास्तुख़ोव बार-बार कहने लगा, मानो उसे स्वयं ही यह विश्वास होता जा रहा हो कि उसने बड़े पते की बात कही है।

"आप ऐसा करने की सलाह मुझे दे रहे हैं या खुद अपनी सलाह पर अमल करेंगे?"

पास्तुख़ोव ने बड़े ज़ोर से मेहमान से हाथ मिलाया, उसे बाहर तक छोड़ आया और मन ही मन हंसने लगा।

"हरामज़ादा!" अंदर आकर वह बुदबुदाया।

फिर वह छज्जे पर चला गया।

चौक के दूसरी ओर भूतपूर्व वाणिज्य विद्यालय की ईंटों की इमारत के सामने से कज़्ज़ाक सरपट घोड़े दौड़ाते जा रहे थे। उनकी काठियों के पीछे गठरियां बंधी हुई थीं। कोड़े चमकाते, सीटियां बजाते और गला फाड़कर चिल्लाते हुए वे धूल के बादल उड़ाते जा रहे थे। उनमें से कुछ घोड़े के पुट्ठों पर उछलती लूट के माल की गठरियां कसकर पकड़े हुए थे। एक कज़्ज़ाक की गठरी में से छींट का टुकड़ा निकल गया था और घोड़े के पीछे आसमानी सांप की तरह लहरा रहा था।

"साशा, साशा! सिर फिर गया है क्या!" आस्या दौड़ती आई और उसे अंदर खींचकर धम से छज्जे का दरवाज़ा बंद कर दिया। "वे गोली मार सकते हैं! यों एकदम खुली जगह पर खड़े हो गये!"

"शैतान जाने क्या हो रहा यह सब!" पास्तुख़ोव ने झल्लाते हुए कहा और कमरे में चक्कर काटने लगा...

जब से मामोन्तोव के सिपाही शहर में घुस आये थे और लूट-पाट मचाने लगे थे, वह भयभीत था और साथ ही उसे इस बात का अजीब कौतूहल भी था कि उसके और उसके परिवार के जीवन में क्या परिवर्तन आयेगा। किसी अनबूझ बात की, ऐसी बात की जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती, उद्विग्नता भरी प्रतीक्षा उसे क्रिस्मस से पहले बच्चों की अवस्था की याद दिलाती थी, लेकिन कौतूहल पर भय हावी था, क्योंकि वह जानता था कि खून की नदियां बह रही हैं, और वे उसके नये पड़ाव के पास आती जा रही हैं।

यह घर, जिसमें पास्तुख़ोव परिवार दो सप्ताह से रह रहा था, एक छोटे से व्यापारी का था, जिसका बेटा नगर के थियेटर का मैनजर था। थियेटर से मदद मांगने का विचार अनास्तासिया गेर्मानोव्ना के मन में आया था, और यह अच्छा विचार निकला: मैनेजर ने नाटककार का नाम सुन रखा था और पास्तुख़ोव पर अहसान करने का अवसर पाकर उसके अहं की तुष्टि होती थी। इसके परिणामस्वरूप उन्हें नगर की बड़ी सड़क के पास ही दो खासे अच्छे कमरे रहने को मिल गये।

धीरे-धीरे वे इस नये जीवन की एकरसता के आदी हो रहे थे। उन्हें इस बात का पूरा अहसास था कि उन्हें यह चैन संयोगवश ही मिला है और इस संयोग की ही भांति क्षणभंगुर है, फिर भी वे भविष्य की ओर से आंखें मूंदे इस चैन का आनन्द ले रहे थे। सरातोव की ही भांति कोज़्लोव में भी वे संयोगवश ही आ पहुंचे थे, किन्तु अब यह संयोग उन्हें इतना परेशान नहीं करता था, क्योंकि अब वे अपनी ज़िंदगी के आख़िरी फ़ैसले के एक कदम और पास आ गये थे, और इस बात में उन्हें कोई संदेह न था कि देर-सवेर यह फ़ैसला होना ही है।

अल्योशा को यह नई जगह इतनी अच्छी नहीं लगती थी, जितना दोरोगोमीलोव का घर, और वह उदास रहता था। ज़िंदगी के ढर्रे में उसे कुछ भी अनिवार्य नहीं लगता था, और सभी बच्चों की भांति उसके लिए भी कोई बात संयोगवश हो या किसी नियम के अनुसार – वह

एकसमान ही स्वाभाविक थी, उसे होना था, सो हो गई। अल्योशा सोचता था कि उसके माता-पिता वोल्गा तट पर सरातोव नगर में गये थे, क्योंकि उन्हें दोरोगोमीलोव के घर रहना था, और वहां से चलकर सीधे नाना-नानी के पास इसलिए नहीं पहुंचे कि उन्हें पहले कोज़्लोव में थियेटर के मैनेजर के यहां कुछ दिन रहना था। थियेटर मैनेजर के अहाते के बजाय दोरोगोमीलोव के बाग में खेलना उसे ज़्यादा अच्छा लगता था, लेकिन उसके लिए सरातोव और कोज़्लोव में उसके खेल एकसमान ही थे, उससे पहले पीटर्सबर्ग के उसके खेलों की ही भांति स्वाभाविक। ओल्गा अदामोव्ना उसके साथ थी, और पापा-अम्मा भी, उसे खाना खिलाया जाता था, चिलमची या कपड़े धोने के टब में बिठाकर नहलाया जाता था, उसके नाखून काटे जाते थे और डांटा जाता था – मतलब उसकी ज़िंदगी चल रही थी, कभी उसे ज़्यादा मज़ा आता, कभी कम, पर जीवन में संयोगवश कुछ नहीं घटता था, वह अपने नियमों के अनुसार चलती ज़िंदगी ही थी।

पास्तुख़ोव और आस्या के लिए पिछले दो बरसों की ज़िंदगी नियम का उल्लंघन ही थी, क्योंकि उसकी सामान्यतया स्वीकृत व्यवस्था निरंतर भंग हो रही थी। कुछ आकस्मिकताएं उनके लिए सहनीय थीं, कुछ यातना भोगने के समान। पुरन्तु यह बात भी कि उन्हें अल्योशा को गुसलखाने के बड़े टब की जगह चिलमची या कपड़े धोने के टब में नहलाना पड़ता था इस बात का प्रतीक थी कि अटल व्यवस्था ढह रही है।

वे दोनों अच्छी तरह यह समझते थे कि ज़ीवन के हास्यमय पहलुओं को ढूंढते रहने से जीना कुछ आसान हो जाता है। और वे हंसी-मज़ाक करने की कोशिश करते थे।

उन दोनों में से कोई भी पहले इस इलाके में नहीं रहा था। लेर्मोन्तोव की कविता 'खज़ांचिन' से ही वे तम्बोव के बारे में जानते थे, और वे इस नगर के साथ म्यात्लेव* की कविता 'श्रीमती कुर्द्युकोवा' को जोड़ते थे। कोज़्लोव में तम्बोव का वातावरण उनकी कल्पना में

* म्यात्लेव – १९ वीं सदी का मामूली रूसी कवि। – सं०

इस बात से ही बन जाता था कि यह शहर घोड़ों की नुमायशों के लिए मशहूर था। आस्या को बहुत सी कविताएं याद थीं और वह बड़े मौके से श्रीमती कुर्द्युकोवा के अनर्गल भावोद्गार सुना देती थी और पास्तुख़ोव ठहाका मारते हुए उन्हें दोहराता था:

फिर से जाग उठीं स्मृतियां,
मेरे जीवन की वे घड़ियां,
वे मोहक कुंज, वे विहार
जहां किया प्यार का इज़हार
कुर्द्युकोव ने पहली बार।

एक दिन शाम को देर से वे छज्जे पर बैठे छोटे से निद्रामग्न शहर की खामोशी का आनन्द ले रहे थे और अपने विचारों के शांत प्रवाह में बहते जा रहे थे। तारों भरी रात में विचारों का ऐसा शांत प्रवाह होता है, जब यादें आशाओं से घुल-मिल जाती हैं, और यह स्पष्ट नहीं होता कि सुखद भविष्य के स्वप्न देखे जायें, या वर्तमान को ही पूर्णतः सुखद मान लिया जाये।

"देखो, तारा गिरा," आस्या ने कहा। "तुमने कोई मन्नत मांगी?"

"नहीं, कोई नहीं। तुमने?"

"मैंने भी नहीं। मुझे हमेशा सोचने में देर हो जाती है।"

काफ़ी देर तक वे चुप रहे।

"आखिर धूल बैठ गई," पास्तुख़ोव बोला। "पियोनी फूलों की सुगंध आ रही है न? क्या अभी भी कहीं उग रहे हैं?"

"हां, सचमुच," आस्या ने झूठ बोला। "वैसे पियोनी की बहार तो कब की निकल चुकी।"

"अजीब गंध है। एक साथ ही गुलाब और घोड़े के पसीने की।"

"तुम्हारी नाक अजीब है। तुम सदा हर गंध सुंदर और घिनौनी में बांट देते हो।"

"मैं गंध को बांटना नहीं, उसका पूरा योग देखता हूं। गंध अविभाज्य है, वैसे ही जैसे भावना। जो अपनी भावना को उसके घटकों में विभाजित करना चाहता है, वह या तो उसे खो बैठता है, या अपनी प्रकृति से ही उस भावना से वंचित होता है। भावना में अच्छाई

और बुराई सदा साथ होती हैं। पियोनी की गंध से गुलाव या घ
के पसीने की गंध अलग कर दो तो वह पियोनी की गंध नहीं
जायेगी।"

"तुम्हारे प्रति मेरी भावना में कोई बुराई नहीं है।"

पास्तुखोव ने आस्या का घुटना सहलाया।

"तुम एक भौतिक नारी हो। तुम्हारा अस्तित्व मूलतः भौ
है, दैहिक है। इसीलिए तुममें सत्त्वों की ही प्रमुखता है। तारों
भांति। उनके केवल सत्त्व होते हैं, गुण नहीं। तारे न अच्छे होते
न बुरे।"

वह हंस पड़ा।

"हे भगवान, क्या वकवास कर रहा हूं मैं!"

आस्या की ओर भुककर उसने अलसाये अंदाज़ में उसकी दो
आंखें चूमीं।

फिर से वे काफ़ी देर तक निश्चल वैठे रहे, आखिर आस्या
बोली, मानो उनकी वातचीत रुकी ही न हो:

"पता है, यह भी म्यात्लेव ने ही लिखा था: 'कितने सुंद
कितने कोमल थे गुलाव'।"

"ज़रा सोचो तो तुर्गेनेव को यह पंक्ति भा गई। आगे क्या है

आस्या ने सुनाया:

कितने सुंदर, कितने कोमल थे गुलाव
मेरे वगीचे में। कैसे सहलाते थे मेरी नज़रें,
की थीं कैसे मिन्नतें मैंने सर्द हवाओं से,
न बुझायें उनकी लौ अपनी ठंडी सांसों से।

"कैसी थी वह ज़िंदगी?" आस्या ने अचम्भे से कहा। "
जीते रहे होंगे लोग और कैसे थे वे लोग कि ऐसी कविता लिखी गई

"वह भी ऐसी तुक में!" पास्तुखोव ने कहा। "अगर क
मास्टर गीब्शमान ने यह कविता गम्भीरता से पढ़ी होती, तो 'आव
कुत्ता'* में लोग हंसी से लोट-पोट हो जाते।"

---

* एक साहित्यिक क्लव। – सं०

"अविभाज्य भावना!" आस्या ने उसांस छोड़ी। "तुम्हारा 'कुत्ता' हर चीज़ को नोच डालता है। और हर कोई उससे डरता है कि कहीं उसका मज़ाक न उड़ जाये। कला में कोई सम्पूर्ण भावना रही ही नहीं। तुम्हारे 'कुत्ते' को यह हास्यास्पद लगता है कि हम तारों को निहार रहे हैं। यह हास्यास्पद है कि हमें म्यात्लेव की कविताएं याद आती हैं। यह हास्यास्पद है कि एक दूसरे से प्रेम करते हैं। उसके लिए सब कुछ हास्यास्पद है।"

पास्तुख़ोव ने कुछ जवाब नहीं दिया, बस हौले से हंस दिया। छज्जे की लोहे की रेलिंग पर नाखूनों से पटपट करते हुए वह मानो यह सुझा रहा था कि बात यहीं छोड़ दी जाये। पर फिर बोलने लगा।

"मैं कभी भी इस बात पर अंत तक विचार नहीं कर पाया हूं कि कला है क्या? मैंने अपना सारा जीवन इसे अर्पित किया है, पर नहीं जानता कि यह क्या बला है। सुविधा के लिए यह मान लेता हूं कि मेरे लिए सब स्पष्ट है। नहीं तो कुछ लिखा ही नहीं जा सकता। अंत तक समझ लो, तो फिर त्रुटिहीन होना चाहोगे। पर कला त्रुटिहीन होती नहीं। कला में आदमी विज्ञान से या आदर्श के अन्य किसी भी विषय से अधिक गोते खाता है, त्रुटियां करता है।"

"कोई बात नहीं, प्रिय, तुम्हारी त्रुटियां भी अनुपम हैं।"

उन्हें किसी के दौड़ने की आवाज़ सुनाई दी। आवाज़ गिरजे की ओर से आ रही थी, जो ऊंची छाया की भांति आकाश को दो भागों में बांटे हुए था। फिर आवाज़ चौक पर आ गई, ऊंची होती गई, और तारों की झिलमिल रोशनी में दोनों ने एक साथ एक काली आकृति देखी, जो सीधे उनके घर की ओर आ रही थी।

"दौड़ क्यों रहा है? चलो, अंदर चलें," आस्या फुसफुसाई।

"ठहरो। हो सकता है उसे किसी ने लूट लिया हो?"

पर वे छज्जे से चले गये और कमरे में कान लगाये खड़े रहे। फाटक चरमराया, दरवाज़े पर ज़ोर से भड़भड़ हुई।

"माचिस कहां है? कोई हमारे यहां आया है," पास्तुख़ोव ने मेज टटोलते हुए कहा।

वे लैम्प जला भी न पाये थे कि उनका युवा संरक्षक, थियेटर का मैनेजर दिल पर हाथ रख ऊपर दौड़ा आया।

"नीचे चलिये! पिता जी के पास! सबको एकसाथ बताता हूं!"

उसकी सांस फूली हुई थी। सीढ़ियां उतरते समय उससे रहा न गया – खबर उसके लिए बोझ बन रही थी, और आतंक भरे एक शब्द में ही उसने बोझ हल्का किया:

"सफ़ेद गार्ड!"

बुझती दियासलाई से पास्तुखोव की उंगलियां जलीं। वे अंधेरे में थम गये।

"चलिये, चलिये!" मैनेजर कह रहा था।

नीचे पहुंचकर उसने खिड़कियों पर अच्छी तरह पर्दे कर दिये और सबको बैठने को कहा। उसकी मां जी ढीली-ढाली औरत थीं, जिन्हें कुछ कम सुनाई देता था। उनकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था और वह बेचैनी से इंतज़ार कर रही थीं कि आगे क्या होगा। वास्कट पहने, बांहें चढ़ाये उसके पिता जी ने दोनों हाथों की उंगलियां आपस में गूथकर हाथ मोटी सी सचित्र पत्रिका पर रख लिये। पत्रिका के चित्रों को देखते हुए आखिर उन्होंने रूमानिया की रानी एलिज़ाबेथ – कार्मेन सिल्वा के पुस्तकालय के चित्र पर नज़र टिका ली।

"दोन कज़्ज़ाकों ने तम्बोव पर कब्ज़ा कर लिया है। रास्ता कट गया है!" थियेटर जैसी तैयारियां खत्म हो जाने पर मैनेजर ने मनहूस खबर सुनाई।

फिर उसने यह बताया कि एक अभिनेता शंटिंग इंजन पर तम्बोव से भागकर आया है। नगर में जब मामोन्तोव के कज़्ज़ाकों ने कब्ज़ा कर लिया था, तो एक इंजन ड्राइवर टक्कर का खतरा उठाते हुए रेल की बाईं लाइन पर यह शंटिंग इंजन दौड़ा लाया था। कटा हुआ रास्ता अभिनेता ने एक किसान की घोड़ागाड़ी पर पार किया और फिर मालगाड़ी पर बैठ गया। तम्बोव में आते ही कज़्ज़ाक लूट-पाट करने लगे थे। बोल्शेविकों को पकड़-पकड़कर तार के खम्भों पर लटका रहे थे। गांवों में किसानों को सता-सताकर मार रहे थे, जैसे भूदासता के दिनों में सताया जाता था। हर जगह आग लगी हुई थी और मामोन्तोव के सिपाही आग बुझाने नहीं दे रहे थे।

"कौन हैं ये?" मां जी ने पूछा।

"सफ़ेद गार्ड।"

"कहां से आ टपके ये?"

"जनरल लाया है उन्हें। सफ़ेद गार्डों का जनरल!"

"अच्छा, जनरल!" मां जी ने कहा और सलीब का निशान बनाया (पास्तुख़ोव समझा नहीं—डर के मारे या आभार से)। "क्या हो गया है लोगों को? भागते फिर रहे हैं बावले से।" पति की ओर नजर डालकर मां जी ने कहा।

"हमें इससे क्या लेना-देना है? हमारा इससे कोई वास्ता नहीं है," पिता जी ने पत्रिका पर नजरें गड़ाये हुए कहा।

"हो सकता है कल वे यहां पहुंच जायें। रिसाला है," बेटा बोला।

"सम्भव है यही अंत हो?" आस्या ने झिझकते-झिझकते कहा, उसके गाल गुलाबी हो गये थे।

"किसका अंत?.. सब इन विद्वानों की करनी है! देखो तो कितनी किताबें हैं," पिता जी ने कार्मेन सिल्वा के पुस्तकालय की ओर सिर हिलाकर कहा।

पास्तुख़ोव इस इशारे को परोक्ष रूप से अपनी ओर किया गया कटाक्ष समझ सकता था। उसने भी सीधे बैठकर आंखें नीची कर लीं और जवाब दिया:

"इस बर्बरता के लिए पुस्तकें दोषी नहीं हैं। विद्वान तो किसानों को कोड़ों से नहीं पिटवा रहे। पागलपन के लिए बुद्धि से जवाबदेही नहीं की जा सकती। पर आपका यह कहना सही है कि हमारा इससे कोई वास्ता नहीं है। हमें बस चैन से बैठकर देखना होगा कि क्या होता है।"

वह उठ खड़ा हुआ। उसके सुडौल बदन में राजसी शान थी। अपनी सूक्तियां उसे ख़ुद अच्छी लग रही थीं।

"अगर चैन से बैठा जा सकता है तो," आस्या ने अपनी ओर से जोड़ा और वह भी उठ खड़ी हुई।

"बैठिये न? मैं अभी समोवार गर्म करती हूं, चाय-वाय बनाती हूं," मां जी ने होंठों पर उंगलियां फेरते हुए और कुर्सी में धीरे से मुड़ते हुए कहा (उनका बहरापन जिंदगी के सवालों की गिनती कम करके ही उनके लिए जीना आसान कर देता था)।

लेकिन पास्तुख़ोव और आस्या अपने कमरे में लौट आये। पौ फटने तक वे लेटे नहीं, यही सोचते रहे कि आगे क्या होगा और बारी-बारी से एक दूसरे को शांत और उद्विग्न करते रहे। सिर्फ़ एक बार, जब उजाला हो रहा था, तो आस्या ने छज्जे की ओर देखकर मज़ाक किया :

"जो गंध तुम्हें पियोनी की लगी थी, वह उससे कहीं अधिक जटिल निकली। उसमें बारूद की भी गंध थी।"

"पर घोड़ों के बारे में तो मेरा कहना ठीक था : कज़्ज़ाकों की गंध आ रही थी।"

. . . .

अगर हम मामोन्तोव की चढ़ाई को कोज़्लोव के साधारण निवासी की नज़रों से देखें (जिसने पहले तम्बोव पर सफ़ेद गार्डों के कब्ज़े की अफ़वाहें सुनीं और फिर हमलावरों को अपने शहर की सड़कों पर देखा), तो विचित्र दृश्य पायेंगे।

सोवियत सत्ता की स्थापना के क्षण से ही इन नगरों में और किसी का राज नहीं हुआ था। दक्षिणी इलाके, जहां न जाने कितनी बार सरकारें बदलती रही थीं, यहां से दूर थे, और लगता था कि मोर्चे पर लड़ रही लाल सेना यहां के नये जीवन की रक्षा भली भांति कर रही है। यह इलाका पूरी तरह से रूसी इलाका था, और वह भी कोई सीमांत इलाका नहीं, बल्कि केन्द्रीय इलाकों से जुड़ा हुआ। सो यहां के सभी लोगों की नज़रों में वह राज्य की नींव का, उसकी एकीकृत राष्ट्रीय नाभि का ही अंश था, यानी यही रूस था, वह रूस जिसने सोवियतों की स्थापना की थी और अब उनकी रक्षा के लिए लड़ रहा था।

तम्बोव की पराजय का समाचार वज्रपात की भांति था। आरम्भ में तो न कोज़्लोव के अधिकारी, न मज़दूर लोग और न ही नगर के आम निवासी कुछ समझ पा रहे थे। कैसे सफ़ेद गार्डों की पूरी की पूरी कोर मोर्चे से कोई डेढ़ सौ मील पीछे आ पहुंची? कैसे उसने एक ही वार में सरातोव और बलाशोव का रास्ता काट दिया? क्या उसका सामना किया गया? कहां? कब? और कैसे यह लड़ाई हारी गई?

एक दिन बाद तम्बोव से खबरों की बाढ़ आई लेकिन बाढ़ के

पानी जैसी ही गंदली: खबरें स्तम्भित ही कर रही थीं, इनसे समझ में कुछ नहीं आता था।

तम्बोव मोर्चे का हेडक्वार्टर ही सबसे पहले ये अफ़वाहें उड़ाने लगा था कि नगर की स्थिति निराशाजनक है। स्वयं कमांडेंट यह कहता फिरता था कि दुश्मनों की बीस रेजीमेंटें तम्बोव पर हमला करने आ रही है। नगर तक पहुंचने के रास्तों की प्रतिरक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया था, नगर की सड़कों पर लड़ने की तैयारी भी नहीं की गई थी और न ही पीछे हटने का आदेश दिया गया था। इससे नगर के गैरिज़न में घबराहट फैल गई, लोगों को बिल्कुल कुछ समझ में ही न आता था कि करें तो क्या करें।

मामोन्तोव की फ़ौजों के नगर में पहुंचने से एक दिन पहले सुबह-सुबह ही रेल गोदामों के आसपास और अहातों में मोटरगाड़ियां और घोड़ागाड़ियां जमा हो गई। जो कुछ हाथ में आता, ज़रूरी, गैर ज़रूरी सब चीज़ें लादी जा रही थी, कार्यालयों की टूटी कुर्सियां और अलमारियां तक। शीघ्र ही गाड़ियां दो कतारों में चल दी और नगरवासियों को पलायन का दृश्य देखने को मिला। नगर में भगदड़ मच गई। बख्तरबंद गाड़ियों की टुकड़ी के कमांडर ने यह फ़ैसला किया कि भगदड़ बंद की जानी चाहिए, सो वह सोवियत सड़क के मकानों पर मशीनगनों से गोलियां चलवाने लगा। और फिर बख्तरबंद गाड़ी लेकर अपनी मर्ज़ी से ही तम्बोव से मोर्शान्स्क चला गया।

कज़्ज़ाक स्टेशन पर आ धमके। सैनिक विद्यालय के छात्रों ने उन पर गोलीबारी की, लेकिन उसका कोई खास असर नहीं हुआ। तम्बोव दुश्मन के कब्ज़े में आ गया। लाल सैनिक, जिन्हें उनकी चौकियों से हटाया नहीं गया था, आखिरी गोली तक लड़ते रहे और खेत रहे। अलग-अलग कम्युनिस्टों ने प्रतिरोध किया और वे भी मारे गये।

तम्बोव में अपना मार्च रोके बिना ही मामोन्तोव पश्चिम को मुड़ा और कोज़लोव को चल दिया।

प्रदेश के केन्द्र की पराजय के बाद आरम्भ में यही सब बातें कोज़लोव वालों को पता चलीं।

कोज़लोव नगर के अधिकारियों ने रक्षा का प्रबन्ध करने की कोशिश की। वे यह विश्वास दिला रहे थे कि उनके मत में उनके पास पर्याप्त

शक्ति है। बोल्शेविकों की एक टोली को मशीनगनों और तोपों के साथ नगर से बीस मील दूर की चौकी पर भेजा गया। निकीफ़ोरोव्का स्टेशन के पास कज़्ज़ाकों के गश्ती दल दिखाई दिये। टोली उनसे जूझने लगी।

परन्तु साथ ही अधिकारीगण हिचकिचा रहे थे, वे यह निर्देश पाने की प्रतीक्षा कर रहे थे कि क्या करें। उनकी सूचनाएं अंतर्विरोध भरी थीं और उनकी कार्रवाइयां उलझी-पुलझी। उन्होंने बैंक का सारा पैसा मास्को भेज दिया था, मगर मूल्यवान वस्तुओं से लदे मालगाड़ी के लगभग सौ डिब्बों को शहर से भेज देने का फ़ैसला नहीं कर पा रहे थे। वे केन्द्रीय अधिकारियों से यह पूछ रहे थे कि "नगर सोवियत के विभागों को नगर से हटायें कि नहीं, अगर हां, तो कौन-कौन से विभाग और उन्हें कहां भेजें?" और साथ ही कह रहे थे: "जहां तक नगर सोवियत के विभागों और उनके कर्मचारियों का सवाल है, तो वे निस्संदेह आखिरी क्षण तक काम करते रहेंगे"। उन्होंने यह रिपोर्ट भेजी थी कि "सभी कम्युनिस्टों और स्थानीय रक्षकों को चौकियों पर तैनात कर दिया गया है"। लेकिन इसी रिपोर्ट के प्रेषक ने यह भी स्वीकार किया था कि किसी को पता नहीं कि चौकियां कहां होनी चाहिए। "हम डटकर मुकाबला नहीं कर सकते क्योंकि, दुर्भाग्यवश, हमारे टोही यह पता नहीं लगा सके हैं कि शत्रु किस दिशा में बढ़ रहा है, उसकी संख्या कितनी है, कितने सैनिक कोज़्लोव पर हमला करने आ रहे हैं, यह सब हमें पता नहीं है... कृपया मोर्शान्स्क की स्थिति के बारे में बतायें, क्योंकि हमें यह पता चला है कि शत्रु ने अपनी कुछ टुकड़ियां मोर्शान्स्क और र्याझ्स्क की ओर भेजी हैं"।

मुकाबला करना न केवल इसलिए ही असम्भव था कि टोही किसी काम के नहीं थे। केवल शत्रु ही बेचैनी नहीं फैला रहा था। नगर में भी इसके अनेक कारण थे।

बात यह थी कि जनतंत्र की क्रांतिकारी सैनिक परिषद के हेडक्वार्टर के विभाग से बार-बार यह पूछा गया था कि कोज़्लोव की प्रतिरक्षा की स्थिति कैसी है, क्या यह आशा है कि शत्रु को नगर में नहीं आने दिया जायेगा, लेकिन इन सब सवालों का नगर के अधिकारियों को कोई जवाब नहीं मिल रहा था। हेडक्वार्टर के इस विभाग ने अपने सारे कागज़ात और दूसरा सामान पहले ही यहां से हटा लि ा था और

विभाग के अधिकारी गाड़ी पर सवार थे, किसी भी क्षण चल देने को तैयार। दक्षिणी मोर्चे का हेडक्वार्टर पहले ही कोज़्लोव छोड़ चुका था और अब सेर्पुख़ोव में था। अधिकारियों की ही भांति नगरवासियों को भी यह सब पता था, वे अपनी आंखों यह सब देख रहे थे।

ऐसे हालात में नगर के लिए मुकाबला करना कठिन था। तम्बोव पर कब्ज़े के चार दिन बाद कोज़्लोव भी जाता रहा।

मामोन्तोव के वरद-हस्त से तुरन्त ही एक अखबार निकाला गया।

जनवादी होने का दिखावा करते हुए जनरल ने इसका नाम 'काली धरती का विचार'* रखने की इजाज़त दे दी, जो जनवादी प्रकाशन के लिए भी खासा बीभत्स नाम था। अगले दिन अखबार के विशेषांक में यह घोषणा की गई: "...तीन दिन तक कज़्ज़ाकों का प्रतिरोध करने के पश्चात लाल सैनिकों और कम्युनिस्टों ने कोज़्लोव छोड़ दिया। जनरल देनीकिन की दोन कज़्ज़ाक रेजीमेंटों ने नगर में प्रवेश किया, जिनके कमांडर हैं जनरल मामोन्तोव। अधिकांश कम्युनिस्टों का सफ़ाया कर दिया गया है, लाल सैनिकों ने हथियार डाल दिये, कुछ भाग गये और शेष का कज़्ज़ाक पीछा कर रहे हैं"...

कोज़्लोव वालों के लिए अब तक मामोन्तोव का नगर में आना पुरानी बात हो चुका था। अब तो वे बस यह याद कर सकते थे कि इससे पहले दिन दोपहर के तीन बजे के करीब वोरोनेज नदी के पार से और तुर्मासोव मैदान की ओर से घोड़ों की टापें सुनाई दी थीं, और ठीक तीन बजे सफ़ेद गार्डों का जनरल, जिसे दोपहर के खाने के बाद काठी में सीधा बैठने में कठिनाई हो रही थी, अपने दल-बल के साथ यमस्काया सड़क पर प्रकट हुआ था; कैसे लोग अपने घरों के सामने चुपचाप खड़े थे; कैसे चौराहे पर कुछ लड़कियां फूल लिये आगे बढ़ आई थीं और दढ़ियल कज़्ज़ाक ने हाथ बढ़ाकर गुलदस्ता यों पकड़ लिया था मानो वह फूलों से जल जायेगा; कैसे शाम को गिरजे के घंटे घनाघन बजते रहे थे।

यह सब अब यादें बनकर रह गया था। क्योंकि जब दीवारों पर

---

* तम्बोव का इलाका रूस के काली मिट्टी वाले भाग में आता है, इसलिए ऐसा नाम रखा गया। —सं०

'काली धरती का विचार' चिपकाया जा रहा था, तब कोज़्लोव में दूसरी घटनाएं हो रही थीं, उसकी गलियों, सड़कों पर दूसरे दृश्य प्रस्तुत हो रहे थे।

यहूदियों का मुहल्ला लूटा जा रहा था, गोदाम और दुकानें लूटी जा रही थीं। साधारण लोगों ने अपने घरों की खिड़कियों पर देवचित्र रख दिये थे – यह दिखाने के लिए कि ईसाई हैं, यहूदी नहीं। यहूदियों को पकड़कर कज़्ज़ाक उन पर तरह-तरह के अत्याचार करते और फिर तलवारों से उनके सिर काट डालते थे। लाशों से खून से भीगे कपड़े उतार लिये जाते और फिर उन्हें घसीटकर अहातों में डाल दिया जाता, जिनके सामने घुड़सवार सिपाही तैनात थे, ताकि लोग न देखें, न गिनती करें।

काम की कोई चीज़ कज़्ज़ाक नहीं छोड़ रहे थे, सब कुछ ढूंढ-ढूंढकर हथिया रहे थे। तहखानों में से शराब और शहद से भरे लकड़ी के गोल पीपे वे बाहर निकाल रहे थे, खा-पी रहे थे, बेलचों से घोड़ों को शहद खिला रहे थे। घोड़ों पर सवार होकर कपड़े बेचते फिर रहे थे। सभी दुकानों की तिजोरियां साफ़ कर रहे थे, लोगों के घोड़े छीन ले जा रहे थे।

स्टेशन पर धमाके हो रहे थे। स्टेशन की मीनार उड़ा दी गई। पुल ढह गये। एक दूसरे की ओर छोड़े गये इंजन टकराकर खड्ड में गिर पड़े। गाड़ियों में आग लगा दी गई, उनसे कड़ुवा धुआं उठ रहा था। खास टोलियां पटरियां बदलने की कैंचियां तोड़ने चल दीं।

नगर के पार्क में कज़्ज़ाकों का बैंड बज रहा था। नौजवान लौंडियां मामोन्तोव के सिपाहियों के साथ घूम रही थीं। भूतपूर्व ज़ारशाही प्रशासन के टुच्चे अधिकारियों ने संदूकों में बंद अपने कोट निकालकर पहन लिये। गिरजे के पीछे से बढ़इयों की ठकाठक सुनाई दे रही थी: फांसी के तख़्तों के लिए लट्ठे छीले जा रहे थे।

उधर मामोन्तोव अपनी डिविज़नों के कमांडरों – जनरल पोस्तोव्स्की, जनरल तोल्कूश्किन और जनरल कूचेरोव से मिल रहा था। नगर के अस्थाई प्रशासन के सदस्यों की नियुक्ति का अनुमोदन कर रहा था। घोड़े ज़ब्त करने, नागरिक आबादी में से गश्ती दस्ते बनाने और उन्हें बांहों पर बांधने के लिए सफ़ेद पट्टियां देने के आदेशों पर हस्ताक्षर

कर रहा था। गिरजों से लूटा गया माल – सोने की चीज़ें, देवचित्रों के नग-जड़े चौखटे देख रहा था और बता रहा था कि क्या फ़ौज की गाड़ियों में लादा जाये और क्या उसके अपने सामान के साथ रखा जाये।

नगर की बड़ी सड़क पर कोर की परेड हुई। एक के बाद एक कज़्ज़ाकों की टुकड़ियां घोड़े दौड़ाती गुज़रीं, खड़खड़ करती तोपें गईं, बख्तरबंद गाड़ियां और मशीनगनों से लदी लारियां धुआं छोड़ती निकलीं, और फिर पैदल कज़्ज़ाकों की टुकड़ी समारोही मार्च करती गई।

मामोन्तोव घोड़े पर बैठा परेड का निरीक्षण कर रहा था। लाल फ़ीते वाली टोपी तले उसका माथा दिखाई नहीं देता था। वह नीला ओवरकोट और विशाल काले दस्ताने पहने था, जिन पर बाहर की ओर ज़री का काम था। उसने लगाम ऐसे पकड़ रखी थी कि दस्तानों पर ज़री का काम सबको दिखाई दे। कभी-कभी वह भीड़ पर अहंकार भरी नज़र डालता, फिर तेज़ी से मुंह मोड़ लेता, रकाबों में ज़रा उठ जाता और गुस्से में काली मुट्ठी से मूंछें ऊपर को झटकता: भीड़ जोश नहीं दिखा रही थी।

इस रूप में कोज़्लोव के आम निवासियों ने मामोन्तोव की चढ़ाई देखी और केवल इस ज्ञान के आधार पर ही वे घटनाओं को समझने की कोशिश कर सकते थे...

मामोन्तोव की चढ़ाई खत्म हो जाने के बाद घटनाओं का जो ज्ञान प्राप्त हुआ, उसके आधार पर अगर हम देखें, तो गृहयुद्ध के दौरान इस चढ़ाई का अर्थ अधिक स्पष्ट हो जायेगा।

कोज़्लोव से जाते हुए मामोन्तोव ने गिरजे के सामने चौक में खड़े होकर पूजा में भाग लिया। पूजा के समय गिरजे के घंटे जोरों से बजाये गये और बाद में जब भारी-भरकम लबादे ओढ़े पादरी उसके पास जमा हुए, तो उसने उनसे कहा कि वह मास्को पर चढ़ाई करने जा रहा है – "राजधानी का कम्युनिस्टों से उद्धार करने।"

कोज़्लोव पर कब्ज़ा करने के बाद मामोन्तोव की कोर जिस तरह आगे बढ़ी उससे यह पता चलता था कि मास्को पर चढ़ाई करने का दुस्साहस तो मामोन्तोव शायद न ही करे, पर इसका डरावा वह अवश्य दिखाना चाहता था। कोर रानेन्बुर्ग इलाके में पावेलेत्स और तूला जानेवाली सड़कों की ओर बढ़ी।

मामोन्तोव ने सोच-समझकर मास्को पर चढ़ाई का डरावा दिखाया था। वह केवल डींग ही नहीं हांक रहा था, धूर्तता भी बरत रहा था। वह यह अच्छी तरह जानता था कि रिसाले से उसे एक बहुत बड़ा लाभ है, और वह यह कि वह जब चाहे अपनी दिशा बदल सकता है और अपनी मर्ज़ी से अपना शिकार चुन सकता है – ऐसे छोटे-छोटे नगर, जिनकी रक्षा का कोई खास प्रबन्ध नहीं है, जहां छोटी-छोटी गैरिज़नें हैं, जिनके पास कोई खास हथियार भी नहीं हैं। लेकिन दो ऐसे कारक थे, जिनके कारण मामोन्तोव राजधानी की ओर बेरोकटोक नहीं बढ़ सकता था: एक तो यह कि समय बीतने के साथ-साथ हमलावरों से रक्षा का प्रबन्ध सुधरता जा रहा था, दूसरे, मास्को के आस-पास के औद्योगिक इलाकों में, जिनमें तूला तो क्रांति का शस्त्रागार ही था, विशाल संख्या में मज़दूर शत्रु से लोहा लेने को तैयार थे। मामोन्तोव पहले से ही जानता था कि उसे निकट भविष्य में अनिवार्यतः दक्षिण की ओर मुड़ना होगा और सफ़ेद गार्डों के मोर्चे से मिलना होगा। अतः उसके लिए यह और भी अधिक आवश्यक था कि वह ऐसा जाहिर करे मानो उत्तर की ओर बढ़ रहा है, ताकि उसकी चाल को समझना मुश्किल हो और उन इलाकों में प्रतिरोध कमज़ोर पड़ जाये, जिधर वह सचमुच घुसना चाहता था।

उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ने का दिखावा करते-करते वह सहसा दक्षिण-पश्चिम को मुड़ गया। रानेन्बुर्ग के बाद उसने लेबेद्यान और येलेत्स पर हमला किया। फिर उसने अपनी दिशा एकदम बदल दी, ज़ादोन्स्क से होते हुए कज़्ज़ाक सीधे दक्षिण-पूर्व की ओर, राजमार्ग पर वोरोनेज की ओर बढ़ने लगे।

मामोन्तोव की चढ़ाई के रास्ते में सोवियत नगरों का प्रतिरोध क्षीण नहीं हो रहा था, बल्कि बढ़ रहा था। चढ़ाई के बिल्कुल आरम्भ में तम्बोव में जहां दुश्मन का सामना प्रायः किया ही नहीं गया, वहीं अंत में वोरोनेज में उससे ऐसी टक्कर ली गई कि मामोन्तोव वोरोनेज पर पूरा कब्ज़ा नहीं कर पाया, नगर में बस एक दिन टिक पाया और हारते हुए उसे पीछे हटना पड़ा। वोरोनेज के पास लड़ाई के साथ मामोन्तोव की चढ़ाई का अंतिम चरण खत्म हो गया। मामोन्तोव अपनी कोर को वापस ले चला, और उसे अपनी चढ़ाई से बस यही नतीजा

हाथ लगा होता, पर तभी देनीकिन ने उसकी मदद को लेफ़्टिनेंट जनरल श्कुरो की तीसरी कैवेलरी कोर भेजी। दो हफ़्ते बाद यह कोर अपने काले झंडे फहराती वोरोनेज में घुस आई और वह सब करने लगी, जो मामोन्तोव के बूते के बाहर सिद्ध हुआ था।

क्या कारण था कि कुछ नगरों में मामोन्तोव के कज़्ज़ाकों से टक्कर ली गई और कुछ नगर लड़ाई के बिना ही छोड़ दिये गये?

आरम्भ में मामोन्तोव को जो सफलता मिली थी वह उसकी चढ़ाई की आकस्मिकता का ही नतीजा नहीं थी। विश्वासघात का भी इसमें हाथ रहा था।

दक्षिणी मोर्चे की कमान ने इस आदेश को प्रायः नज़रंदाज़ ही कर दिया था कि सैनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण सभी इलाकों में अच्छी तरह किलाबंदी की जाये। तम्बोव और येलेत्स की प्रतिरक्षा का कोई प्रबन्ध ही नही किया गया था। सफ़ेद गार्डों के टोही काम कर रहे थे। वे जानते थे कि तम्बोव की सैनिक टुकड़ियों और नागरिक कार्यालयों में देनीकिन के कज़्ज़ाकों को विश्वासघाती मिलेंगे।

तम्बोव मे जब सैनिक विद्यालय के छात्रों ने तम्बोव रेलवे स्टेशन की रक्षा करने की कोशिश की थी, तो कज़्ज़ाक पूरे विश्वास से चिल्ला-चिल्लाकर उन्हें कह रहे थे: "हथियार डाल दो, तुम्हारी तोपें तो बेकार पड़ी हैं!" उनका कहना सच था: रात को ही भूतपूर्व ज़ारशाही अफ़सरों ने सभी तोपों के घोड़े उतार लिये थे और डिविज़न कमांडर समेत मामोन्तोव से जा मिले थे। मोर्चे की आपरेटिव टुकड़ी राइफ़िल ब्रिगेड के कमांडर को सौंपी गई थी, पर वह भी तुरन्त सफ़ेद गार्डों के पास चला गया। बख्तरबंद गाड़ियों की टुकड़ी का कमांडर दुश्मन से सामना करने के बजाय नगर में व्यवस्था स्थापित करने के बहाने नगर पर ही गोलियां चलवाने लगा। किलेबंद मोर्चे के कमांडेंट ने ही यह अफ़वाह फैलाई कि सफ़ेद गार्डों की बीस रेजीमेंटें तम्बोव की ओर बढ़ रही हैं, जबकि वास्तव में उनकी संख्या ढाई हज़ार सैनिक यानी कुल तीन घुड़सवार रेजीमेंटें थीं। और लड़ाई के बिना ही नगर को दुश्मन के हवाले कर दिया गया।

लेबेद्यान में तम्बोव पर कब्ज़े की खबर तीसरे दिन ही पहुंची, और कोज़्लोव की ही भांति अफ़वाहों के रूप में। नगर में बचाव की

कोशिश की गई। रानेन्बुर्ग से पैदल सैनिकों और रिसाले की कुछ टुकड़ियां यहां भेजी गईं। परन्तु ये सब कोशिशें स्थानीय अधिकारी स्वयं ही कर रहे थे, दक्षिणी मोर्चे की कमान से उन्हें कोई मदद नहीं मिल रही थी, कमान तो कोज़्लोव को खतरा पैदा होते ही वहां से भाग खड़ी हुई थी। तम्बोव के संगठनों ने बाद में यह साफ़-साफ़ स्वीकार किया कि "स्थानीय कमान की ओर से रखे गये कई काम के सुझावों का दक्षिणी मोर्चे की कमान सख्त विरोध करती रही थी"।

सफ़ेद गार्डों ने पहले से ही विश्वासघातियों की टोह ले ली थी, उन्हें तैयार किया था और उनका लाभ उठाया था। यह सोवियतों के विरुद्ध और मामोन्तोव के पक्ष में एक सहायक शक्ति थी।

परन्तु समय बीतने के साथ-साथ मामोन्तोव की चालों की कारगरता घटती जा रही थी। एक तो आकस्मिकता अब कम पड़ गई थी, क्योंकि मामोन्तोव के सम्भाव्य रास्ते में पड़नेवाले सभी शहर ज़ोर-शोर से अपनी रक्षा की तैयारी करने लगे। दूसरे, विश्वासघात की सम्भावनाओं की ओर से स्थानीय अधिकारी भी चौकस हो गये।

इसके अलावा कुछ और कारक भी सक्रिय हो गये थे, जो सोवियतों के हित में थे और मामोन्तोव के विरुद्ध।

इन कारकों में सबसे पहला यह था कि दोन कज़्ज़ाकों का बड़ी तेजी से नैतिक पतन हो रहा था। लूट-पाट से मामोन्तोव के सिपाही इतने बिगड़ गये कि वे अपने जनरल तक के आदेश मानने से इन्कार करने लगे; कोज़्लोव में ही मामोन्तोव ने लोगों को लूटने की सख्त मनाही का हुक्म जारी किया था, लेकिन कज़्ज़ाकों ने उसकी एक न सुनी। इस मनाही को मामोन्तोव का ढोंग मानना सही न होगा। वह खुद भी लूट का माल बटोर रहा था, पर यह भी देख रहा था कि उसके सिपाही लड़ाई के बजाय लूट-पाट में ही ज़्यादा जोश दिखा रहे हैं। सभी डिविज़नें अपने साथ लूट के माल से लदी गाड़ियां लिये चल रही थीं और इन गाड़ियों की कतारें सिपाहियों की कतारों से ज़्यादा लम्बी थीं। नैतिक पतन के कारण सारी कोर की लड़ने की क्षमता बहुत कम हो गई थी।

मामोन्तोव की आरम्भिक सफलताओं को आगे जारी रखने के मार्ग में दूसरी बड़ी बाधा थी सोवियत आबादी का शत्रुतापूर्ण रुख।

मामोन्तोव को किसानों का समर्थन पाने की आशा थी, लेकिन उसकी आशाओं पर पानी फिर गया। किसान कज़्ज़ाकों का समर्थन नहीं कर रहे थे। कज़्ज़ाकों की लूट-पाट और यातनाओं को देखकर ग्रामीण आबादी प्रतिक्रांतिकारियों के उद्देश्यों के और भी अधिक विरुद्ध हो रही थी।

इस बदली स्थिति का प्रभाव तब देखने में आया, जब मामोन्तोव दक्षिण की ओर मुड़ा।

ज़ादोन्स्क के पास मामोन्तोव की कोर के बिचले दल का पहली बार गम्भीर सामना हुआ। ज़ादोन्स्क में लामबन्दी कर ली गई थी और टुकड़िया बना दी गई थी। कुल डेढ़ हज़ार से अधिक लोगों की रेजीमेंट सगठित कर ली गई थी। वोरोनेज मोर्चे की कमान ने प्रतिरक्षा की तैयारियों मे दृढ़ता और सूझ-बूझ से काम लेते हुए ज़ादोन्स्क रेजीमेंट के गठन मे मदद की थी। इस रेजीमेंट की कुछ टुकड़ियों ने खून की आखिरी बूंद तक लड़ने का संकल्प दिखाया। लेकिन नगर के रक्षकों ने मैदान में लड़ने की कार्यनीति अपनाई, जिसके लिए खासे बड़े रिज़र्व और बहुत से हथियारों की ज़रूरत होती है। ज़ादोन्स्क वालों के पास केवल आठ मशीनगनें थी और चंडावल में कोई रिज़र्व न था। उनकी दूर-दूर तक फैली टुकड़ियां घुड़सवार कज़्ज़ाकों को रोकने में असमर्थ थीं। ज़ादोन्स्क में गलियों, सड़कों में लड़ने की कार्यनीति अधिक उपयुक्त होती, लेकिन वह अपनाई नही गई।

वोरोनेज में आत्मरक्षा की तैयारी खूब अच्छी तरह की गई थी और इसका नतीजा यह हुआ था कि नगर के रक्षक मामोन्तोव के कज़्ज़ाकों से नैतिक और सैनिक दोनों ही दृष्टियों से श्रेष्ठ स्थिति में थे। चार दिन तक वोरोनेज के पास लड़ाई होती रही और कज़्ज़ाकों की सभी कोशिशों के बावजूद वे थोड़ी देर के लिए ही नगर के कुछ भागों पर कब्ज़ा कर सके, जहां से सड़कों पर लड़ाई में वे खदेड़ दिये गये। इस तरह मामोन्तोव की कोर और भी अधिक जल्दी से दक्षिणी मोर्चे की ओर हटी...

लाल सेना के चंडावल में मामोन्तोव के घुस आने के लिए दक्षिणी मोर्चे की कमान और जनतंत्र की क्रांतिकारी सैनिक परिषद के जो सदस्य दोषी थे, वे इसे सफ़ेद गार्डों की "नाममात्र की सफलता"

बताने की कोशिश कर रहे थे। कहना न होगा कि चढ़ाई के शिकार हुए दस से अधिक नगरों को जो भारी क्षति पहुंची, स्त्रियों और बच्चों को जो यातनाएं उठानी पड़ीं, जो स्टेशन और रेल लाइनें बरबाद की गईं, गोदाम लूटे गये और सोवियत अर्थव्यवस्था तहस-नहस की गई – इस सबमें "नाममात्र" का कुछ नहीं था। और आम जनता तथा लाल सेना की क्षति कज़्ज़ाकों से लड़ते हुए मारे गये लोगों तक ही सीमित नहीं थी। मामोन्तोव की इस सर्वनाशी चढ़ाई का महत्व कम करने की इच्छा का एकमात्र कारण उन लोगों का खोटा मन ही हो सकता था, जिन्होंने सोवियतों के विरुद्ध देनीकिन के अभियान में एक तरह से उसकी मदद की थी।

दूसरी ओर, स्वयं प्रतिक्रांतिकारी और उनका यशगान करने को उतावले सफ़ेद गार्डों और विदेशी समाचारपत्र ही इस चढ़ाई के महत्व को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर रहे थे।

सफ़ेद गार्ड मामोन्तोव की चढ़ाई को एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण रणनीतिक कार्रवाई समझ रहे थे। लेकिन इस रणनीति से देनीकिन के हाथ क्या लगा? मामोन्तोव की चढ़ाई से मोर्चे से लगे सभी प्रदेशों में आम जनता सफ़ेद गार्डों के विरुद्ध हो गई। इससे लाल सेना में रिसाले के गठन में तेज़ी आई। उन दिनों ही बुद्योन्नी की कैवेलरी कोर सरातोव के दक्षिण-पश्चिम में सफ़ेद गार्डी रिसाले से सफलतापूर्वक लोहा ले रही थी, और शीघ्र ही यह कोर बढ़कर प्रथम अश्वारोही सेना बनी। अंततः इस चढ़ाई से दक्षिणी मोर्चे की कमान में कमज़ोर कड़ियों का पता लगाने में मदद मिली, और इसके फलस्वरूप सैनिक कार्रवाइयों की ऐसी योजना बनी, जिससे देनीकिन का पूरी तरह सफ़ाया किया जा सका।

मामोन्तोव की चढ़ाई का असली राजनीतिक और सैनिक महत्व यही था। इस चढ़ाई से देनीकिन की रणनीति का कमज़ोर पहलू उजागर हुआ और यह था उसकी राजनीतिक आधारहीनता। यह चढ़ाई देनीकिन की कार्यनीति के सार को ही व्यक्त करती थी, जिसे लेनिन ने जुलाई में लिखे अपने पत्र में दुस्साहस कहा था। यह सचमुच ही बौखलाहट फैलाने और तबाही की खातिर तबाही की दुस्साहसपूर्ण कार्रवाई थी।

. . . .

पास्तुखोव ने मामोन्तोव के पास जा रहे प्रतिनिधिमण्डल में शामिल होना स्वीकार तो कर लिया था, पर उसका मन डांवांडोल हो रहा था: यह एक राजनीतिक कदम था, और वह सदा राजनीति से किनारा करता आया था, क्योंकि राजनीति को ही मनुष्य के सभी दुखों का कारण मानता था। लेकिन एक तो आस्या ने इस कदम का समर्थन किया था, दूसरे, अब सोचने का वक्त नहीं रहा था। उसने अपना सबसे बढ़िया सूट पहना ही था और मनपसंद ओवरकोट तैयार किया ही था कि बुलावा आ गया: जनरल ने प्रतिनिधिमण्डल को फ़ौरन हाज़िर होने को कहा था।

आस्या ने पास्तुखोव को चूमा और चूमते हुए उसके पेट पर छोटा सा सलीब का निशान बनाया, ताकि वह देख न सके।

मामोन्तोव अपनी कोर के कमांडरों के साथ नगर के एकमात्र बड़े होटल – ग्रैंड होटल में ठहरा हुआ था, जो पैदल और घुड़सवार कज़्ज़ाकों से घिरा हुआ था। दरवाज़े पर दो कज़्ज़ाक अफ़सर प्रतिनिधि-मण्डल को लिवाने के लिए खड़े थे, उन्होंने यह संदेह प्रकट किया कि जनरल इतने अधिक प्रार्थियों से मिलना चाहेंगे कि नहीं – प्रतिनिधिमण्डल में कुल आठ लोग थे। लेकिन उनमें से कोई भी अब पीछे हटने को तैयार नहीं था, उन्हें मानो इस बात का अफ़सोस था कि इस खतरनाक काम में हिस्सा लेने की हिम्मत जुटाने में उन्हें जो जतन करना पड़ा था, वह यों दहलीज़ तक आकर वापस चले जाने से बेकार जायेगा। वह ऊंची हस्ती खास तौर से परेशान हो उठी, जो पास्तुखोव को मनाने आई थी।

"पर, देखिये न! आप यह नामों की सूची पढ़ देखिये! केवल विश्वसनीय हलकों के ही प्रतिनिधि हैं। इससे कम तादाद में तो बिल्कुल काम नहीं चल सकता।"

पास्तुखोव ने सभी प्रतिनिधियों का परिचय पाया और फिर प्रति-निधिमण्डल के नेता के बगल में खड़ा हो गया। यह भारी-भरकम आदमी, जिसकी नीली-नीली आंखें क्षमा-याचना करती सी लगती थीं, पास्तुखोव को अच्छा लगा। वह काफ़ी घबरा रहा था, और जब तक वे लोग अंदर लिवाये जाने का इंतज़ार करते खड़े रहे, वह अपनी सफ़ेद दाढ़ी खुजलाता रहा, कभी-कभी वह ठिठककर दाढ़ी पर हाथ फेरने लगता।

आखिर प्रतिनिधिमण्डल को ऊपर कर्नल के पास ले जाया गया, जो मामोन्तोव का एडिकांग था। उसने नामों की सूची देखी, पूछा कि प्रतिनिधिमण्डल का नेता कौन है, और फिर कुछ सोचकर यह कि पास्तुख़ोव कौन है।

पास्तुख़ोव ने एक पांव आगे वढ़ाकर सिर ज़रा झुकाया। कर्नल ने उसे घूरकर देखा, कुछ सोचता रहा, फिर अपनी लंवी महमेज़ें खनकाता और थिरकता हुआ वगल के कमरे में चला गया। क्षण भर बाद ही वह वहां से निकला और दरवाज़ा खुला छोड़कर वोला: "कमांडर बुला रहे हैं"। आठों लोग एक-एक करके उसके सामने से अंदर गये।

मामोन्तोव मेज़ के पीछे वैठा था, कागज़ों पर सिर झुकाये। उसके सिर के छोटे-छोटे वाल और खूव घनी, ऐंठी हुई मूंछें ही दिख रही थीं।

उसकी पीठ पीछे मेज़ से थोड़ी दूर ऊंचा तगड़ा कज़्ज़ाक तलवार की चांदी की मूठ पर हाथ रखे खड़ा था। प्रतिनिधिमण्डल मेज़ के सामने दूरी का ध्यान रखते हुए अर्धवृत्त वनाकर खड़ा हो गया और उसके पीछे दो कज़्ज़ाक। किसी ने भी आगंतुकों से वैठने को नहीं कहा।

सव के सव अपनी-अपनी जगह वुत वने खड़े थे, लेकिन मामोन्तोव पढ़ने में लगा हुआ था। सहसा उसने सिर उठाया और अपनी तीखी भेदती नज़र अर्धवृत्त के एक सिरे से दूसरे तक दौड़ाई, मानो सैनिकों की कतार की जांच कर रहा हो।

"किससे मिलने का सौभाग्य है?" वैठे-वैठे ही उसने पूछा।

"जनरल साहव!" प्रतिनिधिमण्डल के नेता ने गहरी सांस लेकर और सूत भर आगे वढ़ते हुए वोलना शुरू किया, पर मामोन्तोव ने उसे टोक दिया:

"क्रांति से पहले आप क्या थे?"

"राज्य पार्षद।"

"तो आपको पता होना चाहिए कि हमें 'महामहिम' कहा जाता है।"

पहले एक मूंछ और फिर दूसरी मूंछ को चुटकी में लेकर उसने उन्हें दायें-वायें ताव दिया, जिससे वे और भी अधिक ऐंठ गईं, और कर्नल से कहा:

"सबके नाम बताइये, ताकि मुझे पता रहे।"

"सूची पेश कर दी गई है," कर्नल ने दरवाज़े से हटते हुए कहा।

"इधर दीजिये।"

कर्नल ने मेज़ पर कागज़ बढ़ाया। मामोन्तोव ने सिर झुकाया और ऐसे लहजे में पूछा मानो उसके अलावा कमरे में और कोई हो ही न:

"हैं कौन ये लोग?"

"तरह-तरह के लोग हैं," कर्नल ने कहा, "बोल्शेविक तक।"

मामोन्तोव ने कागज़ परे फेंक दिया।

"क्या कहने हैं! मुझसे मिलने आये हैं?! बोल्शेविकों का प्रतिनिधिमण्डल?!"

"इनमें एक जनाब पास्तुख़ोव हैं। वह बोल्शेविक हैं," कर्नल को प्रत्यक्षत: यह बताते हुए मजा आ रहा था।

"कौन है? कौन है पास्तुख़ोव?" मामोन्तोव चिल्लाया और एक बार फिर उसने अर्धवृत्त पर अपनी दहकती नज़र दौड़ाई।

"मैं हूं पास्तुख़ोव। लेकिन कर्नल साहब शायद मुझे कोई और आदमी समझ रहे हैं," हिले-डुले बिना और अपनी आवाज़ में बल डालते हुए पास्तुख़ोव ने कहा।

"यहां लिखा है साहित्यकार। आप ही हैं?" कर्नल ने पूछा।

"जी हां, मैं पीटर्सबर्ग का नाटककार हूं।"

"तो फिर मुकरते क्यों हैं? मैंने ख़ुद बोल्शेविकों के अख़बार में पढ़ा था कि आप सरातोव के भूमिगत दल में थे," कर्नल ने कहा।

"यह गलतफ़हमी है, बल्कि झूठा लांछन ही," पास्तुख़ोव मुश्किल से बोल पाया, उसे लग रहा था कि उसकी ज़बान को लकवा मार गया है।

"मेरे पास गलतफ़हमियां दूर करने का वक्त नहीं है!" मामोन्तोव फिर से चिल्लाया। "बंद कर दो इसे! मेरे पास आने की जुर्रत करता है! नाटककार कहीं का... सूअर का बच्चा!"

किसी ने पास्तुख़ोव का ओवरकोट खींचा, जो उसने बांह पर डाल रखा था। उसने मुड़कर देखा। कज़्ज़ाक ने उसकी बांह कसकर पकड़ ली थी। पास्तुख़ोव एक ओर को हट गया, वह कुछ कहना चाहता था, पर उसे बाहर ले जाया जा रहा था।

उसके कानों में आवाज़ पड़ी, और उसे लगा कि वह ऊंची हस्ती का भावभीना स्वर पहचान गया: "...महामहिम... व्यापारी गण... पादरी गण... पुराने अधिकारी..." – और फिर मामोन्तोव की चीख उसे साफ़-साफ़ सुनाई दी: "बोल्शेविक बन गये!"

फिर उसकी बोध शक्ति में एक विचित्र परिवर्तन आ गया: सब चीज़ें, सब घटनाएं एक दूसरे में घुल-मिल गईं, मानो सब कुछ सपने में हो रहा हो, हां, बीच-बीच में कुछ बिजली की तरह कौंधता हुआ स्पष्टतया दिखाई दे जाता।

उसे गालों की उभरी-उभरी हड्डियों वाला एक कज़्ज़ाक दिखा, जो अपनी ताम्रवर्णी उंगलियों में एक कागज़ उलट-पुलट रहा था। इस कागज़ में पास्तुख़ोव की किस्मत का फ़ैसला था, पर उसे पता नहीं था कि उसमें क्या लिखा हुआ है। कज़्ज़ाक ने किसी से पूछा: "कौन है वह उल्लू का पट्ठा?" फिर काली लट वाले छोटे अफ़सर ने एक दूसरे अफ़सर से पूछा: "वो सामने के मकान में क्या था?" "लौंडियों का स्कूल।" "ओह, क्या दिन थे वे, स्कूल की वे लौंडियां!" तभी पास्तुख़ोव स्वयं अपने सामने एक दूसरे व्यक्ति के रूप में प्रकट हुआ, वह भी पास्तुख़ोव ही था, लेकिन उससे बिल्कुल अलग। यह दूसरा पास्तुख़ोव दो घुड़सवार कज़्ज़ाकों के बीच सड़क पर चल रहा था, हाथ में ओवरकोट उठाए और सड़क को देखता हुआ। इस लम्बी मास्को सड़क पर पास्तुख़ोव अक्सर स्टेशन के मोड़ तक घूमने जाया करता था, और अब इसे पहचान रहा था, लेकिन यह भी कोई दूसरी मास्को सड़क थी, जिस पर दूसरे पास्तुख़ोव को ले जाया जा रहा था। सामने से घोड़े दौड़ाते कज़्ज़ाक गाना गाते आ रहे थे। पास्तुख़ोव के पास आते ही एक कज़्ज़ाक ने काठी में एक ओर को झुककर सीटी बजाई। कर्णभेदी सीटी से पास्तुख़ोव को मानो शारीरिक वेदना हुई, उसे लगा जैसे किसी ने उसके सिर पर हंटर दे मारा हो, और यह भ्रांति इतनी प्रबल थी कि उसने झट से सिर पर हाथ रखा। सहसा उसे एक सपाट दीवार और उस पर मनहूस खिड़कियों की कतार दिखी, उसे याद आया कि स्टेशन के मोड़ पर जेल थी, जिसकी छत तले ज़ंग लगा बोर्ड लटक रहा था: "बंदी महल"। उसे यह याद आया, क्योंकि पहली बार यह बोर्ड पढ़कर हैरान हुआ था कि बंदी और महल कितने

बेमेल शब्द हैं, लेकिन दूसरे पास्तुखोव को जो अब जेल के फाटक के पास पहुंच रहा था, यह शब्द याद करके न केवल हैरानी नहीं हुई, बल्कि उसे यह विश्वास लगता था कि उसके साथ जो कुछ घटा है, उसका अंत "बंदी महल" में ही हो सकता है।

वास्तविकता का पूरा बोध पास्तुखोव को तब होने लगा, जब उसे कोठरी में ठूंसा गया। उसे ठूंसा ही गया था—न कोठरी में ले जाया गया था, न धकेला गया था, न फेंका गया था। उसने अपने आप को मानव शरीरों के ठोस समूह में पाया और तभी दमघोंट बदबू से खांसने लगा। उसने तुरंत ही फ़ैसला किया कि नहीं, यह बदबू नहीं है, यह ऐसा पर्यावरण है, जिसमें घ्राण इंद्रिय बिल्कुल काम नहीं करनी चाहिए। इस पर्यावरण का, इन बाह्य परिस्थितियों का प्रभाव ऐसा था कि पास्तुखोव की त्वचा का रंग बदल गया—मुंह तक अपना हाथ लाने पर उसने यह देखा था। यह पर्यावरण त्वचा के रंग पर प्रभाव डालता था, इसमें हवा की कमी से मनुष्य का रंग मिट्टी जैसा हो जाता था।

उसी क्षण उसे स्पष्टतया आस्या का, अल्योशा का ख्याल आया और अब कहीं वह पूरी तरह समझ पाया कि उसके साथ क्या हुआ है। वह समझ गया कि आस्या और अल्योशा अब कभी भी उसे नहीं देख पायेंगे, क्योंकि उसका अंत हो गया है। वह यह समझ गया और शायद कराह उठा, क्योंकि पास ही किसी ने चिढ़ाते हुए पूछा: "क्यों, अच्छा नहीं लगता?" और बेहूदा हंसी हंसा। उसने कुछ जवाब नहीं दिया, वह देख रहा था कि उसके धैर्य की आगे और भी कठिन परीक्षा होगी।

हर उस स्थान पर, जहां लोग जमा होते हैं, उनमें से कुछ के बल और कुछ की दुर्बलता के आधार पर उनके परस्पर सम्बन्ध बन जाते हैं। वैसे ही इस कालकोठरी में, जहां मानव अस्तित्व असम्भव था, एक व्यवस्था बनी हुई थी, इसका अहसास पास्तुखोव को उसी क्षण हुआ, जब उसका शरीर सांस लेने की नई परिस्थितियों का आदी होने लगा। लोग इतने अधिक नहीं थे, जितना कि आरम्भ में पास्तुखोव ने सोचा था, बल्कि यह कहना चाहिए कि कोठरी में इतने लोग नहीं आ सकते, जितना बड़ा यह देहों का समूह पास्तुखोव को यहां ठूंसे

जाने के वक्त लगा था। बाद में उसने गिना कि वह इस कोठरी में अड़तालीसवां था, जबकि कोठरी में दो मंज़िला कतारों में सोने के लिए कुल बारह पटरे थे। यहां पर मज़दूर और नौकरी पेशा लोग थे, सफ़ेद बालों वाले बूढ़े और भोली-भाली आंखों वाले किशोर थे; और पुराने कैदी, जिन्हें मामोन्तोव के कब्ज़े के पहले दिन छोड़ दिया गया था, पर फिर बंद कर दिया गया। भीड़ का एक हिस्सा दरवाज़े के पास खड़ा था, दूसरा दल फ़र्श पर बैठा हुआ था और तीसरा पटरों पर लेटा हुआ था। एक निश्चित अवधि के बाद लेटे पड़े लोग पटरे खाली कर देते थे और भीड़ में खड़े हो जाते थे, फ़र्श पर बैठे लोग उनकी जगहों पर लेट जाते थे और खड़े लोगों में से कुछ फ़र्श पर बैठ जाते थे। देहों का यह भंवर ही वह व्यवस्था थी, जो पास्तुख़ोव ने देखी, इसके साथ ही तीन-चार लोग इस व्यवस्था पर नज़र रख रहे थे, खुद उन पर यह व्यवस्था लागू नहीं होती थी। वे पटरों पर लेटे-लेटे दूसरों पर हुक्म चला रहे थे, क्योंकि वे ही यहां सबसे बलवान थे।

पास्तुख़ोव को बैठने की जगह जल्दी नहीं मिली। बैठने की बारी को लेकर जब बहस छिड़ी, तो उसे वही जानी-पहचानी फटी-फटी आवाज़ सुनाई दी: "यह तो अभी ताज़ी हवा से आया है! खड़ा रहे अभी!"

पास्तुख़ोव को तो आरम्भ में खड़ा रहना ही बेहतर लगा था। उसकी इंद्रियों के क्षेत्र में जो कुछ आता था, उसका प्रेक्षण करने की उसकी उत्सुकता पल भर को भी उसके विचारों के मंथन को नहीं रोक सकती थी। उसके पर्यावरण की छोटी से छोटी बातें अनचाहे ही उसके मानस-पटल पर अंकित होती जा रही थीं, साथ ही वह अपने आप से एक के बाद एक सवाल पूछता जा रहा था, जिनका उस सब से कोई सम्बन्ध नहीं लगता था, जो उसकी आंखें देख रही थीं, कान सुन रहे थे और शरीर अनुभव कर रहा था।

अन्य सब प्रश्नों से अधिक जो प्रश्न उसके दिमाग में घूम रहा था, वह था: आखिर क्योंकर वह मारा जायेगा? उसने कुछ भी तो नहीं किया है! उसने बोल्शेविक गिने जाने का कोई बहाना तो दिया होता! मेर्त्सालोव बोल्शेविकों की अनुग्रह दृष्टि पाना चाहता था, सो उसने पास्तुख़ोव को बोल्शेविक बना दिया। पर उसने उसे केवल

सफ़ेद गार्डों की ही नजरों में लाल बना दिया था। लाल गार्डों की नज़रों में तो वह सदा सफ़ेद गार्ड पंथी था और वही रहा। सफ़ेद गार्डों ने उसे लाल की हैसियत में "महल" में ठूंस दिया। क्या मेत्सालोव यही चाहता था? अच्छा, भाड़ में जाये मेत्सालोव! उसकी किस्मत उसे इस जाल में फंसाकर क्या करना चाहती थी? कहां है सच्चाई? किस बात में है सच्चाई? आखिर पास्तुख़ोव ने सच्चाई की अपनी समझ के खिलाफ़ तो कुछ नहीं किया था। तो फिर सच्चाई ने उसकी ओर से मुंह क्यों मोड़ लिया?

पर क्या उसकी यह समझ गलत थी कि सच्चाई क्या है? क्या उसकी गलतियां सच्चाई के विरुद्ध अपराध थीं, और वह उसे उसकी गलतियों के लिए सज़ा दे रही है? क्या वह गलती करने की जुर्रत नहीं कर सकता था? क्या उसे गलती करने का अधिकार नहीं था? हे कृपासिंधु, क्या उसे इस कालकोठरी में, इस सड़ांध में फिर से वे सवाल हल करने होंगे, जिनका हल वह छात्र जीवन में ही पा चुका था? "क्यों, अच्छा नहीं लगता?" उसे फटी-फटी आवाज़ सुनाई देती है।

"करता हूं कोशिश, करता हूं कोशिश नया हल ढूंढने की," पास्तुख़ोव सूज गये पांवों पर डोलते हुए मन ही मन कहता है।

...मैं इस संसार में आया, इसमें मेरी इच्छा का कोई सवाल नहीं था, मेरी उत्पन्न हो रही आत्म-चेतना के लिए यह एक आकस्मिक घटना थी। यहां दो नियम मुझे मिले, जिन पर मेरा कोई वश नहीं था: एक जैविक नियम था, जो मेरे शरीर के कोशों में विद्यमान था– "मैं जीना चाहता हूं!" और दूसरा सामाजिक-ऐतिहासिक नियम, जिसका यह अल्टीमेटम था: "या तो तुम अपने इच्छा बल को मेरे अधीन करके जियोगे, या फिर तुम्हारा अस्तित्व मिट जायेगा।" अगर मैं मानवजाति से अलग होकर जीने की सोचता, तो पशु बन जाता। मुझे अपने जैसों के बीच ही जीना बदा है। मैंने यह बात स्वीकार कर ली, क्योंकि यह अनिवार्य है। मैंने वह सब स्वीकार कर लिया, जो उस क्षण विद्यमान था जब मैं अनचाहे ही इस संसार में आया। मैंने इस संसार को मुझ पर जबरदस्ती थोपे गये संसार के रूप में स्वीकार किया है।

उसके अंतःस्वर ने, जो अपरिचित और अप्रिय था, कुछ-कुछ उस स्वर जैसा ही था, जिसने पास्तुख़ोव की खिल्ली उड़ाई थी, उसके विचारों का क्रम तोड़ा: "तुमने संसार को इस कालकोठरी समेत स्वीकार किया है, जहां तुम्हें अव ठूंसा गया है?"

...मैं तो तब भी निर्दोष था, जब कीमती फ़र्नीचर से सजे कमरे में बैठकर नाटक लिखता था और अब भी, जबकि कालकोठरी में बंद हूं (पास्तुख़ोव ने अपने आपको जवाब दिया)। लेकिन कब मेरे साथ न्यायोचित व्यवहार हुआ? तब जबकि मुझे कीमती फ़र्नीचर वाले कमरे में रहने दिया गया या जब मुझे कालकोठरी में बंद कर दिया गया?

"अगर तुमने यह स्वीकार किया है कि संसार को ज़बरदस्ती तुम पर थोपा गया है तो फिर न्याय क्यों चाहते हो?" अप्रिय स्वर ने पूछा। "जब तुम आराम से रह रहे थे, तब तुमने न्याय नहीं चाहा। जब मुसीबत में पड़े तो न्याय याद आया। तो फिर तुम्हें यह मानना चाहिए कि जिन लोगों के लिए जीना दूभर है, उनका न्याय की मांग करना अधिक सही है, न कि उन लोगों द्वारा न्याय की ओर से आंखें मूंदना, जिनके लिए जीना आसान है।"

...मैंने कभी न्याय मांगने के किसी के अधिकार को गलत नहीं समझा। मैं सदा इन मांगों के उद्देश्य को उदात्त समझता था। हां, मेरा यह ख्याल था कि इन मांगों में न्याय के उद्देश्य के लिए सामाजिक व्यवस्था के महत्व को बहुत बढ़ाया-चढ़ाया जाता है। समाज कैसा भी क्यों न हो मनुष्य को अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करना होता है। हर समाज में संघर्ष ही करना है। कहां संघर्ष अधिक है, यह मैं नहीं जानता।

"तुम्हें अपने कीमती फ़र्नीचर वाले कमरे में बैठकर कभी संघर्ष नहीं करना पड़ा। तुम्हारे अस्तित्व का ख्याल समाज की वह व्यवस्था रखती थी, जिसे तुमने ज़बरदस्ती थोपी गई व्यवस्था के रूप में स्वीकार किया। यह ज़बरदस्ती तुम्हें मंजूर थी। लेकिन दूसरे लोग इस ज़बरदस्ती को स्वीकार नहीं कर सकते थे। ज़रा अपनी बातों पर ध्यान तो दो: तुम हर वक्त अपनी ही बात कर रहे हो: मैं, मैं, केवल मैं।"

...लेकिन इसमें मेरा कोई दोष नहीं कि मुझे जीना बदा है!

संसार मुझसे जो कुछ चाहता है, उसकी तुलना में मैं उससे बहुत कम की मांग करता हूं!

"लेकिन तुम्हारी इन मांगों का आधार क्या है? जिस तरह इस संसार में आने में तुम्हारी इच्छा का कोई हाथ नहीं है, वैसे ही संसार की इच्छा का भी कोई हाथ नहीं है। तुम कुछ भी दिये बिना ही पाना चाहते हो।"

...दिये बिना कैसे? मेरी लेखन कला?

"तुमने स्वयं उसे अनुपम त्रुटि कहा है।"

...नही, यह मैंने नहीं कहा। यह आस्या ने कहा था। बेचारी आस्या! कितनी दुखी होगी वह मेरे मारे जाने पर! ओह, आस्या! कितनी गलतियां हुई हैं, कितनी त्रुटियां! अनुपम त्रुटियां? ओफ्फ़, यह सब तो ढोंग ही है! क्या मैं जीवन भर यह नहीं मानता आया हूं कि अन्य सभी विषयों से कही अधिक हद तक कला उन नियमों द्वारा संचालित होती है, जो उसके प्रारूप–प्रकृति पर आधारित हैं? इस इमारत को लो। यह बेहूदी है, भोंडी है, क्योंकि इसका सिर नही, कंधे नही, बगल नही। हर कोई यह देखता है, हर कोई यही कहेगा: यह इमारत बेहूदी है। ओह, अगर मनुष्य गलतियों के बिना, त्रुटियो के बिना जीवन बना सकता; कला के नियमों के अनुसार, प्रकृति की भांति–सम्भवतया, तब हम सुखी समाज देख पाते।

"आहा," फिर से अप्रिय अंतःस्वर सुनाई दिया, "अब तुम सुखी समाज चाहते हो! ज़बरदस्ती थोपे गये संसार को स्वीकार नही करते, बल्कि अपने इच्छा बल से उसे बनाना चाहते हो। ठीक है, चलो, चलो इसी रास्ते पर, हो सकता है, यह तुम्हें कोई मंज़िल दिखा दे..."

"चलो, चलो बैठो! ए, नये आदमी, बैठ जा। थक गया होगा खड़े-खड़े!"

पास्तुख़ोव फ़ौरन यह समझ ही नहीं पाया कि उससे कहा जा रहा है। उसे भीड़ में से आगे ठेल दिया गया। मुश्किल से घुटने मोड़कर वह बैठा। धीरे-धीरे उसकी रगों को राहत पहुंचने लगी और वह ठोड़ी छाती पर टिकाकर सो गया।

इस तरह वह भी देहों के भंवर में पड़ गया, दूसरे कैदियों जैसा ही उसका अस्तित्व हो गया।

उसने कभी जेलों में पढ़ाई के बारे में सुना था: समय काटने के लिए और सोचने की शक्ति बनाये रखने के लिए कैदी एक दूसरे को विदेशी भाषाएं सिखाते थे, कई विषयों का अध्ययन करते थे। वह सोचने लगा कि वह किसी को क्या सिखा सकता है और तब उसने पाया कि उसके ज्ञान की विविधता के बावजूद किसी भी विषय का पूरा ज्ञान उसे नहीं है। कुछ विषय वह भूल चुका था, कुछ का उसने पूरी तरह अध्ययन नहीं किया था, कुछ के केवल निष्कर्ष उसे याद थे, और कुछ विषयों को उसने स्वयं पूरी तरह समझा ही नहीं था। भाषाएं वह केवल इस हद तक जानता था कि किसी फ़्रांसीसी से शराब और खाने की या जर्मन से मौसम और महंगाई की बातें कर सकता था। बहरहाल ज्ञान प्रसार की अपनी अक्षमता पर उसे दुखी नहीं होना पड़ा: उससे कुछ सीखने की किसी की कोई इच्छा नहीं थी, और न ही उसमें इतनी ताकत थी कि कुछ पढ़ा सकता। कैदियों को न मुंह-हाथ धोने, न ताज़ी हवा में सांस लेने का मौका मिलता था और धीरे-धीरे वह इस गंदगी पर ध्यान न देना सीखने लगा, क्योंकि इस गंदगी से भी भयानक थी उसकी देह की टूटन, इस टूटन से भयानक थी भूख और भूख से अधिक भयानक थी अनिश्चितता। जिस तरह आरम्भ से उसकी घ्राण शक्ति क्षीण पड़ गई थी वैसे ही धीरे-धीरे उसकी दूसरी इंद्रियां क्षीण पड़ती जा रही थीं, बस कान ही हर वक्त खड़े रहते थे, दरवाज़े के बाहर, "महल" के गलियारों में होनेवाली हर आहट को सुनते रहते थे।

एक दिन सुबह तड़के फ़र्श पर बेसुधी की नींद के बाद जब पास्तुख़ोव की आंख खुली, तो उसने एक मटमैले कीड़े को अपनी ओर बढ़ते पाया। बेढब सा कीड़ा फ़र्श पर टांगें पसारे पड़े कैदियों की टांगों पर कभी फुदकता, कभी रेंगता उसकी ओर बढ़ रहा था। पास्तुख़ोव सिहर उठा। यह सोचकर उसे जुगुप्सा और भय हुआ कि वह असहाय सा फ़र्श पर पड़ा है और उसकी देह पर कीड़े-मकोड़े रेंग रहे हैं, जैसे कि वह कोई लाश हो। वह पहचान गया कि यह कीड़ा झींगुर है, उसी क्षण उसे याद हो आया कि घरों की दरारों में छिपे रहनेवाले इस कीड़े के साथ कैसी अच्छी-अच्छी कहानियां जुड़ी हुई हैं, पर वह अपनी घृणा को नहीं दबा पा रहा था। झींगुर फुदकता, रेंगता, पास आता

जा रहा था। यह न टिड्डी थी, न तिलचट्टा, बल्कि टिड्डी और तिलचट्टा दोनों ही, और इससे उसे देखकर और भी ज़ोर से घिन हो रही थी। झींगुर पास्तुख़ोव पर फुदका। पास्तुख़ोव उछलकर खड़ा हो गया, कीड़े को झटक दिया और बच्चों जैसी भय और वीभत्सता की कष्टदायी भावना के साथ उसे कुचल दिया। बड़ी देर तक वह बूट से वह जगह मसलता रहा और किसी भी तरह अपनी घिन दूर नहीं कर पा रहा था।

उजाले और धुंधलके, दुपहरी और आधी रात के चक्र में समय बीत रहा था, लेकिन सभी घड़ियां बिल्कुल एक जैसी थीं और पास्तुख़ोव के लिए अभूतपूर्व यातना से भरी थीं, जिसे उसने देह और आत्मा के संघर्ष की संज्ञा दी। वह अंत की प्रतीक्षा कर रहा था और अब यह नहीं बता सकता था कि इस प्रतीक्षा में कितना समय बीत गया है। तभी एक दिन दरवाज़े के बाहर सहसा शोर मचा।

पहले-पहल तो कुछ समझ में ही नहीं आता था – गलियारों से दबा-दबा शोर घुमड़ता आ रहा था, जिसके बीच धमाधम और ठकाठक बढ़ती जा रही थी। लेकिन दरवाजा खुलने से पहले ही कोठरी में कोई खुशी से बावला होता हुआ चिल्लाया :

"बोल्शेविक!"

पटरों और फ़र्श से सब उछलकर खड़े हो गये और एक दूसरे को धकेलते यों दरवाज़े की ओर लपके कि तंग कोठरी के आदी इन लोगों के लिए भी यह धक्कम-धक्का असहनीय था। वे दरवाज़े और पटरों पर मुक्के मारने लगे, चीखने लगे, और उनके इस शोर में बाहर का शोर दब गया। अधीरता से कैदियों के चेहरे बदल गये, उनमें कुछ करने का संकल्प दमकने लगा।

"खोलो, भाइयो, खोलो! भाइयो!" कोठरी में चीख-पुकार हो रही थी, और इस चीख में नई-नई आवाजें मिलती जा रही थीं, बेइंतिहा मुक्के मारे जा रहे थे, जब तक कि अंततः दरवाज़े की जगह रोशनी हो गई, उसमें संगीनें चमकीं और उनके तले लाल तारों वाली टोपियां दिखीं।

तुरन्त ही शोर कम हो गया। क्योंकि सब ठिठक गये, उन्हें अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हो रहा था, क्षण भर को कोठरी मानो खुली हो गई, और तभी पास्तुख़ोव को एक युवा स्वर सुनाई दिया :

"जिनको मामोन्तोव ने बंद किया है, वे वाहर निकलें!"

फिर से शोर होने लगा और फिर से वे एक दूसरे को धकेलने लगे। पास्तुख़ोव भी अपना पूरा ज़ोर लगाता हुआ उसे धकेलनेवालों को धकेलने लगा।

नीचे कहीं गलियारे में उसे कतार में खड़ा किया गया। उसे कुछ होश नहीं था कि कैसे वह मेज़ तक पहुंचा, जिसके पीछे कागज़ात देखते लाल सैनिक बैठे थे। उससे पूछा गया:

"आप कौन हैं?"

पास्तुख़ोव के कपड़े मैले-कुचैले हो गये थे, तो भी वह औरों से अलग लगता था। उसने जवाव दिया:

"थियेटर कर्मी।"

"अच्छा! थियेटर!" मेज़ के पीछे वैठे सैनिक मुस्कराये और उसे एक पर्ची पकड़ाकर बोले: "जाइये!"

वह पर्ची हाथ में लिये अहाते में जा रहा था, और उन लोगों को देख रहा था, जिनको उसके साथ छोड़ा जा रहा था, उनके चेहरे खुशी से बुद्धुओं जैसे हो रहे थे, और उसे लग रहा था कि उसके चेहरे पर भी ऐसा ही भाव है, और इससे वह अत्यंत उत्तेजित था।

फाटक के पास उसे रोका गया।

लाल सैनिक कुछ लोगों को पकड़कर ला रहे थे। उनमें सवसे आगे भारी-भारी कदम रखता, अपनी उलझी-पुलझी दाढ़ी खुजलाता एक वूढ़ा आ रहा था। उसने अपनी नीली-नीली, क्षमा-याचना करती आंखों से पास्तुख़ोव की ओर देखा, और पास्तुख़ोव पहचान गया कि वह मामोन्तोव के पास गये प्रतिनिधिमण्डल का नेता है।

पल भर को पास्तुख़ोव को लगा उसका दिमाग चकरा रहा है। उसे लगा वह पागल हो जायेगा। पर तभी उससे पर्ची मांगी गई, उसने पर्ची दी और फाटक से वाहर निकल आया। उसने नज़र ऊपर उठाई, ऊपर अथाह नीला आसमान था। वह लड़खड़ाता हुआ चला, पर फिर भी चलने में उसे वड़ा आनन्द आ रहा था।

चौराहे पर उसे एक आदमी और औरत दिखे, जो एक छोटी सी दुकान की खिड़की पर कुछ ठोक-पीट करने में मगन थे। कमज़ोर घुटनों को जरा आराम देने के लिए वह रुका और दुकान की टूटी खिड़की से

अंदर झांकने लगा। दुकान खाली थी, पर खिड़की के दासे पर कुछ सीलबंद शीशियां रखी हुई थीं। उसका सिर मानो मीठे खुमार से चकरा रहा था और किसी से दो बातें करने, मज़ाक करने का उसका मन हो रहा था।

"क्या बेच रहे हैं?" उसने पूछा।

औरत ने उसकी ओर देखा, पर कुछ कहा नहीं, आदमी अपने काम में लगा रहा।

पास्तुख़ोव ने खिड़की से शीशी उठाई और पढ़ा: "होर्स-रेडिश"। वह मुस्कराया और लेबल पर रूसी अक्षरों में छपा अनजान शब्द पढ़ने लगा। उसका बहुत मन हो रहा था कि कुछ मज़ाक करे, लेकिन उसका मस्तिष्क मानो अपनी सुखद रिक्तता से उबरना ही नही चाहता था। आखिर उसने वह शब्द पढ़ लिया और बोला:

"भई, वाह! देखो न पहले कितना लम्बा होता था, बोलते जाओ, बोलते जाओ: तम्बोव... प्रदेश... उपभोक्ता... सहकारी... संघ... और अब एक सांस में ही: तम्प्रदेशउपसहसंघ। बस बात खत्म!"

आदमी ने हथौड़ी रखकर पूछा:

"वहां से आये हो क्या?" और सिर से जेल की ओर इशारा किया।

"हां!"

"दिखाई दे रहा है।"

"चाहिए तो ले लो," औरत ने कहा।

पास्तुख़ोव ने हाथ हिलाकर लाचारी व्यक्त की: उसका ओवरकोट, जिसकी जेब में रेज़गारी थी, जेल में ही रह गया था।

"ले लो; इससे कोई बड़ी कमाई तो होनेवाली नहीं।"

उसके चेहरे पर शरारत झलकी, उसने शीशी जेब में डाली, और बोला: "भगवान तेरा भला करे, माई!" अपनी पहले जैसी ही उन्मुक्त चाल से वह चल दिया, सिर में वही सुखद रिक्तता बनी हुई थी और मन में फिर से अपनी कलात्मकता पर संतोष उभर रहा था।

ज्यों-ज्यों वह घर के पास पहुंच रहा था, त्यों-त्यों उसके कदम तेज होते जा रहे थे। वह लड़कों की तरह दौड़ता हुआ सीढ़ियां चढ़ गया।

आस्या के मुंह से चीख निकली और उसने कसकर पति के गले में वांहें डाल दीं। अल्योशा दूसरे कमरे से भागा आया, ठिठका और फिर लपककर पिता की टांग से चिपक गया। मां जैसी ही चमकती आंखों से पिता की ओर देखते हुए उसने सबसे पहले चुप्पी तोड़ी:

"पापा, आपने दाढ़ी वढ़ा ली!"

पास्तुख़ोव चाहकर भी नहीं वोल पा रहा था। मां-वेटे के आलिंगनों और अपनी उत्तेजना से उसकी सांस रुकी जा रही थी।

अल्योशा का हाथ उसकी जेव में रखी शीशी पर पड़ा।

"पापा, यह क्या है? क्या है यह?"

पास्तुख़ोव ने शीशी निकालकर आस्या को दे दी। आस्या की कुछ समझ में नहीं आ रहा था, एक हाथ में शीशी पकड़े, दूसरा उसकी गर्दन में डाले वह उसकी आंखों में झांक रही थी और उनमें अपनी उस एकमात्र भावना का उत्तर ढूंढ़ रही थी, जिससे वह अभिभूत हो उठी थी। वह चाहता था कि आस्या शीशी का लेवल पढ़े और वे मिलकर हंसें। उसका मन मज़ाक करने को उतावला हो रहा था, पर उसके पहले शब्द कुछ इस भांति ध्वनित हुए कि आस्या को, जो वड़े गम्भीर भाव से वकवास वोलने के उसके अंदाज़ को अच्छी तरह समझती थी, उसे भी अब वे गम्भीर शब्द ही लगे।

"कैदी को ईसा के नाम पर मिली है," पास्तुख़ोव ने कहा।

आस्या ने गद्‌गद होकर शीशी छाती से लगा ली। और तब पास्तुख़ोव ने सहसा वड़े सहज भाव से ठहाका मारा। आस्या के हाथ से शीशी छीनकर उसने मेज़ पर फेंक दी और हंसते-हंसते ही वुदवुदाया:

"वाद में ... वाद में देखती रहना, क्या चटनी है यह!"

आस्या उसकी हंसी के जवाव में मुस्कराने की कोशिश कर रही थी, वह अभी भी कुछ नहीं समझ पा रही थी, और कुछ समझना भी नहीं चाहती थी, सिवाय अपने सुख की अनुभूति के।

ओल्गा अदामोव्ना रूमाल से आंखें पोंछती, शर्माती हुई दरवाज़े में से झांक रही थी: वह समझती थी कि ऐसा करना ठीक नहीं, पर पति-पत्नी के इस असाधारण मिलन को देखने की इच्छा दबा नहीं पा रही थी।

पास्तुख़ोव वड़े रोव से उसके पास गया और झुककर उसका हाथ

चूमा। उसके चेहरे पर लाली दौड़ गई, लटें हिलने लगीं। बाहर निकलकर उसने दरवाज़ा बंद कर दिया।

पास्तुख़ोव ने चिल्लाकर कहा:

"ओल्गा अदामोव्ना! भगवान के वास्ते ज़रा जल्दी से नहाने का इंतज़ाम कर दीजिये। मां जी से पूछकर उनका हम्माम गरम कर दीजिये।"

आख़िर जब मन की तहों से उठी भावनाओं का बवंडर शांत हुआ, और मस्तिष्क बेलगाम विचारों पर अपनी लगाम लगा सका, और पास्तुख़ोव जल्दी-जल्दी अपने बारे में कुछ बता पाया, और आस्या उसकी बातें सुनने का धीरज कर पाई – तब तक अल्योशा अपने खेल मे मस्त हो गया था और ओल्गा अदामोव्ना धुआं छोड़ते स्टोव से जूझ रही थी।

चाय का गिलास उठाये कमरे में टहलते हुए पास्तुख़ोव की नज़र पलंग पर बिखरे पड़े पन्नों पर पड़ी।

"तुम पढ़ रही थी?"

"हां। मैं रोती जाती और पढ़ती जाती," आस्या ने जवाब दिया। उसकी हल्की-हल्की, प्रायः अदृश्य सी मुस्कान इस बात के लिए मानो क्षमा मांग रही थी।

"क्या है यह?"

"सब बेतरतीब है। 'युद्ध और शांति' के इधर-उधर के पन्ने हैं। पर मुझे अच्छा लगा कि पन्ने यों बेतरतीब हैं। ऐसे पढ़के मन और भी उदास होता है।"

वह पलंग पर बैठ गई और जल्दी-जल्दी पन्ने पलटने लगी।

"यहां एक जगह है..."

उसने ढूंढ़ना छोड़ दिया।

"इस खिचड़ी में मिलने के तो हैं नहीं।"

"क्या है उसमें?"

"उन हिस्सों मे से एक है, जो मुझे पहले उकताऊ लगा करते थे। मैं उन्हें सदा छोड़कर आगे पढ़ने लगती थी। पर अब मैं सोच में पड़ गई... वह हिस्सा, जहां इतिहास की चर्चा है।"

"याद है मुझे। मैं भी वहां इसी बारे में सोचता रहा था।"

"सच? हो सकता है उसी वक्त जब मैं पढ़ रही थी... पता है, जहां लिखा है कि इतिहास को मनुष्य के इच्छा बल का परिणाम समझने का दृष्टिकोण पुराना पड़ चुका है।"

"हां, हां। यह कि इतिहास के अध्ययन में इस दृष्टिकोण को मानना और उसके साथ ही सांख्यिकी और राजनीतिक अर्थशास्त्र के नियमों को भी सच्चाई मानना असम्भव है, जिनका इस पुराने दृष्टिकोण के साथ कोई सामंजस्य ही नहीं बैठता।"

"तुम्हें यह सब याद है!"

पति के मुखर चिंतन पर आस्या सदा ही विमुग्ध सी उसे देखने लगती थी।

"तो, कैसा लगा तुम्हें यह सब?"

आस्या कुछ सोचती हुई चुप रही।

"पहले तो मैं भी वैसे ही सोच रही थी, पर फिर मुझे लगने लगा कि यह ठीक नहीं।"

"ठीक नहीं? तोलस्तोय का कहना ठीक नहीं?"

"हां। मैं सोच रही थी कि अब तो इतिहास का नया दृष्टिकोण विजयी हो गया है। ठीक है न? अब तो यह कहा जाता है कि इतिहास का अध्ययन उन सारे दूसरे विषयों से मेल खाता है, जिनके बारे में तोलस्तोय ने कहा है... सांख्यिकी और प्रकृतिविज्ञान से... है न?"

वह फिर से चुप हो गई और उसकी आंखों में द्विविधा का भाव आ गया, मानो वह इस बात की दोषी थी कि उसने ऐसे अमूर्त विषय पर बात छेड़ी, पर साथ ही उसके विचार में यह बात अत्यंत आवश्यक थी, और उसे इस पर गर्व था।

"तो?" पास्तुख़ोव ने फिर से उसे आगे बोलने को प्रेरित किया।

"मैं सोच रही थी कि जैसे पहले इतिहास की गलत व्याख्या करते हुए आदमी इतिहास के हाथों में कठपुतली था, वैसे ही अब सही व्याख्या करते हुए भी वह इतिहास के वश में ही है। इतिहास एक साधन के तौर पर उसे इस्तेमाल करता है। ठीक है कि नहीं?" आस्या ने पूछा। उसके चेहरे पर द्विविधा का भाव बढ़ता जा रहा था।

पास्तुख़ोव ने चाय का घूंट भरा, कुर्सी उठाई और पत्नी के सामने बैठ गया। यह सब उसने बहुत ही धीरे-धीरे किया।

"ठीक है कि नहीं?" आस्या ने एक बार फिर पूछा। "मैं हर पल तुम्हारे बारे में सोचती रहती थी, साशा, हमारे बारे में। मैं रात-रात भर सो नही पाती थी, सो पढ़ती रहती थी। पर ये पन्ने मैंने बार-बार पढ़े। और मेरी अपनी धारणा बन गई है... हो सकता है, वह तोलस्तोय की धारणा के विपरीत न हो, पता नहीं। पर मेरे लिए यह उसकी धारणा से आगे है। मैंने सोचा, अगर हमारी नकेल इतिहास के हाथ में है, और हम उसके शिकार हैं, तो फिर हमारे लिए कौनसा रास्ता बचता है?"

पास्तुख़ोव उसकी आंखों में आंखें डाले देख रहा था और उसे कुछ ऐसा प्रतीत हो रहा था कि आस्या के चेहरे पर दोष की विचित्र भावना के पीछे चतुराई छिपी है। इस चेहरे के हर हाव-भाव को वह अच्छी तरह पहचानता था। हल्के-हल्के मुस्कराते चेहरे पर कभी-कभी मानो संकोच छलक उठता और उसकी रेखाओं में अबलापन के भाव के साथ कहीं प्रच्छन्न बल का आभास होता। यह अंतर्विरोध लिये चेहरा इस क्षण उसे और भी अधिक सुंदर लग रहा था।

"हम इतिहास की चाहे गलत व्याख्या करें, चाहे सही, हर हालत में अगर हमें इतिहास का शिकार ही होना है, तो क्या रास्ता है?" वह आग्रहपूर्वक कहती जा रही थी। "जो है उसे शिरोधार्य कर लें। बस यही रास्ता है। ठीक है कि नहीं?"

"कितनी चतुर औरत हो तुम," उसने गम्भीर भाव से कहा, पर साथ ही कुछ ऐसे अदाज़ से कि वह इस प्रशंसा को मज़ाक समझ सकती थी, और यही बेहतर मानकर वह ज़ोर से हंस पड़ी।

लेकिन पास्तुख़ोव ने उसकी हंसी का जवाब नही दिया और एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए कहने लगा:

"थोड़ी देर के लिए हम यह भूल जायें कि इतिहास के अध्ययन और हमारे सामने जो घटनाएं घट रही हैं उनके प्रवाह को गड़बड़ाना नही चाहिए, यह घटना-प्रवाह तो समय बीतने पर ही इतिहास का विषय बनेगा। अभी मैं यह मीन-मेख नही निकालना चाहता कि इतिहास की कौन सी व्याख्या गलत है और कौन सी सही। मैं अपने अनुभवों से जी रहा हू। समझी? और जीवन में मुझे पहले कभी भी इतने अनुभव नही हुए है। यह वह इतिहास है जिसमें मैं कर्ता हूं। समझ रही हो

मेरी बात? और मैं तुम्हें यह कहना चाहता हूं: मैं इतिहास का शिकार नहीं बनना चाहता। कोई इच्छा नहीं है मेरी शिकार बनने की। किसी भी चीज़ का शिकार बनने की! इसकी ऐसी की तैसी!"

पास्तुख़ोव खड़ा हो गया, पैर से कुर्सी सरकाकर फिर से चलने लगा।

"यह समझ पाना कोई कमाल नहीं है कि पीटर्सबर्ग में, सरातोव में, कोज़्लोव में, और न जाने कहां-कहां, हमारे साथ, हमारे अल्योशा के साथ जो कुछ हो रहा है, वह इतिहास की गति है। कमाल तो यह समझ लेने में है कि इस गति की प्रेरक शक्ति क्या है। हमें वहां होना चाहिए जहां यह प्रेरक शक्ति निहित है। मामोन्तोव भी इतिहास है। पर इस इतिहास को मैं दूर से सलाम करता हूं! अगर हर हालत में मुझे घटनाओं के प्रवाह में बहना है, उसे स्वीकार करना है (मेरे ख्याल में तुम्हारा यह कहना बिल्कुल सही है), तो यह चुनना तो मेरे बस की बात है कि घटनाओं का प्रवाह निर्धारित करनेवाली शक्तियों में से किन शक्तियों के वश में मैं होना चाहता हूं, किन्हें स्वीकार करना चाहता हूं। शिकार बनूं? शहीदों की मौत मरना शिकार होना नहीं है, पराक्रम है। कालकोठरी में न जाने किस खातिर दम तोड़ना भी शिकार होना नहीं, बेवकूफ़ी है!"

वह कुछ झुंझलाता हुआ सा रुक गया:

"देखा, मैं भाषण भी दे सकता हूं।"

उसकी नजर अल्योशा पर पड़ी, जो चौखट से सटा खड़ा था और गर्व तथा भयमिश्रित भाव से पिता की ओर देख रहा था।

"क्या है?"

"मुझे लगा आपने आवाज़ दी थी..."

"आवाज़ दी थी?"

"आप चिल्लाये थे: 'अल्योशा!'"

"अभी मेरे पास नहीं आओ। पहले मैं नहा लूं। जाओ, खेलो जाकर," पास्तुख़ोव ने ज़रा भावुक होते हुए कहा।

आस्या की आंखें भीग आई। उसकी भीगी-भीगी आंखें देखकर पास्तुख़ोव सदा पसीज जाता था, सो अब वह उसकी ओर न देखने की कोशिश कर रहा था, ताकि अपने विचारों का दृढ़ प्रवाह बनाये रख सके।

"मगानोव के स्टेशन पर दीविच से हुई बातचीत तुम्हें याद है? अब मैं यह देख रहा हूं कि दीविच का कहना सही है। उसके जैसे अगर मारे भी जायेंगे, तो उनका स्थान इतिहास में होगा, सच्चे इतिहास में (याद है, उसने यही कहा था?), बल्कि इतिहास के घूरे पर नहीं। मेरा भी इतिहास के घूरे पर फेंके जाने का कोई इरादा नहीं है। क्योंकर मैं रद्दी की तरह फेंका जाऊं?"

शरीर में नई शक्ति के संचार की अनुभूति से वह तनकर खड़ा हो गया, ठोड़ी आगे को बढ़ाई।

"क्या कहने हैं रद्दी के!" उसने इठलाते हुए कहा।

उसका समर्थन करते हुए पर साथ ही कुछ विचारमग्नता से आस्या ने सिर हिलाया।

"बड़ा प्यारा है... यह दीविच!" वह बोली।

पास्तुख़ोव रुक गया और आंखें झपकाता आस्या की ओर देखने लगा, उसके विचारों का क्रम टूट गया था। मेज़ के पास जाकर उसने एक घूंट में सारी चाय पी ली।

"तुम्हें बड़ा अच्छा लगता है जब तुम्हारी कासनी आंखों पर कोई रीझता है। दीविच गद्‌गद होकर तुम्हें देखा करता था... बूढ़ा दोरो-गोमीलोव भी आहें भरता था..."

आस्या ने छोटी उंगली से बाल कान के पीछे किये।

"हाय, कितना अच्छा लगता है जब तुम थोड़ी सी ईर्ष्या करने लगते हो!"

फिर से कुर्सी लेकर वह आस्या के सामने बैठ गया।

"मैंने अंतिम फ़ैसला कर लिया है। समझ रही हो? मैंने यह फ़ैसला वहां किया है, दांते के नरक की स्थानीय शाखा में। मैंने यह तय किया था कि अगर ज़िंदा बच गया तो सबसे पहला काम जो करूंगा वह यह कि इज़्वेकोव को चिट्ठी लिखूंगा, साफ़ लिख दूंगा कि मैं उल्लू था। और दोरोगोमीलोव को भी। ताकि वे जान जायें कि मैं कोई सफ़ेद गार्ड पंथी नहीं..."

उसने दृढ़तापूर्वक और शपथ ग्रहण करने के से अंदाज़ में यह कहा। सहसा आस्या की ओर झुककर वह नीची आवाज़ में बोला:

"वहां मेरे साथ एक बड़ी भयानक और बीभत्स बात हुई। सुनो..."

उसने सारी वात सुनाई और साथ ही इशारों से यह दिखाता भी गया कि कैसे झींगुर रेंगता, फुदकता उसकी ओर बढ़ रहा था और कैसे उसने उसे कुचल डाला। आस्या के चेहरे पर घिन के वही भाव प्रतिबिम्बित हो रहे थे, जिनके साथ वह उस भुलाये न भूलनेवाले क्षण का अनुभव सुना रहा था।

"उस कीड़े में सबसे घिनौनी बात मुझे यह लगी कि वह न टिड्डी था और न तिलचट्टा, बल्कि कोई दोगला कीड़ा। ऊपर से उसमें कुछ ऐसा आत्मसंतोष और घमंड का भाव था, मानो वह घिनौना कीड़ा अपने आपको वेहद खूबसूरत समझता हो। उसे देखकर आदमी थरथराये विना नहीं रह सकता। वाद में मुझे वार-वार यह क्षण याद आता और हर बार मेरे रोंगटे खड़े हो जाते। थू!"

उसने हाथ रगड़े, उछलकर खड़ा हो गया और अपने कपड़े झटकने लगा। किताव के कुछ पन्नें फ़र्श पर जा गिरे। उसने पन्ने उठा लिये।

"दुनिया में इससे वढ़कर घिनौनी वात और कोई नहीं कि कोई दोगला हो। और तब मुझे यह ख्याल आया कि मेरी हालत और तो जैसी है सो है, घृणास्पद भी है।"

"साशा," आस्या सचमुच ही भयभीत होकर चिल्लाई।

पास्तुख़ोव ने पन्ने ठीक से लगाने की कोशिश की, पर वे उसके हाथों में बिखर गये।

"मैंने यह कल्पना की कि मैं दूसरों की नज़रों में क्या हूं। कोई समझदार आदमी मुझे क्या समझता होगा। और तव मैंने फ़ैसला कर लिया... और जब मैंने फ़ैसला कर लिया, तो विश्वास मानो, उस कालकोठरी में अंत की प्रतीक्षा करते हुए भी मुझे लगा मैं आज़ाद हूं। समझ रही हो? गलत-फ़हमी की वजह से मारा जाना हास्यास्पद भी नहीं है। यह तो तुच्छ मौत है! मैंने निश्चय कर लिया और साफ़-साफ़ कल्पना भी करने लगा – अगर मुझे मरना ही है, तो मैं उन्हें चिल्लाकर कहूंगा: हां, हां, मैं वोल्शेविक हूं! वोल्शेविक – वेड़ा गरक जाये तुम्हारा! – और रोम-रोम से तुमसे नफ़रत करता हूं!"

दरवाज़े पर फिर से अल्योशा का उत्तेजित चेहरा दिखा।

"पापा," अल्योशा हौले से वोला, "क्या दूसरे झींगुर काटते हैं?"

"नहीं, दूसरे झींगुर नहीं काटते," आस्या ने हल्के से मुस्कराकर जवाब दिया। "जाओ बेटा, हमें बात कर लेने दो।"

पति को शांत करने या शायद उसे कोई खतरनाक कदम उठाने से रोकने के इरादे से आस्या ने आगे को झुककर उसकी ओर हाथ बढ़ाये। लेकिन पास्तुख़ोव ने उसकी इस गति को नज़रंदाज़ कर दिया, मानो डर रहा हो कि जो भवन वह अभी बनाने ही लगा है, वह उसके छूने से ढह जायेगा।

"और अब मैं कहीं नहीं भागूंगा।" उतावली में वह बोलने लगा। "बहुत हो गया! दीविच की बात समझ में आती है कि वह क्यों जर्मनों की कैद से भागा था। उसे घर जाना था। पर मुझे कहीं नहीं जाना। मैं घर पर हूं। हम-तुम घर पर हैं, समझती हो? जो हमारे घर का होगा, वही हमारा होगा। और हमें कुछ नहीं चाहिए!"

आस्या ने विनम्र आग्रह के साथ उसकी उंगलियां अपनी नरम हथेलियों में ले ही लीं, उसके हाथ परे किये और उसकी छाती से लग गई।

"पर प्रिय, मैं तुमसे बिल्कुल सहमत हूं, हर बात में!"

पास्तुख़ोव ने अपने आप को छुड़ा लिया। वह अपने विचारों के भवन को पूरा करना चाहता था, देह और आत्मा के क्लेशकर संघर्ष से निवारण पाना चाहता था, और सबसे बड़ी बात यह विश्वास पा लेना चाहता था कि उसने किसी के परामर्श या दबाव से फ़ैसला नहीं किया है, कि वह कुछ भी फ़ैसला करने को स्वतंत्र है। उसे आपत्तियों से डर लग रहा था, पर साथ ही वह यह भी नहीं चाहता था कि आस्या तुरन्त ही उससे सहमत हो जाये। वह नहीं चाहता था कि इस फ़ैसले में, जिससे उनका सारा जीवन बदला जाना था, पहल आस्या की हो।

आख़िर उसने किताब के पन्ने समेट दिये और उसके फटे सिरों पर आदर भाव से हाथ फेरते हुए बोला:

"तुम अगर यह मानती हो कि इतिहास की गति को शिरोधार्य कर लेना ही सभी कुछ है, तो तोल्स्तोय के ही मत का समर्थन करती हो। पर मैं उससे सहमत नहीं हूं। अगर फ़ैसला करना मेरे वश में है, तो इसका अर्थ है कि मैं अपने स्वतंत्र इच्छा बल से घटनाओं के विकास

में भाग लेता हूं। सब लोगों के स्वतंत्र इच्छा बलों का योग इतिहास की गति निर्धारित करनेवाली शक्तियों में से एक है। और इसका अर्थ है कि इतिहास एक हद तक मनुष्य के स्वतंत्र इच्छा बल का परिणाम है। मेरे स्वतंत्र इच्छा बल का परिणाम है।"

"यही तो मैं तुम्हें कहना चाहती थी," उसका सिर बांहों में लेते हुए आस्या ने कहा। "बेशक तुम कुछ भी करने को आज़ाद हो... आवारा बेटे की तरह, जब वह बाप के घर लौट आया, वैसे ही हम भी वापस लौटने को आज़ाद हैं सिर झुकाकर। झुके सिर तो काटे नहीं जाते।"

आस्या उसके बालों में उंगलियां फेर रही थी, वह मुंह मोड़ना चाहता था, पर फिर सहसा वह अपने पुराने अंदाज़ में ठहाका मारकर हंस पड़ा। दोनों एक दूसरे की आंखों में आंखें डालकर देखने लगे। वे एक दूसरे से खुश थे और मानो जवान हो गये थे।

"तो सब कुछ वैसे ही हुआ, जैसे तुम चाहती थीं?" पास्तुख़ोव ने पूछा और हल्के से आंख मारी।

ओल्गा अदामोव्ना ने अंदर झांका। उसके चेहरे पर वैसा ही खोया-खोया सा भाव था, जैसा त्योहार के दिन अचानक मेहमान आने पर होता है। उसने बताया कि मकान मालिक आये हैं – थियेटर का मैनेजर और मां जी।

"हम बस बधाई देने आये हैं, बधाई देने!" पास्तुख़ोव से हाथ मिलाते हुए थियेटर के मैनेजर ने कहा। "कितनी खुशी की बात है! कैसे हैं आप? भगवान कसम, बड़ी चिंता थी हमें आपकी। मां जी से पूछ लीजिये! सच, कितना दुखद अनुभव है!"

"क्या बताऊं," अर्थपूर्ण मुस्कान के साथ पास्तुख़ोव ने जवाब दिया। "मुझे याद नहीं पड़ता कौन से उपन्यास में स्टेन्डाल* ने अपने नायक के बारे में लिखा है: 'दुख ने उसकी आत्मा में कला का बोध जगाया।' सो इससे भी कुछ लाभ हो सकता है..."

"उन्होंने मारा-पीटा तो नहीं आपको?" बालों तले से कान उघाड़ते हुए मां जी ने पूछा।

---

* स्टेन्डाल (१७८३–१८४२) – लब्धप्रतिष्ठ फ़्रांसीसी यथार्थवादी लेखक। – सं०

"भगवान की दया रही!" पास्तुखोव विनोदपूर्ण स्वर में चिल्लाया।

मा जी ने सलीब का निशान बनाया।

"माफ़ कीजिये, मुझे थियेटर जाना है," मैनेजर ने कहा। "हम एक प्रशस्तिगान तैयार कर रहे हैं। इतना जोश है सबमें – पूछिये मत, भगवान कसम!"

"क्या तैयार कर रहे हैं?"

"प्रशस्तिगान।"

"किसने लिखा है?"

"किसी ने नहीं। हमारी मण्डली खुद तैयार कर रही। गीत-संगीत वगैरह सब।"

"ठहरिये," पास्तुखोव ने मैनेजर की बांह पकड़ते हुए सख्ती से कहा। "ठहरिये... मैं आपके लिए प्रशस्तिगान लिखूंगा। उसका नाम होगा 'मुक्ति'।"

महामनस्कता भरी दृष्टि से उसने धीरे-धीरे सबकी ओर देखा।

"अलेक्सान्द्र व्लादीमिरोविच! हम तो... हम तो आपके... सारी मण्डली आपके कदम चूमेगी!"

मैनेजर दरवाज़े की ओर लपका, दौड़ते-दौड़ते भी उत्साह में कुछ बोलता गया।

"क्या कहता है, हैं?" मां जी की कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

"कहता है मेरे कदम चूमेगा," पास्तुखोव ने मां जी के कान में चिल्लाकर कहा।

"अच्छा-आ! ठीक ही तो है, भैया। हम तो यही समझ बैठे थे कि अब तुम न लौटोगे... मैंने तुम्हारे लिए हम्माम गरम करा दिया है।"

पास्तुखोव ने उसे लिपटा लिया।

"बहुत-बहुत शुक्रिया, मां जी!"

"नहा लो, भैया! भगवान तुम्हें सेहत दे।"

"आज सारी मैल उतार डालूंगा," पत्नी के साथ अकेले रह जाने पर पास्तुखोव ने जोर से उसांस भरते हुए कहा।

वे छज्जे पर गये। उसने निर्जन चौराहे के एक सिरे से दूसरे तक नजर दौड़ाई।

"कैसा दिन है! और सड़क की धूल की गंध कितनी प्यारी है, खट्टी-खट्टी! ओह, आस्या, आस्या!"

एक बार फिर उसने अपने विशाल वक्ष को फुलाते हुए गहरी सांस ली।

३०

'अक्तूबर' गनबोट पर आकर भी रागोज़िन बाहरी तौर पर बदला न था, और इससे वह दूसरे नौसैनिकों से बिल्कुल अलग लगता था, लेकिन सब इसे स्वाभाविक ही समझते थे और स्वयं रागोज़िन भी इस बात को कोई महत्व नहीं देता था कि वह मल्लाहों जैसा नहीं दिखता। पहले की ही भांति वह गले के बाईं ओर बटनों की पट्टी वाला रूसी कुर्ता और कोट पहने रहता। सिर पर गोल चपटी टोपी कसी होती, जिसके नीचे से कभी-कभी कनपटी पर बालों की लट नज़र आती। हां चलता वह नौसैनिकों से भी ज़्यादा झूमकर। वह अब चलते हुए पहले से भी अधिक डोलता था, शायद इसलिए कि वित्तीय आंकड़ों से निराशाजनक द्वंद्व खत्म करके वह वोल्गा की खुली हवाओं में आ गया था और जवान हो गया लगता था।

स्क्वैड्रन में सब उसकी ऊंची, झुके से कंधों की आकृति के शीघ्र ही आदी हो गये। वह अक्सर नौसैनिकों के बीच आता-जाता रहता था, हालांकि शुरू-शुरू में उसे हेडक्वार्टर की केबिनों में देर तक बैठना पड़ता था: उसे नौसैनिक बेड़े के कामकाज से परिचित होना था और बदलती परिस्थितियों के अनुसार राजनीतिक काम भी बदलना था।

अगस्त में सरातोव के दक्षिण-पश्चिम की ओर सोवियत सेनाओं का अभियान आरम्भ होने से कुछ दिन पहले ही रागोज़िन बेड़े पर पहुंचा था। वह न सैनिक था और न कभी जहाज़ी ही रहा था। उसे बस एक ही हथियार चलाना आता था, जिससे रूस के मज़दूर अच्छी तरह परिचित थे, यह था – रिवाल्वर। इस विश्वास के साथ कि अगर पार्टी ने उसे किसी स्थान पर नियुक्त किया है, तो वह अपनी जगह पर ही है, उसने स्क्वैड्रन कमिसार का काम संभाला। उसे इस बात में ज़रा भी संदेह नहीं था कि यह काम उसके बस का है, सिर्फ़ वक्त चाहिए था काम को समझने के लिए।

उसके अधीन जो पोत थे, उनपर बाल्टिक बेड़े के नौसैनिक थे, कास्पियन और अज़ोव सागरों के जहाज़ी भी नज़र आते थे, रूस के उत्तरी इलाकों के और वोल्गा के मल्लाह भी इनमें थे। नाविकों की इस जमात को जहाज़ों पर काम करने का बरसों का अनुभव था, इनमें से ज़्यादातर लड़ाइयां लड़ चुके थे और लगता था कि प्रकृति ने इन्हें खास तौर पर जहाज़ों पर काम करने के लिए बनाया है।

नौसैनिक बेड़े के नियम इन भांति-भांति के लोगों में समानता लाते थे, साथ ही बाल्टिक के नौसैनिकों को सब अपने लिए आदर्श मानते थे। इन नौसैनिकों को दोहरा यश प्राप्त था – वे बल्टिक सागर में जर्मन बेड़े से भी लड़ चुके थे और पेत्रोग्राद के क्रांतिकारी मोर्चे पर भी, जहां सुविख्यात युद्धपोत 'अव्रोरा' ने सारे रूस में प्रतिध्वनित हुआ क्रांति का पहला गोला दागा था। हर कोई बाल्टिक के नौसैनिकों जैसा बनना अपना कर्तव्य समझता था – युद्ध में उनके जैसी ही निर्भीकता दिखाना चाहता था, अवकाश के क्षणों में उनकी ही भांति हंसोड़ होना चाहता था। यहां तक कि गोल टोपी भी सब उनकी तरह ही पहनने लगे थे – एक ओर को खिसकाकर नहीं बल्कि सीधे, भौंहों के समानांतर जिससे नौसैनिक इतने जाबाज़ तो नहीं लगते थे, पर बिल्कुल अडिग प्रतीत होते थे।

वोल्गा-कामा बेड़े के उत्तरी दल में गनबोटों के अलावा ऐसे जहाज़ थे, जिन पर भारी तोपें लगी हुई थीं, अनेक सहायक जहाज थे – मरम्मत करनेवाले और अस्पताल के, मोटरबोटें और एयरोस्टैट थे, सैनिकों और सुरंगे बिछानेवालों की टुकड़ियां थीं। इन छोटे-बड़े, अलग-अलग रंगों के पोतों का बेड़ा नदी के पाट पर कई मील तक फैला हुआ था, चिमनियों से निकलता धुआं आसमान पर काले, भूरे, सुरमई धब्बे फैला रहा था, इंजन फुफकारते, धुकधुक करते चल रहे थे, लंगरों की जंजीरें खनक रही थीं, सिग्नलर अपनी झंडियां जल्दी-जल्दी हिला रहे थे। मोटरबोट पर बैठकर बेड़े के हेडक्वार्टर को जाते हुए रारोजिन जब आगे की कुछ स्क्वैड्रनों के पास से गुज़रा तो यह दृश्य देखकर वह विस्मय विमुग्ध रह गया। पहली बार वह लाल मोर्चे की शक्ति को इतने प्रत्यक्ष रूप से देख रहा था, इस सैन्यबल के ठोस रूप में उसे मानो अपने अधिकारों के लिए मैदान में कूदी जनता की महानता के साक्षात दर्शन हुए।

रागोज़िन ने धूप से गर्म हुआ पानी चुल्लू में लिया, एक घूंट भरा और माथे पर हाथ फेरा, जो पानी से भी ठंडा न हुआ था। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि अपनी उत्तेजना कैसे शांत करे, उसने मोटर चालक से चिल्लाकर कहा :

"सिगरेट पी लें?" हालांकि तम्बाकू की आदत कब की छूट चुकी थी...

जिस क्षण स्क्वैड्रन के हेडक्वार्टर में आक्रमण करने के आदेश का लिफ़ाफ़ा खोला गया और सिग्नलर ने झंडियों से डिज़ाइन बनाते हुए सब पोतों को स्क्वैड्रन के कमांडर का यह आदेश दिया कि वे एक कतार में उसका अनुसरण करें, उस क्षण से रागोज़िन एक बार भी अपनी केबिन में नहीं गया। वह तोपों के पास मौन, गम्भीर नौसैनिकों के बीच खड़ा रहा, डेक पर या कमान ब्रिज पर खड़ा बाइनोकुलर लगाये देखता रहा और हर पल के साथ उसका उत्साह और तनाव बढ़ता रहा। उसे पूरा विश्वास था कि पहली ही लड़ाई निर्णायक होगी, और तटों पर छाई शांति, ऊषा की कोमल लाली, गांवों में किसी-किसी घर की चिमनी से उठता धुआं यह सब उसे विचित्र लग रहा था। चरागाहों वाले तट के ऊपर सूरज का पूरा गोला निकल आया और तुरन्त ही सामने का ऊंचा तट जी उठा। भेड़ों के रेवड़ और बैलों के झुंड धूल के बादल उठाते टीलों पर चढ़ रहे थे। यह सेना के मवेशी थे और इन्हें हांका जाना इस बात का संकेत था कि थल पर भी जहाज़ी बेड़े के साथ-साथ हमला शुरू हो रहा है। तट पर उठते धूल के बादल मानो गनबोटों के धुएं का आह्वान कर रहे थे: कंधे से कंधा मिलाये बढ़े चलो!

पर इन धूल के बादलों की ओर शत्रु का ध्यान आकर्षित हुआ। तीन-तीन हवाई जहाज़ों की दो टुकड़ियां तेज़ी से स्क्वैड्रन की ओर बढ़ती आईं। पहले तो हवाई जहाज निरभ्र आकाश में छोटे-छोटे चिड़ों जैसे दिखे और फिर बढ़ते-बढ़ते विशाल गिद्धों जैसे हो गये, उनके इंजन कर्णभेदी शोर कर रहे थे। आगे के तीन हवाई जहाज़ तट के ऊपर उड़ते गये, पिछले तीन नदी के पाट के ऊपर। एक के बाद एक पहले बम फटे और पंखों की भांति मिट्टी ऊपर उछली। जानवर इधर-उधर भागे – उनके ऊपर धूल का अभेद्य बादल उठा।

स्क्वैड्रन की तीन इंची विमानभेदी तोपें आग उगलने लगीं। पोत अपनी चाल बदलते हुए इधर-उधर होने लगे। बमों के फटने से वोल्गा में बिल्लौरी मतून उठते और बौछार में बिखर जाते। गनबोटें ऊंची-नीची लहरों पर डोलने लगीं।

'अक्तूबर' के कुछ नौसैनिक, जिनकी ड्यूटी इंजन रूम में थी, ऊपर डेक पर आ गये। सब यह देख रहे थे कि कैसे हवाई जहाज़ मुड़कर पीछे से पोतों पर हमला करने आ रहे हैं। इस बार छहों हवाई जहाज नदी के ऊपर उड़े। अब बम अधिक घने गिर रहे थे, लेकिन इस बीच पोत एक दूसरे से काफ़ी दूर-दूर हो गये थे। विमानभेदी तोपों की गोलाबारी तेज़ हो गई थी, आसमान में फटते गोले आतिश-बाजी के तारों जैसे लगते। हवाई जहाज़ों को अधिक ऊंचे जाना पड़ा, पर उन्होंने फिर से चक्कर लगाया और फिर से लौट आये।

एक बम तेज़ सीटी के साथ हवा को चीरता हुआ 'अक्तूबर' के पास ही नदी में गिरा। डेक पर सफ़ेद झाग की दीवार ढही, धमाके के प्रत्युत्तर में पोत के गर्भ में से कराह निकली, पोतचालक की केबिन में चूर-चूर होते शीशे की खनक आई।

गलही से एक जवान नौसैनिक पानी में जा गिरा। दबूसे से एक रस्सा उसकी ओर फेंका गया। वह बिल्ली की तरह हाथ-पांव चलाता हुआ डेक पर चढ़ गया। उसके कपड़ों से पानी चू रहा था, कमीज़ और पतलून उसकी लचकीली देह से चिपक गये थे। दूर जाते हवाई जहाजों को मुक्का दिखाते हुए वह चिल्लाया:

"मज़ा चखाऊंगा तुम्हें भी!" और उसने इतने ज़ोर से गाली दी कि सारे डेक पर सुनाई दी।

स्त्रारनोव इंजन रूम से निकल आया था और जब बम गिरा तो वह गगोजिन के पीछे खड़ा था। तेल से सने, पीले चेहरे से पानी पोंछते हुए अपनी गहरी आवाज़ में वह बोला:

"एंटेंट का दिली सलाम!"

गगोजिन ने भी रूमाल से गुद्दी पोंछते हुए (उस पर पीछे से बौछार हुई थी) शांत स्वर में कहा:

"मित्र-राष्ट्र हैं!"

"चिड़ियां फ़्रांसीसी हैं क्या?"

"नर्चिन्न के जनन हैं," रागोज़िन ने धीरे-धीरे बोलते हुए जवाब दिया, और फिर सहसा स्त्राश्नोव की ओर मुड़कर पूछा: "तुम्हारी ड्यूटी क्या यहां है?"

"हमारी दोनों पालियां अपनी-अपनी जगह हैं," एक ओर को देखता हुआ वह बोला।

रागोज़िन ने कुछ नहीं कहा।

जब तक हवाई हमला चलता रहा वह विमानभेदी तोपों के पास ही बना रहा, तोपचियों के अनजाने काम को बड़े गौर से देखता रहा। उसे डर था कि कहीं ऐसा कोई महत्वपूर्ण क्षण न निकल जाये, जिसमें उसकी सहायता की आवश्यकता पड़ सकती है। उसका सारा ध्यान इस एक बात पर केंद्रित हो गया, अभूतपूर्व एकाग्रचित्तता के इन क्षणों में उसकी इंद्रियां, उसका मस्तिष्क और कुछ भी अनुभव करने, सोचने में अक्षम थे। जब हवाई जहाज़ क्षितिज के पीछे छिप गये, तब कहीं जाकर उसे सिर से पांव तक रोम-रोम से मानो यह अहसास हुआ कि ये क्षण सचमुच कितने कठिन थे। अगर एक भी बम किसी पोत पर गिर पड़ता तो क्षति बहुत भारी होती। वह हैरान था कि तोपों ने हवाई जहाज़ों को कोई नुक्सान नहीं पहुंचाया और वे बड़े आराम से चले गये। वह नहीं जानता था कि क्या जवाब दे – क्या तोपें अच्छी तरह चली थीं और जो कुछ हुआ था उसे क्या लड़ाई कहा जा सकता था? लेकिन नौसैनिक चुपचाप पोत को ठीक-ठाक करने में लगे हुए थे, और वह भी अर्थपूर्ण मौन साधे यह दिखावा कर रहा था कि शत्रु के साथ ऐसी मुठभेड़ें उसके लिए नई बात नहीं हैं।

आगे भेजी गई गनबोट 'जोखिमी' शत्रु के तट के पास पहुंच गई। नाव पर बैठकर कुछ टोही तट पर उतरे। वे एक टूटे-फूटे मकान की छत पर चढ़ गये।

उनके सामने धूप से झुलसी घास का मैदान दूर-दूर तक फैला हुआ था। मैदान के बीच से हल्की सी ढलान तट तक चली गई थी। उसके दाईं ओर दक्षिण को मुंह किये लेटे पैदल सैनिकों की लाइन दिख रही थी। बाईं ओर दूर कहीं टीलों की कतार चली गई थी। धूप ऐसी चुंधियाती थी कि तुरन्त ही यह कहना मुश्किल था कि कहां टीलों के शिखर हैं और कहां उनकी मरीचिका। फिर बाइनोकुलर में टीलों

पर फैले कुछ बिंदुओं के इर्द-गिर्द लोगों की हलचल दिखने लगी।

और सहसा उन्हें सफ़ेद गार्डों की तोपें साफ़ दिखीं, मानो वे ज़मीन में से उभर आईं।

टोही छत से कूदे, दौड़कर गनबोट पर गये। तट के ऊंचे कगारों की आड़ में गनबोट पूरी रफ़्तार से आगे बढ़ चली, पर अभी स्क्वैड्रन हेडक्वार्टर को नौसैनिकों द्वारा प्राप्त सूचना भेजी ही गई थी कि सफ़ेद गार्ड पोतों पर गोलाबारी करने लगे।

गनबोटें नदी के बहाव में आगे चलने लगीं, इस इरादे से कि सफ़ेद गार्डों पर पीछे से हमला करें। उनकी जवाबी गोलाबारी तेज़ होती जा रही थी। दूसरे पोत भी उनकी मदद को आ रहे थे। बेड़े में भी तोपें चलाई जाने लगीं। गनबोटों की छोटी तोपों की दनादन में बेड़े की बड़ी समुद्री तोपों की भारी आहें मिलने लगीं। पानी में बुलबुलों की भांति एयरोस्टेटों के पतंगों जैसे गुब्बारे ऊपर उठे। पारदर्शी आकाश में चमकते बादलों जैसे गुब्बारों से तोपों का निशाना ठीक करने के संकेत दिये जाने लगे।

नदी का लंबा मोड़ पार करके 'अक्तूबर' गनबोट जब आगे पहुंची तो उसे पहाड़ी दर्रे जैसी धंसान दिखी, जिसका एक सिरा नदी में था और दूसरा दूर स्तेपी में टीलों तक चला गया था। इस दर्रे में से गनबोट से देनीकिन की निरंतर गोले बरसाती तोपें साफ़ दिखने लगीं।

रागोज़िन की आंखों के सामने चकाचौंध करती स्पष्टता लिए वह सजीव निशाना था, जिसे उन्हें नष्ट करना था। स्तेपी पर फैली और धूप से सुनहरी सी लगती धुंध में वह तोपों से निकलती आग साफ़ देख रहा था, पोतों के गोलों के फटने से धूल के सतून उठ रहे थे, मानो कोई विशाल फावड़े से मिट्टी खोद-खोदकर हवा में फेंक रहा हो।

'अक्तूबर' पोत की चार इंची तोप धंसान में साधी गई, जो शत्रु की पीठ की ओर खुलते गलियारे जैसी थी। आदेश दिया गया और तोप चली। गनबोट कांप उठी।

रागोज़िन डेक की रेलिंग पर कोहनियां टिकाये बाइनोकुलर में देख रहा था। इस क्षण यदि वह अपने आप को देख सकता तो उसे आश्चर्य होता कि उसका शरीर कितना तना हुआ है। टांगें फैलाये वह आगे को झुका हुआ था और उसके धड़ के बोझ तले लोहे की

रेलिंग झुक रही थी, जिस पर वह कोहनियां टिकाये था। शरीर की एक-एक मांसपेशी के इस तनाव से ही वह उस असाधारण भावना को दबाये रख पा रहा था, जो उसके मन में पहली बार उठ रही थी। यह प्रचण्ड क्रोध था, जो उसे उधर बढ़ने का आह्वान दे रहा था, जहां ज़मीन फट रही थी, सुनहरी धूल में उड़ रही थी। वह आंखें गड़ाये इस सुनहरी धूल से उठती धुंध को देखे जा रहा था और पोत से दुश्मन के तोपखानों पर दागे जा रहे हर गोले के साथ अपना क्रोध उनपर उंडेल रहा था।

सहसा पोतों से गोलाबारी कम होने लगी। 'अक्तूबर' से गोले दागने बिल्कुल ही बंद कर दिये गये। रागोज़िन ने बाइनोकुलर से आंखें हटाईं, लपककर ब्रिज की ओर गया।

"क्या बात है? चुप क्यों हो गये?"

तोपों की गरज के बाद उसकी आवाज़ चिड़ियों की चहक जैसी लगी।

"पैदल और नौसैनिक दल धावा बोलने जा रहे हैं," ऊपर ब्रिज पर खड़े कमांडर ने चिल्लाकर कहा।

रागोज़िन ने तट की ओर देखा।

पानी और ऊंचे कगार के बीच की पट्टी पर पतले फ़ीते की भांति नौसैनिक दौड़ते जा रहे थे। एक के बाद एक वे धंसान की ढलवां दीवारों के बीच गायब होते जा रहे थे। लोगों के कुछ झुंड मशीनगनों में आगे जुते और पीछे से धकेलते उन्हें ले जा रहे थे।

रागोज़िन ने फिर से आंखों पर बाइनोकुलर लगाया। टीलों पर धूल धीरे-धीरे बैठने लगी। वहां तोपों से आग अब कम निकल रही थी। एक टीले पर धुएं का गोला उठा, तेज़ी से बढ़ता गया और पल भर बाद स्तेपी में धमाका गूंजा। डेक पर कोई चिल्लाया:

"तोपें उड़ा रहे हैं!"

रागोज़िन ने देखा कि सफ़ेद गार्डों की चौकियों के बिल्कुल पास ही नौसैनिक एक दूसरे को पकड़ते हुए और ढलान पर फिसलते हुए ऊपर चढ़ रहे थे। सबसे आगे वाली टुकड़ी ऊपर चढ़कर खड़ी हो गई। धंसान की तली से मशीनगनें ऊपर खींची जाने लगीं। अधिकाधिक नौसैनिक ऊपर पहुंचते जा रहे थे, स्तेपी में उनकी कतारें लंबी होती

जा रही थी। मशीनगन की पहली तड़ातड़ हुई। फिर हवा दूर कहीं चलती बंदूकों से कम्पायमान हो उठी।

"चल दिये! चल दिये!" अधीरता से कोई चिल्लाया।

डेक पर जमा हो गये नौसैनिकों में दसियों आवाजें एक साथ चिल्लाईं :

"मारो सालों को! मारो!"

रागोजिन ने बाइनोकुलर टीलों की ओर घुमाया। स्तेपी में घोड़े तोपों को दौड़ाते ले जा रहे थे। प्रायः उसी क्षण टीलों के शिखरों पर लाल पैदल सैनिक हमला बोलते नजर आये। सामने से पड़ती धूप में उनकी कतार बाड़ के डंडों जैसी लग रही थी। नौसैनिकों का दस्ता भागते सफ़ेद गार्डों का रास्ता काटने लपका।

रागोज़िन ने ब्रिज की ओर सिर उठाया।

"तोड़ दी उनकी लाइन! तोड़ दी," कमांडर उससे चिल्लाकर कह रहा था और जाने क्यों दोनों हाथ हिला रहा था।

रागोज़िन ने जल्दी से डेक पर जमा नौसैनिकों पर नज़र दौड़ाई। हंसते, चिल्लाते, गालियां देते वे तट पर देख रहे थे और हाथ हिला रहे थे। उनके चेहरे उस गर्व और सादगी भरे सुख से दमक रहे थे, जो सफलता से होता है।

सहसा अपने बिल्कुल सामने ही रागोजिन को फिर से स्त्रारनोव दिखा। उसके मुंह पर धूप पड़ रही थी और इसलिए वह तेल से और भी अधिक चमक रहा था। मल्लाह गहरे संतोष से मुस्करा रहा था।

"बस शुरू करना ही मुश्किल होता है," वह बोला।

रागोजिन की भौंहें तन गईं।

"तुम क्या मेरे पीछे-पीछे फिर रहे हो?"

"मैं यहां.. शायद डेक पर कुछ ठीक करने की ज़रूरत पड़ जाये..."

"तुम क्या मेरी दाई हो, मेरा ख्याल रख रहे हो? मुझे तुम्हारा ख्याल रखना है न कि तुम्हें मेरा!"

"मैंने क्या किया है? मैं तो सबकी तरह ही..."

"नहीं, सबकी तरह नहीं..." सहसा धमकी भरी आवाज में रागोजिन ने उसे टोका। "मुझे चंवरदार नहीं चाहिए। मैं कोई जनरल नहीं कि मेरे पीछे-पीछे चला करो..."

वह तेज़ी से मुड़ गया और चल दिया। उसे कुछ खिसियाहट सी हो रही थी, उसे लग रहा था जैसे वह किसी का देनदार है। सैनिकों ने देनीकिन के तोपखाने को खदेड़ दिया था, नौसैनिक और पैदल सैनिक सफ़ेद गार्डों का पीछा कर रहे थे, और वह बस खड़ा-खड़ा वाइनोकुलर से देख रहा था। यह तो सचमुच की लड़ाई थी और उन्हें इसमें सफलता भी मिली थी। पर रागोज़िन ने इस सफलता के लिए क्या किया था? उसे लड़ाइयों में क्या करना चाहिए? वाइनोकुलर लगाये देखता रहे?

"चंवरढार!" वह गुस्से में बड़बड़ाया और कंधे की पेटी से लटकते बाइनोकुलर को एक ओर को झटककर ब्रिज की सीढ़ियां चढ़ने लगा।

आखिरी सीढ़ी के ऊपर उसकी टोपी दिखाई ही दी थी कि स्क्वैड्रन कमांडर – अधेड़ उम्र का थुलथुल नौसैनिक अफ़सर बोला:

"हो गया शुरू, प्योत्र पेत्रोविच, शुरू हो गया काम!"

बायां हाथ उसने टोपी की ओर उठाया, मानो टोपी उतारने लगा हो, पर हाथ छुआया ही, और दायें हाथ से चेहरे के सामने सलीब का निशान बनाया नहीं, बस बनाने का इशारा सा ही किया।

"हे भगवान, तेरा ही आसरा है।"

कमांडर औपचारिक और साथ ही जिज्ञासा भरी दृष्टि से रागोज़िन की ओर देख रहा था। रागोज़िन ने अपनी अस्त-व्यस्त मूंछों पर ताव दिया। उसे इस पुराने चलन पर कोई आपत्ति नहीं थी: काम ठीक चल रहा है, तो सलीब का निशान बनाने में क्या हर्ज है?

"ध्वजवाहक पोत से अभी-अभी रेडियो संदेश मिला है," मानो रपट देते हुए, पर साथ ही जैसे खबर सुनाते हुए कमांडर ने कहा। "सारे मोर्चे पर हमला हो रहा है। हमारी स्क्वैड्रन को पूरी रफ़्तार से आगे बढ़ना है – तटों पर दुश्मन का सफ़ाया करते हुए।"

"पैदल सैनिकों से दूर न निकल जायें," अनुभवी सैनिक के अंदाज़ में रागोज़िन बोला।

"हमारे पास आंखें किसलिए हैं, प्योत्र पेत्रोविच? आंखें सबसे बढ़कर हैं।"

उसने रागोज़िन के बाइनोकुलर पर आदर भाव के साथ नाखून

से पटापट की। उसे यह अच्छा लग रहा था कि कमिसार फ़ालतू बात नहीं करता और नौसैनिकों पर कुछ-कुछ पितृ भाव से हुक्म चलाने की उसकी आदत पर आपत्ति नहीं करता।

"तो आगे बढ़ेंगे?"

"हां, प्योत्र पेत्रोविच, आगे बढ़ेंगे। मैं अभी हुक्म देता हूं।"

..इस दिन सर्वोच्च कमान की योजना के अनुसार दक्षिणी मोर्चे की सोवियत सेनाओं के प्रहारक दल ने बड़े पैमाने पर अपना अभियान शुरू किया, जो आरम्भ में तो सफल रहा, किन्तु अंततः लाल सेनाओं को पीछे हटना पड़ा।

सफ़ेद कज़्ज़ाक सेनाओं पर दक्षिणी मोर्चे का प्रहार विफल रहा – कुप्यान्स्क की दिशा में लड़ रहे सहायक सेना दल के लिए यह बात दो हफ्ते बाद स्पष्ट हो गई तथा त्सरीत्सिन की ओर बढ़ रही सेनाओं के लिए तीन हफ्ते बाद। सहायक सेना दल की केंद्रीय टुकड़ियां सफ़ेद गार्डों के इलाके में काफ़ी दूर तक घुस गईं, वलूयकी और कुप्यान्स्क नगरों पर कब्जा कर लिया, लेकिन लड़ाइयों में कमज़ोर पड़ गई बाजुओं की टुकडियां काफ़ी पीछे छूट गईं और यह खतरा पैदा हो गया कि पूरा सेना दल घिर जायेगा। श्कुरो के कुबान कज़्ज़ाकों और दोन कज़्ज़ाकों के रिसालों से बाजुओं के लिए जो खतरा पैदा हुआ था उसे दूर करने के प्रयास असफल रहे और सारे सेना दल को आरम्भिक स्थिति पर लौटना पड़ा, बाद में वहां से भी पीछे हटना पड़ा। त्सरीत्सिन की दिशा में हुई लड़ाइयों में शुरू-शुरू में लाल टुकड़ियों को काफ़ी सफलता मिली, लेकिन इस सेना दल की टुकड़ियां विशाल मोर्चे पर शीघ्र ही इधर-उधर बिखर गईं और सेना दल अपना कार्यभार नहीं निभा सका। त्सरीत्सिन के पास तक पहुंच गई सेना पर व्रांगेल के रिसाले के दल ने हमला किया। यह सेना ऐसे ज़ोरदार हमले का सामना न कर सकी और इसे नगर से उत्तर की ओर हटना पड़ा।

तथापि इस अभियान में क्रांति के ध्वज तले एकजुट हुए सैनिकों की लड़ने की असाधारण क्षमता के उदाहरण देखने को मिले।

प्रमुख दिशा में विशेष शूरवीरता दिखाई गई, जहां पैदल सैनिक लाल रिसाले और वोल्गा-कामा बेड़े के साथ मिलकर लड़े।

यहां बुद्योन्नी की कमान में कैवेलरी कोर में गठित डिविज़नों

ने आस-पास के देहातों से निरंतर सैनिक भरती करते हुए और घो
लेते हुए सफ़ेद कज़्ज़ाकों के विशाल रिसाले से हुई घमासान लड़ाइय
में विजय पाई। इस कोर ने कामेनोचेर्नोव्स्काया के पास जनरल सुतूलो
के दोन रिसाले को धूल चटाई और तीन दिन बाद सेरेब्रयाकोव
पास शत्रु पर ज़बरदस्त हमला किया। मोर्चे के कभी एक भाग प
और कभी दूसरे भाग पर इस कोर के तेज़ हमले मानो निकट भविष
की प्रथम अश्वारोही सेना की आश्चर्यजनक सफलताओं के पूर्वाभ्यास थे

त्सरीत्सिन की ओर बढ़ रही सेना के बायें बाज़ू को वोल्गा
दक्षिण की ओर बढ़ रहे सोवियत नदी बेड़े का समर्थन प्राप्त था
इस अभियान में रूसी नौसैनिकों ने अश्रुतपूर्व निडरता और आत्मबलिदा
की भावना दिखाई।

रागोज़िन की यह भावना बहुत शीघ्र ही जाती रही कि व
लड़ाई में पूरी तरह से भाग नहीं ले रहा है। उल्टे, अब उसके लि
यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया था कि यहां स्क्वैड्रन में ही उसकी आव
श्यकता है, जहां उसे लोगों के संकल्प को एक करके निश्चित का
में लगाने के लिए अधिकाधिक जतन करना पड़ रहा था। विभिन
कार्रवाइयां अधिक लंबी और जटिल होती जा रही थी: कभी नौसैनि
दस्ते तट पर उतारे जाते, कभी हमला कर रहे पैदल सैनिकों की आ
के लिए गोलाबारी की जाती, कभी शत्रु के चंडावल में टोह लेने
लिए सैनिक भेजे जाते। साथ ही पोतों को पहुंची क्षति की नदी प
ही मरम्मत की जा रही थी, अस्पताल में घायलों की संख्या बढ़ रह
थी, गोला-बारूद कम होता जा रहा था, अनेक सैनिक वीरगति क
प्राप्त हो रहे थे।

एक ऐसा क्षण आया था जब रागोज़िन सहसा यह समझ गय
था कि पोतों पर उसके दायित्व का सार क्या है, अभी तक वह इ
पूरी तरह समझे बिना ही आवश्यकता के अनुसार निभाता आया था
उसका दायित्व यह था कि उसके अधीन सैनिक हर काम को पूरे जोश
के साथ करें।

निकोलायेव्स्काया स्लोबोदा पर कब्ज़ा करते समय एक अजी
घटना हुई थी। नौसैनिकों का एक दस्ता शहर की सड़कों पर पहुं
गया था और 'अक्तूबर' गनबोट से भागते सफ़ेद गार्डों पर गोल

बरसाये जा रहे थे, तभी एक गलत व्यास वाले गोले से तोप फट गई।

तोपची टुकड़ी का कमांडर मारा गया। वह जवान नौसैनिक था, जो सदा तोप को "रेडी" रखता था और इसी लिए साथियों ने उसका नाम ही 'रेडी' रख छोड़ा था। उसके हंसमुख स्वभाव के लिए सब उसे चाहते थे। दो तोपचियों के चेहरे इस धमाके से झुलस गये और स्क्वैड्रन कमांडर अपने ब्रिज मे गिर पड़ा था, उसे हल्का सा सदमा पहुंचा था।

जहाज को घुमाकर दबूसे की तोप से गोले दागने का हुक्म दिया गया। लेकिन तोपची अपने साथी की मौत से डर गये थे और यह सोचते हुए कि शायद इस किस्त के सभी गोले खराब हों, तोप चलाने की हिम्मत नही जुटा पा रहे थे।

हफ्ते भर मे चल रही लड़ाइयों के दौरान रागोज़िन तोपचियों का काम देखता रहा था। दबूसे पर जाकर उसने नौसैनिकों को पीछे हटने को कहा, खुद तोप में गोला डाला और छोड़ा। तीन गोले छोड़कर उसने मुंह मोड़ा। तोपची गुनाहगार से उसके पीछे खड़े थे। उसने कहा:

"चलो, जवानो, अब चलाओ तोप। सब ठीक है। गोले खराब नहीं हैं।"

नौसैनिक तोप की ओर लपके, पलक झपकते ही उन्होंने निशाना साध लिया और इतने जतन से गोले बरसाने लगे कि तोप की नाल तप गई।

एक ओर को हट जाने पर ही रागोज़िन को यह अहसास हुआ कि उसकी कमीज बदन से चिपक गई है, और उसे लगा कि खुद उसने तोप नहीं चलाई थी, बल्कि उसमें जी रहे किसी दूसरे व्यक्ति ने, जिसका कहना उसे हर बात में बेझिझक मानना चाहिए।

बाद में इन सप्ताहों के अनुभवों पर गौर करते हुए रागोज़िन ने यह पाया था कि उन दिनों जिस तनाव की स्थिति में वह था, वह ऐसा तनाव नहीं था, जो थोड़ा विश्राम कर लेने से कम पड़ जाता है, बल्कि ऐसा तनाव था, जिसे उससे भी अधिक शक्तिशाली नये तनाव की ही मदद से सहा जा सकता है।

परन्तु साथ ही उन्हीं दिनों दो ऐसी बातें भी हुई थीं, जो देखने में तो मामूली लगती थीं, पर रागोज़िन के मन में घर कर गई थीं और उसे तनावपूर्ण वास्तविकता से दूर व्याकुलता भरी ऐसी दुनिया में

ले गई थीं, जो प्राय: अवास्तविक ही लगती थी। यह कुछ ऐसा था जैसे कि रागोज़िन अरसे से ऐसे घर में रहता रहा था जिसकी खिड़कियों पर पर्दे पड़े हुए थे और वह इस घर का इतना आदी हो गया था कि वह काफ़ी बड़ा लगता था, पर फिर सहसा एक पर्दा खुल गया और अप्रत्याशित ही उसने नीला विस्तार देखा, जल में प्रतिविम्बित होते वृक्ष देखे। वहां बाहर रोशनी घर के अंदर की रोशनी से बिल्कुल भिन्न थी। फिर पर्दा दुवारा से वंद हो गया, आंखें फिर से घर की आदी हो गईं, और घर पहले की ही भांति वड़ा लगने लगा। लेकिन उसके स्मृति-पटल पर एक दूसरी दूरी का, वृक्षों भरे विस्तार का, उस भिन्न रोशनी का चित्र अंकित हो गया था।

पहली लड़ाई के वाद की रात को ही 'जोखिमी' के कमिसार ने गनवोट पर स्थिति की रपट देते हुए कहा था कि नौसैनिक अपने साथ पोत पर एक लड़के को ले आये हैं, अव उसे कहीं उतार देना चाहिए क्योंकि वह इधर-उधर तांक-झांक करता रहता है, उसे कहीं कुछ हो गया, तो बुरा होगा।

"कहां से आया है पोत पर?" रागोज़िन ने भी मानो यों ही पूछा।

"सरातोव से ही है।"

"वड़ा है?"

"नहीं, छोटा सा ही है। ज़्यादा से ज़्यादा वारह साल का होगा।"

"नाम क्या है?"

"सब मुन्ना ही कहते हैं उसे।"

रागोज़िन ने बेंच के सिरे पर हाथ टिकाये, मानो वैठने लगा हो, पर वैठा नहीं, वल्कि तेज़ी से सीधा खड़ा हो गया और कमिसार से नज़रें चुराता हुआ रुखाई से वोला:

"अपने पोत के दल के नाम भी नहीं जानते हो?"

कमिसार हंस दिया:

"यह छोकरा भी क्या मेरे दल का है?"

"तुम्हारा पोत क्या सराय है?"

"ठीक है, मैं उसे उतार दूंगा," कमिसार ने यों कहा मानो यह मामला कोई खास मानी न रखता हो।

रागोजिन कठोर चेहरा बनाये कुछ देर चुप खड़ा रहा।

"लड़के को उतार दोगे ताकि वह तट पर भूखा मरे? नहीं भई, यह वहशियत है। ऐसे ही तो बच्चे आवारा हो जाते हैं... तुम उसे अस्पताल के पोत पर भेज दो। वहां कम से कम उसे खाना तो मिलेगा... और खतरा भी इतना नही होगा।"

लड़के के बारे मे विचार रागोज़िन की दूसरी चिंताओं पर अधिक देर तक तो हावी नही रहा, पर यह विचार एक झटके के समान था, मानो किसी ने उसके कंधे पकड़कर उसे एकदम घुमा दिया हो। आवारा लड़का 'जोखिमी' गनबोट पर ही आया था, जिसके साथ वान्या की खोज की याद जुड़ी हुई थी, और इस संयोग से उसके मन पर मानो नश्तर सा चला, मिल गये और फिर खो गये बेटे की चिंता फिर से ताजी हो गई। रागोज़िन अपने आपको यह विश्वास कतई नहीं दिलाना चाहता था कि उसे एक बार फिर से वान्या की कुछ खबर मिल गई है। लेकिन उसके हृदय के किसी कोमलतम कोने में एक दूसरे जीवन की भावना बस गई, वह जीवन इस सब से सर्वथा भिन्न था, जिसमें अब रागोजिन डूबा हुआ था, और इस कल्पित जीवन का अस्तित्व कष्टदायक था, किसी अनबुझ प्यास की भांति।

घटनाओं की प्रचण्डता मे मन की यह कसक दब गई। इन घटनाओं का सामना करने के लिए रागोज़िन को उस कवच का सहारा लेना पड़ा, जो मनुष्य का तंत्रिका तंत्र ऐसे हालात में आत्मरक्षा के लिए बनाता है, जब हर वक्त सामने खतरा मुंह बाए खड़ा होता है और उसकी ओर ध्यान न देने की आवश्यकता होती है। रागोज़िन को यह अहसास था कि उसके पास ऐसा कवच है और वह उसके लिए बोझिल नहीं था। तथापि ऐसे एक क्षण में जब वह अपनी इस अभेद्यता पर प्रसन्न था, उसे इस पर गर्व हो रहा था – तोप के साथ हुई घटना के बाद ही, जब वह गोले छोड़ रहा था और यह प्रतीक्षा कर रहा था कि कोई गोला खराब निकल आयेगा और तोप फट जायेगी – इस घटना के बाद ही बेटे की याद का तेज नश्तर एक बार फिर उसके कलेजे पर चला।

स्क्वेड्रन वीकोव मूरोग की ओर बढ़ रही थी, जो वोल्गा के निचले भाग मे तरबूजों के लिए मशहूर है। सुबह शांत सुहावनी थी,

या शायद निकोलायेव्स्काया स्लोबोदा और कमीशिन की लड़ाइयों के गर्जन के बाद इतनी शांत लग रही थी। यहां बायां तट अन्य स्थानों से अधिक ऊंचा था और तट के निश्चल वेद वृक्षों और हरी-हरी घास की जल में हरी परछाईं पड़ रही थी। वीकोव की ओर भेजे गये टोहियों की सूचनाओं की प्रतीक्षा में पोत तट पर फैले तरबूज़ों के खेतों के सामने रुके हुए थे।

तरबूज़ों से लदी नावें, जिनकी डांडें लड़के संभाले हुए थे, गनबोटों के बिल्कुल पास आ गईं। नदी में दूर तक लड़कों की पतली आवाज़ें और नौसैनिकों की हंसी गूंज रही थी। ज़ोरों में सौदेवाज़ी हो रही थी। लड़के नावों से तरबूज़ ऊपर फेंक रहे थे और गनबोटों से लड़कों को नमक की पुड़ियाएं, माचिसें, रोटियां और सिगरेटें फेंकी जा रही थीं। नौसैनिक तरबूज़ खा-खाकर बड़ी मस्ती से छिलके नदी में फेंक रहे थे और वे वहां लहरों पर नाच रहे थे।

रागोज़िन देर तक नदी के जल को देखता रहा, उसके मन में वैसी ही सुखद विस्मय की भावना उठ रही थी, जैसी किसी नगरवासी के मन में उठती है, जब वह अचानक सिर ऊपर उठाने पर आकाश के विस्तार में तैरते हल्के-फुल्के बादलों के टुकड़े देखता है। हां, यहां आकाश और जल की सुखद शाश्वत शांति व्याप्त थी, और लड़कों की आवाज़ें इस शांति में यौवन का हर्ष भर रही थीं, और हरे-भरे तटों में ऐसा मोहक आकर्षण था, जैसा मनुष्य के लिए केवल धरती में ही हो सकता है। वोल्गा में तैरते तरबूज़ों के छिलके, सुहावनी सुबह और उसकी शांति में खनकती आवाज़ें—इस सबने रागोज़िन के मन में फिर से बेटे के बारे में विचार जगा दिये। वह यह कल्पना करने लगा कि कैसे वह बेटे के साथ जियेगा, कि वह जीवन उसके अब तक के जीवन से बिल्कुल भिन्न होगा और इस वर्तमान से भी वह पूरी तरह अलग होगा। अभी तक जो कवच गर्जन से उसे बचाये हुए था, वह अनबूझ सहजता से शांति द्वारा भेदा जा रहा था, और हृदय में फिर से पीड़ा समा रही थी।

दूर कहीं छूटे तोप के गोले से चारों ओर का विस्तार जाग उठा, फिर दूसरा गोला छूटा। भयभीत लड़के उछलते हुए, तरबूज़ों के ढेरों को फांदते हुए डांडों की ओर लपके। नौसैनिकों ने लग्गों से भारी नावों

को गनवोटों से परे धकेला। डांडों की घिरनियां चरमराने लगीं, जल्दी-जल्दी और गहरी चलाई जा रही डांडों तले पानी की थपथप होने लगी। और तभी नदी की ऐन सतह पर छर्रोवाला गोला फटा।

रागोजिन ने देखा कि कैसे पल भर को लड़कों ने अपने सिर कंधों में दुबका लिये और फिर लड़के भारी डांड वेतहाशा चलाने लगे।

वह मन ही मन गालियां देता ब्रिज की ओर भागा। नहीं, वह अपने हृदय के लेशमात्र को भी सपनों में नहीं खोने दे सकता था! यह शांति, यह स्वप्निल प्रभात, ये स्नेहिल तट – सब कुछ मरीचिका था। इस धरती पर, जो बारूद के गर्जन के राज में थी, न हंसी गूंज सकती थी न बाल-स्वर। तोपची तोपों के पास खड़े हो गये, पहिये पानी पर जोर से छपछप करने लगे और सिग्नलर झंडियों से चिंताजनक संदेश भेजने लगा...

कुछ नौसैनिकों के लिए त्सरीत्सिन का अभियान समारोही मार्च था, और कुछ के लिए घमासान लड़ाइयों का अनवरत क्रम। जैसा कि हर युद्ध में होता है, सेना की कुछ टुकड़ियां निर्णायक वार करती हैं और शत्रु के वार झेलती हैं, और दूसरी टुकड़ियों के हिस्से में छोटी-मोटी मुठभेड़ें या सफलता के तैयार परिणाम आते हैं, ऐसे ही वोल्गा बेड़े के हजारों नौसैनिक एक भारी लड़ाई के बाद दूसरी अधिक भारी लड़ाई लड़ रहे थे, और हज़ारों दूसरे एक आसान लड़ाई से दूसरी आसान लड़ाई तक बढ़ रहे थे, या उन्हें बिल्कुल ही नहीं लड़ना पड़ रहा था, और वे खुश थे कि शत्रु उनसे टकराने से बचता हुआ भाग रहा है।

दुवोव्का के पास जिस नौसैनिक दस्ते और छापामारों ने देनीकिन की फ़ौजों पर हमला किया था उन्हें अपनी सफलता की भारी कीमत चुकानी पड़ी थी। उन्हें सफ़ेद गार्डों की तेज़ गोलाबारी का सामना करना पड़ा था। नौसैनिक दस्ता सीधे सफ़ेद गार्डों के तोपखाने के चंडावल में उतरा था, उसकी रक्षा कर रहे पैदल सिपाहियों को खदेड़कर उसने तोपखाने का सफ़ाया किया था और दुवोव्का की ओर मुड़कर बस्ती में घुस गया था। इस लड़ाई में भाग लेनेवालों के लिए यह शत्रु को चकमा देने की चतुराई भरी कार्रवाई थी, जिसके लिए असाधारण साहस की आवश्यकता थी और बहुतों को अपनी जान पर खेलना

पड़ा था। जिन पोतों के नौसैनिकों ने इस लड़ाई में हिस्सा नहीं लिया था, उनके लिए दुबोव्का पर कब्ज़ा नौसैनिक दस्तों की ऐसी ही सफलताओं में से एक सफलता थी।

परन्तु बेड़े के सभी नौसैनिकों में त्सरीत्सिन के लिए लड़ाई के बारे में कोई मतभेद नहीं था, जिसमें उन सबको हिस्सा लेना पड़ा था और जिसके साथ उनके अभियान का दुर्भाग्यपूर्ण अंत हुआ था।

त्सरीत्सिन के लिए तीन दिन तक चली लड़ाई नगर पर बोले गये धावे और जहाजों से की गई तूफ़ानी गोलाबारी के साथ आरम्भ हुई। देनीकिन की फ़ौजों की कुछ जगहों पर लगातार हार हुई थी और उन्हें पीछे हटना पड़ा था, इससे तब लगता था कि शत्रु की शक्ति क्षीण पड़ गई है। काफ़ी दूर से ही पोतों पर से नगर में जगह-जगह लगी आग दिखाई दे रही थी: सफ़ेद गार्ड नगर को छोड़ने की तैयारी में जो कुछ अपने साथ नहीं ले जा सकते थे, वह सब जला रहे थे। जंगी बेड़े और पैदल सेना की संयुक्त कार्रवाइयां इस अभियान में अभी तक सफल रही थीं, अब त्सरीत्सिन के पास ये संयुक्त कार्रवाइयां इतने बड़े पैमाने पर होनी थीं, जितनी पहले कभी वोल्गा पर नहीं हुई थीं। इस सब से लगता था कि जीत निश्चित है। लेकिन घटनाओं ने दूसरी ही करवट ली।

सफ़ेद गार्डों की तटवर्ती मोर्चेबन्दी पर नौसैनिकों के दस्ते ने पोतों की गोलाबारी की मदद से कब्ज़ा कर लिया। नौसैनिकों ने फ़्रांसीसी कारखाने पर हमला करके उस पर भी कब्ज़ा कर लिया।

दाईं ओर खंदकों के बाहरी घेरे के पास लाल सेना की एक सबसे अच्छी पैदल डिविज़न लड़ रही थी। व्रांगेल ने प्रतिरक्षा की तैयारी करते हुए प्राय: तीन कैवेलरी कोरों को एक दल में जमा कर लिया था। डिविज़न पर बाज़ू से रिसाले का जवाबी हमला हुआ। रिसाले की संख्या पैदलों से कहीं अधिक थी। उधर नौसैनिक अपनी सफलता के जोश में अलग-थलग ही फ़्रांसीसी कारखाने से नगर की ओर बढ़ते रहे थे और त्सरीत्सिन में घुस गये थे। डिविज़न को पीछे हटना पड़ा। तब सफ़ेद गार्डों ने अपने रिसाले को नौसैनिकों के विरुद्ध बढ़ाया और नगर से पीछे हटने का उनका रास्ता काट दिया। डटकर सामना करते हुए अधिकांश नौसैनिक खेत रहे।

अब यह स्पष्ट होता जा रहा था कि सफ़ेद गार्ड बेहतर स्थिति में है। उनके पास विशाल रेलवे जंक्शन था, रिसाला था, जो तेजी से अपनी चालें बदल सकता था और उनके टोही अच्छी तरह काम कर रहे थे। लेकिन लड़ाई ठंडी नहीं पड़ रही थी।

बेड़े से गोलाबारी करके सफ़ेद गार्डों को रोका गया। लाल सेना की टुकड़ियां बारम्बार हमले कर रही थीं। देनीकिन के सेनापतियों ने अपनी सारी शक्ति उनके खिलाफ़ लगा दी। उन्होंने टैंकों और हवाई जहाजों को भी लड़ाई में लगाया। देनीकिन की सहायता के लिए इंगलैंड और फ़्रांस से भेजे गये हथियारों को यहां इस्तेमाल करने का अच्छा मौका मिला: हवाई जहाज दिन में बारह-बारह बार हमले करते थे, सैकड़ों बम गिराते थे, खास तौर पर नदी पर।

चारों ओर युद्ध का गर्जन हो रहा था। बेड़ों से गोलों की बौछार या बहुत ही बड़ी तोपों से दागे गये गोलों की आवाजें ही गोलों, बमों की धमाधम में अलग से सुनाई देती थीं। पोत सफ़ेद गार्डों के बिल्कुल पास आ गये थे और उनपर ज़बरदस्त गोलाबारी हो रही थी।

'अक्तूबर' के डेक से रागोज़िन ने 'जोखिमी' पोत को खराब होते देखा: एक के बाद एक दो गोले उसके रसोईघर और डेक पर गिरे। मोटरबोटें घायलों को उतारने दौड़ीं। गोलों से क्षत-विक्षत डेक से धुआं उठने लगा। 'अक्तूबर' से सहायता का प्रस्ताव भेजा गया। 'जोखिमी' से जवाब आया: "शुक्रिया, खुद संभाल लेंगे। दुश्मन को मारते रहो।"

शीघ्र ही 'अक्तूबर' की गलही की तोप चुप हो गई। जहाज़ को घुमाने में समय नष्ट करने के बजाय दबूसे की तोप को यहां ले आने का फ़ैसला किया गया। लेकिन बोल्टों को ज़ंग लगा हुआ था और नट चाबी से हिल ही नहीं रहे थे। मैकेनिक उन्हें काटने को आये।

रागोजिन स्त्रारनोव को हथौड़ा चलाते देख रहा था – वह बस धारीदार बनियान पहने था। विशाल कंधे तले उसका पखौड़ा गोले की तरह घूम रहा था।

"देखो तो, कितना ताकतवर है शैतान!" विमुग्ध भाव से उसे देखते हुए रागोजिन ने सोचा। औरों के साथ वह भी इस काम में मग्न था, तट से हो रही गोलाबारी की ओर कोई ध्यान नहीं दे रहा था,

तोपों की घमाघम नहीं सुन रहा था, कान इसके आदी हो चुके थे: 'अक्तूबर' से लगभग तीन हज़ार गोले छोड़े जा चुके थे, और बहुत सी दूसरी गनबोटें भी उससे पीछे नहीं थीं।

आखिर जब तोप को अगले डेक पर ले जाकर लगा दिया गया और उससे गोले छोड़े जाने लगे, तो रागोज़िन ने स्त्राश्नोव की पीठ थपथपाई। उसने बनियान की ऊपर चढ़ाई बांह से माथा पोंछा, चारों ओर उठते धुएं पर नज़र दौड़ाई और मानो तारीफ़ करते हुए कुछ कहा।

"क्या कहा?" रागोज़िन समझा नहीं।

स्त्राश्नोव ने फिर वही शब्द दोहराया। रागोज़िन उसकी उत्तरी बोली का यह शब्द नहीं जानता था, लेकिन वह समझ रहा था कि किसी भी भाषा में ऐसा शब्द नहीं है, जिससे लगातार तीन दिनों से हो रहे इन धमाकों और बंदूकों की ठां-ठां के इस उन्माद को व्यक्त किया जा सके। सो उसने भी प्रशंसा के उसी भाव से सिर हिला दिया।

तीसरे दिन दुपहर ढले स्क्वैड्रन को यह आदेश मिला कि तट पर लड़ रहे नौसैनिकों की मदद के लिए हर पोत से जुझारू टुकड़ियां भेजी जायें। 'अक्तूबर' पर आवश्यकता से अधिक लोगों ने तट पर जाने की इच्छा व्यक्त की। रागोज़िन उन लोगों को एक ओर करता जा रहा था, जिनकी, उसके विचार में, पोत पर ज़्यादा ज़रूरत थी। स्त्राश्नोव भी जाना चाहता था, पर रागोज़िन ने उसे पोत पर रहने का हुक्म दिया। लेकिन जब मोटरबोटों से वालंटियरों को तट पर उतारा गया और नौसैनिक कतार में लगने लगे, तो रागोज़िन को उनमें एक भीमकाय जवान दिखा, जो सबसे लम्बे जवान से भी ऊंचा था। नाविकों की जैकट और चमड़े की टोपी पहने स्त्राश्नोव एक ओर को देख रहा था और उसके चेहरे पर ऐसा भाव था कि कोई उसे कुछ नहीं कह सकता। रागोज़िन ने उसे न देखने का बहाना किया।

इन नौसैनिकों को प्राय: पचास-पचास की दो पलटनों में बांटा गया और तुरन्त ही मोर्चे की लाइन पर भेज दिया गया। रागोज़िन अपनी पलटन के साथ उस जगह पहुंचा, जो फ़्रांसीसी कारखाने पर कब्ज़ा करनेवाले नौसैनिकों में से बचे-खुचों के हाथ में थी। इस उजाड़ मैदान पर कूड़ा-करकट बिखरा हुआ था, जल्दी-जल्दी खोदी गई खंदकें

बनी हुई थी। यह मैदान स्तेपी से थोड़ा ऊंचा था। स्तेपी में नौसैनिक टेढ़ी-मेढ़ी लाइन में लेटे हुए थे।

पोतों से शत्रु पर गोले छोडे जा रहे थे और उनसे उठती धूल की वजह से सफ़ेद गार्डों की चौकियां दिखाई नहीं दे रही थीं। यहां इतना शोर नहीं था, जितना पोत पर, लेकिन रागोजिन को लग रहा था कि यहां पर भी उसे और इस शांत ज़मीन को भी वैसे ही धचके लग रहे थे, जैसे पोत पर।

वह एक गड्ढे में लेटा हुआ था, जो आगे से मिट्टी के ढेर से सुरक्षित था, पर अगल-बगल से खुला था। वह दाईं ओर ऐसे ही एक ढेर पर नज़र लगाये हुए था, जिसपर से टुकड़ी का कमांडर धावा बोलने का संकेत देनेवाला था।

सूरज बादलों के पीछे छिप रहा था और डूबते सूरज की किरणों से बादल लाल सुर्ख़ हो रहे थे, जो अगले दिन तेज़ हवा चलने की निशानी है। धरती पर हर चीज़ में सूर्यास्त प्रतिबिम्बित हो रहा था, खंदकों की मिट्टी में भी लाली आ गई थी। रागोजिन ने ज़मीन पर बिखरे पडे दर्जन भर अंग्रेज़ी फ़ील्ड बैग गिने, जो सफ़ेद गार्ड भागते हुए फेंक गये थे।

जैसे ही तोपों ने गोले बरसाने बंद किये, उसी वक्त रागोज़िन ने एक ऊंचे कद के आदमी को मिट्टी के ढेर पर चढ़ते और फिर एक झटके से सीधे खड़े होकर हाथ ऊपर उठाते देखा। रागोज़िन भी गड्ढे में से निकलकर ऐसे ढेर पर चढ़ गया, ऐसे ही हाथ ऊपर उठाकर ढेर से कूदा और आगे बढ़ चला।

बाकी लोग भी उठने लगे, और रागोजिन ने देखा कि उनकी लाइन इतनी बिखरी नहीं है, जितनी लेटे हुए उसे लगी थी। वह देख रहा था कि सैनिक मशीनगनें साथ खींच रहे हैं कि नहीं (पोत से उतरने से पहले 'मक्सीम' मशीनगनों को पहियों पर लगा दिया गया था), और उसने पाया कि मशीनगनें खींचते सैनिक भी औरों से पीछे नहीं रह रहे हैं। वह यह देख रहा था कि उसकी पलटन दाईं ओर की पलटन से पीछे तो नहीं छूट रही, और निश्चिंत हुआ कि नौसैनिक एक लाइन में दौड़ रहे हैं। उसने देखा कि वह पिस्तौल का घोड़ा चढ़ाना तो नहीं भूला और आश्वस्त हो गया, घोड़ा चढ़ा हुआ

था। उसने आंखें गड़ाकर देखा कि कोई बंदूक पर संगीन चढ़ाना तो नहीं भूल गया और उसे लगा कि सैनिकों के दौड़ने से उछलती संगीनों की कतार अभेद्य है।

ये सब सवाल अपने आप से पूछते हुए और इनका जवाब देते हुए वह मैदान में आगे देखता जा रहा था, जो डूबते सूरज के मंद-मंद प्रकाश में शांत फैला हुआ था।

शीघ्र ही उसे नौसैनिकों की आगे बढ़ रही लाइन के बगल से थोड़ा एक ओर को धूल का लाल-पीला बादल दिखा। फिर उसे दाईं ओर से लाइन में दिया जा रहा आदेश सुनाई दिया। पहले तो आदेश के शब्द उसकी समझ में नहीं आये, फिर उसके कानों में चीखें पड़ीं: "लेटो! रिसाले पर फ़ायर!" वह भी बाईं ओर को चिल्लाया:

"लेटो! रिसाले पर फ़ायर!.."

धूल से थोड़ा आगे उसे लम्बी लाइन में फैले छोटे से घोड़े दिखे, जो जल्दी-जल्दी कदम बढ़ा रहे थे। घुड़सवार तलवारें भांज रहे थे, जो उनके सिरों के ऊपर सुनहरे धागों सी कभी चमक उठतीं, कभी बुझ जातीं। कज़्ज़ाक लावे की भांति स्तेपी पर बढ़ रहे थे, हर पल निकट ही निकट आते जा रहे थे।

एकसाथ बंदूकें चलीं और फिर मशीनगनें एक दूसरी का मुकाबला करती तड़ातड़ गोलियां बरसाने लगीं।

कज़्ज़ाकों की कतारें टूटने लगीं। ठोस दीवार जैसा उनका व्यूह अब किसी जगह घोड़ों के झुंडों में और कहीं विरली लाइनों में बदल गया। पर अभी भी लावा उमड़ता आ रहा था और घोड़ों की टापें ज़मीन से रागोज़िन के शरीर में प्रतिध्वनित हो रही थीं, मानो उसका हृदय छाती में नहीं, ज़मीन में धड़क रहा हो।

गोलियों की नई बौछार से रिसाला अलग-अलग झुंडों में और अधिक सिमट गया, कुछ घुड़सवार तितर-वितर हो गये। कहीं घोड़े आगे निकल गये, कहीं पीछे रह गये।

रागोज़िन अब आगे के घोड़ों के रंग देख पा रहा था। घोड़े अपने थूथने ऊपर उठा रहे थे और उनके पीछे घुड़सवार झुके हुए थे। सहसा मशीनगनों की तड़ातड़ तेज़ चीख में बदल गई, और यह दिखाई देने लगा कि कैसे यहां-वहां कज़्ज़ाक काठियों से गिर रहे हैं और उनके

बौखलाये हुए घोड़े घुड़सवारों के बिना ही दौड़े जाते हैं या खुद भी ढह जाते हैं।

फिर रागोज़िन को बिल्कुल पास ही घोड़ों की लौह टाप सुनाई दी, पर बिल्कुल उधर से नहीं, जिधर से उसे इसका इंतजार था। अत्यंत भयभीत होकर उसने मुड़कर देखा और अपना रिवाल्वर बाईं ओर घुमाया।

कुछ टूटे-फूटे छप्परों के पीछे से मैदान पार करते हुए उन्मत्त घुड़सवार उसकी पलटन के सामने पहुंच गये। भारी-भरकम घोड़ों पर सवार लगभग सौ लोग थे, और उनके आगे-आगे खुली जैकट और गोल टोपी पहने नौसैनिक तलवार भांजता आ रहा था। सब्ज़ा घोड़ा सिर झटक रहा था। नौसैनिक की टोपी के रिबन सिर के पीछे लहरा रहे थे और लंबी जैकट के पल्ले घुटनों पर फड़फड़ा रहे थे। वह रकाबों पर जोर डालकर थोड़ा उठा। उसका मुंह खुला हुआ था। उसके पीछे आते सौ घुड़सवार "हुर्रा" चिल्ला रहे थे।

रागोज़िन ने अभी तक नौसैनिक घुड़सवारों के बारे में सुना ही था, जो पैदल टुकड़ियों के साथ मिलकर लड़ते थे, पर वह पहली बार उन्हें देख रहा था। वे अपने भारी घोड़ों पर सच्चे घुड़सवारों की तरह दौड़े जा रहे थे, पर उन्हें देखकर यह लगता था, मानो वे दुश्मन से गुत्थम-गुत्था होने जा रहे हों। हवा से और उनके उछलते सुडौल शरीरों से सब कुछ लहरा रहा था।

इस टुकड़ी का एक सिरे का घुड़सवार रागोज़िन के बिल्कुल पास से गुज़रा। रागोज़िन ने नौसैनिक का चेहरा देखा, जो जड़ हंसी से विकृत था, और उसका विचित्र आदेश सुना :

"बायें चक्का घुमाओ, भाइयो! मेरे पीछे!" चेहरे पर जड़ ठहाके का भाव लिए नौसैनिक चिल्ला रहा था। "चलो!.. मारो सालों को..."

"ओ-ओ-ओ!" आगे बढ़ गये घुड़सवारों के पीछे आवाज़ आ रही थी, "ओ-ओ-ओ!"

गोलियां चलनी बंद हो गईं। गोलियों से तितर-बितर हुआ रिसाला जल्दी-जल्दी पीछे मुड़ने लगा और चाल तेज़ करता दौड़ने लगा। घुड़सवार नौसैनिक कज़्ज़ाकों के सिर पर जा चढ़े थे और अब हवा में तलवारें चमक रही थीं।

इसी क्षण पलटनें फिर हमला बोलने को उठीं।

रागोज़िन को सारा समय यह महसूस हो रहा था कि सफ़ेद गार्डों की हार में कुछ देर ही हो रही है, पर हार निश्चित है, और अब बस आखिरी जतन करने की ज़रूरत है, ताकि उनका प्रतिरोध तोड़ दिया जाये और शहर पर कब्ज़ा कर लिया जाये।

घुड़सवार नौसैनिकों को देखकर उसकी इस भावना की पुष्टि हुई। मुड़कर अपनी पलटन को देखते हुए रागोज़िन ने यह पाया कि उसके सैनिक भी घुड़सवारों की ही भांति उन्मत्त हैं, वैसे ही आंधी की तरह दौड़ रहे हैं, और उनकी ही भांति एक अखण्ड समूह हैं।

नौसैनिक रागोज़िन के पीछे दौड़ रहे थे – किसी की टोपी के रिबन हवा में बल खा रहे थे, किसी की टोपी खो गई थी और वह नंगे सिर था, किसी की कमीज़ का कालर फड़फड़ा रहा था, कोई धारीदार बनियान पहने था – गोताखोरों की तरह तर, कोई चमड़े की खुली जैकट पहने था, किसी की छाती पर कारतूसों की पेटियों से गुणा का निशान बना हुआ था।

"ऐसे लोग अगर लड़ने जाते हैं, तो जीतकर ही आते हैं," रागोज़िन ने सोचा, "और जीत बस यहीं आगे है!"

आखिर उन्हें मैदान के पार कुछ खंदकें दिखीं, यह सफ़ेद गार्डों की चौकियां थीं। रागोज़िन को लाइन में उठती गरज सुनाई दी: नौसैनिक "हुर्रा" चिल्ला रहे थे।

तभी दाईं ओर फिर उसे पास ही नौसैनिक घुड़सवार दिखे, जो अब मैदान में अलग-अलग दौड़े आ रहे थे, और उनके पीछे थी कज़्ज़ाकों के लावे की नई लहर, जो वहीं से उठ रही थी, जहां अभी-अभी अस्त-व्यस्त रिसाला जान बचाने को भागा था।

और तब खंदकों से लाल सैनिकों पर गोलियां बरसाई जाने लगीं।

रागोज़िन ठोकर खाकर औंधे मुंह गिर पड़ा। वह उठना चाहता था, पर किसी ने मानो अपने भारी बूट से उसे ज़मीन पर दबा रखा था।

"छोड़ भी," वह चिल्लाया, पर उसके मुंह पर मिट्टी चिपक गई और खुद उसे भी घुटी-घुटी आवाज़ ही सुनाई दी।

सिर घुमाकर वह गुस्से से मिट्टी थूकने लगा।

उससे कोई बीस कदम दूर घोड़े पर वही नौसैनिक दौड़ा जा रहा था, जो घुड़सवारों को हमले में ले गया था।

गगोजिन ने उसे पहचाना ही था कि नौसैनिक ने पूरे ज़ोर से लगाम खींची, पीठ के बल घोड़े पर गिरा, पर तभी लगाम हाथ से छोड़ दी, और घोड़े ने उसे ज़मीन पर झटक दिया। घुड़सवार का एक पांव क्षण भर को रकाब में फंसा रहा, फिर निकल गया।

घोड़ा सरकस के घोड़े की भांति चिरागपा हो गया और अगली टांगे हवा में फेंकने लगा। उसके पुट्ठे डूबते सूरज की किरणों में लाल हो रहे थे और लगता था मानो वह सीधे आसमान में चढ़ता जा रहा हो। गगोज़िन को सहसा वह इतना छोटा लगा कि एक कागज़ पर समा सकता था। फिर वह दुबारा से बड़ा हो गया और स्तेपी में भाग गया।

गगोज़िन के कानों में पड़ती चीख-पुकार में सबसे स्पष्ट थी:

"कमिसार!.. कमिसार!.."

उसने सिर और घुमाया – यह देखने के लिए कि किसने उसे अपने बूट से यों ज़मीन पर दबा रखा है।

अपनी आंखों के सामने ही उसे एक परिचित सा चेहरा दिखा, जिसे वह पहचान नहीं पा रहा था – गालों की हड्डियां उभरी हुई, नथुने फूले हुए और भारी-भरकम ठोड़ी। यह आदमी खीसें निपोरता हुआ उसके कान में चिल्ला रहा था:

"कहां लगी? कहां?"

गगोज़िन समझा नहीं कि इस आदमी को क्या चाहिए, पर तभी उसे याद आया कि यह स्त्राग्नोव है, और न जाने क्यों वह खुश हो गया। वह भी जवाब में चिल्लाना चाहता था, पर चिल्ला नहीं पाया, बस मुश्किल से घुरघुराया:

"मैं अपने आप," और उठने लगा।

कंधे और हंसली में ऐसी पीड़ा हुई, जैसी उसने पहले कभी भी अनुभव न की थी, और उसे पड़े रहना पड़ा।

"क्या अपने आप? हुं, अपने आप..." स्त्राग्नोव गुस्से में बड़-बड़ाया और गगोजिन को पलटते हुए उसकी पीठ और घुटनों तले हाथ देने लगा।

फिर स्त्राश्नोव ने उसे बच्चे की तरह उठा लिया और दौड़ने लगा। रागोज़िन को रह-रहकर उठती तीव्र पीड़ा के अलावा और कुछ महसूस नहीं हो रहा था और इस पीड़ा से वह बेसुध हो रहा था। स्त्राश्नोव अपने कदम तेज़ करता जा रहा था, घायल के बोझ से झुका जा रहा था और डर रहा था कि मैदान पार करने से पहले ही कहीं कज़्ज़ाक न आ धमकें। घोड़ों की टापें अब पहली बार से अधिक ज़ोर से सुनाई दे रही थीं, एक बार फिर से गोलियों की बौछार हुई...

नदी के किनारे पर ही स्त्राश्नोव को स्ट्रैचर लिये कुछ लोग मिले। रागोज़िन को स्ट्रैचर पर लिटाकर मोटरबोट से उसने उसे 'अक्तूबर' पर पहुंचाया।

लेकिन पोत के निचले डेक पर गोला गिरा था और वहां मरम्मत का काम चल रहा था। मिस्त्रियों का बजरा पोत से आ लगा था। इसे बजरे पर एक केबिन खाली थी, रागोज़िन को वहीं ले जाकर लिटाया गया। पोत के डाक्टर ने घायल को देखकर बताया कि बाईं हंसली चूरचूर हो गई है, एक तंत्रिका केंद्र पर चोट पहुंची है और आपरेशन की जरूरत है। इसके बाद स्क्वैड्रन कमांडर रागोज़िन के पास आया।

"सो, भाई मेरे, अब आपको अस्पताल भेजना होगा," कमांडर ने सहानुभूति दिखाते हुए पर साथ ही सख्ती से कहा, जैसे कि मरीज़ों से बात की जाती है।

यहां लेटे हुए रागोज़िन को दर्द इतना परेशान नहीं कर रहा था। हौले से उसने जवाब दिया:

"कामरेड कमांडर, मैं आपके मातहत नहीं हूं।"

"भाई मेरे, हम पांच साल से लगातार लड़ रहे हैं। और आप मातहती की बात करते हैं!"

"खैर... मैं यहीं रहूंगा।"

"नहीं, भाई मेरे। भेजना मुमकिन है तो ऐसा करना मेरा फ़र्ज़ है। वहां डाक्टर आपको टटोल-वटोल लेंगे कि क्या हुआ है।"

"कैसे है... तट पर?"

"तट पर क्यों? अस्पताल वाले जहाज़ पर डाक्टर देखेंगे।"

"मेरा मतलब, तट पर लड़ाई कैसे..."

"लड़ाई चल रही है। इसकी फ़िक्र हम करेंगे। अभी जब तक हमने गोलाबारी शुरू नहीं की, आपको अस्पताल भेजे देते हैं।"

"कैसी गोलाबारी?"

"आड़ देने के लिए। पीछे हट रही फ़ौजों को आड़ देंगे।"

गगोजिन टकटकी लगाये कमांडर की ओर देखे जा रहा था। उसकी आंखें चमक रही थीं। प्रत्यक्षतः उसे बुखार चढ़ रहा था। उसने सिर उठाया, पर तुरन्त ही गिरा दिया। भौंहें सिकोड़कर उसने पूछा :

"पीछे हटेंगे?.. स्त्राख्नोव! क्या है यह... पीछे हटेंगे?"

स्त्राख्नोव केबिन के दरवाजे में से झांक रहा था। अब वह अंदर आ गया।

"कोई बात नहीं, लेटे रहो," उसने फुसफुसाकर कहा, "सब ठीक है।"

गगोजिन कराहते हुए चीखा :

"क्या मुझे लोरियां सुना रहा है?! दाई!.."

फिर वह शान्त हो गया और खोखली सी आवाज़ में बोला :

"इतना तो सह सकता हूं... जब पीछे हट रहे हैं, तो फिर ठीक क्या है?"

"क्यों?" स्त्राख्नोव ने बुरा मानते हुए कहा। "सरातोव से उनको पीछे हटा दिया? वोल्गा पार नहीं करने दी? वे तो एल्तोन झील के पास उराल के सफ़ेद गार्डों से हाथ मिलाने चले थे। पर हमने उनकी उंगलियां काट दीं..."

"सुनाये जाओ लोरियां!" गगोज़िन ने उसांस भरी और आंखें मूंद लीं।

कमांडर ने बाहर निकलते हुए स्त्राख्नोव से फुसफुसाकर कहा :

"अर्दलियों को बुला लाओ। दायें डेक से नाव में उतारना होगा।"

डाक्टर यह देखता रहा कि कैसे घायल को ले जाया जा रहा है, फिर घिरनी के रस्से से लटकते जालीदार पालने में स्ट्रैचर रखा गया। नौसैनिक डेक पर जमा हो गये थे। भाप छोड़ी गई और रस्सा धीरे-धीरे तन गया। स्त्राख्नोव नजर रखे था कि कहीं स्ट्रैचर पालने में दब न जाये। गगोजिन को अपने ऊपर झुका स्त्राख्नोव दिखा तो

उसने दायां हाथ थोड़ा सा ऊपर उठाया। स्त्राश्नोव ने हौले से उसका हाथ दबाया।

"देखा," वह वोला।

"किया क्या जाये" रागोज़िन ने जवाव दिया।

"खैर कोई वात नहीं," स्त्राश्नोव ने ढाढ़स दिया।

रस्सा और भी खिंच गया, पालना ऊपर उठ गया और स्त्राश्नोव उसे रेलिंग की ओर बढ़ाने लगा।

"हौले-हौले ऊपर लो," उसने धीरे से कहा और नौसैनिकों ने क्वार्टर डेक तक उसके शब्द पहुंचा दिये।

जब वह पालने को रेलिंग के पार धकेलने ही वाला था, तभी उसने झुटपुटे में देखा कि रागोज़िन और कुछ कहना चाहता है। उसने पल भर को रस्सा पकड़ लिया।

"तुम यहां मदद करते रहना," रागोज़िन ने जल्दी-जल्दी क़हा, "जहाज़ की मरम्मत करने में..."

"वोल्गा वाले को मछली पकड़ना सिखाओगे," स्त्राश्नोव ने हंसकर कहा।

"अफ़सोस कि तुम वोल्गा के नहीं हो!.."

"ऊपर लो!" स्त्राश्नोव ने ज़ोर से हुक्म दिया।

उसने पालने को रेलिंग से परे धकेल दिया, फिर पालना नीचे जाने लगा। जहाज़ की वगल की परछाईं में रागोज़िन ऊपर से बिल्कुल काला लग रहा था। स्त्राश्नोव ने चिल्लाकर कहा:

"हम उत्तर वाले भी मछली पकड़ने में वोल्गा वालों से कम नहीं हैं। फिर मिलेंगे, प्योत्र पेत्रोविच! जल्दी-जल्दी ठीक होना!"

"जल्दी-जल्दी ठीक हो जाओ, कामरेड कमिसार," रेलिंग पर झुककर नीचे अंधेरे में देखते हुए नौसैनिकों ने कहा।

कोई दो मिनट वाद मोटरबोट चली। चक्कर काटती हुई वह 'अक्तूबर' पोत से परे हट गई और नदी के वीचोंवीच चल दी। उसकी पीली-पीली वत्ती अभी पानी पर दिखाई दे ही रही थी, जव सफ़ेद गार्डों को उत्तर की ओर वढ़ने से रोकने के लिए पोतों की तोपों से गोले वरसाये जाने लगे।

३१

लीजा और अनातोली मिखाइलोविच का विवाह मध्य सितम्बर में हुआ।

सन्ध्या समय वर्षा हो रही थी, जब दो घोड़ागाड़ियां कज़ान गिरजे के पास आकर रुकीं और लीज़ा अपने हिम धवल परिधान का दामन समेटती फाटक में घुसी (यह पोशाक लीज़ा ने अपने पहले विवाह की पोशाक से ही बनाई थी)। पल भर को जंगले के पीछे से उसे वोल्गा का फ़ौलादी पाट दिखा। हर साल पतझड़ में वह वोल्गा को इसी रूप में देखती आई थी, कुछ आश्चर्य के साथ उसके मन में यह विचार आया कि पहले वाली लीज़ा का जीवन भी इसी तरह अनवरत चलता जा रहा है। इसी आश्चर्य की भावना के साथ कि वह वही पहले वाली लीज़ा है, उसने गिरजे की दहलीज़ लांघी।

गिरजे के बीचोंबीच पाठ मंच के पीछे कुछ पतली-पतली मोमबत्तियां जल रही थीं, कोनों में अंधेरा ही था। लगता था कि इस अंधेरे में ही वह रहस्यमय अनुष्ठान होगा, जिसके लिए लीज़ा यहां आई है, जबकि प्रकाश में बिल्कुल साधारण सा ही कुछ होगा।

वीत्या विवाह पहली बार देख रहा था। मां का चेहरा कांतिमय था और अनातोली मिखाइलोविच का रोबीला (शायद यह दिखाने के लिए कि वह अब वीत्या का पिता है, मात्र अनातोली मिखाइलोविच नहीं) – इससे वीत्या को इस बात में कोई संदेह न रहा था कि यह रस्म अवश्य ही महत्वपूर्ण है। पर जब अनातोली मिखाइलोविच और मां के सिरों के ऊपर मुकुट पकड़े गये और वे दोनों हाथ में हाथ डालकर पाठ मंच की परिक्रमा करने लगे, तो वीत्या को इसमें बड़ा मज़ा आया। नगों से जड़े सुनहरी मुकुट तले अनातोली मिखाइलोविच बिल्कुल ज़ार निकोलाई* जैसा लगता था। वीत्या ही-ही करके हौले से हंसा। किसी ने उसे टोका। उसने सिर घुमाया और थोड़ी दूर अपने जैसे ही दो लड़कों को खड़े देखा, वे गली से अंदर चले आये थे और अनातोली

---

* निकोलाई द्वितीय – रूस का अंतिम सम्राट (शासनकाल १८९४–१९१७)। – सं०

मिख़ाइलोविच को ताकते हुए खीसें निपोर रहे थे। वीत्या पीछे हटने लगा, बड़ों के बीच से रास्ता बनाता हुआ निकल गया और फिर मुंह पर हाथ रखकर हंसने लगा।

जब वह जी भरकर हंस चुका, तो उसने देखा कि वह ठंडे स्तम्भ से सटा खड़ा है। वह परे हट गया।

झुटपुटे में स्तम्भ पर से एक वृद्ध उसकी ओर देख रहा था, उसका विवस्त्र शरीर टखनों तक लंबी सफ़ेद दाढ़ी से ढका हुआ था। उसकी नज़र दहकती सी और भूखी थी। वीत्या और परे हट गया। उसे लग रहा था कि उसने बुरा काम किया है। सहसा मुकुट तले खड़े अनातोली मिख़ाइलोविच और इस भूखी नज़र वाले विवस्त्र वृद्ध के बीच विरोधाभास उसे परेशान करने लगा। जब तक विवाह की रस्म चलती रही, वह इस परेशानी में ही खड़ा रहा – मुड़-मुड़कर संत की ओर देखता हुआ।

कुल जमा विवाह वीत्या को अच्छा लगा। गिरजे जाते हुए भी और वहां से आते हुए भी उसने घोड़ागाड़ी की सवारी की। गिरजे में भी और घर पर भी रौनक थी। मेहमानों में ऐसे लोग भी थे जिन्हें वीत्या नहीं जानता था, अनातोली मिख़ाइलोविच ने उन्हें निमंत्रित किया था। दावत खाते हुए जल्दी ही सब मस्ती में आ गये और क्रिया पदों के बिना, टूटे-टूटे वाक्यों में बातें करने लगे :

"लाओ, अभी हम इसे ... इसके साथ ..."

"वाह!.. कमाल है ..."

"क्या है इसमें?"

"अच्छा, पिपरमिंट! तब तो वाक़ई!"

"नींबू की भी ... क्या ज़ोर देती है!"

"नहीं, पिपरमिंट के मुकाबले में कुछ नहीं!.."

सहसा मानो हवा के तेज़ झोंके से पत्ते खड़खड़ा उठे – सब एक साथ बोलने लगे :

"सुनिये! – नहीं, अभी मैं। – ठहरिये! – एक मिनट! – रुको भी न, ऐसे तो हम कभी भी ... – और मैं क्या?.. मैं भी तो यही ... अरे, नहीं ... बोलने तो दो ... ऐसे नहीं चलेगा!.. हां, यही तो बात है!"

फिर झोंका निकल गया, पत्ते शांत हो गये। मेहमान पलकें झपकाने

लगे, हूं-हां करने लगे, और उनके भारी सिर झुकने लगे। जो वाक् कला में निपुण थे, वे अपने गूढ़ विचार व्यक्त करने लगे।

"ज़रा इस बात पर ध्यान दीजिये," बहस का जवाब देते हुए ओज़्नोबिशिन कह रहा था। वह अपना महिलाओं जैसा हाथ थोड़ा नचा रहा था। "एक तरह के कृत्यों पर प्रतिबंध लगाकर हम सदा इसके विपरीत कृत्यों को प्रोत्साहन देते हैं। शत्रुता रखना मना है, तो इसका अर्थ है प्रेम करना चाहिए। क्रूरता की निंदा करते हुए हम दयालुता का प्रोत्साहन देते हैं। अब कल्पना कीजिये कि बात इससे उलट हो गई: हम दयालुता पर अंकुश लगाने लगे। तो क्या होगा?"

"बर्बरता!" एक मेहमान झट से बोल पड़ा, अपना भारी सिर उसने ऊपर उठाया और तुरन्त ही छाती पर गिरा लिया।

"दयालुता पर अंकुश कौन लगा रहा है?" विद्यार्थी ने पूछा (उसे भी बुला लिया गया था, क्योंकि वह लीज़ा को कैलशियम के टीके लगाता था)। "जन चिकित्सा सेवा को लीजिये, जिसे..."

"यह भी क्या दयालुता है," लीजा ने मजाक करते हुए उसे टोका, "इतनी बड़ी सूई घोंपते हैं!"

वह अपने विवाह के परिधान में प्यारी लग रही थी और यह जानती थी। उसे यह थोड़ा बुरा लग रहा था कि मेहमानों को सरूर चढ़ गया है और वे इधर-उधर की बातें करने लगे हैं, जिनसे ओज़्नोबिशिन का ध्यान उसकी ओर से हटता है; मेहमान यह भूल गये लगते हैं कि यह विवाह की दावत है और यहां सब कुछ सुखद होना चाहिए। उसे लग रहा था कि उसका बेटा ही दूसरों से अधिक उसकी ओर ध्यान दे रहा है और खुश हो रहा है। उसने बेटे के गिलास में चुकंदर का रस डाला।

"यह तुम्हें मेरे लिए, अपने लिए और अनातोली मिख़ाइलोविच के लिए पीना है।"

वह खुशी-खुशी देख रही थी कि कैसे वीत्या जल्दी-जल्दी घूंट भर रहा है, उसका चेहरा लाल होता जा रहा है और वह हर्ष-विभोर मां की ओर देख रहा है।

नहीं, जो भी हो था यह विवाह का उत्सव ही। बेशक बग्घी के बजाय घोड़ागाड़ी पर गिरजे गये थे, शैम्पेन की जगह चुकंदर का

रस पी रहे थे, गीत-संगीत नहीं था और नये कपड़े भी नहीं सिले थे। कमरे की हर वस्तु पर भव्यता की तो नहीं, पर हां उल्लास की छाप थी, कम से कम लीज़ा की नज़रों में ऐसा ही था।

शीघ्र ही मेहमान चले गये, उस समय से पहले-पहले, जिसके बाद सड़कों पर निकलना मना था। घर में जल्दी-जल्दी हो रही सफ़ाई की खनक गूंजने लगी।

सब ठीक-ठाक करके ओज़्नोविशिन लीज़ा के बगल में सोफ़े पर बैठ गया। उसने लीज़ा का हाथ अपने दोनों हाथों में लिया। अपनी वफ़ाभरी नज़रों से, जिनमें चालाकी की हल्की सी झलक थी, वह कह रहा था कि अब उन दोनों की मनोकामना पूरी हो गई है, कि वे अब एक परिवार हैं, उनका अपना घर है, घोंसला है, मांद है, जिसमें वे संसार के तूफ़ानों के थपेड़ों से बच सकते हैं।

"कितना धनवान हूं मैं! सब कुछ जो तुम्हारा है वह अब मेरा है। मैं तुम्हारा कृतज्ञ हूं," थोड़ी देर चुप बैठे रहने के बाद वह बोला।

"यह तो कब से तुम्हारा है," लीज़ा ने उत्तर दिया।

"अब यह सचमुच मेरा है, पूरी तरह। पुराने ज़माने में जैसे व्यापारी घरानों में कहा जाता था, पता है? बोये हुए और पक रहे और खलियान में रखे हुए अनाज समेत ..."

दरवाज़े के बाहर किसी के खांसने की आवाज़ आई। ओज़्नोविशिन उठा।

उनका बूढ़ा पड़ोसी मत्वेई गलियारे में पांव बदलता खड़ा था, दस्तक देने में झिझक रहा था। पता चला कि कोई आदमी आया है, येलिज़ावेता मेरकूर्येव्ना से मिलना चाहता है, मत्वेई ने उससे कहा भी है कि ठीक वक्त नहीं – अभी-अभी शादी हुई है, पर वह अपनी बात पर अड़ा हुआ है। शायद मेहमानों में से कोई लौटा है? नहीं, कोई अनजान आदमी है, जो अपना नाम नहीं बता रहा।

फुसफुसाहट सुनकर लीज़ा बाहर आई, तुरन्त ही चिंतित हो उठी और कहा कि उस आदमी को अंदर आने दें।

मिनट भर बाद ओज़्नोविशिन अजनबी को लेकर अंदर आया।

यह छोटे से कद का अनिश्चित आयु का आदमी था, सिर पर सफ़ेद बालों की एक पट्टी थी, दाढ़ी उसने शायद अरसे से नहीं बनाई

थी। वह संकोची स्वभाव का लगता था। अपने स्ट्रा हैट के किनारों को मसोमते हुए उसने कमरे में गौर से नज़र दौड़ाई और अपने कोट के बटनों पर उंगलियां फेरकर देखा कि सब बंद हैं न। शायद उसे यह फ़िक्र थी कि कहीं उसकी वेशभूषा उसके लिए बाधक न हो।

"आज्ञा है?" उसने हौले से पूछा और फिर से कमरे की दीवारों पर नज़र दौड़ाई।

"क्या चाहते हैं आप?" लीज़ा ने भी अनचाहे ही उसी की भांति हौले से पूछा।

"आप येलिज़ावेता मेरकूर्येव्ना हैं?"

"हां, हां, बताइये क्या बात है।"

"आपके पिता को दिये वचन को अपना कर्तव्य मानते हुए मैंने आपको ढूंढ़ने की जल्दी की... क्षमा कीजिये, गलत घड़ी पर पहुंचा हूं।"

"आप पिता जी के पास से आये हैं?"

"अगर आप मेरकूरी अव्देयेविच की बेटी हैं, तो मैं..."

"मैं मेरकूरी अव्देयेविच मेश्कोव की बेटी हूं। आप उनके पास से आये हैं? ख़्वालीन्स्क से?"

"नहीं, मैं यहीं का हूं।"

"पर आप वहां थे... आप ख़्वालीन्स्क से आये हैं?"

"कुछ ऐसा संयोग हुआ कि आपके पिता जी से मेरी भेंट हुई, जिसकी न मुझे आशा थी, न उन्हें ही..."

"आप पिता जी से मिले हैं?.. क्या हुआ पिता जी को?" लीज़ा ने ज़ोर से पूछा, उसका भयभीत हो उठा मन उसे आगे धकेल रहा था, पर वह लड़खड़ाकर एक कदम पीछे ही हटी और उसने पति का हाथ कसकर पकड़ लिया। वह स्पष्टतया देख रही थी कि यह छोटे से कद का भलमानस कोई बुरा समाचार लाया है, जानती थी कि वह कामकाजी पत्रों की अपनी भाषा में अभी यह कुसमाचार सुनायेगा, उसका अंग-अंग इस सदमे को सहने को तैयार हो रहा था, और मानो केवल पति का हाथ ही, जिसे वह अधिक ही अधिक ज़ोर से दबाये जा रही थी, हिम्मत जुटाने में उसकी मदद कर सकता था।

"आप मेरकूरी अव्देयेविच से ख़्वालीन्स्क में नहीं मिले? तो कहां मिले?" ओज़्नोबिशिन ने लीज़ा का हाथ सहलाते हुए पूछा।

"जैसा कि मैं बता चुका हूं मैं यहीं का रहनेवाला हूं, और नगर छोड़कर जाने की मेरी कभी कोई इच्छा नहीं रही। परन्तु कुछ परि-स्थितियोंवश कुछ दिन पहले मुझे जाना पड़ा... बल्कि यह कहना अधिक उचित होगा कि मुझे ले जाया गया – अधिक दूर तो नहीं, और सौ-भाग्यवश शीघ्र ही छोड़ भी दिया गया।"

"आप मेरकूरी अव्देयेविच के बारे में बताना चाहते थे," ओज़्नो-बिशिन ने कहा।

"ठीक कहते हैं। मैं यह बता रहा था कि कैसे उनसे मेरी भेंट हुई। दुर्भाग्यवश मुझे बड़ी धार पर ले जाया गया था। जानते हैं आप वहां क्या है?"

"बड़ी धार पर?" ओज़्नोबिशिन ने पलटकर पूछा, हालांकि पूछने की कोई बात नहीं थी, क्योंकि तुरन्त ही उसके कंधे झुक गये और भयभीत दृष्टि से उसने लीज़ा की ओर देखा।

"क्या है वहां?" लीज़ा ने पूछा, हालांकि वह भी समझ रही थी कि चर्चा किस बात की है, पर मानो अभी भी यह स्वीकार नहीं करना चाहती थी कि सब समझ रही है।

"बजरे पर," अजनबी ने अपनी बात स्पष्ट की। "मुझे बजरे पर रखा गया था। और चूंकि गलतफ़हमी पूरी तरह साफ़ हो गई, इसलिए आज छोड़ दिया गया। मुझे पोक्रोव्स्क में छोड़ा गया, वहां से नाव पर मैं सरातोव आया और तुरन्त ही समय गंवाये बिना आपके पास हाज़िर हुआ। अपने वचन का कर्तव्य निभाने..."

"पिता जी वहां हैं?" लीज़ा ने चौंककर सिर ऊपर उठाते हुए पूछा, लगा मानो वह सहसा अधिक लंबी हो गई हो।

"क्षमा कीजिये, अत्यंत खेद के साथ मुझे यह कहना पड़ रहा है कि इस समय मेरकूरी अव्देयेविच बजरे पर हैं..."

लीज़ा पति से सट गई। लीज़ा को लिपटाकर वह उसे सोफ़े तक ले गया और वह वहां बैठ गई।

"निस्संदेह आप मुझे क्षमा कर देंगे, मैं अपना वचन निभाने आया हूं, और आपके पिता के हित में, जिनके साथ मैं पिछले दिनों बंद था। उन्होंने बार-बार मुझसे अनुरोध किया था और मैंने आपको संदेश देने का वचन दिया था, क्योंकि उनके लिए इस दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में एक-एक मिनट मूल्यवान है।"

"कैसा मिनट? किसलिए?" लीज़ा अब सचमुच ही नहीं सम
रही थी।

"आपके पिता जी बुरी संगत में फंस गये हैं। और जैसा कि आ
ही शब्दों से मैं समझ पाया हूं, उन्हें ख़्वालीन्स्क से नदी के रास्ते य
लाया गया है। स्वयं मेरकूरी अव्देयेविच ने मुझे इस बारे में कुछ न
बताया। यहां लाकर उन्हें नदी पर छोड़ दिया गया, दूसरे शब्दों
बजरे पर रखा गया है, क्योंकि बजरे की जेल ही सबसे निकट थ
जिस संगत में वह फंस गये थे, वह वैसे तो एक ही आदमी की
पर जैसा कि मेरकूरी अव्देयेविच ने मुझे बताया, वह आदमी ब
बुरा है। क्षमा कीजिये, वह भूतपूर्व राजनीतिक पुलिस का अफ़
है। और उसका नाम भी शायद मशहूर है—पोलोतेन्त्सेव।"

"हे भगवान!" ओज़्नोविशिन के मुंह से निकला।

"जैसा कि बजरे पर पता चला है यहां पहुंचने के कुछ दिन ब
पोलोतेन्त्सेव" (इतना कहकर इस आदमी ने ऐसा मुंह बनाया,
कि मुस्कराना चाहता हो) "परलोक सिधार गया... ही-ही, जहां
दुख है, न सुख।"

"आप पिता जी की बात करिये!" सहसा लीज़ा ने रुखाई
उसे टोका।

वह पल भर को हिचकिचाया, पर फिर अपनी उसी आडम्बर
शैली में बोलने लगा:

"पोलोतेन्त्सेव के मामले का सूत्र खुलने के सम्बन्ध में आपके पि
जी अपने भाग्य पर अत्यंत चिंतित हैं।"

"पिता जी का राजनीतिक पुलिस से कोई वास्ता नहीं हो सकता
लीज़ा ने गुस्से में कहा।

"जी, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता, हमें-आपको कोई स
नहीं हो सकता। उन्हें देखते हुए मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि आ
पिता अपने रुझानों के अनुसार केवल प्रभु की प्रार्थनाओं में ही म
रहते हैं, और किसी बात से उनका कोई सम्बन्ध नहीं। परन्तु वर्तम
समय में, जैसा कि मेरा अपना अनुभव कहता है, भाग्य की अ
शक्तियां कार्यरत हैं।"

"क्या?" ओज़्नोबिशिन ने पूछा।

"भाग्य की अंधी शक्तियां। और मेरकूरी अव्देयेविच आपसे बिनती करते हैं कि आप उनकी सहायता का पूरा-पूरा प्रयत्न करें, क्योंकि किसी भी क्षण उनके भाग्य का निश्चय हो सकता है, यहां तक कि..."

यह कहते-कहते अजनबी ने सहमी नज़रों से मुड़कर देखा।

वीत्या दबे पांव दूसरे कमरे में से निकल आया था और गुस्से तथा चुनौती भरी नज़रों से उसे देखता वहां खड़ा था।

"नाना जी ज़िंदा हैं?" बहुत ही रुखाई से उसने पूछा।

"हां," भलमानस ने जवाब दिया, वह मानो वीत्या की नज़रों से सकपका गया था। "इतना निश्चित तौर पर कह सकता हूं कि आज सुबह जब मुझे छोड़ा गया था, उस समय मेरकूरी अव्देयेविच बजरे पर थे।"

"जानता हूं नदी पर वह बजरा," वीत्या ने दृढ़तापूर्वक कहा। "जब हम आर्सेनी रोमानोविच के साथ मछली पकड़ने गये थे, तो देखा था। नदी की बड़ी धार में लंगर डाले है। आर्सेनी रोमानोविच ने बताया था कि वहां प्रतिक्रांतिकारी बंद हैं। हमारे नाना तो ऐसे नहीं हैं! चलो मां, नाव लेकर चलते हैं!"

"चुप रहो, वीत्या, जाओ यहां से," ओज़्नोबिशिन ने कहा, पर लीज़ा ने जल्दी से बेटे की ओर हाथ बढ़ाये।

"आओ मेरे पास।"

उसने वीत्या को सटा लिया।

"सो मैंने अपना वचन पूरा कर दिया है," आगंतुक ने अपना हैट दिल पर रखते हुए और विनम्रतापूर्वक विदाई लेने को तैयार होते हुए कहा। "अपनी ओर से मैं आपको यही परामर्श दूंगा कि ज़रा भी देर न करें।"

"पता नहीं, कैसे आपका शुक्रिया अदा करें," ओज़्नोबिशिन ने कहा। "हालांकि शुक्रिया की बात ही... आप समझते हैं न? ऐसी खबर है..."

"बिल्कुल! मैं तो स्वयं असमंजस में था कि कैसे आपको व्यर्थ की पीड़ा पहुंचाये बिना तैयार करूं।"

"तैयार करें? किस बात के लिए?" लीज़ा सहसा चिल्लाई और सोफ़े से उठने को हुई।

"क्षमा कीजिये! तैयार करने से मेरा अभिप्राय था आपको अपने पिता की रक्षा के लिए कदम उठाने की ओर ले जाना। मेरा कोई स्वार्थ नहीं, मैं तो बस मेरकूरी अव्देयेविच का आदर करता हूं। उन्होंने अपनी विनम्रता से मेरा हृदय जीत लिया है। गुणवान व्यक्ति हैं! मैं उन्हें बहुत पहले से जानता हूं।"

उसने मुंह पर उंगली रखी:

"हमारी आपस की बात है: मेरकूरी अव्देयेविच जब दुकान चलाते थे, मैं आपके पास वाली दुकान में काम करता था। सो अब मुझे याद आता है कि मैंने आपको भी, येलिज़ावेता मेरकूर्येव्ना, तब देखा था। और मैं कामना करता हूं कि आप सफल हों, पिता की सहायता करने में।"

उसने एक बार फिर अपना स्ट्रा हैट छाती से सटाया और सिर झुकाया। वीत्या के सामने वह अलग से झुका।

ओज़्नोबिशिन उसे छोड़ने गया और शोर न करने की कोशिश करते हुए अंदर लौट आया।

लीज़ा वैसे ही बैठी थी, जैसे वह उसे छोड़कर गया था। बेटे को बाहों में भरे एकाग्रता से अपने सामने कुछ देखती हुई वह बैठी थी। विवाह की अपनी सफ़ेद पोशाक में वह धीर-गम्भीर लग रही थी। ओज़्नोबिशिन उसके सामने बैठ गया। कुछ देर तक कोई हिला-डुला नहीं। फिर ओज़्नोबिशिन लीज़ा से नज़र मिलाने की कोशिश करता हुआ आगे को झुका।

"बड़ी मुश्किल होगी अगर मेरकूरी अव्देयेविच... पोलोतेन्त्सेव के मामले में फंसे हुए हैं," उसने चिंतित स्वर में कहा।

लीज़ा ने शून्य में लगी अपनी फटी-फटी आंखें तुरन्त उसकी ओर घुमाई।

"क्या फ़र्क पड़ता है, फंसे हुए हैं या नहीं?"

"ऐसा सम्पर्क कानूनी दृष्टि से दोष को और बढ़ाता है।"

"पर हमारा काम क्या उनका दोष देखना है?" लीज़ा ने हैरान होकर पूछा।

"नहीं, लीज़ा," ओज़्नोबिशिन बोला। वह अपने शब्दों के प्रभाव को अब शीघ्रातिशीघ्र मृदु स्वर से दूर कर देना चाहता था। "मैं दोष

की बात नहीं कर रहा। तुम्हारी तरह मुझे भी पूरा विश्वास है कि मेरकूरी अव्देयेविच का कोई दोष नहीं है। मैं तो बाधाओं की बात कर रहा हूं, जो उन्हें छुड़वाने के हमारे जतनों के रास्ते में आ सकती हैं।"

"यह सोचने की क्या ज़रूरत है कि क्या बाधाएं आ सकती हैं? यह सोचना चाहिए कि कैसे जल्दी से जल्दी मदद की जाये।"

"बिल्कुल ठीक कहती हो! पर सही रास्ता ढूंढ़ने का मतलब ही है उन बाधाओं का अनुमान लगा लेना, जो रास्ते में आ सकती हैं... ताकि उन्हें लांघा जा सके। ठीक है न?"

"मैं कह तो रहा हूं आपसे कि मुझे बजरे का सीधा रास्ता पता है!" वीत्या उतावली से बोला, वह हैरान था कि वे उसकी बात क्यों नहीं समझ रहे। "आर्सेनी रोमानोविच एक नाव वाले को जानते हैं। मत्वेई दादा को भी पता है। नाव ले लेते हैं और मैं आपको..."

मां ने उसका सिर अपनी छाती से सटाकर उसकी बात बीच में ही काट दी।

"तुम्हें रागोज़िन का ख्याल नहीं आया?" उसने पति से पूछा और उसके चेहरे पर उत्तर ढूंढ़ने लगी।

वीत्या मां के हाथों से निकला और उछलकर खड़ा हो गया। इससे पहले कि वह उसे अपनी ओर खींचती वह खुशी से चिल्लाया:

"मां, मुझे रागोज़िन का ख्याल आया था, भगवान कसम! मैं पाव्लिक के साथ उनके पास गया था। और हमने जो कहा था, उन्होंने सब कुछ वैसे ही किया। आर्सेनी रोमानोविच के लिए। प्योत्र पेत्रोविच झटपट सब कुछ कर देंगे: वह तो नाना जी को जानते हैं!"

"नहीं, बावले, अभी तुम बड़ों की सलाह देने लायक नहीं हुए," ओज़्नोबिशिन ने ऐसी मुस्कान के साथ कहा कि क्षण भर को लीज़ा का ध्यान अपने प्रश्न से हटकर लड़के की ओर चला जाये।

जिस क्षण से ओज़्नोबिशिन यह समझ गया था कि अप्रत्याशित आगंतुक क्या समाचार लाया है, उसी क्षण से वह रागोज़िन के बारे में सोच रहा था। उसी क्षण वह समझ गया था कि तुरन्त ही मेश्कोव की मदद के लिए दौड़-धूप शुरू होगी, कि यह सारी दौड़-धूप उसी को करनी होगी, कि यह दौड़-धूप खतरे से खाली नहीं होगी और शायद इससे कुछ होने का भी नहीं, कि दौड़-धूप चाहे कितनी ही खतरनाक

और निरर्थक क्यों न हो, वह उससे कन्नी नहीं काट सकता और उसे उसका जिम्मा लेना ही होगा। उसे डर था कि इस घटना का लीज़ा के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ेगा, जो अभी पूरी तरह सुधरा नहीं था, और इसलिए उसे और भी अधिक कोशिश करनी होगी, ताकि लीज़ा के मन में मामले के अच्छे अंत की आशा बनी रहे। परन्तु उसे इस बात का भी कम डर नहीं था कि अगर मेरकोव पर पोलोतेन्त्सेव के साथ सम्पर्क रखने का आरोप है, तो मेरकोव के लिए उसके जतन अधिकारियों की नजरों में पोलोतेन्त्सेव के लिए जतनों का रूप ले सकते हैं। साथ ही वह यह भी महसूस कर रहा था कि अब वह समय आ गया है जब उसे भलाई का बदला भलाई से चुकाना चाहिए, उसके जेल जाने पर लीज़ा और मेरकोव ने उसके लिए जो चिंता दिखाई थी, उसका अहसान चुकाना चाहिए। उसे लग रहा था कि यह उसकी नेकी की जांच की घड़ी है। परन्तु वह यह भी स्पष्टतया समझ रहा था कि वह कितना निस्सहाय है। उसे विश्वास था कि एक भूतपूर्व अधिकारी के नाते, जिस पर एक बार अपना अतीत छिपाने की कोशिश करने का संदेह किया जा चुका है, अब यह आशा करना मूर्खता होगी कि नये अधिकारी उसके लिए कुछ करेंगे या उसकी बात पर ध्यान देंगे। और वह पहले से ही अपने आप को यह यकीन दिला रहा था कि उसकी दौड़-धूप का कोई अच्छा नतीजा नहीं निकलेगा। ऐसे कठिन मामले में जो लोग सहायता कर सकते थे, उनमें से केवल एक को वह जानता था। यह आदमी था रागोजिन। लेकिन रागोज़िन का ख्याल आते ही उसकी स्मृति में उनकी अंतिम भेंट का दृश्य उभरा, जब तरबूज के छिलके से ओज़्नोबिशिन का पांव फिसल गया था। रागोज़िन उसकी स्मृति में कठोर और अनम्य था, कैसे उसने ओज़्नोबिशिन की हंसी उड़ाते हुए कहा था: "मेरी सेवा करना आसान नहीं। मैं दूसरों की सेवाएं स्वीकार नहीं करता"। साथ ही ओज़्नोबिशिन को यह याद आये बिना भी नहीं रह सकता था कि रागोज़िन के पास जाते हुए उसका मन कैसे डांवांडोल हो रहा था, कैसे वह डर रहा था कि अभिलेखागार में कागज चुराने का उसका राज़ खुल जायेगा। जब से उसने वह कागज़ चुराया था और उसे वोल्गा में फेंक दिया था, उसे दिन-रात यह भय सताता रहता था कि कहीं और भी ऐसा ही कोई

कागज़ निकल आया तो? आखिर सारा अतीत तो नष्ट नहीं हो सकता था, कहीं पर तो वह छिपा हुआ है और सहसा कहीं से उसकी झलक दिखाई दे गई तो? तब क्या होगा? एक वकील के नाते वह कानून के प्रति अतिसंवेदनशील था, और पहले वह जिस तरह दूसरों के मामलों में बाल की खाल खींचा करता था, वही आदत अब स्वयं उसके खिलाफ़ हो रही थी, उसे चैन नहीं लेने दे रही थी। यह सोचकर ही उसका दिल दहलता था कि उसे फिर से रागोज़िन का सामना करना होगा।

अपने लिए, अपनी पत्नी के लिए और उस जीवन के लिए, जिसे आरम्भ करने की उसकी आशा अभी-अभी पूरी होने ही लगी थी, और जिस पर पहली घड़ी में ही ऐसी घोर परीक्षा आ पड़ी थी, इस सबके लिए उसका डर, उसके विचार, उसके संदेह कल्पनातीत गति से उसके हृदय और मस्तिष्क में तब घूम गये थे, जब वह बिन बुलाये मेहमान की अलंकृत भाषा में कही गयी बातें सुन रहा था, और अब जबकि लीज़ा अपने उत्तर की प्रतीक्षा कर रही थी, तब भी ये सब बातें उसकी कल्पना में और भी अधिक तेज़ी से घूम रही थीं।

सहसा वीत्या मां के हाथों से निकल गया, पर झटके से नहीं, बल्कि हौले से और परेशान सा बोला:

"मां, मैं भूल ही गया था: प्योत्र पेत्रोविच तो यहां हैं नहीं। पाव्लिक ने मुझे बताया था कि वह अब बेड़े पर कमिसार हैं और चले गये हैं। हो सकता है पाव्लिक ने झूठ बोला हो, हैं?" उसने हताश स्वर में अपनी बात काटी, लेकिन फिर हौले से बोला: "पर वह कह रहा था कि प्योत्र पेत्रोविच सारे बेड़े के साथ गये हैं..."

"अगर यह सच है तो बहुत ही बुरी बात है," ओज़्नोबिशिन ने जल्दी-जल्दी कहा।

लेकिन उसके यह कहने से पहले ही लीज़ा ने पति के चेहरे पर अपने प्रश्न का उत्तर पढ़ लिया था। वह उसके विचारों और भावनाओं के सारे क्रम को तो नहीं समझ पाई थी, लेकिन जो बात उसके लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण थी, वह जान गई थी: उसने देखा था कि वह लीज़ा के पिता के लिए दौड़-धूप करने से डर रहा है और यह स्वीकार करने में उसे शर्म आ रही है।

लीजा के चेहरे पर धीरे-धीरे कटु मुस्कान आई।

"यह है मेरा अनाज – बोया हुआ और पका हुआ और खलियान में रखा हुआ," सिर हिलाते हुए और पति की आंखों में सीधे देखते हुए उसने कहा।

वह यह उलाहना नहीं सह सका, लीजा की ओर लपका, वह अपने बेटे से लिपटी जा रही थी, बेटे से उसके हाथ छुड़ाते हुए वह उन्हें जल्दी-जल्दी चूमने लगा और बुदबुदाने लगा:

"हताश मत होओ .. हम पूरी कोशिश करेंगे, जरूर छुड़ा लेंगे ... दूसरा आदमी ढूंढ लेंगे, जो हमारी मदद करेगा ..."

लीजा बोली:

"मैंने ऐसा आदमी ढूंढ लिया है।"

वह ठिठककर जरा पीछे हटा। लीजा की शांत नज़र से उसे लगा कि लीजा ने उसे बख्श दिया है। उसने फ़ौरन पूछा:

"कौन?"

"इज़्वेकोव।"

जाने कितने बरसों बाद लीज़ा के मुंह से यह नाम निकला था और अजीब शांत स्वर में उसने यह नाम लिया था।

ओज़्नोबिशिन खड़ा हो गया। उसकी कोई पुरानी स्मृति जाग पड़ी, जिसमें यह नाम लीज़ा के साथ जुड़ा हुआ था – लीज़ा के चेहरे पर बालसुलभ सकोच या शायद भय ही था, और उसका विचित्र आकर्षण जिससे वह कभी उसकी ओर खिंचा था – सड़क पर, या शायद जन अभियोक्ता के कमरे में, या स्कूल छात्राओं के नृत्य उत्सव में – उसे याद नहीं था। हां, इतना उसे तुरन्त याद हो आया कि इज़्वेकोव का नाम प्योत्र रागोजिन के नाम से जुड़ा हुआ है, उस मनहूस मामले से जुड़ा हुआ है, जो अब इज़्वेकोव से सामना होने पर दूसरे पहलू से उभर सकता था।

"यह तो बहुत अच्छा विचार है, लीज़ा," ओज़्नोबिशिन ने उत्साह दिखाते हुए कहा, पर कमरे में टहलने लगा, ताकि लीज़ा अपनी प्रायः भावशून्य दृष्टि से उसके चेहरे के भाव न पढ़ती रहे और साथ ही वह स्वयं लीज़ा की इतनी अस्वाभाविक निश्चिंतता को न देख पाये, जो उसे परेशान करने लगी थी।

"बहुत ही अच्छा विचार है! हमें यहीं से शुरू करना चाहिए – इज़्वेकोव के पास जाना चाहिए!"

"मैं अकेली जाऊंगी," लीज़ा ने कहा।

"मां, मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा," वीत्या फिर से बीच में बोल पड़ा। "मैं इज़्वेकोव को जानता हूं। जब हम आर्सेनी रोमानोविच के साथ मछली पकड़ने ..."

"ओफ़, तुम और तुम्हारा आर्सेनी रोमानोविच," ओज़्नोबिशिन ने उसे टोका, "तुम यह टांग अड़ाना बंद करो! क्या कर सकता है तुम्हारा यह बाबा!"

"कोई बाबा-वाबा नहीं," वीत्या को बुरा लगा। "वह तो गिरजे भी नहीं जाते। हां!"

"चलो, मैं तुम्हारा बिस्तर लगा दूं। तुम्हारा सोने का वक्त कब का हो चुका है," लीज़ा ने कहा और वीत्या को पकड़कर ले गई।

ओज़्नोबिशिन अपने छोटे-छोटे कदमों से कमरा नापता जा रहा था। उसके विचार अब पहले से कुछ धीरे, पर उसी दिशा में घूम रहे थे कि इस मुसीबत में वह कितना असहाय है, कि अभी वह अपने घोंसले का पहला तिनका भी न रखने पाया था कि उसके सिर पर इतनी बड़ी मुसीबत आ पड़ी। हां, ओज़्नोबिशिन विवाह के बाद के पहले घंटों की बिल्कुल दूसरी ही कल्पना करता आया था। और पौ फटने पर भी जब उसने अपनी लाल-लाल आंखों से खिड़की में देखा, तो रात के अंधेरे की ही भांति उसे कुछ नहीं दिखा, क्योंकि रात ठंडी रही थी और खिड़की के शीशों पर पानी सा आ गया था।

सुबह ओज़्नोबिशिन लीज़ा को छोड़ने जाने को तैयार हुआ, पर वह अकेली जाना चाहती थी। उसने विदा करते हुए लीज़ा का चुम्बन लिया और उसके होंठों को निरुत्तर पाकर उसे ठेस पहुंची।

लीज़ा की योजना सीधी-सादी थी: वह वहां जा रही थी, जहां इज़्वेकोव था – उसके काम की जगह पर, उस आदमी से बात करने, जो ऊंचे ओहदे पर था, एक प्रार्थी के रूप में बात करने। वह उस किरील के पास नहीं जा रही थी, जिससे कभी उसे प्यार था। वह नगर सोवियत के सेक्रेटरी के पास जा रही थी, उस कामरेड इज़्वेकोव

के पास, जिसका नाम उसने अखबार में पढ़ा था, जब वह नौ साल के बाद अपने नगर में लौटा था।

तब उसने अपने आप से कहा था कि उसे उससे नहीं मिलना है। मन में उसके नाम के एक-एक अक्षर को अलग-अलग करते और फिर जोड़ते हुए, आंखें कड़ुवा जाने तक उसे पढ़ते हुए, और दिल की धड़कन के साथ नाम के एक-एक अक्षर को छाती में गूंजते सुनते हुए लीजा उस नाम की पंक्ति पर आंखें गड़ाये जड़वत बैठी रही थी, और अपने आप को यह विश्वास दिलाती रही थी कि वह इज़्वेकोव, जो उसे प्रिय था, अब नहीं रहा है, इसलिए वह उससे नहीं मिल सकती, और वह इज़्वेकोव, जिसके बारे में अखबार में खबर छपी थी, उससे उसका कोई नाता नहीं है, इसलिए उससे मिलने का कोई कारण ही नहीं है।

अब उसके पास जाते हुए भी वह उस दिन की ही भांति अपने आप को यकीन दिला रही थी कि नगर सोवियत के सेक्रेटरी के पास जा रही है, किरील के पास नहीं। लेकिन ठीक वैसे ही, जैसा कि तब हुआ था, जब वह अखबार में बार-बार यह नाम पढ़ रही थी, और उसका हृदय यह स्वीकार नहीं कर रहा था कि यह वही पहले वाला नहीं, बल्कि कोई दूसरा इज़्वेकोव है, जिसकी उसे कोई ज़रूरत नहीं है, वैसे ही अब भी उसका हृदय यह नहीं मान रहा था कि वह पहले वाले किरील के पास नहीं जा रही, बल्कि किसी अनजान सेक्रेटरी किरील के पास जा रही है, जिससे उसे मदद चाहिए।

अगर उसे सेक्रेटरी इज़्वेकोव में उस किरील को ही पाने की उम्मीद न होती, जो उसमें लीजा को देख सकता था और उनके पुराने सम्बन्धों की खातिर उसका अनुरोध पूरा कर सकता था, तो फिर वह किसी दूसरे सेक्रेटरी के पास, या नगर सोवियत के अध्यक्ष के पास, या किसी भी दूसरे अधिकारी के पास अपनी प्रार्थना लेकर क्यों न जाती? लेकिन वह किरील के पास ही जा रही थी, पर फिर भी मन ही मन यह कहती जा रही थी कि किरील के पास नहीं, नगर सोवियत के सेक्रेटरी के पास एक प्रार्थी के नाते जा रही है।

जब वह नगर सोवियत में पहुंची, तो उसे बताया गया कि इज़्वेकोव सुबह ही कहीं बाहर से लौटा है, घर गया है, और दफ़्तर पता नहीं कब आयेगा।

फिर से बाहर आकर लीज़ा बगीचे के पास खड़ी हो गई। बबूल की पत्तियां अभी पीली नहीं पड़ी थीं, हां उनकी हरियाली भी गर्मियों जैसी नहीं रही थी और वे सूखी-सूखी थीं। हवा से पत्तियों में मर्मर नहीं हो रही थी, बल्कि सूखी खड़खड़ सुनाई दे रही थी। लीज़ा ने एक टहनी तोड़ ली और नाखूनों से पत्तियां तोड़-तोड़कर ज़मीन पर फेंकने लगी। सहसा, जैसे कि बचपन में वह किया करती थी, हर पत्ती के साथ वह बारी-बारी मन ही मन बूझने लगी: यहीं इज़्वेकोव का इंतज़ार करूं या उसके घर जाऊं। जल्दी-जल्दी उसने सारी पत्तियां तोड़ डालीं और आखिरी पत्ती के साथ आया 'घर जाऊं'!

पत्तियों से कुछ भी निकलता वह हर हालत में ही उसके घर जाती। पर अब चूंकि पत्तियों से भी उसके मन की बात निकली थी, सो उसने सोचा यह शुभ लक्षण है। आखिर नगर सोवियत का सेक्रेटरी तो घर पर भी सेक्रेटरी ही रहता है। और अगर लीज़ा उसके घर जायेगी, तो उसका यह अर्थ नहीं होगा कि वह किरील के पास गई है।

वह वापस नगर सोवियत में गई और कामरेड इज़्वेकोव के घर का पता पूछा। उसे पता नहीं दिया गया।

फिर से वह बाहर सड़क पर आ गई। उसकी स्थिति किसी निद्रा-चारी जैसी थी, जिसकी किसी लक्ष्य तक पहुंचने की इच्छा बाधाओं से टकराकर और भी अधिक प्रबल हो उठती है। उसने यह सोचा कि इज़्वेकोव मां के साथ ही रहता होगा, नहीं तो वेरा निकान्द्रोव्ना बता देंगी कि उनका बेटा कहां रहता है। सो, उसे तुरन्त ही वेरा निका-न्द्रोव्ना के यहां जाना चाहिए। यह सोचकर उसका हौसला बढ़ा कि वह किरील के यहां नहीं, वेरा निकान्द्रोव्ना के यहां जा रही है। अजीब बात है उसे पहले यह ख्याल क्यों नहीं आया कि सबसे पहले वेरा निका-न्द्रोव्ना से ही मिलना चाहिए, वह तो फ़ौरन सब कुछ समझ जायेंगी और ज़रूर अपने बेटे पर ज़ोर डालेंगी कि वह लीज़ा की मदद करे। वेरा निकान्द्रोव्ना यह तो भूली नहीं होंगी कि क़ैसे नौ साल पहले जब किरील को गिरफ़्तार कर लिया गया था, तो लीज़ा ने उनके साथ दौड़-धूप की थी।

अब उसके सामने एक नई बाधा थी: उसे पता नहीं था कि वेरा निकान्द्रोव्ना कहां रहती हैं। वह पुराने पते पर जा सकती थी। बहुत

पहले, जब लीजा के बच्चा होनेवाला था, एक बार उसने वेरा निकान्द्रोव्ना से मिलने की सोची थी और आनोच्का पाराबुकिना से उनका पता भी ले लिया था। तब वह गई नहीं थी, जाने क्यों डर गई थी, पर इतना उसे याद था कि वेरा निकान्द्रोव्ना सोल्दात्स्काया स्लोबोद्का मे कही पढ़ाती है! अरे हां, आनोच्का! बेशक वेरा निकान्द्रोव्ना की चहेती आनोच्का को उनका पता मालूम होगा।

आनोच्का के घर तो लीजा कई बार अपने बेटे को ढूंढ़ती-ढूंढ़ती गई थी। वह नगर सोवियत से ज़्यादा दूर नही रहती थी। उससे वेरा निकान्द्रोव्ना का पता पूछने का फ़ैसला करने से पहले ही लीजा के पांव उसके घर की ओर बढ़ चले थे: उसके कदम उसके निर्णयों की पूर्वकल्पना कर रहे थे।

रास्ते में उसे पाव्लिक मिला। वह खाली टोकरी झुलाता बाज़ार जा रहा था – खाने का बंदोबस्त करने, जैसा कि उसने लीजा को बताया।

"आनोच्का तो रिहर्सल पर गई हुई है," उसने जवाब दिया, "शायद रात को ही आयेगी।"

"वह क्या पूरी अभिनेत्री बन गई है?"

"अजी हां! वह तो बस रिहर्सल ही करती रहती है, यह भी कोई अभिनेत्री है?"

वेरा निकान्द्रोव्ना का पता उसे अच्छी तरह याद था, पर इज्वेकोव कहा रहता था, यह उसे मालूम नही था। उसने इतना और जोड़ा कि इज्वेकोव को ढूंढ़ना बेकार है, वह तो मोर्चे पर गया हुआ है। यह सुनकर लीजा कुछ डरी, पर साथ ही यह भी ख्याल आया कि नगर सोवियत में उसे झूठमूठ थोड़े ही कहा गया होगा कि वह लौट आया है।

वह ट्राम के स्टाप की ओर दौड़ ही चली – समय बीतता जा रहा था, और हर पल इतना कीमती था, जितना शायद जीवन में कभी नहीं रहा था...

इज्वेकोव घर पर था। कपड़े बदलते हुए वह मां को अपने अभियान की कुछ बातें सुनाता जा रहा था, पर उन बातों पर चुप्पी साधे हुए था, जो उसके मस्तिष्क में बार-बार आ रही थीं और जो वेरा निकान्द्रोव्ना को भी परेशान कर सकती थीं।

"देखो न," बंद दरवाज़े के पीछे से वह चिल्ला रहा था, जबकि मां मेज़ पर बर्तन लगा रही थी, "देखो न. हुआ क्या! दीबिच को सुबह आठ बजे लौटना था। पर वह लौटा नहीं। नौ बजे मैंने एक सैनिक को उसका घर ढूंढ़ने भेजा। दस बजे वह घोड़ा दौड़ाता वापस आया और बोला कि दीबिच न शाम को और न सुबह ही घर पहुंचा था।"

"किसने बताया उसे?" वेरा निकान्द्रोव्ना ने पूछा। वह उस वेदना से अभिभूत थी, जो उसके बेटे को सहनी पड़ी थी और जो अब उसके मन में भी उठ रही थी।

"सैनिक को? क्या मतलब किसने? मां ने! मां ने जिससे मिलने को वह कब से तरस रहा था।"

"तोबा, तोबा! ज़रा सोचो तो, बेचारी मां!"

किरील पेटी कसता बाहर निकला। नहा-धोकर और दाढ़ी बनाकर स्कूल की वर्दी जैसी यह नई फ़ौजी वर्दी पहने वह बिल्कुल जवान लग रहा था।

"मैं तो बाद में कायरता ही दिखाने लगा था," उसने हौले से कहा।

"बाद में कब?"

"मुझे लग रहा था मैं उसकी मां के पास जाने का साहस नहीं जुटा पाऊंगा।"

"मां के पास जाये बिना कैसे रह सकते थे!.."

"यही तो! पर एक और बात थी..."

अपनी बात अधूरी छोड़कर वह खुली खिड़की के पास चला गया और चुप हो गया।

"बैठो, सब तैयार है।"

"हां," वह मां की ओर मुड़ा, "मैंने तुम्हें यह नहीं बताया कि आगे क्या हुआ। कुछ सैनिकों को लेकर मैं उस रास्ते पर चला, जिस रास्ते पर दीबिच को शहर आना था। जब हम मठों तक पहुंचे, तो वहां मिलीशिया वाले मौजूद थे। सुबह तड़के बाग के चौकीदार मठवासी को वह मिला था। पता चला कि मठवासियों ने शाम को गोली चलने की आवाज़ सुनी थी, पर जंगल में जाते उन्हें डर लगा। हमें उसके पास ले जाया गया। पगडंडी जहां बाग में निकलती थी,

वहीं वह ढलान पर पड़ा हुआ था, सिर नीचे की ओर था। खून से उसका दम घुट गया, छाती में घाव हुआ था।"

"कैसे जालिम थे!" वेरा निकान्द्रोव्ना ने कहा और हाथ गाल पर रखा, जैसे महिलाएं सहज भाव से करती हैं।

"वह शायद ज़्यादा देर नहीं जिया। जहां वह मिला था, वहां से कोई तीन कदम दूर ही उसे गोली मारी गई थी, मेपल के झुरमुट में। पगडंडी पर खून के निशान दिखाई दे रहे थे। सैनिकों और मिलीशिया के सिपाहियों ने पहाड़ी घेर ली और दोपहर तक हत्यारे पकड़े गये। कुल चार थे वे हरामजादे। उनके पास से दीविच का रिवाल्वर और घोड़ा मिला। उन्होंने बताया कि वे रात को मठ लूटने के इरादे से जंगल के सिरे पर छिपे हुए थे, पर तभी दीविच आ निकला। उन्होंने उस पर गोली चला दी।"

"तो यह संयोग मात्र था!" वेरा निकान्द्रोव्ना स्तब्ध हुई, मानो यह बेतुका संयोग ही दीविच की मृत्यु में उसे सबसे अधिक भयानक लगा।

"हां," किरील ने दुखी मन से हामी भरी, "पर यह ऐसा संयोग था, जिसकी पहले से कल्पना की जा सकती थी।"

वह फिर से चुप हो गया। कंधे झुकाकर उसने सिर लटका लिया। वेरा निकान्द्रोव्ना ने कभी उसे ऐसे करते नहीं देखा था।

"मैंने चाय डाल दी है। ठंडी हो रही है।"

"मुझे इसका अनुमान लगा लेना चाहिए था।"

"किस बात का?"

"यह अनुमान लगा लेना चाहिए था कि ऐसी दुर्घटना की सम्भावना है।"

"पर कैसे, जबकि तुम खुद कहते हो कि ऐसे हालात थे।"

"हां, हां, हालात थे। जबकि चारों ओर लुटेरों, हत्यारों के गिरोह घूम रहे थे, जबकि हम उन्हें पकड़ने निकले थे! मुझे क्या हक था कि मैं दीविच को अकेला जाने देता?"

"पर... वह तो खुद... और फिर वह तुम्हारे अधीन तो नहीं था? तुम उसे मना तो नहीं कर सकते थे न?"

"हां, तो उसे जाने देने का भी मुझे कोई हक नहीं था। और

मैंने उसे खुद सुझाया। मैंने ही तो उसे जाने की राय दी थी। उसे एक तरह से भेजा था।"

"पर किरील, तुम तो उसका भला चाहते थे!" वेरा निकान्द्रोव्ना ने सहानुभूति के साथ बेटे की आंखों में झांकते हुए कहा।

"यही तो बात है, भला चाहता था," वह चिल्लाया, तेज़ी से कुर्सी से उठा और फिर से खिड़की के पास चला गया। "बाद में मैं उसकी मां से यह कहने की हिम्मत क्यों नहीं कर पाया कि मैं उसका भला चाहता था?! मैं उसके बेटे को खुश करना चाहता था। क्यों मुझे उसके पास जाते शर्म आ रही थी, कलेजा कांप रहा था? मैं उसके बेटे को खुश करना चाहता था, भावुक हो गया था। और वह मारा गया। क्या यह मेरा कसूर नहीं कि वह मारा गया? तुम्हारा क्या ख्याल है?"

"मेरा ख्याल है... तुम बेकार अपना दिल जला रहे हो। तुम ऐसे संयोग का... ऐसे दुखद संयोग का ज़िम्मा नहीं ले सकते। इस बात के लिए अपने आप को बुरा-भला नहीं कह सकते कि भला काम करना चाहते थे।"'

"भला काम, जिसके कारण भला आदमी मारा गया, है न? जानता हूं मैं ऐसा भला! सनक में किया गया भला! सोचे-समझे बिना, बिना किसी मतलब के किया गया भला! बस यों ही – क्योंकि अच्छा लगता है! खुद को अच्छा लगता है। ताकि लोग तुम्हारे बारे में सोचें कि देखो कितना अच्छा आदमी है। लो, मैं बड़ा अच्छा आदमी बन गया हूं। मुझे उसका भला करके खुशी थी। पर वह तो रहा नहीं, मां! और कैसा आदमी नहीं रहा, मां!.. काश, तुम्हें पता होता!"

खिड़की के दासे पर झुककर उसने सिर बाहर निकाला और गहरी सांस ली – हवा में सुबह की ताजगी अभी बनी हुई थी।

कुछ देर रुककर वेरा निकान्द्रोव्ना ने कहा:

"अगर आदमी हमेशा यह सोचने लगे कि उसके भले काम का क्या नतीजा हो सकता है, तो फिर नेक इरादे कभी जन्म ही न लें। तुमने दीबिच से अपनी पहली भेंट के बारे में जो बताया था वह मुझे याद है। अगर दीबिच तब सोचने-विचारने लगता, तो शायद इस नतीजे पर पहुंचता कि मोर्चे पर तुम्हारे पराजयवादी प्रचार के लिए

उसे तुम्हें गिरफ्तार कर लेना चाहिए। पर उसने ऐसा नहीं किया।"

किरील ने कुछ जवाब नहीं दिया। वेरा निकान्द्रोव्ना भी कुछ देर चुप रही और फिर उसने पूछा :

"दीविच की मां तुमसे कैसे मिलीं? तुमने उनकी कुछ मदद की?"

किरील मेज के पास लौट आया। उसकी आंखों में धीरे-धीरे अफ़सोस भरी और कोमल मुस्कान छा गई।

"यह क्या पूछ रही हो, मां? मां कैसे मिली! तुम खुद कौन हो, मां?"

"हां," वेरा निकान्द्रोव्ना ने आंखें नीची कर लीं, "इसमें पूछने को है ही क्या..."

वे प्रायः चुप ही बैठे थे, कभी-कभार एकाध शब्द बोल लेते, तभी दरवाजे पर दस्तक हुई। बच्चों की तरह झिझकते हुए कोई दरवाजा खोल रहा था। वेरा निकान्द्रोव्ना यह सोचकर उठी कि शायद स्कूल का कोई बच्चा होगा। पर फिर एकाएक दरवाज़ा पूरा खुल गया।

"वेरा निकान्द्रोव्ना, आप?" लीज़ा ने ज़ोर से पूछा, उसकी आंखें किरील पर लगी हुई थीं और वह उस पर से नजर हटा नहीं पा रही थी, लेकिन अपने शरीर की सारी गति से यह जाहिर कर रही थी कि वेरा निकान्द्रोव्ना के पास जाना चाहती है।

उसका चेहरा एकदम पीला था और उस पर जबरदस्ती लाई गई विनम्र मुस्कान उसमें जान नहीं डाल रही थी, बल्कि उसे और भी अधिक बेजान कर रही थी, जिससे यह मुस्कान बेतुकी लग रही थी। पहले शब्द, जिनके लिए वह शायद तैयार होती आई थी, खनकती आवाज में, प्रायः चीखते हुए उसने कहे, पर फिर जब बोली, तो आवाज़ बुझी-बुझी थी :

"माफ़ कीजिये, मैं यों..."

"लीज़ा?.. येलिज़ावेता मेरकूर्येव्ना?" वेरा निकान्द्रोव्ना ने उसकी बात काटी और खुद भी किरील की ओर नजर घुमाई।

यह नाम सुनकर वह खड़ा हो गया और अब कहीं समझा कि यह स्त्री कौन है।

"...मैं यों बिन बुलाये चली आई," लीज़ा ने अपनी बात पूरी की, उसकी आंखें अभी भी किरील पर लगी हुई थीं।

वह उसकी ओर ऐसे देख रही थी जैसे कोई उस व्यक्ति की ओर देखता है, जिसे उसने अपनी आशा के अनुकूल ही पाया हो और इसी बात पर हैरान हो कि लंबे वियोग के बावजूद वह पहले जैसा ही रहा है और समय उसको बदलने में असमर्थ है। न केवल किरील की दृष्टि में निहित उसका अंतस्सार और उसके चेहरे के अविस्मरणीय सीधे नक्श ही लीज़ा के लिए बिल्कुल पहले जैसे थे, वल्कि अपनी इस वेशभूषा में – फ़ौजी कमीज़ पहने और चमड़े की पेटी कसे, वह वाहरी तौर पर भी अपने अतीत का हूवहू प्रतिविम्व लगता था।

किरील भी लीज़ा की ओर देख रहा था। वह उसके लिए हर वात में नई थी, लेकिन यह नवीकृत भवन की नवीनता थी, जिसके पीछे वीता समय और भी अधिक स्पष्टतया दृष्टिगोचर होता है।

उसने ही आगे बढ़कर लीज़ा से हाथ मिलाया।

"मुझे वेरा निकान्द्रोव्ना से मिलना है," लीज़ा ने कहा। किरील की सख्त उंगलियों की गर्माहट में उसे महसूस हुआ कि उसका हाथ ठंडा है।

"तो क्या मैं बाहर चला जाऊं?" वह मुस्कराया।

"नहीं। मुझे... आपसे भी काम है," लीज़ा ने कहा और मारे घवराहट के उसकी आंखें डवडवा आईं।

"तो फिर मुझे जाना चाहिए?" वेरा निकान्द्रोव्ना हंसी।

उसने लीज़ा से हाथ मिलाया और उसका हाथ पकड़े-पकड़े ही उसे मेज़ तक ले आई।

अब वह वातचीत शुरू हुई, जिससे पहले क्षणों का संकोच दूर करने में मदद मिल सकती थी – यह कि लीज़ा कमज़ोर हो गई है, उसकी सेहत ठीक नहीं है; कि वेरा निकान्द्रोव्ना ने उसे दो बार थियेटर में देखा था, पर यह वहुत पहले की वात है, और तव लीज़ा की सेहत अच्छी थी; कि अब तो उसका वेटा वड़ा हो गया है और किरील उससे नदी पर मिला था, मछली पकड़ते समय – वड़ा प्यारा लड़का है, विल्कुल मां पर गया है; क्या यह सच है कि लीज़ा ने फिर से शादी कर ली है, कौन है वह (वेशक यह वेरा निकान्द्रोव्ना ने ही पूछा)।

"मेरे साथ ही काम करते हैं," लीज़ा ने जवाव दिया, "नोटरी हैं, नहीं, उसके सहायक," उसने तुरन्त स्पष्ट किया।

"अब आपका कुलनाम क्या है?"

"पहले वाला... जैसे बेटे का है।"

"और पति का कुलनाम क्या है?"

"ओज़्नोबिशिन।"

"ओज़्नोबिशिन?" वेरा निकान्द्रोव्ना ने पूछा और फिर कुछ सोचते हुए नाम दोहराया: "ओज़्नोबिशिन," और उठकर दूसरे कमरे की ओर चल दी।

"नहीं, नहीं, आप जाइये नहीं," लीज़ा ने उसे रोका, "मैं चाहती हूं कि आप भी..."

"अभी आती हूं मैं..."

इस तरह लीज़ा किरील के साथ अकेली रह गई।

पल भर को ही मौन रहा, और इस पल ने लीज़ा को आशंकित कर दिया। वे दोनों अपने अतीत के बारे में सोच रहे थे, दोनों एक बार फिर इसे अत्यंत स्पष्टता से देख रहे थे, और लीजा यह महसूस कर रही थी कि वह कभी भी इस अतीत की चर्चा छेड़ने का साहस नहीं कर पायेगी, जो किसी चमत्कार से इस पल में फिर से जीवित हो उठा था। किरील ने सवाल पूछकर उसकी मदद की, उसका सवाल इतना सीधा-सीधा था और साथ ही इतने विनम्र स्वर में पूछा गया था कि वह तुरन्त ही अतीत से वर्तमान में लौट आई:

"आपको मुझसे कोई जरूरी काम है न?"

"माफ़ कीजिये, मैंने यह दुस्साहस किया। पर यह अकेले मेरे लिए जरूरी नहीं है। आप इन्कार नहीं करेंगे, नहीं न?"

"माफ़ी मांगने की क्या बात है!"

"केवल आप ही मेरी मदद कर सकते हैं। मैं पिता जी के लिए मदद मांग रही हूं।"

वह रुक गई, इस उम्मीद में कि वह कुछ पूछेगा। पर वह चुप था और लीजा को लगा कि वह सोच में पड़ गया है।

"मुझे पता चला है कि पिता जी को गिरफ़्तार किया गया है, कि वे जेल में हैं। बजरे पर। आप जानते हैं न बड़ी धार पर जेल है?"

वह चुप था।

"मैं भी क्या पूछ रही हूं। बेशक आप जानते हैं!" उसने कहा—

अपने भोलेपन पर शर्मिंदा और उसकी चुप्पी पर हैरान होते हुए। "मुझे पता नहीं कि पिता जी कब से इस बजरे पर हैं।"

वह फिर से रुकी। उसके देखते-देखते किरील में कुछ अनबूझ परिवर्तन आ रहा था। परन्तु यह परिवर्तन बिल्कुल स्पष्ट था – अभी क्षण भर पूर्व जिस पहले वाले किरील को वह देख रही थी, उसका अब कहीं पता न था। उसने किरील के चेहरे पर पड़े बल देखे, भौंहों के बीच में बल विशेषतः गहरा था। उसने तुरन्त ही अपने आप से कहा कि ऐसा ही होना था: वह अनजान अधिकारी से, सेक्रेटरी से ही तो मिलने आई है, किरील से नहीं।

"मुझे पता नहीं कि पिता जी को कब गिरफ़्तार किया गया," उसने अधिक दृढ़ स्वर में कहा। "मुझे कल शाम को एक आदमी ने यह बताया, जिसे रिहा किया गया है।"

"मतलब आपको यह पता नहीं कि किस अपराध के लिए उन्हें गिरफ़्तार किया गया है," सिर थोड़ा घुमाकर और खिड़की की ओर देखते हुए आखिर किरील बोला।

"मुझे कुछ पता नहीं कि उनका क्या अपराध हो सकता है। मैं तो यह भी नहीं जानती कि उन्हें कहां गिरफ़्तार किया जा सकता था। अगस्त के शुरू में मैंने उन्हें ख़्वालीन्स्क रवाना किया था। तब से उनकी कोई खबर नहीं मिली, उन्होंने कोई चिट्ठी नहीं लिखी थी। वह वहां पहुंचे भी थे कि नहीं? मैं नहीं जानती... सोच भी नहीं सकती कि उनके साथ क्या हुआ! ज़रूर ही कोई भारी गलती हुई है!"

"गलती से कोई बजरे पर नहीं पहुंचता," पहले की ही भांति बाहर देखते हुए किरील ने कहा।

"ओह, आजकल के समय में! लेकिन असल बात तो यह नहीं। माना कि आपका कहना ठीक है, माना कि यह गलती नहीं है। पर अब वह जहां हैं, वहां गलती से कुछ भी होने का बहुत खतरा है। यह तो आप मानते हैं। और मेरा यह फ़र्ज़ है... हमारा... आप ही उनकी मदद कर सकते हैं! मैं आपके पांव पड़ती हूं!"

झिझकते हुए वह उसकी ओर बढ़ने को हुई, जैसे कि इस तरह अपने अनुरोध की गम्भीरता पर बल देना चाहती हो। वह और भी

अधिक बेगाना होता जा रहा था, और इससे लीज़ा की आशा बुझ रही थी. उसे लग रहा था कि उसकी भावनाएं शब्द मात्र बनकर रह रही हैं।

"किसी की मदद की सोचने से पहले उसका अपराध पता होना चाहिए। और अपराध तय करना अदालत का काम है। इसमें क्या किया जा सकता है?"

"यह तो पता लगाया जा सकता है कि कोई अपराध है या नहीं। हो सकता है कोई अपराध हो ही न? मुझे तो नहीं बतायेंगे, पर आपको जरूर बता देंगे। अगर आप पूछ ही देंगे, तो यही बहुत बड़ी मदद होगी।"

वह फिर से चुप रहा। तब लीज़ा कुछ खिसियाती हुई बोली:

"आपको तो उन्हें बताना ही होगा। आप अधिकारी हैं। इसीलिए मैं आपके पास आई हूं।"

किरील ने तेजी से अपनी पांडुर आंखें उसकी आंखों में डालीं और पूछा

"केवल इसी आधार पर आप मेरे पास आई हैं?"

लीजा को एक बार फिर उसमें वही किरील दिखा – उसकी आंखों की इस भेदती पांडुरता में, उसके किशोरसुलभ विश्वास से भरे स्वर में। वह कुछ न कह पाई, इस नजर को सहने में ही उसे अपना सारा मनोबल लगाना पड़ रहा था।

"वह ख्वाल्ीन्स्क क्यों गये थे?"

"यह उनकी पुरानी मनोकामना थी। वह वहां अपने अंतिम दिन ..."

"वहां उनके मित्र हैं?"

"नहीं, उल्टे वह तो एकांत चाहते थे। मठ में बसना चाहते थे वह ... मठवासी बनने को।"

ये अंतिम शब्द कहते हुए उसके गाल जलने लगे, जाने क्यों वह शर्मिंदा थी, लेकिन तभी उसके दिमाग में एक विचार कौंधा और वह सहसा चुनौती भरे स्वर में बोली:

"मुझे पूरा यकीन है कि उन्हें इसीलिए गिरफ्तार किया गया है। पूरा विश्वास है! क्योंकि वह मठ में रहना चाहते थे। लेकिन

किसी के मत के लिए उसे सज़ा देना तो क्रूरता है! वह बूढ़े हैं, उन्हें बदला नहीं जा सकता। और वह... वह उन लोगों में से नहीं, जिन्हें बदला जा सकता है। मैं उन्हें बहुत अच्छी तरह जानती हूं। उनकी अपनी कमज़ोरियां हैं, अपनी सनकें हैं। पर वह ईमानदार आदमी हैं। उनसे उनके अन्तःकरण की स्वतंत्रता तो नहीं छीनी जा सकती।"

"हो सकता है, आप उन्हें बहुत अच्छी तरह न जानती हों," किरील ने मानो यों ही कहा।

लीज़ा के दिमाग में सहसा जो बात आई थी, उस पर न केवल किरील को, बल्कि अपने आपको भी यकीन दिलाते हुए वह तेज़ी से बोलती गई थी और अब उसकी सांस जल्दी-जल्दी चल रही थी।

"पर आप तो उन्हें बिल्कुल भी नहीं जानते!" उलाहना के स्वर में उसने कहा।

"कुछ हद तक तो जानता हूं... कम से कम आपके प्रति उनके रुख से ही। आपके जीवन में उनकी भूमिका से ही।"

"मेरा जीवन!" तीखे विरोध के साथ लीज़ा बोली। "इसके लिए मैं खुद ज़िम्मेदार हूं, औरों से अधिक ज़िम्मेदार हूं। पर यह तो स्वाभाविक ही है कि मेरे बाप ने मुझे पाला, किसी दूसरे ने नहीं, कि उसने मुझे अपने ढंग से पाला-पोसा। वह मेरे भाग्य के लिए उत्तरदायी हैं? मानती हूं। कभी थे उत्तरदायी। पर किसके सम्मुख? मैं उनसे जवाबदेही नहीं करूंगी। क्या आप... क्या आप उनका न्याय करना चाहते हैं?"

"मैं पहले ही कह चुका हूं कि मैं किसी का न्याय नहीं कर सकता। इसीलिए मदद भी नहीं कर सकता। और अगर आप भी उनका न्याय नहीं करना चाहतीं, तो यह जाने बिना कि उनका अपराध क्या है, आप उन्हें सच्चा कैसे ठहरा सकती हैं? आखिर यह तो नहीं माना जा सकता कि उन्हें मठ में जाने की वजह से गिरफ़्तार किया गया है।"

"मैं अपने भाग्य के लिए उन्हें उत्तरदायी नहीं ठहराती। मेरे मन में उनके लिए कोई दुर्भाव नहीं है। वह मुसीबत में हैं। वह मेरे पिता हैं।"

वह चीखी:

"मेरे पिता हैं – समझते हैं कि नहीं? आपकी मां को अगर मदद

की जरूरत होगी तो क्या आप उनकी रक्षा नहीं करेंगे? कैसा कलेजा है आपका?!"

"कलेजा?" इज्वेकोव ने हौले से दोहराया। वह उठ खड़ा हुआ, लीज़ा के शब्दों ने मानो उसे सहसा किसी ऐसी भावना की याद दिलाई थी, जिस पर वह आश्चर्यचकित होकर ध्यान दे रहा था। "पिता, माता, भाई ये शब्द मंत्रों जैसे हैं, और हम इनसे वैसे ही वशीभूत हो जाते हैं, जैसे आदिम युग में लोग मंत्रों से प्रभावित होते थे। लेकिन आपका पति था—शुब्निकोव। क्या आप उसकी भी केवल इसीलिए रक्षा करने को तैयार हो जातीं कि वह आपका पति है?"

लीज़ा को कतई उम्मीद नहीं थी कि यह नाम लिया जायेगा, और यह कि किरील के स्वर में ऐसा उलाहना होगा। उसे लगा कि वह बातचीत छिड़ गई है, जिसकी बहुत पहले वह अक्सर कल्पना किया करती थी, जब किरील से भेंट का विचार मन में बना हुआ था, और वह यह सोचा करती थी कि कैसे उसे अपने विवाह का कारण समझायेगी, जिसे खुद नहीं समझती।

शांत स्वर में बोलने की कोशिश करते हुए उसने जवाब दिया (वह बार-बार अपने आपको यह याद दिलाती थी कि वह व्याकुल न होने और इज्वेकोव से एक प्रार्थी के रूप में शांत स्वर में बात करने की कसम खाकर आई है)।

"हां, जब शुब्निकोव मेरा पति था, तो मैं उसकी रक्षा करने आती। शायद अब भी रक्षा करती, क्योंकि वह मेरे बेटे का बाप है।"

"लेकिन ऐसा अंधापन क्यों?! क्या आप यह नहीं सुनतीं कि ये केवल मंत्र हैं—पति, पिता! इन शब्दों के पीछे लोग हैं और उनके पीछे उनके कर्म। कैन भी तो भाई कहलाता था!"

"आप मुझे किस बात का दोषी ठहरा रहे हैं?" लीज़ा ने रोष से कहा। "इस बात का कि मेरे सम्बन्धी मेरे सम्बन्धी हैं? कि वे मुझे प्रिय हैं?"

"दोषी ठहरा रहा हूं?" किरील हैरान-परेशान सा मुस्कराया, मानो इन शब्दों से उसे ठेस पहुंची थी।

"इसमें मेरा तो कोई दोष नहीं कि हमारे जीवन में सब कुछ ऐसे हुआ," लीज़ा जल्दी-जल्दी बोलने लगी। वह भी उठ खड़ी हुई।

"कि हमारे भाग्य हमारी इच्छा पर निर्भर नहीं। और मैंने तो तुम्हें" (उसके मुंह से अनायास ही हृदय की पुकार की भांति "तुम्हें" निकला और वह पल भर को ठिठकी) "...तुम्हें उस रास्ते पर नहीं धकेला था, जो मुझे तुमसे दूर ले गया!"

वह बुत बना खड़ा था। लीज़ा को होश आया कि उसने क्या कह डाला है, और उसने माथे पर ऐसे हाथ फेरा, जैसे उसे चक्कर आ गया हो और वह अपने आप को संभाल रही हो।

"मैंने उम्र भर कभी भी और किसी भी बात का आपको दोष देने की नहीं सोची थी," किरील ने कहा। "आप स्वतंत्र थीं और अपनी स्वतंत्र इच्छा से जैसा आपने चाहा वैसा आपने किया। किशोरा-वस्था में हमारे उन सम्बन्धों से न आप पर कोई बंधन था और न मुझ पर। और मेरे ख्याल में अब तो उनका कोई बंधन और भी कम है।"

"माफ़ कीजिये, मेरे मुंह से यह बात निकल गई, क्योंकि आपने मेरे विवाह की चर्चा छेड़ी। मैं तब यह समझती थी कि मुझे आपका इंतज़ार करने या आपके पीछे चलने का साहस न कर पाने की सख्त सज़ा मिली है..." (वह सिर उठाकर प्रायः क्रोध से उसकी ओर देख रही थी) "पर अब आप मुझे यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि अगर मैं आपके पीछे चली होती, तो मुझे और भी सख्त सज़ा मिलती!"

एक बार फिर किरील के बढ़ते आश्चर्य को देखकर वह मानो वास्तविकता में लौटी और उसने माथे पर हाथ रखा। सिर घुमाने पर उसने दूसरे कमरे के दरवाज़े में वेरा निकान्द्रोव्ना को खड़े पाया।

"अनचाहे ही मैंने आपकी बातचीत सुन ली," वेरा निकान्द्रोव्ना बोली। "बुरा न मानना। आप तो किरील से भी और मुझ से भी मिलने आई हैं न?"

"मुझे आपसे बहुत उम्मीद थी।" लीज़ा थकी-मांदी सी बोली। उसका हौसला खत्म हो रहा था और लगता था कि वह अब न तो गुस्से से चीख सकेगी और न अनुनय-विनय कर पायेगी।

"मैं सब समझती हूं," वेरा निकान्द्रोव्ना ने कहा और हौले से लीज़ा के पास बढ़ आई। "आपके अनुरोध में समझाने की कोई बात

नहीं है। और किरील निर्ममता के, यहां तक कि क्रूरता के आपके उलाहने भी माफ़ कर देगा।"

उसने बेटे की ओर देखा, मानो उसे सहमत होने को कह रही हो। किरील कुछ नहीं बोला।

"मुझे बस यह ख्याल आता है," वह बोलती गई, "शायद आपने अतीत की चर्चा बेकार ही छेड़ी। अतीत से कोई मदद नहीं मिल सकती। उसे भुलाना तो किसी के बस के बाहर है। और आपने मुझे यही फिर से याद दिला दिया है कि जब किरील को मदद की ज़रूरत थी, तो कैसे मेरकूरी अव्देयेविच ने साफ़ इन्कार कर दिया था। या यह कि कैसे हम दोनों उन दीवारों पर सिर पीटती रही थीं, जिनके पीछे ओज्नोबिशिन भी बैठा करता था... अगर यह वही ओज्नोबिशिन है तो ..."

"हे भगवान!" लीज़ा बुदबुदाई।

"मैं आपको इस अतीत का उलाहना नहीं दे रही, विश्वास मानिये!" घबराते हुए कि लीज़ा उसे अपनी बात पूरी नहीं करने देगी, वेरा निकान्द्रोव्ना जल्दी-जल्दी कह रही थी। "पर क्या उन लोगों को निर्ममता का उलाहना दिया जा सकता है, जिन्होंने अतीत में बेहया क्रूरता के प्याले की आखिरी बूंद तक पी और जो अब इससे संघर्ष में अपनी जान तक देने को तैयार हैं?"

"नहीं, नहीं," सहसा किरील ने दृढ़तापूर्वक उसे रोका। "यह ठीक नहीं। मैं किसी से बदला लेने के इरादे से कुछ नहीं करना चाहता।"

"हां, हां, किरील! मैं तो जानती हूं कि तुम निजी कारणों से कुछ नहीं कर सकते!" मां ने खुशी और गर्व के साथ उसकी बात में बात मिलाई।

"भगवान के वास्ते!" लीज़ा निढाल सी बोली। "क्या मैं यह मुकदमा सुनने यहां आई हूं? आप क्या सोचते हैं कि मेरे लिए यहां आना, आपके यहां आना आसान था? आप साफ़-साफ़ कह दीजिये कि इन्कार करते हैं और मैं चली जाऊंगी..."

इतना कहते हुए उसने इज्वेकोव की ओर कदम बढ़ाया, लेकिन यह अंतिम कदम भरने की शक्ति उसमें न रही थी। वह कुर्सी की पीठ पकड़कर बैठना चाहती थी, पर मानो अपनी शिथिल गति को ही

जारी रखते हुए वह झुकी और गिर पड़ी। नहीं यह गिरना नहीं था – लीज़ा घुटनों पर टिक गई और ऐसे ही खड़ी हो गई, जैसे कि किरील के सामने अपने भारी पड़ गये हाथ उठाकर घुटने ही टेकना चाहती थी।

किरील ने झट से उसके आगे बढ़े हाथ पकड़ लिये और वेरा निकान्द्रोव्ना भी लीज़ा को उठाने लपकी। परन्तु इसी क्षण कमरे में एक नया सहमा सा स्वर गूंजा, जिसकी किसी को आशा न थी:

"क्या हुआ? क्या हुआ?"

सबकी नज़रें दरवाज़े की ओर घूमीं, जो लीज़ा के आने के वक्त से ही अधखुला था।

आनोच्का चौखट पर हाथ टिकाये ड्योढ़ी में खड़ी थी – आगे को झुकी हुई मानो दौड़ते-दौड़ते उसने मुश्किल से अपने आप को रोका हो।

किरील ने तुरन्त ही उठ खड़ी हुई लीज़ा के हाथ छोड़ दिये और आनोच्का की ओर बढ़ा।

लेकिन वह उसके बगल से निकलती हुई वेरा निकान्द्रोव्ना के पास गई, जल्दी-जल्दी कई बार उसके गाल चूमे, अपनी फटी-फटी आंखों से लीज़ा की ओर देखा, उससे नमस्ते की और तब कहीं किरील की ओर मुड़ी।

"आप आ गये?" उसने पूछा और फिर से अपनी फटी-फटी आंखें लीज़ा की ओर मोड़ीं। "वीत्या ने पाव्लिक को मेरकूरी अव्देयेविच के बारे में बताया है। मुझे सब पता है," सहानुभूति और बालसुलभ भय के आवेग में वह बोली। "आपको अभी कुछ और पता नहीं चला? आप घबराइये नहीं, मुझे विश्वास है कि डरने की कोई बात नहीं। बस अच्छी तरह कोशिश करनी चाहिए।" वह फिर से किरील की ओर मुड़ी: "किरील निकोलायेविच, आप तो शायद सब कुछ करने का वायदा कर चुके हैं; है न?"

किरील ने शब्द चुन-चुनकर साफ़-साफ़ कहा:

"मैं येलिज़ावेता मेरकूर्येव्ना से वायदा करता हूं यह पता लगाने की कोशिश करूंगा कि उनके पिता पर क्या आरोप लगाया गया है।"

"और जहां तक हो सकता है मदद करेंगे?" आनोच्का ने ऐसे लहजे में पूछा, जैसे इसमें संदेह की कोई गुंजायश न हो।

"और अगर सम्भव हुआ तो मदद करूंगा," किरील ने भी उसी लहजे में कहा।

लीजा उन दोनों की ओर देख रही थी और कुछ समझ नहीं पा रही थी। इन अल्प कटु क्षणों में पहली बार वह यह देख रही थी कि किरील में कोई दो अलग-अलग व्यक्तित्व नहीं हैं (जैसा कि उसे लग रहा था), बल्कि वह अविस्मरणीय किशोर किरील और उसके लिए अबोध, नया इज़्वेकोव दोनों रूप एक ही में मिले हुए हैं। साथ ही उसने आनोच्का की आंखें भी देखीं, जिनमें केवल उदारहृदय सहानुभूति और बालसुलभ भय ही नहीं, एक सुखद हर्ष की भी चमक थी।

लीजा सहसा सीधी खड़ी हो गई।

"मैं चलती हूं। माफ़ कीजिये।"

किसी की ओर भी देखे बिना उसने सिर झुकाया।

"अकेली? मैं आपको छोड़ आती हूं।" आनोच्का बोली।

"नहीं, रहने दीजिये। मुझे जल्दी है।"

"मैं आपको अकेले नहीं जाने दूंगी," वेरा निकान्द्रोव्ना बीच में बोली। "आप अभी शांत नहीं हुई हैं। मैं ट्राम तक छोड़ आती हूं।"

लीजा हठभरे कदमों से दरवाज़े की ओर चली, पर वेरा निकान्द्रोव्ना लपककर उसके पास पहुंच गई, उसकी बांह में बांह डाली और दोनों बाहर चली गईं।

किरील कुछ असमंजस और मानो विस्मय के साथ मुस्कराया। आनोच्का ने कहा :

"लीजा बहुत बदल गई है..."

"हां।"

"तरस आता है न उस पर?"

"बहुत।"

किन्हीं दूसरे प्रश्नों की प्रतीक्षा में वह हिले-डुले बिना उसके सामने खड़ा था। आनोच्का ने अपनी झुकी-झुकी भौंहों तले से उसकी ओर देखा।

"मैंने आते ही आपके पास जाने की सोची थी," किरील बोला, वह मानो उसकी सहानुभूति पाना चाहता था।

आनोच्का टकटकी लगाये उसे देखे जा रही थी। वह उसके निकट चला गया।

"आपको सचमुच नहीं पता था कि मैं आ गया?"

सहसा आनोच्का ने उसकी उंगलियां पकड़ लीं, नारीसुलभ आवेग से उन्हें अपनी छाती पर दबाया और यह महसूस करते हुए कि कैसे उसके कोमल स्पर्श से किरील की उंगलियों का रूखापन कम पड़ रहा है, हौले से बोली:

"खूब पता था कि आ गये हो! तभी तो दौड़ी आई हूं..."

किरील ने उसकी छाती पर सिर झुकाया, इन कठिन परीक्षाओं के सप्ताहों में पहली बार उसे अपने अंग-अंग में व्याप्त होती राहत का अनुभव हो रहा था।

३२

अस्पताल के वार्ड में घुसते ही किरील सहसा ठिठका। उसे बताया गया था कि रागोज़िन के घाव गम्भीर नहीं, लेकिन यहां उसने रागोज़िन को अजीब ही मुद्रा में लेटे पाया: उसका पलंग दीवार से हटा हुआ था और उनके बीच लगाई गई टेक पर उसकी बाईं बांह शरीर से समकोण पर फैली हुई थी। बांह पर ही नहीं, कंधे, गर्दन और छाती के एक भाग पर भी पट्टियां बंधी हुई थीं।

रागोज़िन ने शरीर के पट्टियों में लिपटे भाग को हिलाये-डुलाये बिना दूसरी बांह की कोहनी आसानी से बिस्तर पर टिका ली और किरील की ओर हाथ हिलाया व आंख मारी।

"देखा लंगर डाल लिया हमने?" वह बोला। "कोई बात नहीं, जल्दी ही उठा लेंगे लंगर। दायां पहलू सही सलामत है।"

उसकी आंखों में स्नेहपूर्ण मुस्कान थी।

"कुर्सी ले लो। सो, लौट आये?"

किरील ने हौले से उसकी उंगलियां दबाईं और ज़रा दूर बैठ गया, ताकि घायल दोस्त उसे अच्छी तरह देख सके।

"कब लगी?" सिर से पट्टियों की ओर इशारा करते हुए किरील ने पूछा।

"कल एक हफ़्ता हो जायेगा। त्सरीत्सिन के पास।"

"हां, मुझे बताया गया है। अब लाना चाहिए था तुम्हारे लिए

कुछ खाने-पीने को," किरील कुछ अटपटा सा महसूस करते हुए मुस्करा गया। "माफ करना, वक्त नहीं था। मैं आज सुबह ही लौटा हूं।"

"छोड़ो, क्या बात करते हो। मेरे लिए खाना आ जाता है, उसकी परवाह मत करो।"

"पलस्तर चढ़ा है?" किरील ने फिर से बांह की ओर इशारा किया। "हड्डी टूट गई?"

"अभी तो मैं जवान हूं, जुड़ जायेगी," रागोज़िन ने वैसे ही मुस्कराते हुए जवाब दिया।

वह अपनी इस विवश, असहाय स्थिति पर झेंप रहा था। इसके अलावा किरील के आते ही उसके मन में वह बेचैनी उठने लगी थी, जो मोर्चे से पीछे हटते समय दिन पर दिन मन में बढ़ती रही थी और जिसे वह दबाये हुए था। अब चूंकि दोनों एक दूसरे का ध्यान निजी अनुभवों के प्रश्नों की ओर ही ले जा रहे थे, और उस महत्वपूर्ण बात पर चुप्पी साधे हुए थे, जो उन्हें एक दूसरे से मिलाती थी, इसलिए रागोज़िन को अपनी बेचैनी छिपाये रखने में और अधिक कठिनाई हो रही थी।

यह बेचैनी तब पैदा हुई थी, जब रागोज़िन को यह पता चला था कि त्सरीत्सिन के पास उनकी हार हुई है और विशेष प्रहारक दल ने भी मोर्चे पर अपनी कार्रवाइयां रोक दी हैं। इस बेचैनी के बढ़ने का कारण यह था कि दूसरे मोर्चों पर घटनाओं की नई-नई जानकारी तो मिल रही थी, परन्तु यह ज्ञान अधूरा था और इन सभी घटनाओं का कारण समझ में नहीं आता था।

रागोज़िन और किरील इज़्वेकोव तथा प्रायः उनके ही स्तर के सैकड़ों-हजारों दूसरे सोवियत सैनिक जो कुछ हो रहा था उसकी जानकारी उन स्रोतों से ही पाते थे, जो उनकी पहुंच में थे, यथा: वे कार्रवाइयां, जिनमें वे स्वयं भाग लेते थे; समाचारपत्र, जिनमें आवश्यक जानकारी का एक अंश ही होता था; सभाएं, जिनमें इन समाचारपत्रों की ही खबरों पर या केन्द्र के उन निर्देशों पर, जो गोपनीय नहीं थे, विचार-विमर्श होता था; उच्च कमानों द्वारा तैयार की जा रही और गोपनीय रखी जा रही योजनाओं की अफ़वाहें। रागोज़िन और किरील रूस में जो कुछ घट रहा था उसका सामान्य अर्थ तथा जिन छोटी-

छोटी घटनाओं को वे स्वयं देख पाते थे, उनके प्रत्यक्ष कारण समझते थे, ठीक वैसे ही जैसे प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह किसी भी स्तर पर था, अपने-अपने ढंग से इन्हें समझता था। परन्तु गृहयुद्ध की समग्र घटना की प्रेरक शक्तियों के कार्य को वे उसके परिणामों में ही देख सकते थे, और इस घटना के दौरान हो रहे परिवर्तनों के प्रमुख कारण उनके लिए तब तक अनजाने ही रहते थे, जब तक कि सब उन्हें न जान जाते।

रागोज़िन और किरील मानो शत्रु से घिरे नगर की एक सड़क पर लड़ रहे थे और इस सड़क के घरों तथा मोर्चेबन्दी के पीछे वे असंख्य दूसरी सड़कों और मकानों को नहीं देख पाते थे, उन्हें बस इतना पता था कि वहां भी लोग लड़ रहे हैं, और अगर यह अफ़वाह सुनने में आती कि नगर के एक हिस्से में उनकी पराजय हो गई है, तो वे यह न समझ पाते कि वहां पराजय कैसे हो गई, जबकि वे स्वयं तो इस सड़क पर जूझ रहे हैं और जबकि नगर की कमान का यह मत है कि नगर को शत्रु के हवाले नहीं किया जा सकता।

यह जानते हुए भी कि उनका ज्ञान अधूरा है रागोज़िन और किरील घटनाओं के बारे में अपनी राय इस ज्ञान के आधार पर ही तय कर रहे थे और ऐसा करते हुए वे अनचाहे ही एक काल्पनिक वास्तविकता बना लेते थे, जो सच्ची वास्तविकता से कभी आगे होती और कभी पीछे।

उदाहरण के लिए जिस दिन किरील रागोज़िन से मिलने अस्पताल गया, उस दिन उसके दिमाग में यही सवाल घूम रहा था कि क्या मिरोनोव वोरोनेज से मोर्चे की ओर पीछे हट रही मामोन्तोव की कोर से मिल पायेगा या नहीं, जबकि इससे एक दिन पहले मिरोनोव की बची-खुची टुकड़ियों को बलाशोव ज़िले में घेर लिया गया था और स्वयं मिरोनोव को गोरोदोविकोव की कैवेलरी डिविज़न ने बंदी बना लिया था। यह डिविज़न बुद्योन्नी की कोर का ही अंश थी। इसी तरह भेंट के दिन भी किरील और रागोज़िन दक्षिणी मोर्चे की आगामी नयी घटनाओं पर ही सबसे अधिक चिंतित हो रहे थे और इन घटनाओं पर विचार उस स्थिति के आधार पर ही कर रहे थे, जिसके फलस्वरूप लाल सेना अगस्त में इस मोर्चे पर जवाबी हमला शुरू कर सकी थी।

उधर वास्तविकता यह थी कि सितम्बर के मध्य के इस दिन तक दक्षिणी मोर्चे पर स्थिति में आमूल परिवर्तन आ चुका था।

अगस्त में दक्षिणी मोर्चे की कमान और सर्वोच्च कमान की योजना के अनुसार जो जवाबी हमला शुरू किया गया था वह पूरी तरह से विफल रहा था। सेनाओं का विशेष प्रहारक दल दोन के इलाके की सीमाओं तक जा पहुंचा था, बायें पार्श्व में त्सरीत्सिन के पास उसकी हार हुई थी और अब दोन के सफ़ेद गार्डी कज़्ज़ाक संगठित होकर उसका सामना कर रहे थे, किसी भी कीमत पर वे लाल सेना को दोन इलाके में आगे बढ़ने से रोकने पर उतारू थे। सहायक सेना दल, जो प्रहारक दल से दाईं ओर के मोर्चे पर कार्यरत था, पहले ही पराजित हो चुका था और सफ़ेद गार्डों ने उसे उस स्थान से भी पीछे धकेल दिया था, जहां से अगस्त के मध्य में इस दल ने हमला आरम्भ किया था। इस बीच देनीकिन की वालंटियर सेना ने उत्तर की ओर, कूर्स्क-ओर्योल और वोरोनेज की केंद्रीय दिशा में प्रहार करने के लिए अपने प्रमुख सैनिक दल जमा कर लिये थे।

रागोज़िन और किरील देनीकिन के 'मास्को' निर्देश (मास्को की ओर बढ़ने की उसकी जुलाई की योजना) से परिचित थे, और वे सफ़ेद गार्डों की सम्भाव्य कार्रवाइयों का अनुमान अपने इस ज्ञान के आधार पर लगा रहे थे।

परन्तु सितम्बर में मास्को पर हमला करने की देनीकिन की योजना जुलाई की योजना से प्रायः पूर्णतया भिन्न थी। 'मास्को' निर्देश के अनुसार देनीकिन की सभी सेनाओं को एकसाथ चार दिशाओं में राजधानी की ओर बढ़ना था, इनमें से तीन दिशाएं कज़्ज़ाक सेनाओं को सौंपी गई थीं और एक वालंटियर सेना को। सितम्बर में देनीकिन ने जो योजना अपनाई उसके अनुसार हमला मुख्यतः वालंटियर सेना को केन्द्रीय दिशा में करना था और श्कुरो की वालंटियर कैवेलरी तथा मामोन्तोव के दोन रिसाले को उसका समर्थन करना था। कज़्ज़ाक सेनाओं को देनीकिन ने दोन के इलाके की सीमाओं की रक्षा का ही काम सौंपा था, कज़्ज़ाकों के इलाके से बाहर उन्हें अधिक नहीं बढ़-ना था।

देनीकिन ने यह योजना इस बात को ध्यान में रखकर बनाई थी

कि कज़्ज़ाक सेनाएं अपनी सीमाओं से बाहर लड़ने में खास उत्साह नहीं दिखाती थीं, पर अपने कज़्ज़ाक इलाकों की रक्षा के लिए जी-जान से लड़ती थीं, इस उम्मीद में कि इन इलाकों में प्रतिक्रांतिकारी "स्वा-यत्त" सत्ता स्थापित हो जायेगी, जिसके सफ़ेद गार्डी कज़्ज़ाक सपने देखते थे। देनीकिन ने कज़्ज़ाकों को प्रतिरक्षा का कार्यभार सौंपा, जिसे वे सफलतापूर्वक निभाते थे, और आक्रमण का कार्यभार वालंटियर सेना पर डाला, जिसके अफ़सर रूसी राजतंत्र की पुनःस्थापना के लिए राजधानी पहुंचने को उतावले थे।

रागोज़िन और किरील न देनीकिन की यह योजना ही जानते थे और न ही लाल सेना के दक्षिणी मोर्चे की क़मान की गलतियां।

वे यह भी नहीं जान सकते थे कि कूर्स्क की ओर देनीकिन का अभियान आरम्भ होने से चार दिन पहले ही जनतंत्र की क्रांतिकारी सैनिक परिषद ने सर्वोच्च कमान की वह रिपोर्ट स्वीकार और अभिपुष्ट की थी, जिसमें कहा गया था कि "कूर्स्क-वोरोनेज की दिशा पहले भी प्रमुख दिशा नहीं थी और अब भी नहीं बनी है", कि "हमारे बायें पार्श्व (अर्थात दोन स्तेपियों) के स्थान पर कूर्स्क-वोरोनेज की दिशा को प्रमुख रणक्षेत्र मान लेने का अर्थ होगा अभी-अभी शत्रु के हाथ से छीनी गई पहलकदमी को छोड़ देना तथा हमारी कार्रवाइयों को शत्रु की इच्छा के अनुरूप बनाना"। उन्हें यह भी नहीं पता था कि इस रिपोर्ट की अभिपुष्टि के फलस्वरूप जिस क्षण वालंटियर सेना कूर्स्क की दिशा में हमला करने को तैयार हो गई थी, उसी क्षण सर्वोच्च कमान ने दक्षिणी मोर्चे की कमान को यह निर्देश भेजा था कि "दक्षिणी मोर्चे के हमले की मूल योजना में कोई परिवर्तन नहीं आया है: विशेष दल को ही प्रमुख प्रहार करना है... जिसका उद्देश्य है दोन और कुबान इलाकों से शत्रु का सफ़ाया करना"।

सर्वोच्च कमान के इस निर्देश और देनीकिन की योजना से अनभिज्ञ होने के कारण रागोज़िन और किरील यह सोच तक न सकते थे कि एक बार फिर दोन इलाके को पार करके कुबान पर हमला करने पर ज़ोर देते हुए सर्वोच्च कमान "हमारी कार्रवाइयों को शत्रु की इच्छा के अनुरूप" ही बना रही थी, क्योंकि शत्रु तो यहां कज़्ज़ाकों की प्रतिरक्षा क्षमता की ओर से निश्चिंत था। रागोज़िन और किरील तो

बस यही चाहते थे कि लाल सेना का जो सफल अभियान रुक गया है, वह फिर से शुरू हो जाये और सफ़ेद गार्डों को जल्दी से जल्दी हरा दिया जाये।

लेकिन वे दोनों यह जानते थे कि उनकी भेंट के दिन तक, अर्थात सितम्बर के मध्य तक त्सरीत्सिन में हार के बाद उस दिशा में सैनिक कार्रवाइयां रुक गई थीं, और वे यह नहीं समझ पा रहे थे कि ऐसा क्यों हुआ, जबकि अगस्त में सब कुछ इतनी अच्छी तरह आरम्भ हुआ था। वे यह भी जानते थे कि दूर साइबेरिया में एडमिरल कोल्चाक की सेना को पहले तो खदेड़ दिया गया था, वह पीछे हट रही थी, पर फिर पेत्रोपाव्लोव्स्क के पास कोल्चाक ने जवाबी हमला किया था, जिससे पूर्वी मोर्चे की एक सोवियत सेना को तोबोल नदी के पार कोई डेढ़ सौ मील पीछे हटना पड़ा था – इसका कारण भी उनकी समझ से बाहर था। अन्ततः, एक और घटना थी, जिसके बारे में वे सुन चुके थे और जो सबसे खतरनाक थी: दक्षिणी मोर्चे के केन्द्रीय भाग पर दो सोवियत सेनाओं के संधि-स्थल पर देनीकिन की वालंटियर सेना ने जोरदार प्रहार करके सोवियत मोर्चे में दरार डाल दी थी और इस दरार को तेजी से फैलाते हुए यह सेना कूर्स्क की ओर बढ़ रही थी।

यह सारी जानकारी पाने के साथ-साथ रागोज़िन की बेचैनी भी बढ़ती गई थी। लेकिन वह उसे मन के एक कोने में दबाये हुए था। अब वह यह देख रहा था कि इज़्वेकोव उसकी मनोस्थिति समझ रहा है और स्वयं उसके मन में भी ऐसी ही बेचैनी छिपी हुई है। दोनों को ही यह अहसास हो रहा था कि कहीं कुछ गड़बड़ है और दोनों इसकी चर्चा किये बिना नहीं रह सकते थे, लेकिन साथ ही कोई भी पहले यह चर्चा छेड़ने का साहस नहीं कर पा रहा था। संकट को अभी तक संकट नहीं माना गया था। सेनाओं और डिविज़नों की कमानें दक्षिण मोर्चे की कमान की हां में हां मिला रही थीं, और मोर्चे की कमान सर्वोच्च कमान की सहमति से संकट को छोटी-मोटी अप्रिय घटनाएं ही बना रही थी। यही कारण था कि रागोज़िन और किरील के लिए संकट कोई प्रत्यक्ष बात नहीं हो सकती थी, उन्हें इसकी आशंका ही थी, और यह प्रतीक्षा थी कि किसी घटना में या किसी दूरदर्शी, प्रबल शक्ति के हस्तक्षेप से यह संकट प्रकट हो जायेगा।

परन्तु वाद में भी जब पतझड़ की एक के बाद एक घटनाओं से लाल सेना के दक्षिणी मोर्चे के लिए घोर अनर्थ का बिल्कुल स्पष्ट खतरा पैदा हो गया, और फिर इन्हीं घटनाओं में ऐसा मोड़ आया कि देनीकिन की पूर्ण पराजय हुई, तब भी रागोज़िन और किरील इन घटनाओं पर विचार करते हुए पूरी तरह यह नहीं जानते थे कि किन कारणों से पहले दक्षिणी मोर्चा अनर्थ के गर्त पर जा पहुंचा था और फिर सर्वनाश से बचकर विजय के मार्ग पर अग्रसर हुआ।

इतिहास ने ही इन कारणों को पूरी तरह उजागर किया, और इतिहास से जो तथ्य प्रकाश में आये, उनमें एक तथ्य ऐसा था, जिसने दक्षिण में गृहयुद्ध की दशा बदलने में पहली प्रेरक शक्ति का काम किया।

उस दिन, जब रागोज़िन और किरील दक्षिणी मोर्चे की बुरी स्थिति के बारे में अपनी आशंकाएं व्यक्त करने का साहस नहीं कर पा रहे थे, जब देनीकिन मोर्चा तोड़कर तेज़ी से कूर्स्क की ओर बढ़ रहा था, जब लाल सेना की सर्वोच्च कमान प्रहारक दल के जवाबी हमले को रोकने की विवशता को "योजना के पहले चरण की पूर्ति", सहायक दल की चाल की विफलता को "अभियान में आई मामूली रुकावट" तथा मामोन्तोव के विनाशकारी धावे को शत्रु की "नाममात्र सफलता" बता रहा था –

उसी दिन लेनिन ने एक पत्र लिखा, जो लाल सेना की सामरिक पराजयों के दोषियों के लिए अभियोग पत्र था।

यह पत्र जनतंत्र की क्रांतिकारी सैनिक परिषद के एक सदस्य के नाम लिखा गया था, जो दक्षिणी मोर्चे की क्रांतिकारी सैनिक परिषद का भी सदस्य था।

लेनिन ने लिखा था :

"...आश्वासन देते जाना बुरी कार्यनीति है। यह 'आश्वासनों का खेल' बन जाता है।

"वास्तव में हमारी सैनिक कार्रवाइयां रुकी पड़ी हैं, यह प्रायः विफलता ही है...

"...मामोन्तोव के खिलाफ़ हम निष्क्रिय हैं। प्रत्यक्षतः, एक के बाद एक मामले में हम देर कर रहे हैं। उत्तर से वोरोनेज जा रही

टुकड़ियां देर से पहुंचीं। २१वीं डिविज़न को दक्षिण भेजने में हमने देर की। बख्तरबंद गाड़ियों के मामले में देर की। संचार के प्रबन्ध में देर की। सर्वोच्च कमांडर अकेले ओर्योल गये थे, या आपके साथ – काम नहीं किया। सेलिवाचेव* के साथ सम्पर्क स्थापित नहीं किया, उस पर नज़र रखने का प्रबन्ध नहीं किया, हालांकि केन्द्रीय समिति बहुत **पहले से, सीधे-सीधे** इसका निर्देश दे चुकी है।

"नतीजा यह है कि मामोन्तोव के ख़िलाफ़ हम निष्क्रिय हैं, सेलिवाचेव निष्क्रिय है (बजाय उन बचकाना तस्वीरों में दिखाई गई किसी भी दिन होनेवाली विजय के – याद है आपने मुझे वे तस्वीरें दिखाई थीं? और मैंने कहा था: दुश्मन को तो भूल गये!!)।

"अगर सेलिवाचेव भाग गया या उसके डिविज़न कमांडरों ने हमारे साथ विश्वासघात किया, तो इसका दोष जनतंत्र की क्रांतिकारी सैनिक परिषद के सिर होगा, क्योंकि परिषद सो रही थी और आश्वासन दे रही थी, काम कुछ नहीं कर रही थी। हमें सबसे अच्छे, **सबसे उत्साही** कमिसारों को दक्षिणी मोर्चे पर भेजना चाहिए, न कि उनींदों को।

"नई टुकड़ियां गठित करने में भी हम देर कर रहे हैं – पतझड़ बीत रहा है। उधर देनीकिन अपनी शक्ति तिगुनी बढ़ा लेगा, टैंक वगैरह हासिल कर लेगा। ऐसे काम नहीं चल सकता। **कछुआ चाल छोड़कर फुर्ती से** काम करना चाहिए।

"... प्रत्यक्षतया, हमारी परिषद 'आदेश देती' ही है, उनके **पालन** पर नज़र रखने में दिलचस्पी नहीं लेती, या उसे यह आता ही नहीं। अगर यह हमारी आम बुराई है, तो सैनिक मामलों में इसका अर्थ पूर्ण पराजय ही है।"

परन्तु लेनिन के इस पत्र के बाद भी (जिस दिन यह भेजा गया, उसके तीन दिन बाद) सर्वोच्च कमांडर दोन की दिशा में कार्रवाइयों के परिणामों की प्रतीक्षा कर रहा था, उसने विशेष प्रहारक दल को

---

* सेलिवाचेव: उस सेना दल का कमांडर, जिसे अगस्त में दक्षिणी मोर्चे पर जवाबी हमले में सहायक प्रहार करने का काम सौंपा गया था; क्रांति से पहले ज़ारशाही सेना में कर्नल था। – सं०

यह आदेश भेजा था कि वह "तेज़ चाल" चलके अपने दायें बाज़ू की सेनाओं को दोन के तट तक बढ़ाये।

इसके भी तीन दिन बाद जब कूर्स्क भी हाथ से निकल चुका था, तब कहीं जाकर लेनिन के नये हस्तक्षेप के फलस्वरूप खतरे में पड़ गये ओर्योल क्षेत्र में रिज़र्व टुकड़ियां भेजी गईं। वैसे अभी इसका अर्थ यह नहीं था कि सर्वोच्च कमांडर ने दोन की स्तेपियों में बचाव पाने की अपनी ढिठाई छोड़ दी थी...

रागोज़िन अपनी मूंछों पर ताव देते हुए भिंची-भिंची आंखों से इज़्वेकोव की ओर देख रहा था और यह इंतज़ार कर रहा था कि कब वह सबसे महत्वपूर्ण बात की चर्चा छेड़ता है। इज़्वेकोव सोच रहा था कि रागोज़िन इस बात की चर्चा छेड़े।

पट्टियों को सीकर बनाया गया कामचलाऊ पर्दा खिड़की पर हिल रहा था। वार्ड में उड़ आया भौंरा गुस्से में शीशे पर भिनभिना रहा था। दरवाज़े के बाहर से नर्सों के स्लीपरों की आहट आ रही थी।

लगभग तीन महीने पहले जब यहां स्वास्थ्य लाभ गृह था और किरील दीविच से मिलने आया था, तो इस विशाल इमारत की मन पर बिल्कुल दूसरी ही छाप पड़ती थी। तब यहां वातावरण हर्षमय था, मानो यह वचन देता हुआ कि शीघ्र ही सब कुछ बहुत अच्छा हो जायेगा। अब यहां फ़ौजी अस्पताल था, वातावरण में आकुलता थी और इसकी खामोशी यह कहती लगती थी कि यहां लोग कष्ट सह रहे हैं, सो यहां फूंक-फूंककर कदम रखना चाहिए।

"तुम नाराज़ मत होना," किरील बोला, "मैं तुम्हारे बेटे का पता नहीं लगा सका। वक्त नहीं था। जब तक तुम यहां लेटे हो, मैं यह काम कर दूंगा।"

"हां, हां," रागोज़िन फिर से मुस्कराया और उसने अपनी भिंची आंख से चालाकी भरी नज़र छत की ओर डाली। "ठहरो ज़रा... ज़रा... ठहरो... अभी दिली बातों का वक्त नहीं। लोगों को अपने बच्चों तक की सुध-बुध लेने की फ़ुरसत नहीं, परायों की तो बात ही क्या। हो जायेगा!"

"मैं ज़रूर पता लगा दूंगा, इन्कार नहीं कर रहा," सहसा इज़्वेकोव ने उतावली से कहा।

"अरे, बुरा मत मानो! मुझे पता है तुम्हारा भी बड़ा मुश्किल वक़्त गुज़रा है। अपने अभियान के बारे में ही कुछ बता देते।"

"तुम ज़ूबिन्स्की को जानते थे?"

"कौन ज़ूबिन्स्की?"

किरील ने उसे ज़ूबिन्स्की की तोड़-फोड़ की बात सुनाई।

"शुक्र मनाओ कि उसने तुम्हारी पीठ में गोली नहीं दागी।"

"मैंने उसकी ओर पीठ कभी नहीं मोड़ी।"

"ठीक किया। हमारी कई मुसीबतों का कारण ही यह है कि हम इन भूतपूर्व अफ़सरों की ओर पीठ कर लेते है, जिन्हें हमने अपने फ़ौजी विशेषज्ञ बना रखा है... हो सकता है हमारे नगर का फ़ौजी कमिसार भी इन्ही विशेषज्ञों में से हो?"

"पता नहीं।"

"जांच लेना चाहिए। उसने ज़ूबिन्स्की को ही तुम्हारे साथ क्यों किया? शायद कोई दूर का इरादा रहा हो, हैं?.. दक्षिण के बारे मे तुम्हारा क्या ख्याल है?" सहसा रागोजिन ने पूछा।

"कैसा दक्षिण?" किरील जैसे समझा नहीं।

"कूर्स्क के पास। लगता है मामोन्तोव से कुछ सबक नहीं सीखा, हैं? उन्होंने एक बार कोशिश की—सफल रहे। सोचते हैं, फिर से क्यों न कर-देखा जाये?.. मैं सफ़ेद गार्डों की बात कर रहा हूं, सफ़ेद गार्डों की, हैं?"

"कहीं मामोन्तोव के धावे से भी ज़्यादा बुरी हालत न हो।"

"और मैं क्या कह रहा हूं? ये फ़ौजी विशेषज्ञ महोदय दरवाज़े खोल देंगे—आइये पधारिये!—और फिर तुम भुगतते फिरो!"

"सारी बात विशेषज्ञों की ही थोड़े है। और वे भी सब एक जैसे नहीं हैं। दीबिच को लो... मैंने तुम्हें पहले नहीं बताया उसके बारे में? मेरी कम्पनी का कमांडर था..."

"मारा गया क्या?"

"हां। बार-बार उसका ख्याल आता है।"

पल भर को किरील अपने विचारों में खो गया, फिर—मानो इस व्यक्ति के साथ तय किये रास्ते का मूल्यांकन करने का समय आ गया हो—उसके साथ हुई सभी भेंटों को याद करने लगा, पगडंडी

पर मैपल के झुरमुट तले आखिरी भेंट तक, जब दीविच अपने साथी की हताश नज़र का जवाब नहीं दे सकता था।

रागोज़िन इस दुखद कहानी के बीच में एक बार भी नहीं बोला, बस अंत में अपने गंजे सिर पर कसकर हाथ फेरते हुए उसने कहा:

"ठीक बात है, दोस्त! अच्छे आदमी के लिए ज़रूर दुख होता है।"

"सिर्फ़ दुखी होने से क्या होता है!" किरील सहसा चिल्लाया। "उसके लिए कुछ जवाब भी देना चाहिए कि नहीं?"

"जवाब?" रागोज़िन ने पूछा और कुछ देर चुप रहा। "जवाब भी देना ही चाहिए... यह बात है, भाई मेरे। हां, जवाब देना चाहिए। जब ऐसा हुआ तो ज़रूर कोई जवाबदेह होना चाहिए।"

किरील के चेहरे पर दुख भरी मुस्कान आई।

"पर कैसे? पश्चाताप करके? पश्चाताप से जवाब दिया जाये या और कैसे?"

"अपने मन में पश्चाताप करना तो सराहनीय बात है। क्यों नहीं? आत्मसुधार के लिए पश्चाताप बहुत अच्छी बात है। पर जहां तक उत्तरदायित्व की, जवाबदेह होने की बात है... अपने मन में पश्चाताप काफ़ी नहीं।"

"मैं भी तो यही पूछ रहा हूं कि जवाबदेह होने का क्या मतलब है?" किरील ने कुछ झुंझलाते हुए कहा।

"इसका मतलब है कि कोई तुमसे जवाब-तलबी करे। समझे न, कोई तुमसे उत्तर मांगे कि बताओ क्यों, कैसे, हमारा सच्चा साथी मारा गया... तुम अपने अभियान की रिपोर्ट दोगे न, तो बस उसमें ही इस बात का जवाब देना।"

"सो तुम्हारे ख्याल में मेरे सिर पर इसका दोष है?" इज़्वेकोव ने पूछा और बड़ी उत्सुकता से टकटकी लगाकर रागोज़िन का चेहरा देखने लगा।

"तुम खुद क्या सोचते हो?"

किरील ने चुपचाप सिर हिलाया।

"फ़ौजी नियमों को देखा जाये, तो शायद दीविच का ही दोष ज़्यादा है," रागोज़िन कहता गया। "अभियान के बीच में वह कम्पनी

छोड़कर कैसे जा सकता था? आखिर वह कमांडर था, है न? नियमों के अनुसार वही जवाबदेह है। पर मरे हुओं से क्या जवाब पाया जा सकता है। उसने तो अपने किये का फल भुगत लिया, पर तुम खुदाखलासा, जिंदा हो। गया तो दीविच तुम्हारी सहमति से ही था, है न? और कमिसार होने के नाते तुम भी कमांडर हो। सो भई, यह बात निकलती है दिमाग से सोचो तो चुप रहा जा सकता है, पर दिल की बात करो, तो कहना चाहिए..."

"शुक्रिया, मैं भी यही सोच रहा था," किरील जल्दी से बोला, वह दिमाग पर बोझ बने विचार से छुटकारा पा लेना चाहता था। "एक और सवाल है। या यह कहो कि प्रार्थना है..."

लेकिन जल्दी-जल्दी बोलना शुरू करके भी वह तुरन्त ही रुक गया, क्योंकि जैसे ही उसने स्पष्टतया यह देखा कि क्या कहना चाहता है, तभी समझ गया कि मामला कितना टेढ़ा है। ज़बरदस्ती ही वह मुंह पर मुस्कान लाया।

"तो फिर तुम्हें एक और किस्सा सुनना होगा। परेशान तो नहीं कर दिया मैंने तुम्हें? बस दो शब्दों में बताता हूं।"

किरील ने मेरकोव की बात शुरू की ही थी कि रागोजिन बेचैनी से सिरहाने पर सिर हिलाने लगा, उसके जिन अंगों पर पट्टियां नहीं बंधी हुई थीं, वे भी सब चादर तले हिलने-डुलने लगे, जिससे यह साफ़ दिखने लगा कि उसकी काठी कितनी बड़ी है और उसे यों बिस्तर पर लेटने में कितनी तकलीफ़ हो रही है। मेरकोव के सोने की बात वह अंत तक नहीं सुन पाया:

"ओफ़ टुच्चा व्यापारी! धोखा दे गया! कितना सीधा-सादा बनता था! कहता था, चाहो तो मेरा गद्दा फाड़कर देख लो – एक भी सोने का सिक्का नहीं है! उसका सिरहाना फाड़कर देखना चाहिए था, हैं?! मुझे चकमा दे गया, धूर्त सियार! और सब बड़ा भोला-भाला बनकर! बताओ, ऐसे आदमी का कोई क्या करे, हैं?"

रागोजिन अपना गुस्सा रोक ही नहीं पा रहा था – रह-रहकर सिरहाने से सिर उठाना और फिर गिरा देना!

"उसका सारा सोना ज़ब्त करके हम सरातोव ले आये हैं," किरील ने कहा, "और खुद मेरकोव बजरे पर है!"

"वही ठीक जगह है उसके लिए।"

"हां, अगर अदालत यह जगह उसके लिए ठीक समझेगी तो। पर जब तक मुकदमा शुरू नहीं हुआ... मैं तुमसे सलाह लेना चाहता था। मेश्कोव की बेटी मेरे पास आई थी, कह रही थी कि बूढ़े की कुछ मदद हो सके तो..."

किरील चुप हो गया। रागोज़िन ने हिलना-डुलना बंद कर दिया और इज़्वेकोव पर तिरछी नज़र डाली, जैसे उसे आर-पार देख रहा हो।

"परोपकारी बनना चाहते हो?" थोड़ी देर चुप रहकर उसने कहा।

"यही लगता है।" किरील ने हंसते हुए सिर झटका।

"और क्या? गलत कहा क्या मैंने? मैंने तुम्हारे इस संत पर भरोसा किया और वह मेरी आंखों में धूल झोंक गया। मैं ही उल्लू बना। तुम उसे गड्ढे में से निकालना चाहते हो, और वह सोच रहा होगा कि कैसे तुम्हें उसमें धकेल दे।"

"पर वह गड्ढे में भी तो मेरे जतन से ही पहुंचा है, है कि नहीं?"

"खुद ही उसे बंद किया, खुद ही तरस खा रहे हो..."

"मुझे कोई तरस-वरस नहीं। उसे अपने किये की सज़ा मिलेगी। पर मैं चाहता हूं वह न कम हो, न ज़्यादा।"

"डरते हो कि ज़रूरत से ज़्यादा सख्ती न हो जाये? चाहते हो कोई बादशाह सुलेमान न्याय करे? तुम खुद न्याय करो। दीबिच के लिए जवाब देने को तैयार हो न, मेश्कोव की भी जवाबदेही संभालो।"

"मैं अपना काम कर चुका हूं।"

"तो अब किसका करना चाहते हो?"

किरील ने कंधे बिचका दिये। उसे कोई जवाब नहीं सूझ रहा था, पर रागोज़िन की बातों से भी वह सहमत नहीं हो पा रहा था।

"तुम समझे नहीं। मेश्कोव को छुड़ाने का मेरा कोई इरादा नहीं है। मैंने उसकी बेटी को यह पता लगाने का वायदा किया है कि मामले की स्थिति क्या है और बूढ़े का क्या हाल है।"

"बेटी के लिए दुखी हो?"

"वह अपने बाप के लिए दुखी हो रही है।"

"तुम्हारी वह क्या लगती है?"

"लो, तुम भी यह बात ले बैठे!" किरील ने झल्लाकर मुंह मोड़ लिया और फिर कुछ ऐसे लहजे में जैसे यह निष्फल बातचीत खत्म करना चाहता हो, बस हठपूर्वक ही इतना और जोड़ा: "तुम यह बताओ कि किससे इस मामले में पूछताछ की जा सकती है, तुम तो मुझसे ज्यादा अच्छी तरह जानते हो।"

"जो तुम्हारे जी मे आये करो। मैं तुम्हारा गुरु नहीं, और धोखे-बाजों की मदद नहीं करना चाहता।"

"नही, गुरु तो हो, जभी तो मुझे बच्चों की तरह सबक सिखा रहे हो। मैं मेरकोव की क्या मदद करने चला हूं? क्या मैं इतना भी नही समझता कि उसके इरादे भले ही बुरे न हों, पर वह अपनी प्रकृति से ही हमारा दुश्मन है?"

"कितनी खुशी होती है अक्लमंदी की बात सुनकर!"

किरील ने रागोजिन की ओर देखा। उसकी उलझी-उलझी मूंछों तले व्यंग्यपूर्ण मुस्कान थी। पर नही, इस मुस्कान में व्यंग्य नहीं था, यह तो अजीब संकोचपूर्ण स्नेह और चालाकी भरी मुस्कान थी, जैसी किरील ने रागोजिन के चेहरे पर पहले कभी भी नही देखी थी। मानो रागोजिन को यों चालाकी से मुस्कराते हुए शर्म आ रही हो, पर साथ ही बेहद अच्छा भी लग रहा हो।

"लो मेरा खाना आ गया," मुस्कान जैसी ही विचित्र आवाज़ मे उसने कहा और सीधे सामने देखते हुए सिरहाने पर उठने की कोशिश करने लगा।

किरील ने उसकी नज़र के पीछे-पीछे आंखें घुमाईं।

एक लड़का वार्ड में घुस रहा था—लंबी-लंबी टांगें, छरहरा बदन, ऊंचा माथा और भौंहों के सिरे कनपटियों की ओर उठे हुए। उसकी उभरी-उभरी आंखों में कौतूहल और चिंता का जो भाव चमक रहा था, उसके सारे शरीर से टपकती लापरवाही के साथ उसका कोई मेल नहीं बैठ रहा था। वह अभी बच्चा ही था, पर उसमें किशोरों जैसी बेढबी भी आ चली थी। सहसा किरील को उसकी लंबी-लंबी टांगों और बांहों का यह बेढबपन अत्यंत परिचित सा लगा।

"टोकरी कोने में रख दो," रागोज़िन ने कहा, "और किरील निकोलायेविच इज्वेकोव से मिलो।"

"रागोज़िन," लड़के ने कहा, और सिर झुकाने के बजाय चुनौती के साथ ऊपर उठा लिया तथा अपना हाथ बहुत आगे बढ़ा दिया।

"वान्या," पिता ने उसके बदले हौले से कहा।

"अच्छा," इज़्वेकोव ने कहा और फिर से प्योत्र पेत्रोविच की ओर मुड़ा। "मिल गया?"

रागोज़िन की मुस्कान किरील को और भी अधिक अप्रत्याशित लगी। चालाकी भरे स्नेह के साथ उसमें कृपायाचना का सा भाव भी मिल गया था, जैसा बूढ़ी नानी-दादी की मुस्कान में होता है, जो अपने नाती-पोते को देखकर फूले नहीं समाती। यह मुस्कान इस गंजे और सहसा बूढ़े हो गये व्यक्ति के चेहरे पर बड़ी अच्छी लग रही थी, पर साथ ही किरील के मन में कुछ-कुछ रूखे से और व्यंग्यपूर्ण रागोज़िन की जो तस्वीर थी उसके साथ इसका बिल्कुल मेल नहीं बैठता था। किरील ठहाका मारकर हंसा। प्योत्र पेत्रोविच भी झेंपता हुआ हंसने लगा। वार्ड में उनकी यह उन्मुक्त हंसी गूंजने लगी, बस वान्या ही गम्भीर बना हुआ था और अपने पिता तथा नये परिचित की ओर यों देख रहा था, जैसे उसे यह पसन्द न हो।

"बैठो," चादर तले टांगों को परे खिसकाते हुए और पलंग की पाटी की ओर इशारा करते हुए रागोज़िन ने कहा। "अब मेरी बारी है सुनाने की, है न?"

"हां, कैसे हुआ यह सब?" इज़्वेकोव ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"वान्या और मैं एक ही पोत पर फ़िदा हो गये: गनबोट 'जोखिमी'। याद है मैंने उसकी मरम्मत की थी और यह उस पर नौसैनिकों के साथ लड़ने निकला था..."

रागोज़िन ने सारी कहानी सुनानी शुरू की, यह कोशिश करते हुए कि ज़्यादा लम्बी न खींचे, पर साथ ही उसके दिमाग में वे सब छोटी-छोटी बातें आ रही थीं, जो उसके लिए इतनी प्यारी और इतनी महत्वपूर्ण थीं।

प्योत्र पेत्रोविच की बेटे के साथ मुलाकात अस्पताल के पोत पर हुई थी, 'अक्तूबर' गनबोट से उसे अस्पताल के पोत पर लाये जाने के एक दिन बाद, जब घायलों से भरा पोत सरातोव को चल दिया था।

दर्द कुछ कम हो गया था, लेकिन रागोज़िन को अभी भी यह

लगता था जैसे उसके दिमाग पर घनी धुंध छाई हुई हो, जिसे कभी-कभार ही और वह भी बड़ी मुश्किल से उसके विचार भेद पाते थे। सोचना न केवल कष्टदायी था बल्कि अप्रिय भी, क्योंकि सारे विचार असफलता की चेतना और उसके कारणों की निष्फल खोज तक ही सीमित रह जाते थे।

जिस दिन रागोजिन घायल हुआ था, उस दिन तक उसने युद्ध का काफ़ी अनुभव पा लिया था और हर समय उसे यह अहसास रहता था कि वह निरंतर कहीं ऊपर चढ़ता जा रहा है। उसे इस बात का सहज बोध था कि उसने एक नया गुण पा लिया है, जिससे अभी तक वह अपरिचित था, लेकिन इसकी व्याख्या करने की या इसे कोई संज्ञा देने की वह कोई कोशिश नहीं कर रहा था। उसकी दूरदृष्टि इतनी विकसित हो गई थी, जितनी पहले कभी न थी, वह अपनी बुद्धि से बहुत दूर तक देख सकता था और जानता था कि उसे क्या करना चाहिए। वह मानो एक शिखर पर चढ़ गया था, और इस ऊंचाई से वह जनता के हाथों में जो अस्त्र था, उसके प्रहारों को सफल बनाने में सहज ही सहायता कर सकता था।

और ठीक इसी क्षण उसके सब किये-कराये पर पानी फिर गया था, उनके अभियान का अंत यह हुआ था कि उन्हें पीछे हटना पड़ा था, और स्वयं उसे अपने निस्सहाय होने की तीव्र कष्टदायी अनुभूति हो रही थी।

उसके विचारों की रुकी-रुकी सक्रियता के ऐसे ही एक क्षण में नर्स रागोजिन के पास आई थी और उसने बताया था कि जहाज़ पर काम कर रहा एक लड़का उससे मिलना चाहता है।

बाद में रागोज़िन यह समझा था कि तब उसे बेटे से मिलने का इतना अचम्भा नहीं हुआ था, जितना इस बात का कि जब से 'जोखि-मी' के कमिसार ने उसे गनबोट पर आ गये लड़के और उसे तट पर उतारने की बात कही थी, तब से उसे बेटे से इस भेंट की पूर्वानुभूति रही थी। नर्स से लड़के की बात सुनकर रागोज़िन ने तुरन्त ही यह तय किया था कि यह वही लड़का है, जिसे उसने तट पर उतारने के बजाय अस्पताल के पोत पर भेजने का आदेश दिया था। उसे वीकोव बुगोर के पास नावों पर तरबूज बेचते लड़के याद हो आये, और

नदी में फटते गोले और चप्पुओं की भयभीत छपछप और नन्हे खेवैयों के लिए मन में उठा डर और अपना गुस्सा तथा यह भी कि इस डर और गुस्से के साथ तब बेटे के लिए मन में उठी टीस मिल गई थी। अब उसे इस बात में ज़रा भी संदेह नहीं था कि वह उससे मिलेगा, क्योंकि अस्पताल के पोत पर काम कर रहा लड़का और कोई नहीं उसका बेटा ही है। इस विश्वास के साथ मस्तिष्क में स्वास्थ्यप्रद रक्त प्रवाह हुआ और वह धुंध छंट गई, जिससे सोचने में कष्ट हो रहा था, दर्द भी कहीं दूर दब गया।

पोत पर बेटे के साथ बातचीत थोड़ी देर के लिए ही हो पाती थी (डाक्टर उसे ज़्यादा देर तक घायल के पास रहने की इजाज़त नहीं देते थे), लेकिन रागोज़िन इन बातचीतों का एक-एक शब्द न जाने कितनी बार मन ही मन दोहरा चुका था और उनकी लौ उसके मन में अभी तक ज़रा भी धुंधली न पड़ी थी।

"तुम मेरे घर से भाग क्यों गये थे?" वान्या जब केबिन में चौखट से सटकर खड़ा हो गया था और गुनाहगार हठी की भांति सहमी-सहमी, पर साथ ही निडर नजरों से देख रहा था, तब प्योत्र पेत्रोविच ने उससे पूछा था।

"अच्छा हुआ कि भाग गया था।"

"अच्छा क्यों?"

"अब आपकी सेवा-टहल कर सकूंगा – मेल नर्स बनकर।"

"ओह, शुक्रिया... पर तुम नर्स कैसे, तुम तो... पता है, तुम मेरे कौन हो?"

"पता है।"

"अच्छा... पता है!"

"मुझे तब घर पर भी पता था।"

"पता था, फिर भी भाग गये!"

"हुं!"

"बस 'हुं' ही!"

"और क्या?"

"मैं कह रहा हूं, भागे क्यों थे, जब तुम्हें पता था कि मैं तुम्हारा कौन हूं?"

"पता था तो क्या हुआ?"

"क्या मतलब?"

"कुछ नहीं।"

"क्या बाप के घर से भी भागा करते हैं?"

"और नहीं तो क्या!"

"हो सकता है बुरे बाप से कोई भागता हो। पर मैं तो तुम्हारा भला चाहता हूं। खुश हूं कि तुम मिल गये। तुम खुश हो?"

वान्या ने पीठ पीछे हाथ बांध लिये।

"अगर मुझे बताया गया होता कि आप कमिसार हैं... मैंने पूछा तो पता चला कि हिसाब-किताब का काम करते हैं। जैसे वह हमारे बालघर का बाबू।"

"हूं, बाबू! बाबू होना भी कोई बुरी बात है क्या? मैं तुम्हें एक बाबू दिखाऊंगा – आर्सेनी रोमानोविच। पता है बच्चे उनकी कितनी इज्जत करते हैं।"

"अजी हां, वह कोई बाबू थोड़े ही हैं! मुझे पता है वह कौन हैं।"

"कौन हैं वह?"

"वह तो कलाकार हैं।"

"अच्छा, यह बात है!" रागोज़िन मुस्कराया। "हां, ठीक ही कहते हो, वह कलाकार हैं... मैं तुम्हें पढ़ने भेजूंगा, तुम भी कलाकार बन जाओगे।"

वान्या चुप था। रागोज़िन बेसब्री से उसके जवाब का इंतज़ार कर रहा था।

"अगर आता नहीं, तो पढ़ो न पढ़ो कुछ फ़र्क नहीं पड़ता!" आखिर वह दृढ़ विश्वास के साथ बोला।

"पढ़ोगे, तो सीख जाओगे।"

"देखे हैं मैंने ऐसे पढ़ने वाले। पढ़ते रहते हैं, पढ़ते रहते हैं, फिर भी कुछ नहीं आता। और मैंने पेंसिल उठाई और बना दिया!"

"वाह रे..." रागोज़िन बस इतना ही कह पाया था। आश्चर्य से भरा वह गर्वीले बालक को देखता रहा था।

तब ही रागोज़िन को यह अहसास हो रहा था कि उनके सम्बन्ध

बेटे की पढ़ने की इच्छा पर निर्भर होंगे, और अगली भेंट में उसने फिर इसकी चर्चा छेड़ी। उसे लग रहा था कि जिन बातों को वह जीवन में प्रमुख और महत्वपूर्ण मानता है, वे ही बालक के जीवन में भी प्रमुख और महत्वपूर्ण हैं। और यह देखकर परेशान था कि वान्या का दृष्टिकोण बिल्कुल दूसरा ही है।

"अच्छी तरह पढ़-लिख लोगे, काम करना सीख लोगे, तो लोगों का हित करोगे," प्योत्र पेत्रोविच ने उसे समझाते हुए कहा था।

"क्या मतलब?" वान्या शायद समझा नहीं था।

"कैसे समझाऊं तुम्हें... तुम कभी संग्रहालय गये हो?"

"हां।"

"वहां लगे चित्र तुम्हें पसन्द आये?"

"हां।"

"सो, इस तरह उन कलाकारों ने अपने श्रम से तुम्हारा हित किया। अपने चित्रों से, समझे?"

वान्या केबिन की खुली खिड़की में से ध्यानमग्न बाहर देख रहा था। वहां वोल्गा वह रही थी – विशाल स्टीमर के पहियों तले उसके पानी की छपछप सुनाई दे रही थी, पीछे को दौड़ती जाती हरी लहरें दिखाई दे रही थीं, बालुई तटों पर वे सफ़ेद झाग में बिखर रही थीं।

"यह हित नहीं है," वान्या ने जवाब दिया था और उसका चेहरा ऐसा रहस्यमय हो गया था, मानो अकेले उसे ही पता हो कि हित क्या है।

"हित कैसे नहीं है? और क्या है?"

"यह तो... जैसे जलन होती है कि तुमने ये चित्र नहीं बनाये। कि तुम कभी ऐसे चित्र नहीं बना सकोगे।"

"देखा न," रागोज़िन खुश हो गया था। "इससे तुम्हारे मन में यह इच्छा उठती है कि तुम भी दूसरों की तरह अच्छे चित्र बना सको। ताकि तुम्हारे चित्रों को भी लोग निहारें, जैसे तुम निहारते हो। बस यही उनका हित होगा, और क्या?"

"वाह, क्या बिशपी करते हैं आप भी," वान्या ने व्यंग्य के साथ कहा था।

"यह विशपी करना क्या होता है?"

"वो मठवासियों की तरह।"

"क्या मठवासियों की तरह? तुम मठवासियों की बातें क्या जानते हो?"

"हम वहां आश्रम मे विशप से शक्कर मांगने जाया करते थे। वह सबको एक-एक डली दे देते और अपनी विशपी झाड़ने लगते: जाओ, खेलो, बच्चो, लड़ो-झगड़ो नही, बड़ों का आदर करो, भगवान तुम्हारा भला करे!"

वान्या ने विशप की खूब अच्छी नकल उतारी थी।

"और तुम क्या करते थे?" रागोज़िन ने मुस्कराते हुए पूछा था, हालांकि वह कुछ सकपका गया था।

"कुछ नही। शक्कर खा लेते, फिर मांगने चले जाते। वह फिर दे देते और फिर से विशपी झाड़ने लगते... और आप तो कमिसार हैं!" सहसा बड़ों की भांति उलाहने के स्वर में वान्या ने कहा था।

अगली बार रागोज़िन ने दूसरे पहलू से बात चलाने की कोशिश की थी।

"पढ़ने नही जाओगे, तो तुम्हें कागज़, पेंसिल कौन देगा? आखिर तुम चित्र बनाना तो नही छोड़ना चाहते?"

"मुझे जब किसी चीज़ की ज़रूरत होती थी, तो मैं मार लेता था," वान्या ने झट से जवाब दिया था।

"ओहो..."

"और क्या, बैठे देखते रहो, कब तुम्हें देंगे! ऐसे तो कुछ मिलने से रहा! जहां मौका लगता मार लेता और बस चित्र बनाने लगता।"

"इसे चोरी कहते हैं, भैया मेरे। समझे, यह बात है!"

"पेंसिलें?" वान्या की आंखें फटी की फटी रह गईं।

"हां पेंसिलें हों या और कुछ, है यह चोरी ही! तुम ये अनाथालय की आदतें छोड़ दो। तुम्हें जो कुछ चाहिये होगा, मैं तुम्हें दूंगा।"

वान्या ने मुंह लटका लिया था और फिर बुझी-बुझी सी आवाज़ में बोला था:

"अगर माल बहुत है, तो चलेगा।"

पर फिर सहसा भावावेग में अपने पिता से पहली बार उसने अपने-पन के लहजे मे कहा था:

"अगर कोई चीज़ न भी हुई तो कोई बात नहीं। आप परेशान मत होना, मैं अपने आप कहीं न कहीं हाथ मार लूंगा।"

बेटे के इस भावावेग से पिता गद्गद हो उठा था और भयभीत भी, उसने एकसाथ ही यह देख लिया था कि बच्चे के विचार कितने बिगड़े हुए हैं और साथ ही उसमें कितना भोलापन है।

वोल्गा पर बेटे के साथ भेंट के बारे में किरील को बताते हुए रागोज़िन को अब फिर से ये सब बातें याद हो आईं।

वान्या पिता के पायताने बैठा था और निर्लिप्त भाव से छत की ओर देख रहा था। आज वह दूसरी बार पिता के लिए खाना लाया था, जो रागोज़िन की मालकिन ने बनाया था। वह अच्छी तरह जानता था कि आधा खाना वह वापस ले जायेगा: रागोज़िन हठधर्मी के साथ बेटे का ध्यान रख रहा था। बालक यह देख रहा था कि पिता के जीवन में उसने क्या स्थान पा लिया है। उसे यह बड़ों की भावुकता लगती थी, पर वह अपने पर कुछ गर्व के साथ इसे बढ़ावा देता था और पिता का लाड़-प्यार स्वीकार करता था, क्योंकि वह लड़ाई में घायल हुए थे और उन्हें मदद की ज़रूरत थी।

"अब हम दोनों ने तय किया है कि इकट्ठे रहेंगे," सराहना भरी नज़रों से वान्या की ओर देखते हुए रागोज़िन ने कहा। "पता है, किरील, इस सब के बाद मैं किस फ़ैसले पर पहुंचा हूं? यहां लेटे-लेटे सोचने को तो बहुत समय मिलता है। देखो न, हम खुश हैं कि उस लक्ष्य की ओर बढ़ रहे हैं, जिसे हम पाना चाहते हैं। मैं सोचता हूं कि जिस लक्ष्य तक हमें पहुंचना है, उसका एक अंश ही अगर हम उस सब में ढूंढ सकें, जो हमने पा लिया है, तो हमारी खुशी और भी अधिक हो। समझे मेरी बात?"

"थोड़ी बहुत," किरील मुस्कराया।

"हां भई, अमूर्त बातें करनी मुझे नहीं आतीं। मैं तो व्यावहारिक रूप से देखता हूं। सो मैं अपने आप से पूछता हूं: क्या हम भविष्य में मानव सम्बन्धों को बदलना चाहते हैं? ज़रूर बदलना चाहते हैं। तो फिर मैं सोचता हूं कि हमें अपने वर्तमान जीवन में ही इन परिवर्तनों के लक्षण ढूंढ़ने चाहिए, ताकि इनमें से कुछ अभी से ही हमारे जीवन का अंग हो जायें। समझे? और कैसे कहूं? यों कहो कि हमें अपने

विचारों को जीते-जागते लोगों में, उनके आपसी सम्बन्धों में उतारना चाहिए। अपने विचारों को व्यावहारिक रूप देना चाहिए। नहीं तो हम अपने सपनों में ही खो जायेंगे, उदाहरण के लिए कम्युनिस्ट समाज के सपने में, जबकि ऐसा समाज अभी है नहीं। और हम अपने सपने की ही पूजा करने के इतने आदी हो जायेंगे कि लोगों को भूल ही जायेंगे। ठीक है न? सो हमें आज ही इस सपने को साकार करना चाहिए। आज के इन्सान में ही भविष्य का थोड़ा सा अंश ढूंढ़ना चाहिए। और इन्सान के साथ ऐसे सम्बन्ध बनाने चाहिए, जैसे कि वह हमारा आदर्श ही हो। है न? और अगर हर कोई ऐसे करेगा, तो हम भविष्य के अपने सपने को अभी ही थोड़ा-थोड़ा साकार करने लगेंगे। बीज बोयेंगे, समझे?"

"समझ गया। पर यह नुस्खा तो हर आदमी पर लागू नहीं हो सकता। खास तौर पर अब। याद है, तुम्हीं ने कहा था: जैसा समय हो, वैसी ही नीति होनी चाहिए।"

"और नहीं तो क्या! तुम ऐसा आदमी ढूंढ़ो, जिसमें इस भविष्य का कुछ अंश है, उसके काम में, जनता के लिए उसकी सेवा में या और किसी बात में। और फिर उसकी मदद से सीखो। उसके जरिये अपने विचारों को व्यावहारिक रूप दो। बस, ऐसा आदमी ढूंढ़ना चाहिए," रागोज़िन ने दुबारा कहा और एक बार फिर से संतोष भरी नज़रों से बेटे की ओर देखा।

"ठीक कहते हो," किरील सहसा ज़ोर से बोला। "मुझे याद पड़ता है चेर्निशेव्स्की* ने भी कुछ ऐसी ही बात कही है: भविष्य को निकट लाओ, उसमें से जो कुछ ला सकते हो, वर्तमान में लाओ।"

"देखा! जब अपने दिमाग को किसी और का सहारा मिल जाये, तो बात पक्की हो जाती है," रागोज़िन ने आंख मारते हुए कहा, उसकी नज़रें अभी भी बेटे पर टिकी हुई थीं।

किरील ने भी वान्या की ओर देखा।

बालक ने मीठी जम्हाई ली।

---

* न० चेर्निशेव्स्की (१८२८–१८८९) – महान रूसी क्रांतिकारी-जनवादी, भौतिकवादी दार्शनिक तथा कल्पनावादी जनवादी। – सं०

चेहरे पर बरबस आ रही मुस्कान को दबाने की कोशिश करते हुए किरील ने पूछा :

"क्यों भई, यह क्या बात हुई कि तुम खुद तो मोर्चे पर चले गये, और अपने साथी को छोड़ गये? मुझे पाव्लिक पाराबुकिन ने सब बताया था कि कैसे तुमने उसे धोखा दिया।"

"मेरा क्या कसूर है? मुझे नौसैनिकों ने धोखे में रखा। पाव्लिक को पता है। हमारी सुलह हो गई है। हम दोनों तो आपके पास जाने की सोच रहे थे।"

"मेरे पास? किसलिए?"

"शिकायत करने।"

"किसकी?"

"उसके बाप की।"

"क्यों, क्या किया है उसने?"

"वह आर्सेनी रोमानोविच की किताबों से लिफ़ाफ़े बना रहा है।"

"आर्सेनी रोमानोविच की किताबों से?" रागोज़िन चिल्लाया, उसने सिरहाने से सिर उठा लिया, पर तुरन्त ही तीव्र पीड़ा से उसका चेहरा विकृत हो गया और उसने हौले से सिर वापस सिरहाने पर रख लिया।

"आर्सेनी रोमानोविच ने अपनी किताबें एक लाइब्रेरी को दे दी हैं। लाइब्रेरी ने आधी किताबें रद्दी में दे डाली हैं। और पाव्लिक का बाप उनके लिफ़ाफ़े बना रहा है। पाव्लिक ने अपनी आंखों देखा है।"

"क्या है यह सब, किरील? तुम जाकर देखो तो," रागोज़िन बोला, वह एकदम शिथिल पड़ गया लगता था। "आर्सेनी रोमानोविच की लाइब्रेरी कोई छोटी-मोटी चीज़ नहीं है। उनको दुख पहुंचा, तो बड़ा पाप होगा।"

"अभी जाता हूं," इज़्वेकोव उठ खड़ा हुआ, "कई दिनों से सोच रहा हूं, जाकर देखूं कि ये किताबों के कद्रदान क्या करते हैं। तुम फ़िक्र मत करो।"

उसने बिस्तर पर झुककर रागोज़िन का हाथ अपने हाथ में लिया। प्योत्र पेत्रोविच ने किरील का हाथ पकड़े रखा, मानो जुदाई से पहले कुछ कहने के लिए शब्द ढूंढ़ रहा हो।

"तुम्हें तो बुखार है। बहुत ज़्यादा बातें कर लीं।"

"कोई बात नहीं। आदमी नहाने से तंदुरुस्त होता है, बात करने से नहीं।"

वह अभी भी इज्वेकोव का हाथ नहीं छोड़ रहा था।

"कोई खबर मिलेगी, तो फ़ौरन बताना। ठीक है?"

उसने किरील को अपने पास खींचा।

"एक कामरेड मुझसे मिलने आनेवाला है। मैं उसे तुम्हारे काम का पता लगाने को कहूंगा। वह कर सकता है।"

"मेरा काम?"

"हां, हां। जिसके लिए मेरकोव की बेटी ने तुमसे कहा है।"

सहसा उसके होंठो पर चालाकी भरी मुस्कान दौड़ गई और उसने इज्वेकोव को धकेला।

"तुम भी सनकी ही हो!" किरील हंसा।

"मुझे मेरकोव की फ़िक्र नहीं है! उसके तो दिन बीत गये। बात तो उसकी बेटी की है। उसमें तो शायद भविष्य का कुछ अंश है— तुम्हारे भविष्य का, है?"

"हो ना निरे सनकी," किरील सहसा झेंपते हुए हंसा और दरवाजे की ओर पीछे हटा। "यह तो तुम्हारा कहना ठीक है कि मेरकोव में भविष्य का कुछ नहीं है। पर वर्तमान में वह काम आ सकता है। तुम मानोगे नहीं, मेरकोव ने पोलोतेन्त्सेव की शिनाख्त कर दी थी!"

"उस जल्लाद कर्नल की? सच? और तुमने मुझे बताया तक नहीं! भई, तुम चाहे जो भी कहो यह तो उसने अच्छी सेवा की है!"

"फिर कभी बताऊंगा। जल्दी-जल्दी ठीक हो जाओ।"

"तो तुम सीधे पुरानी चीज़ों के महकमे में जा रहे हो?" किरील जब गलियारे से निकल गया, तो रागोज़िन ने पीछे से चिल्लाकर पूछा।

"हां, सीधे वहीं जा रहा हूं।"

"मेरे लिए कुछ पढ़ने को ले लेना," रागोज़िन ने कहा। "और अपनी वो अनमारी के लिए भी चुनना मत भूलना!"

पुरानी चीज़ों का महकमा उस विशाल संगठन का अंग था, जिसका नाम था प्रदेश आर्थिक परिषद और जिसका भीमकाय मस्तिष्क नगर की प्रमुख सड़क पर आधुनिकतम शैली में निर्मित 'अस्तोरिया' होटल में मुश्किल से समाया हुआ था। यह कहना तो शायद सही न होता कि पुरानी चीज़ों के महकमे का महत्व इस मस्तिष्क के गोलार्ध के समान था। लेकिन आकार में वह पूरा गोलार्ध ही था और इसलिए 'अस्तोरिया' में दूसरे विभागों के साथ उसके लिए पर्याप्त स्थान नहीं हो सकता था, सो उसे पास ही की एक अलग इमारत में रखा गया, मानो एक अलग मस्तिष्क के रूप में।

यहां भांति-भांति के लोग मधुमक्खियों की तरह मंडराते रहते थे। परन्तु फिर भी वे पुरानी चीज़ों के महकमे का सारा काम चलाने में असमर्थ थे। महकमे की हर शाखा में अपना, मंडराता कर्मचारी दल था। अंततः, इस ब्रह्मांड की नींव में निहित थीं उत्पादक शक्तियां : साबुन, टोपी, जूते और लिफ़ाफ़े, आदि बनाने के कारीगर। इस भवन के शिखर से नींव की ओर जितना नीचे जाया जाता, मंडराते लोगों के झुंड उतने ही विरले होते जाते। सो जहां साबुन बन रहा होता, या फ़ौजियों की पुरानी वर्दियों से जूतों के साज सिये जा रहे होते, वहां बहुत कम लोग दिखाई देते और बिल्कुल शांति ही होती।

अनेक शाखाओं वाले इस संगठन पर अपने ज़माने के अंतर्विरोधों की स्पष्ट छाप थी।

संगठन का विशाल प्रबन्ध विभाग जिन शाखाओं का संचालन करता था, वे केवल इस लायक थे कि उन्हें चुपके से ठिकाने लगा दिया जाये। इन धंधों में बाबा आदम के ज़माने के औज़ारों से ही काम चलता था और इनके बदले जाने की किसी को रत्ती भर भी उम्मीद न थी। टोपी बनानेवाला सुई, कैंची और इस्तरी से काम चलाता था। बढ़ई कुल्हाड़ी और आरी से। सच कहा जाये तो कबाड़ में फेंके गये ओवरकोट से टोपी बनाने, या चीड़ के गीले लट्ठे से स्टूल अथवा ताबूत बनाने के लिए किसी और चीज़ की ज़रूरत ही क्या थी? आधुनिक शैली के होटल के कमरों में मंडरानेवाले लोगों में से कोई भी इन धंधों का मशीनीकरण करने के लिए दिमाग लड़ाने का इरादा नहीं रखता था।

हालांकि इन धंधों को चुपके से ठिकाने लगा देना ही ठीक होता, पर अभी इसका वक्त नहीं आया था। उनका काम भले ही बिल्कुल मामूली सा था, पर उसके बिना भी गुज़र नहीं थी। उन दिनों आर्थिक तबाहहाली इस हद तक पहुंच गई थी कि इसे खुले आम क्रांति के लिए एक सबसे बड़ा खतरा माना गया था। साबुन का टुकड़ा, कागज़ की कतरन, हफ़्ते भर भी चल सकनेवाला तलवा या आदमी के फटे-पुराने कपड़ों को शरीर पर टिकाये रख सकनेवाला बटन—यह सब बेशकीमती हो गया था।

सम्भवतया यही कारण था कि पुरानी चीज़ों के महकमे के धंधों में बाबा आदम के जमाने के तौर-तरीकों के बावजूद, इनके माल की इतनी मांग थी, और इतनी बड़ी संख्या में लोग इनके इर्द-गिर्द मंडराते हुए इनके प्राणों की बुझती लौ को जलाये रखने की, इनके अवश्यम्भावी अंत को टालने की कोशिशें कर रहे थे।

इज़्वेकोव तुरन्त ही यह पता नहीं लगा पाया कि लिफ़ाफ़े बनाने का धंधा कहां होता है। पुरानी चीज़ों के महकमे ने अपने गोदामों और खातों के लिए वोल्गा से मठ के मोहल्ले तक के इलाके में कई कोठरियां, पुराने गोदाम और तहखाने ले रखे थे। इज़्वेकोव को यह पता चलाना था कि पारावुकिन कहां बैठता है, और वह कोई इतनी मशहूर हस्ती था नहीं कि महकमे का हर क्लर्क उसे जानता होता।

पारावुकिन दो बड़े कमरों के बीच पार्टीशन से बनी कोठरी में बैठा था। इन कमरों में से एक अखबारों की रद्दी के लिए था और दूसरे में वे किताबें थीं, जो अभी छांटी नहीं गई थीं। दीवार में बना छेद पहले कमरे को लिफ़ाफ़ों की कोठरी से जोड़ता था।

कागज़ों के ढेरों पर आती-जाती मानव परछाइयां पड़ रही थीं। सन्नाटे में कभी-कभी हवा से फड़फड़ाते कागज़ों की आवाज़ आती। हवा के झोंके ताजी लेई, फफूंददार चमड़े और नम कपड़े की मिली-जुली गंध, जो छप्पर में सड़ते पानी की गंध जैसी लगती थी, दरवाज़ों से खिड़की में ले जा रहे थे।

सेफ़ोदी सीलिच न जाने कैसी बोतल कहीं से लाया था, उसे खाली करके पारावुकिन ने अपना मग मेज के दराज़ में सरका दिया और अपने दोस्त की बातें सुनने लगा।

"तू मुझे क्या त्स्वेतुख़िन की बता रहा है! वह तो मेरे लिए जुड़वें भाई से बढ़कर है। मैं तो उसे अपने से भी ज़्यादा अच्छी तरह जानता हूं," मेफ़ोदी कह रहा था। "दुखियारा है वह, मेरे जैसे ही। पर मन ही मन घुलता है। अहंकार का मारा गर्दन नहीं झुका सकता। मेधा उसमें है, पर फूटी नहीं। खोल पर चोंच मारती रहती है, पर उसे तोड़ नहीं पाती। बस इसी से उसका मन रोता है। मैं उसके सामने क्या हूं?—कुछ भी नहीं। हालांकि मैं भी एक्टर हूं, बेशक एक्टर हूं।"

"खोल में बंद!" पाराबुकिन ने अपनी ओर से जोड़ा।

"मानता हूं। विनम्रता से स्वीकार करता हूं, क्योंकि मुझे कोई अहं नहीं है, मैं तो बस एक तुच्छ जीव हूं। मेरा मन इतना नहीं कलपता। वह मेधावी है, उसे ज़्यादा पीड़ा होती है। पर उसे अड़चन किस बात की है? दिखावा है! बड़े सिद्धांत मानने का दिखावा करता है। अरे भई, एक्टर के कैसे सिद्धांत? अभिनय अच्छा कर दिया—बस यही सिद्धांत हुआ। नहीं कर पाये, तो कैसा सिद्धांत? हमारे यहां एक एक्टर था, ट्रेजडी खेलता था, शैतान का भी बाप था, कोई सिद्धांत-विद्धांत नहीं मानता था, पर सारा हॉल सुबकियां भरता था। हमारा पेशा भावनाओं के ज़ोर से चलता है। पर येगोर सब कुछ समझना चाहता है।"

"मेरी आनोच्का को ले डूबेगा," पाराबुकिन ने दुखभरी उसांस छोड़ी।

"किसकी बात कर रहा है तू?" मेफ़ोदी ने बुरा मानते हुए कहा। "हैमलेट की बात कर रहा है तू, पिद्दी कहीं का! वह भला डोरे डालेगा?! अरे, वह तो एक्टरों से यही मांग करता है कि उनके मन में कोई छल-कपट न हो। अपने शिष्यों को सदा यही सिखाता है कि उनकी आत्मा निर्मल हो, जैसे सोते का जल! मैं दो हफ़्ते तक उसके पांवों में लोटता रहा, तब कहीं उसने मुझे अपने स्टूडियो में लिया। कहता था, आदमी में प्रतिभा है, तो उसके लिए दो नियमों का पालन अनिवार्य है: सफ़ाई से रहे और नशा न करे। कहता था, जो अपनी प्रतिभा नशे में डुबोता है, वह चोर है। वह लोगों से वह चीज़ चुराता है, जो प्रकृति ने उन्हें दी है, क्योंकि प्रकृति किसी एक आदमी को

प्रतिभा देनी है, पर सबके हित के लिए। अगर प्रतिभा पियक्कड़ों को न मिलती, तो लोग सौ गुना ज़्यादा सुखी होते। कहता था पीना छोड़ दो, तो ठीक है, आ जाओ हमारे साथ काम करो। नहीं तो जाओ भाड़ में। कहता था मैं नौजवान लड़के-लड़कियों को सिखाता हूं, उनकी जिम्मेवारी मुझ पर है।"

"खुद क्या वह टूंटी को माथा टेकता है?"

"यही तो बात है! मैं उसके पैरों में लोट रहा था, पर जवाब भी मैंने दे दिया, बोला, येगोर, तुमने मेरे साथ क्या कम पी है, जो मुझे यों लताड़ रहे हो! और वह बोला: त्स्वेतुखिन कोई पियक्कड़ नहीं है। कहता था, अगर मैं पीता भी हूं, तो खुशी के लिए पीता हूं, दावत उड़ाता हूं, मस्ती लेता हूं। और हमेशा यह याद रखता हूं कि यह तो बस हंसी-मजाक के लिए है, मज़ा लेने के लिए है। बेलगाम होकर गम के मारे पीना तो व्यभिचार की अति है। और बस उबल पड़ा! कहने लगा, यह सब अपने आप को जाने कहां का खुदा समझने का नतीजा है। सब पियक्कड़ अपने आप को पता नहीं क्या समझते हैं। सीधे-सादे ढंग से बात भी नहीं कर सकते। कुछ कहेंगे भी तो यही सोचकर कि कैसे दूसरों को अचम्भे में डालें। मेधावी बनते फिरते हैं। कहता था, यह तो कला की हेठी है। देखा तूने – किधर ले गया बात?"

"अच्छी खबर ली तेरी।"

"मेरी क्यों?" मेफ़ोदी फिर से बुरा मान गया। "मैं तो सीधा-सादा आदमी हूं, खाली बोतल ही समझो, जिसे भरना है। किसी हुनर-बुनर का मैं दावा नहीं करता। मैं तो बस एक मामूली सर्वहारा की भांति पी लेता हूं।"

"तू सर्वहारा है? वाह रे, मेफ़ोदी गुरु!"

"और नहीं तो क्या? मैं ही निर्धन रूस हूं! समझा?! मेरे जैसों पर देश टिका हुआ है! कैरिएटिड* हूं मैं!"

"कैरि-ए-टिड!" पारावुकिन ने चिढ़ाते हुए कहा।

पर तभी उसका चेहरा लटक गया, उसने जल्दी-जल्दी अपने बालों में हाथ फेरा और उठने की कोशिश करने लगा।

---

* इमारतों में नारी आकृति के रूप में बनाया जानेवाला स्तम्भ। – सं०

"कहां है इस खज़ाने का मालिक ?" प्लाईवुड का दरवाज़ा खोलकर कोठरी में झांकते हुए इज़्वेकोव ने ज़ोर से पूछा।

"कामरेड सेक्रेटरी," पाराबुकिन बोला, और फिर उसने अपना छोटा कुर्ता झटका, फिर दाढ़ी, मूंछों पर हाथ फेरा, फिर वह खंखारा ; उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसी अप्रत्याशित स्थिति में और क्या करे।

"कई दिनों से आपका इंतज़ार था," उसने कहा। "यह है मेफ़ोदी सीलिच, त्स्वेतुखिन के स्टूडियो में काम करता है, थियेटर में मेरी बेटी का सहकर्मी। कैरिऐटिड !"

"यह क्या ... कुलनाम है ?" इज़्वेकोव ने चौंककर सख्ती से पूछा।

"नहीं, रूपक के अर्थ में ही समझिये," मेफ़ोदी ने शान से सिर झुकाते हुए कहा।

"आप क्या कुछ खा-पी रहे थे ?" अनबूझ सी गंध पाकर वह एक कदम पीछे हट गया (मेफ़ोदी की टूटी हुई सुकराती नाक पर गौर से नज़र डालकर उसने सोचा : यह तो पाराबुकिन से भी बढ़कर है)।

"बस यों ही काम के बीच पल भर को आराम करने के तौर पर," पाराबुकिन ने समझाने की जल्दी की। "कोई खास चीज़ नहीं। आजकल कोई बढ़िया माल मिलता ही कहां है।"

"यह बताइये, दोरोगोमीलोव की किताबों का आप क्या कर रहे हैं ?"

पाराबुकिन खुश था कि एक नाजुक मसला टल गया, पर डर भी रहा था कि दूसरा नाजुक मसला न उठ खड़ा हो, वैसे इस बीच वह संभल गया और उसने मेहमान को किसी पुराने वेनिसी फ़र्नीचर सेट की खस्ताहाल कुर्सी पेश की।

"बड़ी मेहरबानी आपकी, हमारे इस कबाड़खाने में तशरीफ़ लाये।"

"ज़रा दिखाइये कि दोरोगोमीलोव की किताबों में से कौन सी यहां आई हैं।"

"मेरे पाव्लिक ने शिकायत की है न ? यह सब छोकरे के दिमाग की उपज है, अपनी अक्ल से ज़्यादा समझने की कोशिश करता है।"

"अच्छा, यह बताइये किताबें कहां हैं, मैं देखना चाहता हूं।"

विशाल कमरे में जहां-तहां रद्दी के ऊंचे-नीचे ढेर लगे हुए थे और उनके बीच गलियां-कूचे बन गये थे, जिनके पीछे से एक नज़र में पूरा कमरा दिखाई ही नही देता था। वे दोनों इन गलियों-कूचों में से जा रहे थे। पारावुकिन रास्ता दिखाता हुआ लगातार बोलता जा रहा था

"दोरोगोमीलोव से हमें कुछ नही मिला है। हमें तो सब कुछ लैब्रेरी से मिला है, जहां उसने अपनी सारी किताबें दी थी। किताबों में रद्दी ज्यादा निकली, सो वह सब लैब्रेरी ने यहां भेज दी। मैगजीनें, अखबार, बही-खाते वगैरह हैं। रद्दी बुरी नहीं है। कुछ किराने के लिए लिफाफ़े बनाने के काम आयेगी, कुछ जो मोटे कागज हैं उनसे दफ़्तरों के काम के लिए बड़े लिफ़ाफ़े बन सकते हैं। यह देखिये यह दोरोगोमीलोव की रद्दी की ढेरी है। पाब्लिक इसे उलटता-पुलटता रहा है, पता नहीं कमबख्त क्या ढूंढता रहा है।"

किरील ने ऊपर-ऊपर पड़ा एक रजिस्टर उठा लिया। यह नगर की प्रबन्ध कमेटी की कोई बीस साल पुरानी छपी हुई रिपोर्ट थी।

"क्या कागज लगाते थे! हावर्ड का कागज!" पारावुकिन ने चिकने से मोटे कागज को उंगलियों के बीच रगड़ते और आंखें भींचते हुए कहा!

किरील ने एक दूसरा रजिस्टर उठाया। इसमें नगर थियेटर समिति की रिपोर्ट थी और थियेटर से हुई आय तथा उस पर किये गये व्यय का हिसाब-किताब। जिस वर्ष की यह रिपोर्ट थी, वह किरील को अच्छी तरह याद था: उस साल किरील आखिरी बार इस थियेटर में गया था, लीजा के साथ, और उस रात से अगले दिन सुबह ही, जबकि उसके मन में अभी बगल की कुर्सी पर बैठी लीज़ा की निकटता की छाप मिटी भी न थी, उसे जेल के अहाते में ले जाया गया था।

अनचाहे ही उसकी उंगलियां रजिस्टर के पन्ने पलट रही थीं। फिर वे रुक गई। वह तुरन्त ही यह समझ भी नहीं पाया कि किस बात पर उसका ध्यान टिक गया है। वह पन्ने के अंत में छपी टिप्पणी पढ़ रहा था, जिसमें कहा गया था कि थियेटर का मैनेजर त्स्वेतुखिन

के हितार्थ शो की आय का एक भाग नगर कमेटी द्वारा हस्तगत कर लिये जाने पर आपत्ति करता है। त्स्वेतुखिन का नाम बड़े-बड़े अक्षरों में छपा हुआ था।

किरील ने रजिस्टर परे फेंक दिया।

"किताबें कहां हैं, किताबें?" उसने ज़ोर देकर पूछा।

"किताबें बिल्कुल अलग रखी हैं। यह समझिये कि खजाने में हैं। चलिये, इधर हैं।"

वे बगल के कमरे में चले गये। यहां छत तक किताबों के ढेर लगे हुए थे, ये विचित्र ढेर चोटियों, दर्रों और टूटी ढलानों वाली पर्वत-शृंखला जैसे लगते थे।

किरील ने धीरे-धीरे इन ढेरों पर नज़र दौड़ाई। यह रहा जीवन, सम्मान, यश – उसे वयोवृद्ध पुस्तकप्रेमी के शब्द याद हो आये – अथाह सम्पदा, असीम हर्ष, मानवजाति का सशक्त प्रेम!

फ़र्श पर पड़ा एक मोटा सा ग्रंथ पाराबुकिन का संतुलन बिगाड़ रहा था, उसे एड़ी से परे खिसकाते हुए वह बुदबुदा रहा था:

"यहां किताबों पर वैज्ञानिक ढंग से काम होता है, अध्ययन, छंटाई-वंटाई।"

"हुं!"

"और नहीं तो क्या! विद्वान यह तय करते हैं कि कौन सी किताब काम की है और कौन सी रद्दी। इधर देखिये। इस दीवार के पास धार्मिक ग्रंथ हैं – यूनानी आर्थोडोक्स, रोमन कैथोलिक, जर्मन लूथरी पंथों के। खूब मोटी जिल्दें हैं।"

"वह जो आपके साथ गला तर कर रहा था, वह भी कोई विद्वान ही है?"

"नहीं, वह मेरा दोस्त है। वैसे पढ़ा-लिखा आदमी है, धर्म विरोधी है, लैटिन जानता है। कला का जानकार है, क्योंकि खुद एक्टर है। पर कला की किताबें छांटने के लिए हमारे पास बड़े-बड़े विद्वानों को भेजा जाता है। एक को अपनी ही किताब यहां मिल गई। नाम है 'प्रकाश-छाया-चित्रण क्या है?' पढ़ी है? थियेटर की किताबें खुद त्स्वेतुखिन छांटते हैं।"

इज़्वेकोव ने जल्दी से उसे टोका:

"मैं यह जानना चाहता हूं कि दोरोगोमीलोव की किताबें कहां है?"

"उधर दरवाजे के पास ही। कोई आधा छकड़ा होगा, ज़्यादा नहीं। बेकार सी किताबें है। जिल्दों के बिना।"

"मुझे अकेला रहने दीजिये।"

"अच्छी बात है," पारावुकिन खुश हो गया। "आप छांट लीजिये, जो पसन्द आता है। बहुत से लोग खुश होकर गये हैं।"

किरील अकेला रह गया। कभी-कभार खिड़की में से सड़क की आवाजें आती, हवा के हल्के झोंकों से कभी खुली किताबों के पन्ने फड़फड़ा उठते। ढेर में से एक किताब निकालने से दूसरी किताबें भी खिसक जाती और नीचे गिरने लगतीं। इन असम्बद्ध और मानो विचार-मग्न सी ध्वनियों से वह खामोशी का वातावरण बन रहा था, जिसमें एकान्त इतना अच्छा लगता है।

किरील फ़र्श से किताब उठाने को झुका, पंजों के बल बैठा और वहीं बैठा रह गया – कभी किताब के पन्ने पलटता, कभी एक किताब रखकर दूसरी उठा लेता।

यहा ला फेंकी गई किताबों को देखकर अगर दोरोगोमीलोव के व्यक्तित्व का अनुमान लगाया जाता, तो वह सचमुच ही अनबूझ व्यक्ति था। दसियों बरसों के दौरान उसके पास किताबें जमा होती रही थीं और इन बरसों में लगता था उसने कई विषयों में रुचि ली थी, घड़ीसाज के पेशे और फ़ोटोग्राफ़ी से लेकर दर्शन के इतिहास और जलपोत निर्माण तक। यहां बौद्ध धर्म पर पुस्तकें थीं, घर पर व्यायाम की, फलों को टीनबंद करने की, रूसी सम्प्रदायों और मत्स्य पालन के बारे में भी। छोटी-छोटी नावों के बीच तैरते बजरे की भांति सस्ती किताबों के बीच संख्या सिद्धांत का मोटा ग्रंथ भी था। कैज़ानोवा के कारनामों का जर्मन अनुवाद भी पास ही पड़ा हुआ था और जर्मन होफ़मान की रचना का फ्रांसीसी अनुवाद गवार्नी के उत्कीर्णन चित्रों के साथ, और 'दोन किहोत' का पहला रूसी अनुवाद।

इस सारी खिचड़ी के मालिक ने हर किताब के मुखपृष्ठ पर स्याही से अपना नाम और वह तारीख लिखी थी, जब किताब खरीदी गई थी (शायद कबाड़ी बाजार में)। किरील के लिए वह एक रहस्यमयी और अप्रिय जीव ही था, जिसे कुछ बच्चे 'झबरा' कहते थे, और

जिसे रास्ते में देखकर किरील बचपन में सड़क पार कर लिया करता था। इस जीव से किरील के पिता की दोस्ती कैसे हो सकती थी? हो सकता है दोरोगोमीलोव की ये अजीबोगरीब रुचियां मात्र संयोग ही हों, जो जीवन में ऐसे जमा होते रहते हैं, जैसे जहाज़ की तली पर सीपियां, आदि? अगर पानी में से तली को देखा जाये, तो जहाज़ भी अजीब ही लगेगा। वैसे सोचा जाये तो उस आदमी में क्या खास बात हो सकती है, जिसे हर छोटी-मोटी किताब पर अपना नाम लिखकर संतोष होता हो? जिस पुस्तकप्रेमी ने कभी इज़्वेकोव के मन में पठन-पाठन के प्रति अनुराग जगाया था, उसने एक बार कहा था: आदमी को अपना नाम केवल उस पुस्तक पर लिखने का अधिकार है, जो उसने खुद लिखी हो।

किरील ने ढेर में से सोलोव्योव द्वारा लिखित 'रूस के इतिहास' का मोटा सा खण्ड उठाया और पन्ने थोड़े मोड़कर अंगूठे तले से उन्हें छोड़ा, मानो किताब खरीदते हुए कोई ग्राहक यह देख रहा हो कि पन्ने सही-सलामत हैं या नहीं। हाशियों पर पेंसिल के निशान दिखे। किरील ने पन्ने उलटे-पलटे और वह पन्ना ढूंढ़ा, जहां कुछ पंक्तियों तले गाढ़ी पेंसिल फिरी हुई थी। यह पुगाच्योव के उस हुक्मनामे की पंक्तियां थीं, जिसमें उसने अपने अनुयायियों को खेत और मैदान, नदियां और समुद्र, धन और रसद, सीसा और बारूद तथा चिर स्वतंत्रता देने का ऐलान किया था। हाशिये पर किसी ने लिखा था: "ऐसा होकर रहेगा।"

किसी ने उदार और उन्मुक्त हृदय से निकले इन शब्दों की भव्यता पर मनन किया था, कोई चाहता था कि जो कोई भी ये शब्द पढ़े, वह इन पर विचार करे, किसी को आशा थी कि यह बात सच होकर रहेगी। क्या यह दोरोगोमीलोव ही था?

किरील ने यह खण्ड एक ओर रख दिया। क्षण भर बाद ही उसने तोलस्तोय की रचनाओं का भी एक खण्ड वहां रखा, जिस पर ज़ारशाही रूस में प्रतिबंध लगाया गया था। थोड़ी देर बाद दोरोगोमीलोव की किताबें उलटना-पुलटना छोड़कर वह दूसरी किताबों की ओर बढ़ा।

उसे श्चेद्रिन की 'प्रदेश के शब्दचित्र' मिली। यह बढ़िया किताब दरियां, कालीन बुनने की किताबों के साथ ही पड़ी हुई थी। फिर

इब्सन के नाटक उसके हाथ लगे (सिर्फ़ दो खण्ड थे – संग्रह पूरा नहीं था)। इन्हें भी उसने अपनी ढेरी में जोड़ लिया। पहाड़ों के तंग दर्रों में आगे बढ़ते हुए उसे फ़र्श पर लोम्ब्रोज़ो की किताब मिली – कोनों से फटी हुई, खस्ताहाल। मेधा और पागलपन के विषय पर इस पुस्तक की आलोचकों ने धज्जियां उड़ाई थीं, किरील यह जानता था, पर उसने पुस्तक पढ़ी नहीं थी। जिस चीज़ की बुराई हुई थी, उसे पढ़ने में भी कोई हर्ज तो नहीं है। उसकी नज़र एक पुरानी सी जिल्द पर पड़ी, जिस पर लेखक का नाम था – बेल्तोव। वह आगे बढ़ गया, पर फिर लौटा और किताब का शीर्षक पढ़ा – 'इतिहास के अद्वैतवादी दृष्टिकोण का विकास'। अरे, यह तो प्लेखानोव है। पच्चीस साल पुरानी किताब। शायद यह किताब पहले ही किसी ने छांटी थी, वह बिल्कुल सामने ही रखी हुई थी। पर प्लेखानोव की तो इज़्वेकोव को हर हालत में जरूरत थी। यह लोम्ब्रोज़ो नहीं।

सहसा उसे शेक्सपियर की चार जिल्दें दिखीं, बिल्कुल एक जैसी शानदार जिल्दें – काले चमड़े पर सुनहरे अक्षर! उसने पहले कभी भी ऐसी जिल्दें नहीं देखी थीं। उसने जिल्द पलटी, अंदर का कागज रेशम सा चिकना और मुलायम था, फूलों और पंछियों से सजा हुआ, जो न नीले थे और न भूरे, बल्कि नीले और भूरे दोनों ही। फूलों और पंछियों के बीच रुपहला तार बेल सा लहराता चला गया था। रेशमी कागज को हाथ लगाते ही उसने सोचा: "ये आनोच्का के लिए अच्छी रहेंगी।" "आनोच्का मुझ से पढ़ने के लिए ले सकती है," तभी एक दूसरा विचार आप से आप मन में उठा।

निश्चय ही ये किताबें पहले से किसी ने अलग कर रखी थीं। वे सलीके से दूसरे सुंदर प्रकाशनों के साथ रखी हुई थीं। पर आखिर कौन यहां किताबें चुन सकता था? कौन यहां विशेषज्ञों को, छंटनी करनेवालों को, विद्वानों को नियुक्त करता था? बेशक किरील को भी किताबें चुनने का उतना ही हक था जितना उन्हें। खैर जो भी हो, अभी तो वह शेक्सपियर को अपनी चुनी किताबों के साथ रखेगा।

वह जल्दी करने लगा। किताबें बहुत ज़्यादा थीं, हर किताब को देर तक देखने का अर्थ होता कुछ भी न छांट पाना। वह अपनी अल-

मारियों की अच्छी तरह कल्पना कर रहा था, जब उन पर किताबें लग जायेंगी, तो वे कैसी लगेंगी। यह बात वहुत मानी रखती है कि वह अपना भावी संग्रह निश्चित प्रणाली के आधार पर वनाये। उसे सर्वप्रथम अपने पुस्तक संग्रह के प्रमुख भागों को पूरा करना चाहिए। पर वह तो अपनी मर्ज़ी से किताबें नहीं चुन रहा, बल्कि इस भूलभुलैयां में भटक ही रहा है और यहां जो है उसमें से सबसे अच्छी किताबें लेता जा रहा है। अभी तो उसे इसी पर संतोष करना होगा, जो सब यहां छोड़ते हुए दुख होता है, वह ले लेना चाहिए। "धत् तेरे की, मैं भी दोरोगोमीलोव जैसा हूं," उसे विचार आया। पर तभी एक दूसरे विचार ने उसे शांत किया: "जो फ़ालतू होगा, बाद में फेंक दूंगा।"

वह लालची हो गया। वह अपनी ढेरी में किताबें जोड़ता ही जा रहा था। अनचाहे ही उसका मस्तिष्क इस ढेरी को "मेरी किताबें" कह रहा था। मन ही मन वह कहता जाता: "यह किताव मां के लिए रोचक होगी, शिक्षा पर है।" या: "यह मैं रागोज़िन को पढ़ने के लिए दूंगा।"

झुटपुटा हो रहा था। वह किताबें आंखों के बिल्कुल पास लाकर उनके शीर्षक पढ़ रहा था। वह बिल्कुल अकेला था। इस सारे समय में एक बार भी कोई अंदर नहीं आया था। यह पूर्ण आत्म-विस्मृति थी। वह इन पहाड़ों को खोदता जा रहा था, उनमें सुरंगें बनाता जा रहा था: वहां गहराई में कोई मनचाही किताब छिपी हो सकती थी! चुनी हुई किताबों के गट्ठर तले हाथ डालकर और ऊपर से उसे ठोड़ी से दवाकर थकावट से लड़खड़ाता हुआ वह अपनी ढेरी के पास जाता, जो बढ़ती ही जा रही थी। फिर वहां जाता, जहां अभी तक नहीं गया था, वे किताबें देखता, जो अभी तक नहीं देखी थीं, और फिर से ढेरियां उलटता-पुलटता, एक जगह से दूसरी जगह जाता, किताबों के टीलों पर चढ़ता, उनकी ढलानों से उतरता। उसके हाथ धूल से चिकने हो गये थे। इस महीन, मीठी धूल से गले में खराश हो रही थी और वह खांस रहा था।

आखिर टीले और पहाड़ियां सब एक ढेर में मिल गये, पढ़ना असम्भव हो गया, केवल खिड़कियों में ही मंद-मंद उजाला शेष रह गया।

किरील ने अपने हाथ और कपड़े झाड़े, और अपनी सम्पदा के पास गया। उसे देखकर वह दंग रह गया: "हे भगवान! यह सब कैसे ले जाऊंगा! रेड़ा करना होगा।" वह क्षण भर को वहीं खड़ा रहा, मानो यह सोचते हुए कि आखिर यह सब हुआ कैसे? ये कैसी किताबें उसने जमा कर ली हैं? उसे लगा उसका सिर चकरा रहा है और वह एक ओर को गिरा पड़ रहा है।

सहसा खिड़की में से मार्चगान के स्वर आये। सड़क पर बूटों की ताल के साथ कर्कश स्वर अधिकाधिक जोर से गूंज रहे थे:

निडर होकर
हम लड़ेंगे,
सोवियत की
रक्षा करेंगे...

किरील ने बाज़ू से माथा पोंछा। उसे सचमुच ही चक्कर आया और सारे शरीर में झुरझुरी दौड़ गई।

दोनों हाथ दरवाज़े पर मारकर उसने दरवाज़ा खोला, पारावुकिन गिरते-गिरते बचा और सहमकर पीछे हट गया।

पारावुकिन सिर के पास छोटी सी ढिबरी उठाये खड़ा था। ढिबरी की लौ में उसके बाल और दाढ़ी सुनहरी लग रहे थे।

"मैं आपके लिये दिया ला रहा था। अंधेरा हो गया। मिली कुछ काम की चीज?"

"नहीं," किरील ने कहा। "फिर कभी। नमस्ते।"

"अगर आप चाहें तो हम किताबें भेज देंगे। बस पता बता दीजिये।"

"नहीं, कोई जरूरत नहीं। नमस्ते," किरील ने एक बार फिर कहा और रास्ते में बिखरी पड़ी रद्दी के ऊपर प्रायः दौड़ता हुआ बाहर को चला।

३३

कला के क्षेत्र में ऐसी समस्याएं हैं, जो केवल इसलिए हल कर ली गई प्रतीत होती हैं, कि परिपक्व कलाकार उनके आदी हो गये हैं

और यह मानते हैं कि उनका समाधान ढूंढ़ा जा चुका है। यदि कोई युवा कलाकार ऐसी समस्या परिपक्व कलाकार के सामने रखता है, तो उसे उत्तर में इसका समाधान नहीं, बल्कि उस अनुभव का हवाला मिलता है, जो परिपक्वता के साथ आता है। अनुभव समाधान का स्थान लेता है, क्योंकि यह समाधान किसी शाश्वत नियम के रूप में विद्यमान नहीं होता है, बल्कि हर कलाकार अपने लिए, अपने समय के लिए यह समाधान ढूंढ़ता है।

रंगमंच पर कदम रखते ही आनोच्का पाराबुकिना ने अपने आप को दसियों प्रश्नों से घिरा पाया, जैसे कि जंगल में घुसा व्यक्ति अपने आप को पेड़ों से घिरा पाता है। उसके सामने जो अनगिनत अनबूझ पहेलियां और अस्पष्ट बातें थीं, उनमें एक प्रश्न उसे असाधारणतया महत्वपूर्ण लगता था और उसका उत्तर पाने में वह देरी नहीं कर सकती थी।

प्रश्न यह था कि अपने आप से भिन्न व्यक्ति की भूमिका अदा करने के लिए अभिनेता कौन से साधन इस्तेमाल करे, कहां ये साधन पाये?

यदि आनोच्का पाराबुकिना को आनोच्का पाराबुकिना की ही भूमिका अदा करनी होती, तो समस्या सहज ही हल हो जाती: आनोच्का को बस जीवन में से रंगमंच पर उतर आना होता।

परन्तु आनोच्का को तो 'छल और प्रेम' की लुईज़ा की भूमिका अदा करनी थी। आनोच्का ने कभी लुईज़ा को नहीं देखा था। नहीं, जब वह बिल्कुल बच्ची ही थी, तब एक बार नगर के सिरे पर स्थित सेर्वियॆ पार्क थियेटर में उसने लुईज़ा को देखा था। लेकिन यह तो किसी अभिनेत्री द्वारा पेश की गई लुईज़ा थी। १८वीं सदी में किसी जर्मन रियासत में जो लुईज़ा मिल्लर कभी थी, उसे तो आनोच्का नहीं जान सकती थी।

ऐसा क्यों कहा जाता है कि थियेटर जीवन का दर्पण है? कैसे जीवन का? उस जीवन का जिसे किसी ने नहीं देखा है? आनोच्का को कैसे अभिनय करना चाहिए? सेर्वियॆ पार्क की उस अभिनेत्री की भांति?

जब आनोच्का ने ये सब बातें त्स्वेतुखिन से पूछीं, तो उसने पल भर भी सोचे बिना जवाब दिया:

"तुम ही लुईज़ा हो! अपने आप को ही मंच पर पेश करो!"

"कैसे?" आनोच्का ने गम्भीरतापूर्वक पूछा, "यह कैसे हो सकता है। मैं घुटनों तक की स्कर्ट पहनती हूं, लम्बे-लम्बे कदम भरती चलती हूं। और लुईज़ा तो टखनों तक की बहुत बड़े घेरे वाली स्कर्ट पहनती थी।"

"जब तुम ऐसी स्कर्ट पहन लोगी, तो सब ठीक हो जायेगा। बस यह याद रखो कि तुम्ही लुईज़ा हो।"

"और हाथ-पांव? क्या लुईज़ा के हाथ-पांव इतने बड़े हो सकते थे?"

"हां, इतने ही बड़े थे। इनके बारे में मत सोचो। यह सोचो कि तुम फ़र्दीनांद को प्यार करती हो, कि तुम मेरे... यानी फ़र्दीनांद के साथ सुखी हो सकती थी, पर मैंने... यानी फ़र्दीनांद ने तुम्हें दुखी बना दिया। मेरे प्रति अपनी भावना के बारे में सोचो।"

"मैं तो सोचती ही रहती हूं! आप भी कुछ सोचिये न!"

"ओहो!" त्स्वेतुखिन ने मुस्कराते हुए उसे जताया कि ऐसी कमनीय युवती को भी यह नहीं भूलना चाहिए कि वह शिष्या ही है।

वह सकपका गई, लेकिन यह समस्या हल करने की उसकी इच्छा इतनी उत्कट थी कि उसने हाथ जोड़कर पूछा :

"मेरी समझ में नहीं आता, तो इसमें मेरा क्या कसूर है! लुईज़ा को अपनी स्थिति में कोई रास्ता ही नज़र नहीं आता, लेकिन मैं आसानी से रास्ता ढूंढ़ लेती। सो, वह मेरे जैसी नहीं है।"

"बहुत खूब! तुम बिल्कुल लुईज़ा जैसी ही हो। वह भी बिल्कुल ऐसे ही फ़र्दीनांद के आगे हाथ जोड़ती है! बस, यह याद रख लो!"

"पर मैं कभी उसके पांव न पड़ती! कभी नहीं! मैं उसे जाने देती। जाये!.. आखिर मेरे पास ही लौटकर आयेगा," हठधर्मी के साथ उसने कहा।

त्स्वेतुखिन भाव विभोर हो उठे प्रशंसक की विमुग्ध नज़रों से उसकी ओर देख रहा था।

"अच्छा, सुनो। तुमने खुद जीवन में जो महसूस किया है, उसका एक अंश ही लुईज़ा में पाने की कोशिश करो।"

"पर अगर उसमें ऐसा कुछ भी नहीं है, जो मेरी भावनाओं से मिलता-जुलता हो, तो?"

"अच्छी बात है। यह मत सोचो कि उसमें तुम्हारे जैसा क्या है। यह देखो कि तुममें उसके जैसा क्या है। उससे मिलता-जुलता कोई लक्षण।"

साथ ही उसने मन ही मन अपने आप से पूछा: "यह लुईज़ा की निराशा कैसे समझ सकती है, जबकि इसने स्वयं कभी प्यार नहीं किया है, निराशा अनुभव नहीं की है?"

"और फिर", त्स्वेतुखिन ने कहा, "किसी पात्र का जीवन जीना कुछ हद तक अभ्यास की बात है।"

उनकी यह बातचीत अकेले में हो रही थी – जिस क्लब में थियेटर स्टूडियो काम करता था, वहीं पर रिहर्सल के बाद। वे दोनों धूल भरे हॉल की खिड़की के पास खड़े थे, हॉल में दीवार के साथ-साथ कुर्सियां उल्टा कर रखी हुई थीं।

"अच्छा, अभी तुम्हें समझाता हूं यह बात। तुम कहो तो अभी मैं रो पड़ता हूं", त्स्वेतुखिन ने मुस्कराते हुए कहा।

उसने खिड़की के बाहर नज़र डाली। बूंदाबांदी हो रही थी। खड़ंजों की सड़क कीचड़ से चमक रही थी। रेड़ेवाला अपने कफ़्तान के पल्ले कमरबंद में ठूंसे, लगाम के सिरों से मरियल घोड़ी को मार रहा था। घोड़ी के लिए बोझ बहुत भारी था। गोल खड़ंजों पर उसके नाल फिसल-फिसल जाते थे। घोड़ी लड़खड़ाती और अपनी लंबी गर्दन पर थूथना ऊपर को झटकती।

आनोच्का ने देखा कि त्स्वेतुखिन की काली-काली आंखें धीरे-धीरे बड़ी हो गईं और चमकने लगीं, मानो किसी ने पुतलियों पर लुक की कूंची फेर दी हो। फिर ऊपर की पलकें फड़फड़ाईं, नीचे की पलकों पर एक नम तार खिंच गया, जो नाक के पास आंखों के कोनों में मोटा होता जा रहा था। यह एक पारदर्शी दाना था, जो बड़ी तेज़ी से बढ़ता जा रहा था और सहसा बाईं आंख में वह पलक से टूटा और पतली सी धार में बल खाता गाल पर बह चला।

सड़क की ओर देखे हुए त्स्वेतुखिन रो रहा था।

"बस कीजिये!" आनोच्का सहसा चिल्लाई, उसकी अपनी आंखें डबडबा आई थीं।

त्स्वेतुखिन ने रूमाल से चेहरा पोंछा।

"अब देखना कैसे मेरा चेहरा फक पड़ता है।"

उसने आनोच्का का हाथ पकड़कर अपनी उंगलियों में दबाया और अपना शरीर एक झटके से उससे परे हटाया। आनोच्का ने उसका लटक गया निचला होंठ और अधखुला, जड़ मुंह देखा। उसके गालों का रंग जाता रहा था, सारे नक्श तीखे और निर्जीव हो गये थे।

आनोच्का ने बड़ी मुश्किल से उसकी उंगलियों में से अपना हाथ छुड़ाया।

अपनी सफलता पर संतुष्ट वह हंसने लगा।

"पता है इसे क्या कहते हैं? एक बार सहे दुख की भावना को, कभी हुए भय के अनुभव को मन में फिर से जिलाना।"

आनोच्का पर लगी उसकी नज़रों में श्रेष्ठता और प्रतीक्षा का भाव था।

"जीवन का अनुभव पाना चाहिए। और फिर मन ही मन इस अनुभव को दोहराना चाहिए। शेष सब तुम्हारा शरीर अपने आप करेगा। बस वह तुम्हारी भावनाओं के प्रति संवेदनशील होना चाहिए, वैसे ही जैसे वादक के हाथों में साज।"

आनोच्का को उसकी आंखों में प्रतीक्षा का भाव अच्छा नहीं लगा।

वह समझती थी कि यह सब इस प्रश्न का उत्तर नहीं है कि लुईजा कैसी थी। लेकिन यह जानकर वह विस्मित हो गई थी कि भावनाओं का भी उंगलियों की ही भांति अभ्यास किया जा सकता है, कि इस "तकनीक" से लोगों में वैसी ही भावनाएं जगाई जा सकती हैं।

आनोच्का ने अपनी इच्छा से आंसू लाने की कोशिश की। एकांत में वह ऐसे क्षण याद करती, जब वह रोई थी। लेकिन जैसे वह पहले रोई थी, वैसे अब नहीं रोना चाहती थी। उसके प्रयासों का कोई फल नहीं निकल रहा था।

पर एक बार रात को उसकी आंख खुली और वह मां के बारे में सोचने लगी। सहसा मां का निष्प्राण हाथ, उस पर पड़ती धूप,

सुइयां चुभने से खुरदुरे पड़े उंगलियों के पोर—यह सब उसके स्मृति पटल पर उभर आया और उसे इन उंगलियों पर अपने गाल के स्पर्श की इतनी स्पष्ट अनुभूति हुई कि हृदय अपने लिए ही अनुकम्पा से भर उठा। उसने देखा कि सिरहाना गीला है, और वह समझ गई कि सपने में रोती रही है। तब वह फिर से अपनी स्मृति में मां का हाथ देखने लगी और फिर से उसकी आंखों में आंसू उमड़ आये। उसने गिलाफ़ से आंखें पोंछीं, थोड़ी देर लेटी रही और फिर किसी बुरे काम की भावना से बोझिल मन लिये सो गई।

सुबह उसने फिर से मां के बारे में, उसके हाथ के बारे में सोचा और फिर से रो पड़ी। वह बेहद शर्मिंदा थी कि मां की स्मृति का ऐसा दुरुपयोग कर रही थी, जानबूझकर यह दोहराते हुए उसे डर लगता था, वह सोचती थी कि यह पाप है लेकिन फिर भी वह दोहराती थी। उसे शर्म आती थी और डर लगता था, पर साथ ही वह खुश भी थी कि हर बार उसकी इच्छा के अनुसार ही होता है: यह याद करती कि कैसे उसने मां का हाथ चूमा था और तुरन्त ही आंखें भर आतीं। ऐसा करते हुए वह मां से इस पाप के लिए क्षमा मांगने लगी और मानो उसे यह विश्वास दिलाने लगी कि आखिर उसके आंसू तो सच्चे ही हैं।

आनोच्का बेचारी करती भी तो क्या करती?—उसके जीवन में मां से विदाई का क्षण ही सबसे अधिक हृदयविदारक क्षण रहा था और इसकी याद से ही किसी भी क्षण उसकी आंखें डबडबा आती थीं। मां की स्मृति से वह अपना अभ्यास कर रही थी, "तकनीक" सीख रही थी, पर यह कला की खातिर था, उस कला की खातिर, जिसे वह पावन समझती थी।

अगर वह अभिनेत्री बनना चाहती थी, तो उसे रंगमंच पर एक ही भावना को सैकड़ों बार दोहराना होगा और वह यह भली भांति समझती थी कि अपनी इच्छा से ही सैकड़ों बार किसी पात्र से प्रेम या घृणा नहीं की जा सकती, जब तक कि प्रेम या घृणा को एक "तकनीकी साधन" में न बदल लिया जाये, इसका अभ्यास न कर लिया जाये। उसे यह अभ्यास करना था और अभी उसे इसका केवल एक रास्ता बताया गया था: वास्तविकता अर्थात जीवन का वह अनुभव

जो उसने स्वय पाया था। वह अभी यह नहीं जानती थी कि अपनी भूमिका के प्रति अभिनेता का प्रेम क्या होता है (उसने केवल एक भूमिका अदा की थी और वह भी केवल एक बार)। वह नहीं जानती थी कि अभिनेता को अगर कोई भूमिका प्रिय हो, तो उससे उसके मन मे अनचाहे ही हजारों बार एक जैसी ही भावनाएं उठ सकती है, जो, हो सकता है, उसने अपने जीवन में कभी अनुभव न की हों।

और आनोच्का तो अपने रोम-रोम से अभिनेत्री बनना चाहती थी। वह अपनी कल्पना की उड़ान में यह लंबा रास्ता तय कर चुकी थी, जो शायद रंगमंच के सपने देखनेवाली सभी लड़कियों की कल्पना मे बननेवाले रास्ते से ज़रा भी भिन्न न था। लेकिन आनोच्का इस रास्ते को अद्वितीय और पूर्वनिर्धारित मानती थी। इस रास्ते के साथ उसकी बहुत सी विलक्षण यादें जुड़ी हुई थीं।

बहुत पहले जब वेरा निकान्द्रोव्ना ने आनोच्का को स्कूल में दाखिल कराया था, तो उसे थियेटर के नेपथ्य में जाने की मनाही कर दी थी। यह कोई आसान बात नही थी, क्योंकि ओल्गा इवानोव्ना तब थियेटर के लिए पोशाकें सीती थी और इस सिलसिले में बेटी को अक्सर थियेटर भेजा करती थी।

"अगर आप चाहती हैं कि मैं आपकी बेटी को पढ़ने में मदद दूं, तो आपको उसे थियेटर भेजना बंद करना होगा", वेरा निकान्द्रोव्ना का आग्रह था।

आनोच्का ने इतनी जल्दी वेरा निकान्द्रोव्ना का कहना नहीं माना, जितनी जल्दी ओल्गा इवानोव्ना ने। मां बेटी को पढ़ाने-लिखाने का सपना देखती थी, लेकिन बेटी को थियेटर के नेपथ्य में सब कुछ स्कूल से कहीं अधिक रोचक लगता था। पर आखिर वेरा निकान्द्रोव्ना का प्रभाव ही हावी हुआ।

जब आनोच्का कुछ बड़ी हो गई, तो थियेटर के प्रति उसके आकर्षण में एक नया अर्थ आ गया: नेपथ्य में जो कुछ होता था, वह रहस्यमय था, लेकिन हॉल में बैठकर सब कुछ उससे भी अधिक रहस्यमय लगता था—वहां से यह देखा जा सकता था कि कैसे किसी चमत्कारवश रंगमंच पर एक नये जीवन की सृष्टि होती है।

लेकिन इस मामले में भी वेरा निकान्द्रोव्ना ने आसानी से ढील नहीं की।

"रंगमंच पर यही तो दिखाया जाता है कि मानव-आत्मा में क्या कुछ घटता है, इसीलिए मैं कहती हूं थियेटर जाना एक महत्वपूर्ण बात होनी चाहिए। आखिर आदमी के मन में यों ही तो नहीं झांका जा सकता, जैसे चलते-चलते चायखाने में झांक लिया, है न? थियेटर तो ऐसे जाना चाहिए, जैसे मंदिर जा रहे हो", वेरा निकान्द्रोव्ना आनोच्का को समझाती।

सभी नियमों पर सुसंगत रूप से अमल करने के शिक्षकों के स्वभाव के अनुसार वह अपनी इन नसीहतों को पुस्तकों पर भी लागू करती।

"किताब को सरसरी तौर पर देखना, या पन्ने पलटना पढ़ना नहीं होता। पढ़ना तो ऐसे चाहिए, जैसे पादरी किसी की स्वीकारोक्ति सुनता है। पुस्तक में गहरा पैठना चाहिए। तभी वह पूरी तरह उजागर होगी और तुम उसका सारा सौंदर्य समझ सकोगी, रसास्वादन कर सकोगी। जैसे जंगल को दूर से देखकर या उसके किनारे-किनारे चलकर, उसमें अंदर दूर तक जाये विना, उसे नहीं जाना जा सकता, उसी तरह जब तक तुम पुस्तक पढ़ने में मगन होना नहीं सीखोगी, तब तक ज्ञान का आनन्द नहीं पा सकोगी।"

यह सब कहते हुए वेरा निकान्द्रोव्ना के चेहरे से ऐसा स्नेह टपकता और वह इतने आश्वस्तकारी ढंग से सिर हिलाती कि आनोच्का को शर्म आने लगती, क्योंकि वह पुस्तकों को भी ज़्यादा ध्यान से नहीं पढ़ पाती थी, और थियेटर भी हर दिन, सुबह, शाम, पल भर को ही सही, जाने को तैयार थी। हां, भले ही वह थियेटर के प्रति इतना आदर नहीं दिखाती थी, पर फिर भी था वह उसके लिए मंदिर ही। इसके विपरीत, संसार के सारे मंदिर उसके लिए इस एक मंदिर में ही सीमित होकर रह गये थे और यह मंदिर एक पूरे संसार की भांति उसे अपनी ओर आकर्षित करता था।

फिर समझाने-बुझाने के स्थान पर सिर्फ़ सलाह ही देने का समय आया और आखिर सलाह का भी स्थान शुभचिंता भरी मुस्कान ने लिया।

आनोच्का ने स्कूल की पढ़ाई उन दिनों पूरी की, जबकि पुराने विद्यालयों की परम्पराएं अभी पूरी तरह मिटी नहीं थीं। उनकी भूतपूर्व क्लास टीचर ने, जो अब केवल साहित्य ही पढ़ाती थी, एक दिन

आनोच्का के निबंध की सराहना की, पर पाठ के बाद हौले से उससे पूछा

"पारावुकिना, तुम्हारे घरवाले तुम्हें नये हिज्जों से लिखने देते हैं?"

वह चाहती थी कि उसकी छात्रा इस डांवांडोल हो गई दुनिया में पदार्पण करते हुए ध्वस्त हो गई पुरानी परम्पराओं में से कुछ तो बनाये रखे।

लेकिन अब भूतपूर्व बालिका विद्यालय में बालक भी पढ़ने लगे थे; विद्यालय की प्रधानाचार्या का स्थान नये प्रिंसिपल ने ले लिया था, अब जतन से कंघी किये हुए लंबे बालोंवाला, गले में सलीब लटकाये पादरी कक्षाओं में धर्म की शिक्षा देने नहीं आता था, और, अंततः, अब लड़कियों ने अपने आप ही 'नाबालिग'* नाटक मंचित करने में निर्देशन पाने के लिए एक पेशेवर अभिनेता को आमंत्रित किया था। यह तो बरसों से चली आ रही परम्परा को एकदम ही ठुकरानेवाली बात थी। इस परम्परा के अनुसार विद्यालय की अंतिम कक्षा की छात्राएं साहित्य की अध्यापिका की मदद से नाटक की रिहर्सल करती थीं। इस परम्परा को ठुकराने की पहल करनेवाली थी आनोच्का पारावुकिना।

अपने दुस्साहस पर स्वयं ही सकपकाई सहेलियों को साथ लेकर आनोच्का येगोर पाव्लोविच त्स्वेतुखिन के यहां पधारी।

त्स्वेतुखिन को उनसे मिलने के लिए तैयार होने में काफ़ी समय लगा। लड़कियों का आना बिल्कुल अप्रत्याशित था। त्स्वेतुखिन ने सोचा शायद थियेटर की शौकीन युवतियां मिलने आई हैं। वैसे अब थियेटर शौकीनों का यों आना काफ़ी विरली बात हो गई थी।

लड़कियां जब आईं, तो वह अंदर केवल अंतरीय पहने बैठा था, उसके सामने ठंडी चाय का गिलास रखा हुआ था और वह पाइप में फंसा तम्बाकू साफ़ कर रहा था। मन न जाने क्यों उदास था। अभी-अभी उसने मेफ़ोदी को भगाया था, जो ख़ुमार तोड़ने के लिए पैसे मांगने आया था और शिकायत कर रहा था कि सिर फटा जा रहा है।

---

* १८ वीं सदी के रूसी लेखक फ़ोन्वीज़िन का नाटक (१७८३)।—सं०

दूसरे कमरे में आग्निया ल्वोव्ना गला साफ़ करते हुए रियाज़
कर रही थी। प्राय: साल भर पहले वह सातवीं बार येगोर पाव्लोविच
के पास लौट आई थी, इस आशा में कि आखिर तो वे वफ़ादारी
निभाते हुए सुख-चैन से रह सकेंगे। त्स्वेतुखिन झुंझलाते हुए उसकी
सिगरेट पीने से बैठी आवाज़ सुन रहा था और उन दिनों के बा
में सोच रहा था, जब वह आग्निया ल्वोव्ना के रूप को नई-नई उपमा
दिया करता था। उसके चेहरे की रंगत चित्रों जैसी शोख लगती थी
पर फिर भी स्वाभाविक ही थी। आग्निया ल्वोव्ना के इस आकर्षण
के कारण ही थियेटरों के मैनेज़र उसे खुशी-खुशी लेने को तैया
हो जाते थे, लेकिन यह सिलसिला तभी तक चला, जब तक कि
उसकी अयोग्यता सबने पहचान न ली। जिस थियेटर में भी वह जाती
उकताऊ अभिनेत्री की ख्याति उसके पीछे-पीछे पहुंच जाती।

त्स्वेतुखिन के जीवन में आग्निया ल्वोव्ना एक गौण तत्व थी
लेकिन उसकी सारी ज़वानी में एक महत्वपूर्ण तत्व के रूप में उससे
जुड़ी रही थी। पहली बार जब वह उसे छोड़कर गई थी, तो त्स्वेतुखिन
उसकी कोई परवाह नहीं करना चाहता था, लेकिन आग्निया ल्वोव्ना
ऐसा करती रही कि त्स्वेतुखिन को सदा उसकी परवाह करनी पड़ी
इसका नतीजा यह था कि त्स्वेतुखिन के मन में उसके प्रति न केवल प्रेम
घटता जा रहा था, बल्कि नफ़रत भी बढ़ती जा रही थी, परन्तु फिर भी
वह ऐसा नहीं कर पाता था कि आग्निया ल्वोव्ना उसे सदा के लिए छोड़कर
चली जाये, क्योंकि आग्निया ल्वोव्ना की उसे न छोड़ने की इच्छा त्स्वेतु-
खिन की उसके साथ न रहने की इच्छा से ज़्यादा प्रबल थी।

पत्नियों की एक किस्म बाबा आदम के ज़माने से चली आ रही
है। इस किस्म की पत्नियां जब तक पति के गले में पालतू कुत्ते की
तरह पट्टा बांधे रहती हैं, तभी कुछ हद तक शांत रहती हैं—कुछ
हद तक ही, क्योंकि पट्टा अगर थोड़ा सा भी ज़्यादा खिंच जाये
तो बेहद खिसिया उठती हैं और अगर कहीं पट्टा टूट जाये, तो तुरन्त
ही रोने-बिलखने लगती हैं, छाती पीटने लगती हैं। आग्निया ल्वोव्ना
स्वभाव से ऐसी ही थी।

इसके विपरीत, येगोर पाव्लोविच का स्वभाव ऐसा नहीं था
कि उसे पालतू बनाया जा सकता। उसका जिज्ञासु और अन्वेषी स्वभाव

उसे स्वप्नदृष्टा बनाता था, ऐसा व्यक्ति आत्मसमर्पण में सुख नही पा सकता था। हो सकता है ज़ंजीर उसे बांधे रखती, न कि पट्टा, जिसे वह कभी खींचता था, कभी झटके देता था, कभी तोड़ देता था। लेकिन आग्निया ल्वोव्ना का रूप जाल ज़ंजीर बनाने के लिए पर्याप्त नहीं था। वह तो बस पट्टे को ही जैसे-तैसे जोड़-जाड़कर उसकी बेकाबू गर्दन में बांध सकती थी।

वक्त बीतने के साथ-साथ त्स्वेतुखिन की सारी जिज्ञासा कुछ हद तक पुरानी सनकें और कुछ हद तक बेचैनी बनकर रह गई थी। वायोलिन वह भुला बैठा था, क्योंकि इसे बजाने में वह निपुणता इतनी जल्दी हासिल नहीं कर पा रहा था, जितनी जल्दी उंगलियों की लचक खोती जा रही थी। नये उड़न यंत्रों की योजनाओं में भी वह रुचि खो बैठा था, क्योंकि युद्ध के दिनों में वायुयानों के निर्माण में जिस तेज़ी से प्रगति हुई थी, उससे त्स्वेतुखिन के कभी दुस्साहसपूर्ण लगनेवाले विचार बिल्कुल पिछड़ गये थे। संध्या समय निष्फल गणनाएं करते-करते ऊंघा न करे, इसलिए अब वह ताश खेलने लगा।

बस एक थियेटर ही शेष रह गया था।

इस कला मे त्स्वेतुखिन का लगाव सच्चा और उत्साहपूर्ण था। उसकी सबसे बड़ी इच्छा यही थी कि वह थियेटर में कुछ नया करे। लेकिन यहां भी समय के साथ उसका उत्साह ठंडा पड़ रहा था, उसकी उड़ान दौड़ में बदल गई थी, दौड़ नपे-तुले कदमों में और ये कदम भी कभी-कभी अनिश्चय में थम जाते थे।

वह अभिनेताओं से प्रायः बहस करता था, परन्तु ऐसा अब आदतवश ही होता था, न कि किसी विशेष उत्साह के कारण। रंगमंच के उसके अनुभव ने उसे ऐसा अभ्यास, ऐसी परिपाटी दे दी थी, जिसकी मदद से समस्याएं हल करना किन्ही नई खोजों की तुलना में कहीं अधिक आसान था। शनैः-शनैः वह इस परिपाटी का आदी हो गया था और बढ़ती उदासीनता के साथ अपनी सच्ची रुझानों के विरुद्ध काम करता था। उसके जो कुछेक साथी उम्र में उससे बड़े थे, वे कब के जीवन के थपेड़ों से सारा उत्साह खो बैठे थे और वे कला के महान ध्येयों के प्रति अभिनेताओं की उदासीनता को कोई पाप नहीं समझते थे।

"तुम हमें उपदेश मत दो", वे त्स्वेतुखिन से कहते थे, "यह

दिखाओ कि तुम कर क्या सकते हो। अगर हमें भाया, तो हम तुम्हारे पीछे हो लेंगे। कभी सर्मातोव और ओर्लेनोव जैसे अभिनेताओं के पीछे भी चला करते थे।"

क्रांति के पहले गर्जन के साथ त्स्वेतुखिन में नये उत्साह का संचार हुआ। उसे लगता था कि अब स्वयं इतिहास ही वह सब कर देगा, जो पहले मनुष्य की शक्ति से परे था। वह सोचता था कि वह तुरन्त ही सारे थियेटर को अपने विचारों का समर्थक बना लेगा। लेकिन उसकी बातों पर कोई कान नहीं देता था। सब उसकी लंबी-चौड़ी, चुनौती भरी बातें सुनने के आदी हो चुके थे। सब उसे पुराना सनकी ही समझते थे और यह नहीं मानना चाहते थे कि उसके नये विचार क्रांति द्वारा प्रेरित हैं। सो उसे वही पुरानी बातें सुनने को मिलतीं:

"तुम तो बस यही कहते रहते हो कि कैसे होना चाहिए। पर, भाई जान, कला तो जो है, वही है। कुछ करके दिखाओ! तुम्हारे इन सब नये-नये विचारों से क्या बनेगा, यह कोई क्या जाने! एक्टर का स्वभाव ही ऐसा है, हर बात पर संशय करना। जब तक वह अपनी आंखों देख नहीं लेगा, हाथ से छूकर नहीं देख लेगा, विश्वास नहीं करेगा।"

उसे कोई अगत पथ पकड़ना था, या शायद ऐसी दिशा में बढ़ना था, जहां कोई रास्ता था ही नहीं।

और अब त्स्वेतुखिन अपनी किस्मत पर दुखी होता बैठा हुआ था। बगल के कमरे से आते रियाज़ के स्वर से उसे चिढ़ हो रही थी और वह सोच रहा था कि इस स्वर की मालकिन में सब कुछ कितना अस्वाभाविक और बनावटी है, सब कुछ दिखावा ही दिखावा है। वह प्यारी सी बिल्ली बनती फिरती थी, सोफ़े पर पांव रखकर बैठ जाती थी, लेकिन उसकी टांगें बांस जैसी थीं और उभरे-उभरे, नुकीले घुटने बड़े बेहूदा लगते थे। वह उन अभिनेत्रियों की नकल करती थी, जो बड़ी बेतकल्लुफ़ी से दोस्तों की पीठ थपथपा सकती थीं, कूल्हों पर हाथ रखकर चल सकती थीं, किसी परिचित से भी यों गले मिल सकती थीं, जैसे वह सगा भाई हो, और चुम्बनों की झड़ी भी लगा सकती थीं। लेकिन आग्निया ल्वोव्ना जब यह सब करती, तो भठियारिन लगती और त्स्वेतुखिन को यह देखकर घिन होती।

वह दीवार पर दस्तक देना ही चाहता था, ताकि आग्निया ल्वोव्ना अपना रियाज बंद कर दे, पर तभी लड़कियां आईं।

जल्दी-जल्दी कपड़े पहनकर और कमरे को ठीक-ठाक करके उसने लड़कियों को अंदर बुलाया। वे वहीं दहलीज़ पर रुक गईं, अपने देवता के मंदिर में कदम रखने का साहस नहीं जुटा पा रही थीं।

आश्चर्य की बात है कि आराध्य व्यक्ति पर आराधना का कैसा शारीरिक प्रभाव पड़ता है। युवतियों के दमकते चेहरे और उनकी अलग-अलग रंग की आंखें, जिन्हें वे झपकाने का भी साहस नहीं कर पा रही थीं, देखकर उसकी रग-रग में झंकार हुई। उसकी नसों में मानो सुरूर दौड़ रहा था, उल्लास का संचार कर रहा था। युवतियों के सामने ऊंचा, रोबीला, बिल्कुल जवान लगता त्स्वेतुख़िन खड़ा था, उस त्स्वेतुख़िन से पूर्णतः भिन्न, जो ठंडी चाय में चम्मच चलाता हुआ आग्निया ल्वोव्ना की वजह से मन में उठ रही खीज से जूझ रहा था।

आनोच्का ने ही इस काम की पहल की थी, और अब वह बिल्कुल प्रतिनिधिमण्डल की अध्यक्षा के लहजे में ही कहने लगी:

"आदरणीय येगोर पाव्लोविच! हम अंतिम वर्ष की छात्राएं..."

त्स्वेतुख़िन के चेहरे पर उत्साहवर्द्धक मुस्कान थी – इससे पहले कि आनोच्का उसे स्कूल में नाटक देखने आने और यदि सम्भव हो तो उसके मंचन में सहायता करने का अनुरोध करती, वह लड़कियों के आने का मकसद समझ गया था।

"'नाबालिग'!" पूरी बात सुनकर उसने कहा और यों सिर एक झटके में ऊपर उठाया, मानो किसी पुराने दोस्त का सिर हिलाकर अभिवादन करने लगा हो। "और सोफ़िया कौन बनेगी?"

"मैं," आनोच्का ने निडर होकर जवाब दिया और उसके गालों पर लाली दौड़ गई।

"अच्छा, तुम..." त्स्वेतुख़िन कुछ कहते-कहते रुक गया।

क्रांति के बाद उसने आनोच्का को एक बार भी नहीं देखा था और उसका यह रूप तब के उसके रूप से भी अधिक अप्रत्याशित था, जब लड़ाई के दिनों में कई बरसों के बाद उसने आनोच्का को देखा था और उसे अपनी आंखों पर विश्वास ही नहीं हुआ था कि यह वही

पटसनी बालों की छोटी-छोटी चुटियों वाली बच्ची है, जो कभी थियेटर के नेपथ्य में मंडराती रहती थी और एक्टरों के लिए सिगरेट खरीदकर लाया करती थी।

वह तुरन्त ही स्कूल जाने को राज़ी हो गया। उसे कुछ ऐसा पूर्वाभास हुआ कि इन सकुचाती और साथ ही उमंग भरी युवतियों के साथ नाटक की रिहर्सल करते हुए रंगमंच पर किन्हीं नई सम्भावनाओं के द्वार खुल सकते हैं, हालांकि ये लड़कियां तो शायद जानती भी न होंगी कि किधर जा रही हैं। इसके अलावा राज़ी होने का एक और कारण था – उसके मन में इसी क्षण आनोच्का के प्रति जागा कौतूहल: वही अपनी सभी सहेलियों से अधिक उमंग से भरी हुई थी, और वही अपने संकोच से सबसे अधिक साहस से जूझ रही थी।

स्कूल में कुछ दिन काम करने पर ही उसे विश्वास हो गया कि उसका पूर्वाभास पूर्णतया सही था। युवाजन के लिए उसका हर शब्द अटल नियम के समान था। वह 'नाबालिग' की सभी भूमिकाओं की अपने ढंग से व्याख्या कर सकता था और सभी कलाकार तत्परता से उसकी बात मानते और ठीक अपने गुरु के पदचिह्नों पर ही चलने का पूरा-पूरा यत्न करते।

बेशक, यह अभिनय कला में कोई क्रांति नहीं थी! हां, यहां एक नवीनता थी, ऐसा कोई बंधन नहीं था, जिससे थियेटर में काम करनेवाले कलाकार बंधे हुए थे। यहां निश्छलता को भोलापन नहीं माना जाता था। यहां लड़कियां अपनी सरल हृदयता पर शर्माये बिना कहती थीं: "मैं तो रो ही पड़ी!" वे नहीं जानती थीं कि थियेटर के तौर-तरीकों का तकाज़ा यह है कि ऐसे मौके पर व्यंग्यपूर्ण मुस्कान के साथ कहा जाये: "अरी, मैं तो बिलखने ही लगी!"

'नाबालिग' नाटक वैसे बिल्कुल स्कूली नाटकों जैसा ही रहा, यहां तक कि ऐसे सभी कार्यक्रमों की भांति इसमें भी एक मजेदार घटना घटी। चौथे अंक के अंत में जब श्रीमती प्रोस्ताकोवा रंगमंच पर इधर-उधर दौड़ रही थी, तो उसके घेरेदार स्कर्ट से उठे झोंके से प्रोम्पटर के बॉक्स में लैम्प बुझ गया और उसके धुएं से प्रोम्पटर ज़ोर-ज़ोर से छींकने लगा।

लेकिन इस नाटक से त्स्वेतुखिन की अपने काम में नई रुचि जागी,

वह जान गया कि उसके विचार कहां फलप्रद हो सकते हैं।

उसने एक ऐसी मण्डली गठित करने का फ़ैसला किया, जिसमें प्रमुख स्थान उन जवान लड़के-लड़कियों का होगा, जिन्हें अभी रंगमंच का कोई अनुभव नहीं है। वह जानता था कि पेशेवर थियेटर वाले उसकी मण्डली को नौसिखिये शौकीनों का झुंड कहेंगे, लेकिन वह इन कटाक्षों से नहीं डरता था, क्योंकि वह यह भी जानता था कि कला में सभी बड़ी खोजें नौसिखियों द्वारा ही हुई हैं।

इस नये कार्य के लिए सबसे प्रबल प्रेरणा थी आनोच्का। त्स्वेतुख़िन को इस बात में जरा भी संदेह नहीं था कि उसे रंगमंच पर उतरना चाहिए। आनोच्का की कोहनियां नुकीली थीं, गर्दन पतली और बांहें मानो कुछ ज्यादा ही लंबी – इस सबके कारण लगता था कि वह अभी किशोरी ही है। लेकिन जैसे ही उसने सोफ़िया की पोशाक पहनी, उसकी इस चढ़ती जवानी की बेढबी से सोफ़िया के बिम्ब में आश्चर्यजनक सजीवता आ गई। आनोच्का अत्यंत सजीव थी, उसके चेहरे का भाव बड़ी तेजी से बदलता था, पल भर में वह सकपकाई होती, पल भर में उदास, पल भर में व्यंग्य भरी और पल भर में कठोर। लेकिन रंगमंच पर उसकी यह सजीवता उत्तेजना में बदल गई, व्यंग्य भाव साथी के लिए संवेदना बन गया, सकपकाहट – निश्छलता और उदासी – विचारमग्नता।

त्स्वेतुख़िन को पता भी नहीं चला कब आनोच्का की प्रतिभा पर रीझते हुए वह इस प्रतिभा की स्वामिन का दीवाना हो गया। 'नाबालिग' की रिहर्सल और फिर मण्डली गठित करने की दौड़धूप के दौरान त्स्वेतुख़िन को लगा मानो उसका पुनर्जन्म हुआ है। पहले भी कई बार उसे ऐसा अनुभव हुआ था, लेकिन इस बार यह एक पूर्णतया नवीन अनुभव लगता था, जैसा कि बर्फ़ीले जाड़े के बाद सहसा उतर आया बसंत एकदम नया लगता है। सबके देखते-देखते ही त्स्वेतुख़िन आनोच्का की परछाईं बन गया, एक वह ही अपने काम में इतनी मगन थी कि उसे सबसे कम इस बात का आभास था।

त्स्वेतुख़िन की मण्डली पर कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा वाली बात सच बैठती थी। कला के मामले में अदीक्षित युवाजन के साथ धुरंधर अभिनेता आ मिले। इस स्टूडियो को सौभाग्यवश एक सैनिक

क्लब का समर्थन मिल गया, इसका अर्थ यह था कि उनकी रोटी मुकर्रर हो गई। अभिनेता कंधे पर झोला लटकाये रिहर्सलों में आते, त्स्वेतुख़िन भी अपने राशन का झोला सदा साथ रखता। क्लब की ओर से मिलनेवाले ज्वार-बाजरे और सूखी मछली से वह आग्निया ल्वोव्ना को शांत करता था, जो इस बात पर दुखी थी कि "अपनी मण्डली" तक में उसे कोई अच्छी भूमिका नहीं दी जा रही।

और स्वयं त्स्वेतुख़िन तो हवा खाकर ही जीने को तैयार था, बस हर रोज़ आनोच्का के साथ रिहर्सल करने को मिले और फिर वह उसे घर छोड़ने जाया करे। एक दिन जब वह लाल कढ़ाई वाला सन का रूसी कुर्ता पहनकर आया और आनोच्का ने कहा: "वाह, कितनी अच्छा लगता है आपको!" – तो उसे लगा कि वह जीवन भर यही सन का कुर्ता पहने रहेगा। वह जवान हो गया था और मानो पहली बार फ़र्दीनांद के पार्ट की रिहर्सल कर रहा था, हालांकि पहले भी कई बार यह भूमिका अदा कर चुका था और इससे बहुत आनन्द पा चुका था।

उसने स्टूडियो के पहले नाटक के लिए 'छल और प्रेम' चुना, जो क्रांति के दिनों में एक सबसे लोकप्रिय रोमांसी रचना थी। इसमें भावना की वह आग थी, जिसे पहले हवा लगने देने से डरते थे। लेकिन पुराने अभिनेताओं को इस नाटक में कोई नई बात नहीं दिखाई देती थी – वही रोल थे, जो कई बार किये जा चुके थे और जिन्हें एक बार फिर करना होगा। सो वे इसके लिए कोई खास जतन करने का इरादा नहीं रखते थे, उन्हें तो बस कौतूहल ही अधिक था – त्स्वेतुखिन इन नौसिखियों को लेकर क्या कर पायेगा?

जैसे ही आनोच्का ने यह दिखा दिया कि उसमें अभिनय प्रतिभा है, तुरन्त ही लोग उसे तरह-तरह की सलाहें देने लगे। कोई फ़्रांसीसी शैली की बात करता, कोई यथार्थवाद की, कोई स्तानिस्लाव्स्की* की और कुछ तो बस अभिनेता के लिए अच्छे से उपनाम के महत्व पर ही भाषण झाड़ते।

---

* क० स्तानिस्लाव्स्की (१८६३–१९३८) – सुविख्यात सोवियत निर्देशक, अभिनेता, अध्यापक और थियेटर के सिद्धांतकार। – सं०

एक दिन वृद्धों की भूमिकाएं करने में उस्ताद एक अभिनेता उससे कहने लगा "अरी, बच्ची, यह भी कोई नाम है पाराबुकिना! ज़रा सोचो तो लोग चिल्लायेंगे: बु-ऊ-किना!"

"आदमी के नाम की शोभा कर्मों से होती है", आनोच्का ने पाण्डित्यपूर्ण लहजे के पीछे मन को पहुंचे आघात को छिपाते हुए कहा।

"वो तो ठीक है। पर अगर नाम ही हो चूचीकिन, तो फिर उसकी क्या शोभा होगी? नाम में कुछ शान होनी चाहिए – पारा... वेल्ला, पारा त्सेल्ला... या कुछ ऐसा ही! हमारे थियेटर की बात है, एक एक्टर प्रेमी का पार्ट करता था – तबीयत खुश हो जाती थी। पर हॉल मे सन्नाटा रहता था, कोई ताली नहीं, कोई वाह-वाही नहीं। तुम पूछोगी क्यो? लोगों को नाम पसन्द नहीं था, इसलिए। नाम था पीपकिन! खैर वह दूसरे शहर चला गया। एक्टिंग क्या करता था, बस मर जाता था, खुद को मतली आती थी। पर जनता खुश थी। क्यो? नाम बदल लिया उसने – रसिकोव। यह नाम पसन्द आया लोगों को!"

मेफ़ोदी भी यह बातचीत सुन रहा था, उसने आनोच्का को हौसला बांधना अपना फ़र्ज समझा:

"इसकी बातों पर कान मत दो। यह भी कोई एक्टर है? बैरा है यह तो। हमेशा सलाहें देता रहता है।"

"मेरी तो समझ में नहीं आता, आनोच्का कि यह येगोर पाव्लोविच को पार्ट रटवाने की क्या धुन सवार हुई है", आग्निया ल्वोव्ना कहती। "प्रोम्प्टर किसलिए है? अब याद नहीं पड़ रहा, पर किसी फ्रांसीसी उपन्यास में, शायद बल्जाक का था वह, मैंने पढ़ा था: थियेटर जगत का उदीयमान सितारा है – अभिनेत्री फ़्लोरीना, उसके ड्रेसिंग रूम में उसके कद्रदान जमा हैं, उसे स्टेज पर जाना है, और वह कहती है: 'जाओ सब बाहर, मुझे अपना पार्ट पढ़ तो लेने दो, कुछ समझ तो लूं है क्या!' घंटी बजने के बाद वह यह बात कह रही है! स्टेज पर जाने का वक्त आ गया और वह कहती है, कुछ समझ तो लूं है क्या! इसे कहते हैं अभिनेत्री! कलाकार! और यहां तुम महीनों से घोटा लगा रही हो! आखिर अभिनय कौंसा

और पूर्णविराम से नहीं होता, इसके लिए तो कुछ और भी चाहिए। देखेंगे, मेरी जान, है तुममें यह कुछ और या नहीं!"

रंगमंच के ये सब सूरमा, जो उम्र भर यश के सिंहद्वार के बाहर कतार लगाये खड़े रहे थे, अपना अनुभव इस युवती को बांटने को उतावले थे, जो अभी अपनी अल्पायु के कारण खास ज्ञान नहीं पा सकी थी, और यदि इन सब परामर्शों से आनोच्का का सिर चकराया नहीं, तो इसका एकमात्र कारण यह था कि वह येगोर पाव्लोविच को सबसे बढ़कर मानती थी और अगर किसी के बताये रास्ते पर चलने की कोशिश करती थी, तो केवल उसके बताये रास्ते पर।

वह शायद शब्दों में आनोच्का को कला का सिद्धांत समझाने में असमर्थ था, और यह बताने में भी कि अगर तुम आनोच्का पारावुकिना हो, तो लुईज़ा मिल्लर की भूमिका कैसे अदा करो, लेकिन वह एक सच्चा कलाकार था और व्याख्याओं के स्थान पर उसके पास अनुभव था। वह आनोच्का को वे हल बताता था, जो उसने स्वयं पाये थे, और समय ही यह बता सकता था कि क्या आनोच्का उन्हें समझ सकती है, और क्या वह उन्हें स्वीकार करना चाहती है।

आखिर अक्तूबर बीतते न बीतते नाटक तैयार हो गया।

३४

नाटक तैयार था।

विश्वविद्यालय के पास स्थित रेजीमेंट की बैरकों में नाटक हुआ। विशाल हॉल, जिसे अभी तक गरम नहीं किया गया था, एक सिरे से दूसरे सिरे तक नये रंगरूटों से भर गया। रंगरूट टखनों तक लंबे फ़ौजी ओवरकोट या घुटनों तक के भेड़ की खाल के ओवरकोट पहने थे। प्रहरी कम्पनी के सिपाही बंदूकें भी उठाये थे। गैरफ़ौजी लोग भी यहां काफ़ी थे, जिन्होंने अंधेरे और ठंड में आधा शहर पैदल पार करके यहां आने का साहस किया था। आखिर यह कोई मामूली घटना नहीं थी और फिर त्स्वेतुखिन के नाम ने इसे और भी अधिक आकर्षक बना दिया था। स्वाभाविक ही है कि आगे की कतारों पर नये अभिनेताओं के रिश्तेदारों और परिचितों का कब्ज़ा था।

पागत्रुकिन पहले कभी भी मंच के इतनी पास नहीं बैठा था, हालांकि यह उसके लिए काफ़ी तकलीफ़देह था, पर फिर भी वह गेबीला दिखने की पूरी कोशिश कर रहा था। हौसला बुलंद रखने के लिए उसने यहां आने से पहले घूंट भर ही पी थी और बड़े जतन से यह छिपा रहा था। पर खचाखच भरे हॉल की गर्मी का अहसास उसी को सबसे पहले हुआ और वह अपने तह किये हुए रूमाल से माथा पोंछने लगा।

दोरोगोमीलोव की तबीयत काफ़ी अरसे से खराब चल रही थी, पर लड़कों के आग्रह को टाल नहीं सकता था। उसके नन्हे दोस्त कुर्सियों पर कुलबुला रहे थे, कभी गर्दन तानकर यह देखते कि मंच पर उन्हें सब कुछ दिखाई देगा कि नहीं, कभी कटे बालों वाले सिर इधर-उधर घुमाते। उनकी आंखें अभी से हर्षोल्लास से चमक रही थीं, लगता था जैसे वे बिजली की तेज़ रोशनी को प्रतिबिम्बित कर रही हों क्लब को इस अवसर के लिए बिजली दी गई थी।

लीजा और अनातोली मिखाइलोविच एक ओर को ऐसी जगह पर बैठे थे कि वीत्या पर भी नजर रख सकें और वेरा निकान्द्रोव्ना की नजरों में न पड़ें। लीजा नहीं चाहती थी कि किसी का ध्यान उसकी ओर जाये। यहां का वातावरण उसे उत्तेजित कर रहा था, यह थियेटर जैसा नहीं था, पर फिर भी इससे तुरन्त ही उसकी अनेक स्मृतियां सजीव हो उठी थीं।

वेरा निकान्द्रोव्ना ने किरील के लिए सीट घेर रखी थी। वह बिल्कुल अंतिम क्षण पर ही आया, जब बत्तियां बुझीं और दर्शकों की बातचीत तेज़ी से थम गई।

इस क्षण आनोच्का मंच पर परदे को थोड़ा सा हटाकर हॉल में झांक रही थी। त्स्वेतुखिन ने उससे कहा था कि वह किसी एक व्यक्ति को, जो उसे अच्छा लगे, चुन ले और फिर उसी व्यक्ति के लिए अभिनय करे :

"मैं सदा किसी एक व्यक्ति के लिए अभिनय करता था और सोचता था कि वही आदमी मेरे अभिनय का फैसला करेगा।"

आनोच्का दसियों चेहरों पर नज़र दौड़ा चुकी थी, पर यह फ़ैसला नहीं कर पा रही थी कि किसे चुने। वह एक नये संसार में झांक

रही थी। अपने भविष्य के संसार में, जिसकी ओर शीघ्र ही उसे पहला कदम बढ़ना था। उसका कलेजा बैठा जा रहा था।

और सहसा उसे कतारों के बीच बढ़ता किरील दिखाई दिया। उसी क्षण हॉल अंधेरे में डूब गया। वह एकदम भयभीत हो उठी, उसे लगा उसका सिर चकरा दहा है, घुटने कांप रहे हैं, पर तभी उसने सुना, कैसे फ़र्दीनांद पास आया और उसके कान में बोला:

"बहुत हुआ, लुईज़ा, अब शुरू करना चाहिए!"

'छल और प्रेम' की घटनाएं दर्शकों को पहले दृश्य से ही वशीभूत कर लेती हैं, और दर्शक जितने अधिक सरलचित्त होते हैं, उतना ही अधिक वे प्रभावित होते हैं। मंच पर तुरन्त ही ऐसी स्थिति पैदा हो जाती है, जिसे सब समझ सकते हैं, और परस्पर विरोधी भावनाओं का टकराव दर्शकों में कौतूहल पैदा करता है।

इस बात से कि अभिनेता अठारहवीं सदी की वेशभूषा – ज़रीदार कोटियां, पाउडर लगे विग और सुनहरे बकलसों वाली जूतियां पहन लेते हैं, वे दर्शकों के लिए अस्वाभाविक नहीं हो जाते हैं। पात्रों का विचित्र रूप मंच पर हो रही घटनाओं में दर्शकों की रुचि को बढ़ाता ही है। नाटक का सार मुखौटों में नहीं, बल्कि उनसे कहीं गहरा होता है।

कौनसा ऐसा हृदय है जो युवक के पहले ज्वार को अनुभव नहीं कर सकता, या युवती के पहले प्रेम को, इस प्रेम को रोक पाने की असमर्थता और भावना को प्रकट कर देने की अदम्य इच्छा को नहीं समझ सकता? किसने ऐसे क्रुद्ध पिता को नहीं देखा है, जो मां को बेटी के खतरनाक अनुराग की ओर से आंखें मूंदे रहने का दोषी ठहराता है? किसने जीवन में उन बड़े लोगों को नहीं देखा है, जो अपने स्वार्थ की खातिर पराये सुख को उजाड़ते हैं?

रेजीमेंट की बैरकों के इस हॉल के बाहर, नगर में और नगर से बाहर, सारे असीम देश में वे लोग अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष कर रहे थे, जो सदियों से इसके शिकार होते आये थे और अब अपनी मुक्ति के लिए उठ खड़े हुए थे। हॉल में जमा लाल सैनिक टुटपुंजिया परिवार की इस दुखद कथा की छोटी-छोटी घटनाओं में अपनी भावनाओं की प्रतिध्वनि स्पष्टतया सुन रहे थे। वहां मंच पर अन्याय का राज था।

यहा हॉल में अन्याय से घृणा व्याप्त थी। हॉल न्याय का भूखा था। मच पर न्याय को रौंदा जा रहा था, और यहां हॉल में से सहानुभूति की लहर मंच की ओर बढ़ रही थी।

नही, लुईजा यों व्यर्थ ही नहीं तड़प रही थी। अत्याचार के प्रति अपनी घृणा में, सर्वशक्तिमानों की गर्व से अवज्ञा करने में और यहा तक कि अपनी निर्बलता और दुख में भी वह अकेली नहीं थी। क्राति के सेनानी, जो जीवन के हर पहलू में सच्चाई खोज रहे थे, दर्शक बनकर रंगमंच से भी सच्चाई की मांग करते थे। इस सच्चाई का एक अश वे इस निस्सहाय युवती में देख रहे थे, और लुईज़ा की वेदना उन्हें जितनी अधिक उदात्त लगती थी, उतनी ही अधिक गम्भीरता मे वे उसकी ओर सहायता का हाथ बढ़ाने को तत्पर थे।

हॉल में ऐसा सन्नाटा था, जैसा अमावस की रात में खेत में होता है। दर्शकों के हृदयों में जो भावनाएं उमड़ रही थीं, उनमें सबसे प्रबल थी विस्मय की भावना, दर्शक इस बात पर विस्मित थे कि रंग-बिरंगी कोटियां और तिकोनी टोपियां पहने ये लिपी-पुती आकृतियां सचमुच के लोगों जैसे जी रही हैं।

रंगमंच मे शब्दों की धाराएं, नदियां और महासागर उमड़ते आ रहे थे, और इन शब्दों में से एक भी उन साधारण शब्दों जैसा नही था, जिनमें आम लोग अपने मन की बात कहते हैं, परन्तु फिर भी इन शब्दों की मर्मर ध्वनि में ऐसा जादू था कि इनमें निहित विचार को हर कोई सहज ही समझ पा रहा था।

फ़र्दीनांद भले ही अपने उद्गार आडम्बरपूर्ण और अलंकृत भाषा मे व्यक्त कर रहा था, फिर भी दर्शकों के मन में त्स्वेतुख्निन के प्रति विश्वास ही जाग रहा था, जब वह भावनाओं के आवेग में बहता हुआ यौवन की विशालहृदयता के साथ लुईज़ा के सामने प्रेम की सौगंधें खा रहा था।

मोटे ऊनी ओवरकोट में लिपटा हर सैनिक अपनी मुट्ठी में खांस रहा था, ताकि पास बैठे लोगों को सुनने में कठिनाई न हो, और खुद भी वह डर रहा था कि कहीं त्स्वेतुख्निन के मखमली कंठ से उच्चारित कोई ध्वनि उसके कानों में पड़ने से न रह जाये। हर कोई फ़र्दीनांद के मंत्ररूपी शब्दों को अपनी बोली में रूपांतरित कर रहा था और

शायद सोच रहा था कि एक दिन वह भी फ़र्दीनांद की भांति कहेगा : "हमारे रास्ते में बाधाओं के पहाड़ ही क्यों न खड़े हो जायें, मेरे लिए वे सीढ़ियों के समान होंगे और मैं उन्हें लांघता हुआ लुईज़ा के बाहुपाश में पहुंच जाऊंगा! दुर्भाग्य के तूफ़ान मेरे प्रेम की ज्वाला को और अधिक भड़कायेंगे, ख़तरे मेरी लुईज़ा को और भी कमनीय बनायेंगे!" और शायद हर किसी को यह आशा थी कि एक दिन उसे भी कोई लुईज़ा की ही भांति त्रास और भावावेग से बुदबुदाते हुए कहेगी : "बस करो! मैं हाथ जोड़ती हूं, चुप हो जाओ! काश, तुम्हें पता होता!.."

यह लुईज़ा, जिसका कठिन सा नाम – पारावुकिना – इश्तहारों पर स्याही से लिखा गया था, अपनी कुमारीसुलभ सरलता, निश्छलता और हृदय की व्यथा से दर्शकों का मन जीत रही थी। यह सच्ची लुईज़ा थी। परन्तु शायद यह एक भ्रम ही था। शायद उसका मन यह सोचकर भयभीत हो रहा था कि इतने दुस्साहस के साथ उसने जो काम करने का बीड़ा उठाया है, उसे पूरा नहीं कर पायेगी। परन्तु दर्शकों से उसका यह डर किसी अनबूझ ढंग से दूसरे डर में समाता जा रहा था – यह एक गरीब लड़की का अपने निराशापूर्ण प्रेम से जन्मा डर था।

लीज़ा अचम्भे और ईर्ष्या के साथ आनोच्का का अभिनय देख रही थी। उसका मन यह मानना ही नहीं चाहता था कि मंच पर वही लड़की है, जो उन दिनों अनजानी-अनदेखी घास की तरह बढ़ रही थी, जबकि लीज़ा थियेटर का रसास्वादन कर रही थी और एकांत में इसके सपने देखा करती थी, इसे संसार की सबसे बड़ी खुशी माना करती थी। हां, यह घास बड़ी हो गई थी। यह अब बच्ची नहीं थी, यह तो नारी ही थी – अपने भाग्य में निर्धारित खिलने की घड़ी की पूर्ववेला में। आनोच्का में ये गरिमामयी भंगिमाएं कहां से आईं? किसने उसे इतने सहज भाव से ये पुराने परिधान पहनने सिखाये? आखिर त्स्वेतुखिन तो ऐसा नहीं कर सकता था! वह त्स्वेतुखिन के साथ अभिनय कर रही है! स्वयं त्स्वेतुखिन के साथ! वही आनोच्का, जो बचपन में डरते हुए उसे "कालू" कहती थी! त्स्वेतुखिन के साथ लीज़ा का अभिनय कैसा रहता? निस्संदेह, वह अभिनेत्री बनती,

तो अच्छी लगती – उसकी चाल में शान है, और चेहरे पर कांति! लेकिन अभिनेत्री यह बेढव सी आनोच्का बनी है, जो सच पूछो, तो सुंदर नहीं कही जा सकती। और लीज़ा शायद प्रांतीय नगर की साधारण स्त्री के रूप में ही अपने दिन काटेगी। पर क्या इसी में भला नहीं है? हो सकता है, भाग्य ने उसे नीचा देखने से बचा लिया है? जीवन मे तो वह मोहक थी, मंच पर दयनीय हो सकती थी – कौन जाने? शायद भाग्य की उदारता इसी में थी कि उसे चुपके-चुपके रंगमंच से प्रेम करने का अवसर दिया गया था, जैसे कि अधिकांश स्त्रियों को रंगमच से लगाव होता है?

क्षण भर को रंगमंच की ओर से ध्यान हटाकर लीज़ा ने नज़रें दौड़ाकर किरील को खोजा।

वह कुर्सी में थोड़ा आगे को बढ़ा हुआ एकदम सीधा बैठा था। फ़ुटलाइटों की प्रतिबिम्बित लाल-पीली रोशनी में उसका चेहरा सदा से अधिक पीला लग रहा था और किसी परछाईं की पृष्ठभूमि में उसके नयन-नक्श स्पष्टतया उभरे हुए थे। दूर से यह देख पाना सम्भव नही था कि इस चेहरे पर क्या भाव आ जा रहे हैं, हां इतना साफ़ था कि किरील लुईजा पर आंखें गड़ाये हुए है।

नाटक से दर्शकों में विस्मय की जो भावना उत्पन्न हुई थी, किरील भी उससे अभिभूत लग रहा था। परन्तु वह नाटक पर नहीं, अकेली आनोच्का पर विस्मित था। वैसे उसे अपने आप पर भी हैरानी हो रही थी: क्योंकर पहले कभी भी आनोच्का के व्यक्तित्व के सबसे सशक्त, सबसे आश्चर्यजनक पहलू – उसकी प्रतिभा की ओर उसका ध्यान नहीं गया! आनोच्का के व्यक्तित्व को जैसे वह समझता आया था, वास्तव में वह उससे कहीं अधिक समृद्ध और व्यापक था। उसके बारे में वह जो कुछ भी सोच सकता था, वास्तव में वह उस सबसे कहीं बढ़कर थी, कहीं अधिक श्रेष्ठ थी।

उसके होंठों पर धीरे-धीरे मृदु मुस्कान आ गई। नाटक की इन वेदनाओं में ऐसी निश्छलता थी, ऐसा भोलापन था कि कठोर से कठोर हृदय भी इनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता था।

जब घुटनों के बल खड़ी लुईज़ा उछली और पिता की बांहों से अपने आपको छुड़ाकर चले जा रहे फ़र्दीनांद की ओर लपकी और

कराही : "मत जाओ! मत जाओ! कहां जा रहे हो? पिता जी! मां! इस मुसीबत की घड़ी में ये हमें छोड़े जा रहे हैं ..." – किरील और भी आगे खिसक गया और खांसने लगा, ताकि रुंधे गले से उठती अजीब सी आवाज़ को दबा पाये। उसे खिड़की के पास अपनी हंसी याद आई, जब शाम बीते उसने यह दर्दनाक कराह सुनी थी, जिससे पहले तो वह भयभीत हो गया था और फिर उसकी हंसी फूट पड़ी थी : "मत जाओ! मत जाओ!" लेकिन अब उसे हंसी नहीं आ रही थी। इस क्षण उसके मन में उफनती भावनाएं उसे आनोच्का के इतना निकट ला रही थीं, जितना वह उस शाम को भी नहीं था, जब उसने पहली बार आनोच्का को अपनी बांहों में भरा था। वह अपने इस उद्वेग को छिपाना चाहता था और आगे ही आगे, कुर्सी के ऐन सिरे पर खिसकता जा रहा था। वेरा निकान्द्रोव्ना के लिए इस तरह उसके चेहरे पर आते भाव देखना और भी आसान था, वह थोड़ा पीछे झुककर बैठी थी और बार-बार आनोच्का से नज़रें हटाकर बेटे पर डाल रही थी : अभी तक जो कुछ उसके लिए एक प्रश्न हो सकता था, वह सब इस क्षण पूरी तरह स्पष्ट होता जा रहा था।

दूसरा अंक बड़ी अच्छी तरह खत्म हुआ और दर्शक अभिनेताओं को पुकारने लगे। वे सब हाथ पकड़कर फ़ुटलाइटों के पास आने लगे। उनकी हर्षमय उत्तेजना पर्दे में भी व्याप्त होती लगती थी, जो उनके कंधों के पीछे लहरा रहा था।

आनोच्का ने झुकते हुए उधर नज़र डाली, जहां किरील बैठा था। और सहसा उसकी मुस्कान फीकी पड़ गई। उसने देखा एक सैनिक इज़्वेकोव पर झुका उसके कान में कुछ कह रहा था। किरील तत्क्षण उठा और जल्दी-जल्दी लाल गार्ड के पीछे चल दिया।

दर्शक अभी भी तालियां बजा रहे थे और अभिनेताओं को पुकार रहे थे। आनोच्का के कानों में किसी युवा कंठ से निकली आवाज़ पड़ी : "पारा-बू-ऊ-कि-ना!" इस लम्बे "ऊ-ऊ" के बावजूद यह आवाज़ उसे प्रभावोत्पादक और यहां तक कि सुरीली लगी। लेकिन मन पर सहसा घिर आई उदासी के कारण वह अपनी पहली सफलता का पूरा आनन्द नहीं ले पा रही थी : किरील ने उसकी ओर नज़र तक न डाली थी, और अब शायद क्लब से चला ही गया होगा –

आखिर उसे नौसिखियों का नाटक देखने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण काम करने हैं।

अभिनेता चौथी बार एक दूसरे का हाथ पकड़कर पर्दे के बाहर आने को तैयार हुए थे और नायक नायिका का हाथ पकड़कर सबसे आगे चलने ही लगा था, पर तभी नेपथ्य में वही लाल गार्ड दिखाई दिया, जो थोड़ी देर पहले किरील को हॉल में से ले गया था।

"कामरेड त्स्वेतुखिन, ज़रा ठहरिये!"

उसके कहे कुछ शब्द सुनते ही त्स्वेतुखिन ने पर्दे से बाहर निकलने का इरादा छोड़ दिया, और फिर पल भर में ही मंच पर सब कुछ बदल गया।

मददगारों ने मंच सज्जा को हटाना छोड़ दिया, हथौड़े और प्लायर्स हाथ में लिये आगे के आदेश की प्रतीक्षा करने लगे। अस्त-व्यस्त प्रोम्पटर अपने कपड़े झाड़ता बूथ में से निकल आया, आग बुझाने की ड्यूटी पर तैनात आदमी अपनी जगह से हट गया, किसी तानाशाह हुकूमत की पुलिस की वर्दी पहने एक्स्ट्रा मंच पर आ गये। अभिनेताओं को यह सब कुछ बुरा लग रहा था, क्योंकि हॉल में अभी भी तालियों की गड़गड़ाहट शांत नहीं हुई थी।

"कोई नहीं जाये, भई, कोई नहीं", निदेशक का सहायक नाटक की खस्ताहाल कापी सिर के ऊपर हिलाता हुआ कह रहा था।

"सारी मण्डली!" त्स्वेतुखिन आदेश दे रहा था।

"हॉल में बत्तियां बुझा दें?" मंच के परले सिरे से बिजली मिस्त्री पूछ रहा था।

"अर्द्धचन्द्र बनाइये, अर्द्धचन्द्र," सहायक सबको खड़ा करने में लगा हुआ था।

"अरे, हुआ क्या? फ़ोटो खींचेंगे क्या?"

"मेक-अप वाले को बुलाओ! मरीया इवानोव्ना को बुलाओ!"

"एक्टर आगे आयें! पास-पास! लुईज़ा बीचोंबीच! चलिये-चलिये! सटके खड़े होइये, सटके!"

"गायेंगे क्या?"

"मददगार कहां हैं? आप लोग भी खड़े होइये न! कहां जा रहे हैं?"

"दाईं स्पॉट लाइट! स्पॉट लाइट बुझ गई!"

"मीटिंग होगी? किस बात की?"

"हॉल में लंबी घंटी दो! है कोई घंटी पर?"

"सब कुछ तैयार है, येगोर पाव्लोविच। सब आ गये।"

त्स्वेतुख़िन ने मण्डली पर नज़र दौड़ाई, बीचोंबीच जाकर खड़ा हो गया और अपने सहायक को सिर से इशारा किया।

"चलो!" नाटक की कापी को सिर के ऊपर उठाकर और फिर एक झटके से नीचे लाते हुए वह चिल्लाया।

पर्दा मंथर गति से उठने लगा।

दर्शक आपस में बातें करते हुए अपनी-अपनी सीटों पर बैठने लगे और फिर से तालियां बजाने लगे। कोई नहीं जानता था कि क्या होनेवाला है, बहुतों ने सोचा कि दर्शकों ने जिस तरह ज़ोरदार तालियां बजाई हैं, उस पर आभार प्रकट करने के लिए ही मण्डली यों जमा हुई है — आखिर यहां सब कुछ नया था: लोग भी थियेटरी परम्पराओं से परिचित नहीं थे और थियेटर का भी इन परम्पराओं पर चलने का कोई इरादा नहीं था।

सहसा इज़्वेकोव तेज़-तेज़ कदमों से चलता हुआ मंच के ऐन बीचोंबीच आ खड़ा हुआ। उसने हाथ ऊपर उठाया और सब खामोश हो गये।

"साथियो!" वह ऊंची, चीखती सी आवाज़ में बोला, जो अभिनेताओं की सधी हुई आवाज़ों से बिल्कुल भिन्न थी। और इसमें ऐसी नवीनता थी कि जो कुछ भी रंगमंचीय था, वह मानो पलक झपकते ही विलुप्त हो गया, और उसका स्थान किसी बिल्कुल ही भिन्न वातावरण ने ले लिया।

"अभी-अभी हमें तार से खबर मिली है कि दक्षिणी मोर्चे पर हमारी शानदार जीत हुई है।"

सारा हॉल मानो एक साथ फुसफुसाने लगा और फिर अपने आप ही शांत हो गया।

"वोरोनेज के पास कामरेड बुद्योन्नी के लाल रिसाले ने मामोन्तोव और श्कुरो की सफ़ेद कैवेलरी कोरों को धूल चटा दी है! वोरोनेज..."

उसे आगे बोलने नहीं दिया गया। धीरे-धीरे बढ़ती गड़गड़ाहट की भांति नहीं, बल्कि एकदम ही फट पड़े बादल जैसा शोर हुआ।

चीखें मानो तालियों के शोर को दवा देना चाहती थीं, पैरों की पटापट फर्श पर बंदूकों के कुंदों की ठकाठक से होड़ लगा रही थी। पहले सबसे दूरवाली कतारों में और फिर आगेवाली कतारों में भी बैठे सैनिक उठने लगे और झुंड के झुंड मंच की ओर बढ़ने लगे।

किरील ने फिर से हाथ उठाया और भीड़ की ओर कदम बढ़ाया। वह अनिच्छापूर्वक शांत होने लगी।

"हमने वोरोनेज आज़ाद करा लिया है! हमारे सैनिकों ने बहुत बड़ी संख्या में दुश्मन के हथियारों, आदि पर कब्ज़ा कर लिया है। सफ़ेद गार्ड दुम दबाकर भाग रहे हैं!"

फिर से युवा कंठ 'हुर्रा' चिल्लाये और तालियों की गडगड़ाहट गूंजी। मंच से नीचे दिखाई दे रहे ये असंख्य और विविधतम चेहरे मानो एक ही मुस्कराते चेहरे में मिलकर किरील के स्मृति-पटल पर अंकित हो गये।

"किसी भी क्षण और ब्योरों का पता लगने की उम्मीद है। तार में कहा गया है कि हमारी सेनाएं दुश्मन का पीछा कर रही हैं। हम मामोन्तोव के कज़्ज़ाकों और श्कुरो के वालंटियरों को खदेड़ रहे हैं। साथियो, यह सफ़ेद गार्डों के अंत की शुरूआत है। देनीकिन की हार पक्की है। देनीकिन और उसके जैसों को हम सदा के लिए दफ़ना देंगे। लाल सेना उनके लिए अथाह कब्र खोद रही है। मजदूरों और किसानों का यशस्वी सोवियत रिसाला ज़िंदाबाद!"

यह हर्षोन्माद की पुकार थी और हॉल इस हर्षोन्माद से गूंज उठा, बैरकों की पुरानी दीवारें इस गूंज की लहरों को प्रतिध्वनित करती हुई इसे और भी ज़ोरदार बनाने लगीं।

सामने की कतारों में बैठे सभी गैर सैनिक लोग भी उठ खड़े हुए। पहले पाब्लिक और फिर उसकी देखादेखी वान्या और वीत्या भी कुर्सियों पर खड़े हो गये। आर्सेनी रोमानोविच सिर के ऊपर हाथ ऊंचे उठाकर तालियां बजा रहा था और उसकी हल्की सुरमई सी लटें उनकी ताल पर हिल रही थीं। पाराबुकिन जाने क्यों अपना जतन से तह किया हुआ रूमाल ही हिलाता जा रहा था। लीज़ा बेटे की ओर देखती हुई तालियां बजा रही थी, वह इस ताक में थी कि कब बेटा उसकी ओर मुंह मोड़े और वह उसे कुर्सी से उतर जाने

का इशारा करे। ओज़्नोविशिन भी वड़े सलीके से अपनी छोटी सी हथेली पर उंगलियों से ताली बजा रहा था।

मंच पर अभिनेताओं ने अपना अर्द्धचंद्र तोड़कर इज़्वेकोव को घेर लिया। वे भी तालियां बजा रहे थे और किरील को मंच से जाने नहीं दे रहे थे। अठारहवीं सदी के रंग-विरंगे आतलसी, रेशमी और मखमली परिधानों के बीच किरील की खाकी कमीज़ विल्कुल अटपटी लग रही थी। पाउडर लगे विगों के बीच अकेला वही काले बालों वाला था। अपने स्वाभाविक रूप पर उसे संकोच हो रहा था, मानो अकेले उसने ही ताम-धाम कर रखा हो और उसके इर्द-गिर्द के मुखौटे स्वाभाविक हों। इस संकोच को छिपाने के लिए उसने हाथ जेव में डाल लिये, पर तुरन्त ही बाहर निकाल लिये और पता नहीं क्यों त्स्वेतुख़िन की ओर हाथ वढ़ाया, उसका मज़बूत हाथ दवाया और फिर हंसती आनोच्का का हाथ पकड़कर ज़ोर से हिलाया।

उसे लगा कि इस क्षण तालियां और भी अधिक ज़ोर से बजने लगीं, और उसने सोचा कि यों हाथ मिलाकर वह हॉल का ध्यान जीत के समाचार से अभिनेताओं पर ले गया है, और यह अक्षम्य भूल है। दृढ़तापूर्वक कदम बढ़ाता हुआ वह मंच से चला गया।

आनोच्का दौड़ी-दौड़ी उसके पास पहुंची। अभी भी हंसते हुए उसने ज़ोर से पूछा:

"ऐसी खबर पाकर तो आप अव यहां रुकेंगे नहीं?"

वह थम गया। पहली बार वह उसकी पाउडर लगी ग्रीवा, उसका अधखुला वक्ष, उसके चमकते से होंठ और उसकी आंखों की नीलिमा, जो मानो पलकों पर फैल गई थी, इतने निकट से देख रहा था। किन्तु इस सारे साज-शृंगार के पीछे से आनोच्का अपनी आश्चर्यजनक स्पष्ट दृष्टि से उसकी ओर देख रही थी – वही आनोच्का, जिसे वह सदा अपनी कल्पना में देखा करता था, वह आनोच्का जिसे कोई भी मेक-अप उसकी नजरों में न कम खूबसूरत वना सकता था, न अधिक, और जो धड़कते दिल से उसके उत्तर की प्रतीक्षा कर रही थी।

"नहीं, मैं आखिर तक नाटक देखूंगा। बस वीच-वीच में मुझे फ़ोन पर जाना होगा – यहीं पास ही है, दो कमरे छोड़कर।"

वह थोड़ी देर चुप खड़ा रहा। शृंगार के पीछे से, मानो थोड़ी-

थोड़ी धूल जमे शीशे के पीछे से उसने आनोच्का का जो रूप देखा था, उससे नजरें हटाने का उसका जी नहीं चाहता था।

"कितनी अच्छी लग रही हैं आप!" उसने कहा।

वह थोड़ा परे हट गई।

"आप और किसी को फ़ोन पर बिठा दीजिये," वह बोली।

"मुझे खुद वहां होना चाहिए।"

"तो फिर हॉल में अपनी जगह किसी को बिठा दीजिये, ताकि आपको यह बता दें कि मेरा खेल कितना बेकार रहा।"

"मैं सिर्फ़ इंटरवल में ही जाऊंगा," वह मुस्कराया।

आनोच्का के चेहरे के भाव में लेशमात्र भी नखरा या नाज़ नहीं था – उसे बस विश्वास नहीं था कि किरील ने गम्भीरतापूर्वक वायदा किया है। दूसरे अभिनेता दूर से उन्हें देख रहे थे। एक मददगार चिल्लाया. रास्ता छोड़ो! किरील ने हौसला बढ़ाने के अंदाज़ में सिर हिलाया और चला गया।

त्स्वेतुखिन ने तुरन्त ही आनोच्का से चलते-चलते पूछा:

"क्या कहता था?"

"अच्छा लग रहा है," आनोच्का ने भी यों ही भावहीन से स्वर मे उत्तर दिया।

नाटक के दौरान वह किरील को नहीं देख सकती थी (उसे हॉल में देखते हुए ही डर लगता था), और इंटरवलों में उसकी सीट खाली होती थी। सो वह नहीं जानती थी कि उसने अपना वायदा पूरा किया है या नहीं।

नाटक एक बार जो चल पड़ा, तो फिर आखिर तक उखड़े बिना चलता ही गया। उल्टे, वह दर्शकों को अधिक ही अधिक अच्छा लग रहा था। शायद विजय के समाचार से मनों में उठी उमंग का दर्शकों पर प्रभाव पड़ा था, वे पहले से भी अधिक सहृदय हो गये थे और दबादब तालियां बजा रहे थे, लेकिन अभिनेता लोग दर्शकों की इस सद्भावना को अपनी सफलता का ही परिणाम समझ रहे थे और अपना काम अच्छी तरह विश्वासपूर्वक कर रहे थे।

अंतिम अंक की समाप्ति पर दर्शक और भी अधिक जोश से तालियां बजाने लगे और अभिनेताओं को बुलाने लगे। सब मंच के पास जमा

हो गये। सारे अभिनेता त्स्वेतुखिन को सम्बोधित करके तालियां वजा रहे थे, वह उनकी प्रशंसा में करतल-ध्वनि कर रहा था, आनोच्का का हाथ पकड़कर उसे आगे ला रहा था। अभिनेताओं ने न जाने कितनी वार कमर तक झुक-झुककर दर्शकों का आभार प्रकट किया।

पाराबुकिन गर्व से खड़ा था, यह प्रतीक्षा करता कि कब लोग उसे बधाइयां देंगे। सबसे पहले दोरोगोमीलोव ने बड़े जोश से उससे हाथ मिलाया।

"देखा आपने! क्या कहने हैं! होनहार है लड़की! होनहार! अपने घर पर ही ऐसा हुनर मिल गया, है न? सब त्स्वेतुखिन का कमाल है! कितनी बढ़िया मिसाल है!"

पाराबुकिन अपने जाने कब से खुल गये और विल्कुल भीग गये रूमाल से माथा पोंछते हुए सिर हिला रहा था और अर्थपूर्ण ढंग से खांस रहा था। वेटे का हाथ पकड़कर और भीड़ में से उसे अपनी ओर खींचते हुए वह उस पर झुक गया:

"अरे पाव्लिक, अब तो हम लखपती बन जायेंगे, लखपती! येगोर पाव्लोविच तेरी वहन पर सोने की वौछार कर देगा!"

लीज़ा टकटकी लगाये फ़ुटलाइटों के पास आती और फिर पर्दे के पीछे जाती आनोच्का को देख रही थी। इस क्षण उसे न ओज़नोबिशिन की सुध थी, जो वड़े धीरज से उसकी प्रतीक्षा कर रहा था और न ही वीत्या की। पहले की ही भांति वह अपने आप से पूछ रही थी–इस लड़की में ऐसे संघर्ष में कूदने और उसमें विजयी होने का साहस कहां से आया? और पहले की ही भांति वह इस प्रश्न का उत्तर नहीं पा रही थी। तभी बिल्कुल पास ही खड़े किरील पर उसकी नज़र पड़ी।

वह पंजों के वल खड़ा होकर वेरा निकान्द्रोव्ना के कंधे के पीछे से मंच की ओर देख रहा था। उसके होंठ फड़क रहे थे। प्रत्यक्षतः वह निष्पक्ष निर्णायक वना रहना चाहता था, जबकि उसकी भावनाएं उसे बहाये लिए जा रही थीं, और इस द्वंद्व में हर्ष की चिनगारियां फूटी पड़ रही थीं। उसे मानो यह आभास हुआ कि कोई उसकी ओर देख रहा है, वेचैन सा वह मुड़ा और लीज़ा को देखकर सकपका गया। भीड़ को चीरता हुआ उसके पास गया और उसका अभिवादन किया।

"आप भी आनोच्का के खेल से प्रसन्न लगते हैं," लीज़ा ने कहा।

"मुझे तो लगता है कि पूरा नया थियेटर ही तैयार हो गया है। मैंने सोचा तक न था कि त्स्वेतुखिन इतनी अच्छी तरह सब कर लेगा। देखिये तो सैनिकों को कितना पसन्द आया है।"

"खास तौर पर आनोच्का, है न?" लीज़ा अपनी ही बात पर अड़ी हुई थी।

"हां," किरील ने अनिश्चित से स्वर में कहा। "ऐसे सीधे-सादे दर्शकों के लिए खेलना आसान है।"

"मुझे लगता है, आसान नहीं है। खेल ऐसा होना चाहिए कि सब कुछ समझ में आये।"

"समझाने को है क्या? लोग खुद ही सब समझते हैं", किरील ने कहा, फिर पल भर को मानो अपने किसी विचार पर रुककर सहसा बोला: "वैसे इस मतलब में आपका कहना सही है कि ऐसा नाटक पेश करना ज़्यादा आसान है, जिसमें किसी को कुछ समझ में न आये।"

अभी भी खासा शोर हो रहा था और वे दोनों ज़ोर-ज़ोर से बातें कर रहे थे। वे इतने पास-पास खड़े थे कि उनके कंधे एक दूसरे को छू रहे थे।

"मुझे खुशी है कि आप से मुलाकात हो गई," लीज़ा ने कहा।

"मुझे भी।"

"मैं आपके पास आने की हिम्मत नहीं जुटा पा रही थी, आपका शुक्रिया अदा करना चाहती थी।"

"शुक्रिया किस बात का?"

"पिता जी की मदद के लिए। वह दो हफ़्ते से घर पर हैं।"

"वह... अच्छा! समझा। पर इसमें मेरा कोई हाथ नहीं।"

"यह सच नहीं!"

वह हंस पड़ा।

"मैं दूसरों के किये का श्रेय क्यों लूं? यह सब रागोज़िन ने किया है। वह तो आपके पिता जी को जानता है।"

"पर यह बात सच नहीं। मैंने भी सुना था कि रागोज़िन ने मदद की है। मेरे पति आभार प्रकट करने गये थे। पर रागोज़िन ने कहा कि उसे इस मामले की खबर तक नहीं और उन्हें भगा दिया।"

"सख्त आदमी है," किरील फिर से हंसा, "और वह भी परोप-कार करनेवालों में नहीं है। वैसे मेरे ख्याल में आपके पिता जी पर किसी का कोई उपकार नहीं है। उन्हें अपने किये की जितनी सज़ा मिलनी थी मिल गई।"

लीज़ा ने जहां तक सम्भव था किरील के कंधे से अपना कंधा परे हटा लिया, और चुपचाप उसकी आंखों में झांकती रही।

"आपने सदा की भांति बेटी का कर्तव्य निभाया है, आपको इस पर संतोष होना चाहिए। और क्या चाहिए?"

"यह क्या है? पुराना बदला?" लीज़ा ने कड़वा घूंट भरते हुए कहा।

"यह सच्चाई है," किरील ने रुखाई से कहा और इधर-उधर नज़र दौड़ाई। "लगता है अब अभिनेता नहीं निकलेंगे। चलना चाहिए।"

उसने जल्दी-जल्दी विदा ली।

हॉल में सचमुच ही शोर कम हो गया था, पर अभी भी काफ़ी लोग तालियां बजा रहे थे, सो त्स्वेतुखिन आनोच्का का हाथ पकड़कर आखिरी बार उसे पर्दे से बाहर लाया।

आनोच्का के चेहरे पर ऐसा भाव था, मानो इस अप्रत्याशित सफलता का नशा अभी उतरा न हो–उसकी मुस्कान जड़ सी लगती थी और उसकी कमर में लचक नहीं रही थी! बढ़ती चिंता के साथ उसकी नज़रें किरील को ढूंढ रही थीं और बढ़ती निराशा के साथ वह पर्दे के पीछे लौट रही थी।

अंततः वह अपने बिल्कुल छोटे से ड्रेसिंग रूम में दौड़ी आई, कुर्सी पर ढह ही गई और आंखें मूंद लीं। एकांत के अनमोल क्षणों में देखे उसके सपने सच हुए थे–वह नायिका बनी थी, वह सफल रहीं थी! पर अब उसे बेइंतिहा थकावट और अजीब सी उदासी के अलावा और कुछ महसूस नहीं हो रहा था। वह इतनी निढाल थी कि उसका रोने को जी हो रहा था।

उसने गहरी सांस ली ही थी कि दरवाज़े पर ज़ोर से भड़भड़ हुई और तुरन्त ही वह खुल गया।

त्स्वेतुखिन अंदर दौड़ा आया। उसने झटके से अपना विग उतारा, चोटी से उसे पकड़ लिया और सिर के ऊपर यों घुमाने लगा, जैसे

वह किसी जीत का इनाम हो। आनोच्का से कदम भर की दूरी पर आकर उसने बांहें फैलाईं:

"भई वाह, कमाल कर दिया तुमने! जी करता है तुम्हें चूम लूं!"

आनोच्का की सारी थकावट पलक झपकते ही गायब हो गई। कुर्सी पीछे ठुकराकर वह उठ खड़ी हुई। लपककर उसने त्स्वेतुख़िन के गले में बांहें डालीं। उसने आनोच्का को बांहों में भरा और होंठों पर चूमा, फिर मुंह परे हटाकर बोला:

"एक बार फिर, मेरी प्यारी एक्ट्रेस!"

आनोच्का ने ख़ुद उसे चूमा। त्स्वेतुख़िन ने फिर से मुंह से उसके होंठ टटोल लिये। वह पीछे हटना चाहती थी, पर त्स्वेतुख़िन ने उसका सिर अपनी मुड़ी बांह में दबोच लिया। आनोच्का ने अपने आप को छुड़ा ही लिया। त्स्वेतुख़िन जल्दी-जल्दी बुदबुदाया:

"एक बार फिर... चलो न!"

आनोच्का ने उसकी काली आंखों में कोई नया, भयावह भाव देखा।

वह झुकी और कुर्सी उठाकर अपनी मेज़ के सामने बैठ गई — त्स्वेतुख़िन की ओर पीठ करके। शीशे में वह देख रही थी कैसे वह अपना माथा पोंछ रहा था, जो स्पष्टतया दो भागों में बंटा हुआ था — ऊपर वाला संवलाया सा था और उसके ऊपर खिचड़ी बाल थे, निचला भाग मेक-अप के कारण नारंगी सा था, मेक-अप से उसकी झुर्रियां और भी उभर आई लगती थीं।

"येगोर पाव्लोविच, अब आप जाइये। मुझे कपड़े बदलने हैं।"

त्स्वेतुख़िन पल भर को खड़ा रहा। सहसा उसने विग यों हिलाया मानो फेंकने लगा हो, फिर मुड़ा और अपने पीछे हौले से दरवाज़ा बंद करके चला गया।

आनोच्का बुत बनी थी। फिर से वह निढाल हो गई थी, और चाहकर भी हाथ नहीं उठा पा रही थी, ताकि सुइयां निकालकर टोपी उतारे। हॉल के शोर और नेपथ्य के विचित्र एकांत की सीमा पर ही उसे अभूतपूर्व और जोखिम भरे नये जीवन के आरम्भ की अनुभूति हो रही थी।

सहसा एक नीचा सा नारी स्वर सुनाई दिया। आनोच्का उसे पहचान गई और कपड़े बदलने लगी।

"अरे कहां जा छिपीं, मेरी जान?" आग्निया ल्वोव्ना चहकती आ रही थी। "यहां तुम्हें वधाइयां देने आ रहे हैं, और तुम कहां भाग गई हो!"

वह ड्रेसिंग रूम में घुस आई, कुर्सी पर वैठी आनोच्का को पीछे से बांहों में भरा और उसके कान, गर्दन और गाल पर बोसे वरसाने लगी।

"भई मानना होगा, मानना होगा!" चुम्मों के वीच-वीच में वह चहकती जाती। "वड़ी ही प्यारी रहीं तुम, और ऐसी स्वाभाविक कलात्मकता थी! ईमान कसम मैंने तो सोचा तक न था! वैसे तो जान, अभी तुम्हारे खेल में वह भावनाओं का तूफ़ान नहीं है। पर कल की वच्ची से इसकी उम्मीद ही कैसे की जा सकती है! हां, नाराज़ मत होना , मेरी जान! और फिर, वेशक, अभी तुम्हारे अभिनय में कौशल नहीं छलकता! मैंने रंगमंच पर उतरने के चार साल वाद कहीं लुईज़ा का पार्ट अदा किया। ओह, कैसी वावली हो उठी थी जनता! भुलाये न भूलूंगी! और तुम चाहती हो कि पहली वार में ही सब कुछ हो जाये! बेशक, अभी तुम्हारे अभिनय में गहराई नहीं आ सकती! पर तुम दुखी मत होओ, और हां देखो विसूरने मत लगना। सबसे बड़ी वात है कि वड़ा प्यारा रहा और जनता को पसन्द आया। कौशल तो समय के साथ आ जायेगा, और जहां तक भावनाओं का सवाल है..."

इतना कहते हुए उसने अपना जलता गाल आनोच्का के कान से सटाया:

"इस मामले में येगोर पाव्लोविच की वातों में मत आ जाना।"

"यह आप क्या कहती हैं?!" आनोच्का झटके से परे हटी।

"अरी छोरी, मैं उसे जानती नहीं क्या? अभी आता होगा, चुम्मा-चाटी करने लगेगा! फिर तुम्हारे आगे अपना दुखड़ा रोने लगेगा। कहेगा कि मैंने उसका जीना हराम कर रखा है, कि अकेली तुम ही उसे मेरे चंगुल से छुड़ा सकती हो, उसे तवाह होने से बचा सकती हो। किसी बात पर विश्वास मत करना! यह सब ढोंग है और वकवास!

वह तो बस लम्पट है, और कुछ नहीं! और अगर मेरी लगाम न होती, तो वह कभी भी त्स्वेतुखिन न बन पाता, बस यों ही लौंडियों के चक्कर में घूमता-फिरता! मैंने ही उसे बड़ी हस्ती बनाया है!"

आनोच्का इसका प्रतिकार करना चाहती थी, यह शब्द-जाल, जो उसे लपेटे जा रहा था, उससे मुक्त होने की कोशिश में वह उठ भी गई, पर आग्निया ल्वोव्ना ने अपनी हथेली से उसका मुंह कसकर बंद कर दिया और उससे बिल्कुल सटकर मंत्र पढ़ती सपेरिन की तरह धीरे-धीरे बोली:

"याद रख ले! अगर तू मेरे येगोर के बहकावे में आ गई, तो मैं तेरा जीना हराम कर दूंगी!"

इसी क्षण वह ठहाका मारकर हंसी और फिर से अपनी गाती आवाज़ में बोली:

"मेरी जान, अभी से घमंड मत करने लगो! देखो तो जनता तुमसे मिलने आई है, जैसे वो मजूसी बाल यीशू की पूजा करने! लगता है तुम्हारे पिता जी की अगुआई में। और तुम दर्शन नहीं देना चाहतीं। देखो तो। लो स्वागत करो। मैं चली येगोर पाव्लोविच के पास!"

जनता-वनता कोई नहीं थी, हां पाराबुकिन और पाव्लिक गलियारे में से सचमुच झांक रहे थे। इस बीच न जाने कहां पाराबुकिन गला तर कर आया था। शायद वह अपने साथ जेब में शीशी लेता आया था कि कहीं ज़्यादा उत्तेजित हुआ तो काम आयेगी, और वह वाकई काम आई थी।

"आनोच्का! मेरी प्यारी बेटी!" अंदर आकर हांफता हुआ सा वह बोला। "मुझे तो अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हो रहा था! क्या यह तुम ही थी? मेरे तो आंसू ही टपक पड़े! कबूल करता हूं। दिल भर आया! ज़रा सोचो तो किसका दिल! पाराबुकिन का! इतने बड़े बलवान का! बाप को भलमानसी के रास्ते पर ला रही हो। बहुत-बहुत शुक्रगुज़ार हूं तुम्हारा!"

पहले वह कमर तक झुका और फिर बेटी को प्यार देने लगा।

"तुम्हारी खातिर मैं अपने बाकी दिन एक थियेटर से दूसरे थियेटर का चक्कर काटने बिताने को तैयार हूं! जहां तुम जाओगी, वहीं

मैं भी। तुम्हारे लिए पर्दा खोलूंगा! हुक्म दोगी, तो तुम्हारी पोशाकों पर इस्तरी करूंगा। और पाव्लिक तो अब तुम्हारे जिम्मे है। हां, बस, तुम्हीं उसके लिए मां हो। बेचारी मां को यह खुशी का दिन देखना नसीब न था। वह भी आज खुशी के आंसू बहाती!"

"अच्छा, पिता जी, जाइये अब। बाहर खड़े होइये, मैं अभी आती हूं।"

पाराबुकिन ने रहस्यमय ढंग से उंगली हिलाई।

"मैं खड़ा नहीं रह सकता, खड़ा कोई और होना चाहता है। बाहर वाले दरवाज़े के पास..."

वह हौले से आनोच्का की ओर झुका:

"कामरेड इज़्वेकोव है!"

"कहां?" आनोच्का प्रायः चीख उठी।

"चलो, मैं दिखाता हूं," पाव्लिक ने बड़े उत्साह से कहा।

लेकिन वह उनकी ओर देखे बिना ही दौड़ चली, गलियारों को पार करती हुई वह हॉल के दरवाज़े के पास रुकी। यहां कोई नहीं था। उसने चुपके से दरवाजा खोला।

सीढ़ियों के ऐन सिरे पर, जो लाल पर्दे द्वारा हाल से अलग किया हुआ था, पिंजरे में बंद चीते की तरह किरील आगे-पीछे तीन-तीन कदम नाप रहा था।

"आप अभी तैयार नहीं हुई?" उसने खुश होते हुए पूछा।

"आप कहां थे?" मुश्किल से सांस लेते हुए आनोच्का ने पूछा।

"मैं कहीं नहीं गया था।"

"मैंने आपको देखा नहीं।"

"पर मैं आपको देखता रहा हूं। मेरे ख्याल में ऐसे ही होना चाहिए। जल्दी से मेक-अप साफ़ कीजिये। मैं आपको घर पहुंचाना चाहता हूं।"

"अगर आप जल्दी में हैं, तो मैं आपको नहीं रोकूंगी!"

"मैं चाहता हूं कि हमारे पास ज़्यादा समय हो।"

लेकिन वह मानो किरील की बात नहीं सुन रही थी, और सहसा वह बच्चों की भांति हताश हो उठी, उसकी आंखें डबडबा आईं और उसके मुंह से दीनता भरे उलाहने निकलने लगे:

"जाइये, जाइये यहां से! अगर आप के पास वक्त नहीं है... मैंने सोचा भी नहीं था कि आप मेरा इंतज़ार करें, मेरे लिए अपना काम छोड़ें। जाइये, अपना काम कीजिये। जाते क्यों नहीं?"

किरील ने उसके हाथ दबाये।

"सुनो तो, सुनो तो," असहाय सा मुस्कराता हुआ वह कहने लगा। "ऐसा शुभ दिन है आज! सच!"

आनोच्का की मानो चेतना लौट आई। किरील का इतना भावभीना स्वर उसने पहले कभी नहीं सुना था।

"यह सब तुम्हारी खुशी की वजह से है, है न? रोओ नहीं, आनोच्का, रोओ नहीं!"

आनोच्का की आंखें अभी भी डबडबाई हुई थीं, परन्तु उसका रोम-रोम एक नई हर्षमय भावना से पुलकित हो उठा था। अब उसने अपने हाथ छुड़ाकर किरील के हाथ दबाये।

"ठहरो, अभी आती हूं!" जल्दी-जल्दी वह फुसफुसाई और जोर से दरवाजा खोलकर दौड़ गई।

दौड़ते-दौड़ते ही टोपी के साथ विग उतारते हुए वह अपने ड्रेसिंग रूम में पहुंची।

"आप जाइये घर, मुझे छोड़ आयेंगे!" पिता और पाव्लिक को कमरे से बाहर करते हुए वह कह रही थी, पर साथ ही भाई से मदद मांगते हुए उन्हें रोक रही थी:

"एप्रन! एप्रन खोलो! अब हुक! पहले ऊपर वाला! जल्दी करो न! डरो नहीं। दोनों तरफ़ से दबा दो, अपने आप खुल जायेंगे। हे भगवान, कैसा बुद्धू है! अच्छा बस, मैं अपने आप कर लूंगी। जाओ, जाओ!"

उसने सिर के ऊपर खींचकर लुईज़ा का परिधान उतारा और चेहरे पर वैसलिन मलकर जल्दी से आनोच्का के आम वस्त्र पहन लिये। तौलिये से मेक-अप पोंछते हुए वह बच्चों की तरह पांव झटक रही थी—जूतियां उतारने के लिए। सबसे ज़्यादा वक्त उसे अपने जूतों के तस्मे बांधने में लगा। वह बुरी तरह से झुंझला रही थी, कैसा बेहूदा फ़ैशन है—कपड़े के जूते, जिनमें घुटनों तक छल्लों में तस्मा बांधना पड़ता है। लेकिन आख़िर यह झंझट भी खत्म हो गया। उसने

अपना हल्का सा ओवरकोट ओढ़ा, कील पर टंगी वैरट को गेंद की तरह उछालकर पकड़ा और बाहर निकल आई। सौभाग्यवश, रास्ते में कोई नहीं मिला।

शरद ऋतु की अंधेरी रात में जब किरील आनोच्का के साथ बाहर निकला, तब तक दर्शकों की भीड़ छंट चुकी थी और सड़कें खाली थीं। उन्होंने लम्बी वैरक पार की और मोड़ के पीछे उन्हें कार की झलक दिखाई दी।

"कार?" आनोच्का स्पष्टतया निराशा भरे स्वर में बोली। "फिर से पल भर में अलविदा?"

किरील ने उसका हाथ पकड़कर खींचा।

"धीमी चाल से पुराने गिरजे की ओर ले चलिये," उसने ड्राइवर से कहा।

इसका मतलब था वे सारा शहर पार करेंगे।

हवा चल रही थी, पर कार में ठंड नहीं थी। जब वे कार में बैठ रहे थे, तो अगली और पिछली सीटों के बीच लगे शीशे में उनकी सभी गतियां प्रतिबिम्बित हुईं, जैसे कि वहां दर्पण लगा हो। बैठ जाने पर आनोच्का ने किरील का सिर अपने बिल्कुल पास ही देखा। शीशे में दोनों हौले-हौले हिल रहे थे और आनोच्का इस अस्पष्ट से, कंपकंपाते प्रतिबिम्ब से नज़रें नहीं हटा पा रही थी। दरवाज़े की झिरी में से ठंडी, चुभती हवा लहराती डोर सी आ रही थी, सीट के नीचे किसी चीज़ से एकसार ऊंचे सुर में झंकार सी हो रही थी और इंजन की उनींदी घरघराहट सुनाई दे रही थी।

दिन भर की उदासी, भय, व्यथा और आशाओं के बाद, शाम की विजय, सूनेपन, अपमान, ठेस, आंसुओं और हर्षोल्लास के बाद अब आनोच्का एक विचित्र शांति अनुभव कर रही थी। यह कुछ ऐसा था जैसे वह बेहोश हो गई हो और किसी ने बड़े ध्यान से उसे बिस्तर में लिटा दिया हो और कान में कोई प्यारा शब्द कहा हो। वह इतनी शांत थी कि इस विचित्र परिवर्तन पर उसे ज़रा भी आश्चर्य नहीं हो रहा था। उसे लग रहा था कि सब कुछ ऐसे ही तो होना चाहिए, मानो वह सैकड़ों बार यों ही किरील के बगल में कार में बैठी हो, और कंधे से घुटने तक उसका सारा शरीर सैकड़ों बार किरील

का स्पर्श पा चुका हो। यह सब उसे बिल्कुल स्वाभाविक लग रहा था, वह और कुछ नही चाहती थी, बस ऐसे ही वे कार में जाते जायें, जाते जायें।

सारे रास्ते कोई नहीं मिला, खिड़कियों से बाहर कुछ दिखाई नही देता था और ड्राइवर ने एक बार भी हार्न नहीं बजाया। ताजी हवा की डोर सीधे चेहरे को छू रही थी और लगता था जैसे यही ऊंचे सुर मे झंकृत हो रही हो।

नगर के केन्द्र में जब कार तारकोल की पक्की सड़क पर ऐसे चलने लगी, जैसे पटरे पर इस्तरी, तब आनोच्का ने हौले से कहा:

"आज मुझे याद आ रहा था कैसे जब स्कूल में पढ़ती थी, तो सहेलियों के साथ थियेटर जाया करती थी। सबसे सस्ते टिकट लेकर ऊपर गैलरी में हम बैठती थीं। एक अभिनेत्री थी हम सबकी चहेती। आप तब यहां नहीं थे।"

"आप?" किरील ने मानो मजाक में कहा।

वह थोडी देर सोचती रही। किरील का हाथ पकड़कर और उससे उसका घुटना जरा दबाकर वह सहज ही आगे बोलने लगी:

"तुम तब यहां नही थे... तुम उसे नहीं जानते... हम लड़कियां जब उसका कोई पार्ट देखकर दीवानी हो उठती थीं, तो हम सब की सब बिल्कुल उसके जैसी ही बनना चाहती थीं। अब मैं चाहती हूं कि सब मेरे जैसी हों, कि सब वैसे ही महसूस करें, जैसे मैं इस वक्त कर रही हूं।"

किरील ने कुछ जवाब नहीं दिया, वह बस उसकी ओर मुड़कर उसे देखने लगा। कार जरा भी धचके खाये बिना चलती जा रही थी। फिर पक्की सड़क खत्म हो गई और शीशे में बनते अक्स फिर से डोलने लगे।

"तुम्हें त्स्वेतुखिन अच्छा लगा?" आनोच्का ने पूछा।

"हां! मुझे उम्मीद भी नहीं थी कि वह इतना अच्छा अभिनय करेगा। एक नाटक के बाद मुझे उससे चिढ़ हो गई थी... मेरे निर्वासन से पहले की बात है।"

आनोच्का काफ़ी देर तक चुप रही।

"मैं शायद जल्दी ही उसकी मण्डली छोड़ दूंगी।"

अब किरील चुप था, वह समझ नहीं पा रहा था कि आनोच्का क्या कहना चाहती है, बस उसके चेहरे को टकटकी लगाये देखता जा रहा था। आनोच्का उसकी ओर नहीं देख रही थी।

"वह मुझे केवल कला ही नहीं सिखाना चाहता," उसने कहा और बिल्कुल दूसरी ओर मुंह मोड़ लिया।

"मुझे लग रहा था," किरील ने तुरन्त कहा और फिर कुछ रुककर अपने सवाल में ही अपना विश्वास प्रकट करते हुए पूछा: "पर वह ऐसा नहीं कर पायेगा न?"

आनोच्का ने कंधे बिचकाये।

"किधर चलें? दायें, वायें?" शीशे के पीछे से ड्राइवर ने चिल्लाकर कहा।

"रुकिये!"

किरील ने कार का दरवाज़ा खोला। गिरजे के घण्टागार की नुकीली मीनार मटमैले आसमान में काली स्याह लग रही थी। वोल्गा की ओर से वयार की चौड़ी धार बहती आ रही थी।

"चलो, उतरते हैं!"

वे चौक में पहुंच गये थे। वोल्गा से आती वयार में नदी किनारे की काई, पुराने गलते रस्से, लकड़ी, अलकतरा और मशीन का तेल– इन सबकी गंधें मिली हुई थीं।

"वाह, कितना अच्छा लग रहा है!" किरील ने कहा और आनोच्का का हाथ कसकर पकड़ लिया।

वे ढलान पर नदी की ओर उतरने लगे। दूर नदी पर टिमटिमाते प्लव दिखाई दिये, कोई छोटा सा स्टीमर बहाव से जूझता बढ़ रहा था, उसकी बत्तियां कभी चमक उठतीं, कभी मानो आंसुओं से धुंधली पड़ जातीं।

वे ऐन तट तक नहीं गये, कगार पर ही रुक गये, उनके सामने नदी का विशाल पाट था, जो कहीं-कहीं सीसे सा चमक रहा था। लहरों की छपछप और किनारे पर औंधी पड़ी नावों की सूखी लकड़ी में हवा से होती चरमराहट कानों में पड़ रही थी।

आनोच्का बिल्कुल शांत थी और किरील ने जब उसे बांह में भरा, तो वह उससे सट गई।

"मैं इस अंधकार में नजर दौड़ाता हूं और मुझे असंख्य रोशनियां और अनगिनत लोग दीख पड़ते हैं, आवाजें ही आवाजें सुनाई देती हैं," किरील ने कहा। "तुम्हें कैसा लगता है?"

"क्या कारण है कि जब भी हम किसी अच्छी बात की चर्चा करते हैं, तो सदा यही सोचते हैं कि भविष्य में क्या होगा?"

"ताकि हम ऐसे भविष्य की ओर बढ़ें, जो अधिक अच्छा होगा।"

"पर ऐसा भी तो होता है कि अभी जो है वही अधिक अच्छा है? मैं इस अंधेरे विस्तार में देख रही हूं और मुझे यही सबसे अच्छा लग रहा है। और अब मैं इससे अधिक अच्छा कुछ नहीं चाहती।"

"मैं भी," किरील ने कहा और अपना आलिंगन और कस लिया।

"मुझे लगता है मैंने ऐसी रात कभी नहीं देखी।"

"मैंने भी।"

"और ऐसी हवा भी कभी नहीं बही।"

"हां।"

"पर देखो, फिर भी कितनी शांति है।"

"सच। जाने को मन नहीं करता!"

"इतनी जल्दी?"

"मन दुखता है, पर क्या किया जाये? जाना चाहिए।"

"और कब यह खत्म होगा?"

"क्या?"

"यह सदा का 'चाहिए'।"

"मेरी बात सुनो। और मुझे जवाब देना। तुम्हारा जवाब मेरे लिए बहुत जरूरी है। ठीक है?"

"अच्छा।"

"तो सुनो। कोई भी उड़ान धरती के बिना नहीं हो सकती। उड़ने के लिए ठोस जमीन चाहिए। आजकल हम यह ज़मीन जीतने में ही लगे हुए हैं। हम भविष्य की उड़ान का मैदान बना रहे हैं। यह बड़ा मुश्किल और लंबा काम है। शायद सभी कामों से मुश्किल काम है यह। इसके लिए हमें सुख-सुविधाओं को भूलना होगा। जरूरी हुआ तो हम अपने हाथों से जमीन खोदेंगे, अपने नाखूनों से इसे भुरभुरा

करेंगे, नंगे पांवों इसे कूटेंगे। और तब तक पीछे नहीं हटेंगे, जब तक कि हमारी उड़ान का मैदान तैयार नहीं हो जाता। हमारे पास आराम करने का समय नहीं है। कभी-कभी तो मुस्कराने भर की फ़ुरसत नहीं मिलती। हमें जल्दी करनी चाहिए। शायद, इस काम ने ही हमें इतना रूखा बना दिया है। कभी-कभी तो मैं अपने आप को वो हौआ लगने लगता हूं, जिसका बच्चों को डर दिखाते हैं, इतना नीरस हो जाता हूं। मैं मज़ाक नहीं कर रहा। पर मैं अपने आप को बदल भी नहीं सकता। मैं तब तक ज़मीन कूटता रहूंगा जब तक कि वह उड़ान की दौड़ भरने के लिए तैयार नहीं हो जायेगी। ताकि फिर इतनी ऊंची उड़ान भरी जा सके, जिसकी लोगों ने कल्पना भी नहीं की है। यह ऊंचाई सदा मेरी आंखों के सामने रहती है, हर पल,– विश्वास है तुम्हें मेरी बात पर? मैं टीले खोदता जाता हूं, गड्ढे पाटता हूं, और नज़रें ऊपर ही लगी रहती हैं! और मैं लोगों को, उनके साथ स्वयं को भी बिल्कुल दूसरा, नया मनुष्य बना देखता हूं। और मैं बिल्कुल भी हौआ नहीं। तुम्हें विश्वास है मेरी बात पर?"

जब वह बोल रहा था, तो आनोच्का उससे परे हट गई थी, ताकि अंधकार में उसका चेहरा अच्छी तरह देख सके, पर जब उसने बोलना बंद किया, तो वह मुस्करा उठी, क्योंकि हौए की बात उसने बहुत ही गम्भीरता से कही थी।

"किस बात का जवाब दूं? हौआ हो कि नहीं?"

"तुमने पूछा था कब अंत होगा। मुझे पता नहीं। जल्दी नहीं। पर बहुत जल्दी भी हो सकता है।"

"मैं समझी नहीं।"

"तुम यह नहीं देख पाती हो कि मेरा यह 'चाहिए-चाहिए' कब खत्म होगा, क्योंकि मेरा यह 'चाहिए' तुम्हारा नहीं है। अगर यह तुम्हारा भी होगा और मेरा भी, तब तुम्हें इस बात की खास परवाह नहीं होगी कि कब इसका अंत होगा।"

"लेकिन इससे यह अंत जल्दी तो नहीं आ जायेगा?" आनोच्का फिर से मुस्कराई।

किरील भी मुस्कराया:

"थोड़ी सी जल्दी आ जायेगा। ज़मीन खोदनेवालों में एक और

आदमी जो मिल जायेगा... तो यही मेरा सवाल है। तुम मेरे साथ भविष्य की उड़ान का मैदान बनाना चाहती हो?"

"मैं तो सोच रही थी कि... हम बनाना शुरू कर चुके हैं?" आनोच्का ने एक तिरछी नज़र उस पर डालकर और फिर आंखें चुराते हुए बड़े हौले से कहा।

वह ज़ोर से हंसा, आनोच्का को रास्ते की ओर घुमाकर जल्दी-जल्दी उसे ऊपर ले चला।

किरील उसे उसके घर ले गया, दरवाज़े तक छोड़ने गया और उन्होंने विदा ली – शीघ्र ही फिर मिलने का वायदा करके।

आनोच्का अंदर पहुंची ही थी कि उसका बाप और भाई भी आ गये। वह किसी से बात नहीं करना चाहती थी, पर पाराबुकिन फिर से उसे बधाइयां देने लगा। ठंडी हवा में नशा सिर पर और चढ़ गया था।

"माफ़ करना, बेटी, पर मुझे बिल्कुल विश्वास न था कि सब कुछ इतना अच्छा होगा। सोचता था कहां यह इतना ऊंचे पहुंच पायेगी! थियेटर का सितारा! तीख़ोन पाराबुकिन की बेटी सितारा बनेगी! मैं तो सोचता था बस यों ही होगी कामचलाऊ एक्ट्रेस... पर आज देखा, लोग वाहवाही कर रहे हैं! मुझ को भी देख रहे थे कि देखो इसी की बेटी है! बधाई हो, बिटिया, दिल खुश कर दिया।"

यह कहते हुए पाराबुकिन ने ताली बजाई।

"और फिर मेरा पापी मन येगोर पाव्लोविच पर भी भरोसा नहीं करता था। सोचता था, पता नहीं किस फेर में है यह? बेचारी भोली-भाली लड़की का न जाने क्या करे? पर अब देख लिया मैंने, अपने पैरों पर खड़ा कर रहा है, सही रास्ते पर ले जा रहा है! बधाई हो!"

"बस, पिता जी, अभी बहुत हुई बधाइयां! बाद में और देनी होंगी।"

"हां, हां समझता हूं, जब थियेटर में तुम्हारा सितारा और चमकेगा!"

"हां, थियेटर में भी, और भी कहीं!"

पाराबुकिन तुरन्त ही नहीं समझ पाया कि बात क्या है, और

काफ़ी देर तक बेटी की पीठ ठोंकता रहा, बधाइयां देता रहा। फिर सहसा कुछ समझ गया और मानो उस पर वज्रपात हुआ, वह कुर्सी पर ढह गया और चिल्लाया:

"पाव्लिक! इधर आ! क्या कहा था मैंने तुझे? कहा था न त्स्वेतुखिन तेरी बहन पर सोने की बौछार करेगा? कहा था न? इधर आ, बता दे आनोच्का को कहा था कि नहीं? येगोर पाव्लोविच आनोच्का से शादी कर रहा है! है न? हैं? ठीक है न?"

फिर वह सहसा हक्का-बक्का हो गया:

"कैसे कर सकता है वह? अपनी घरवाली के होते? क्या है यह सब? तलाक? मैं पूछ रहा हूं, क्या वह तलाक देगा, हैं?"

"यह सब तो आपके दिमाग की उपज है!" आनोच्का ने कहा। "सो जाइये अब।"

"क्या मतलब दिमाग की उपज? तो फिर यह क्यों कहती हो कि बधाई दूं? दिमाग की उपज! नहीं, दाल में कुछ काला है! मैं कब से देख रहा हूं। मेरे क्या आंखें नहीं हैं? तेरा बाप अंधा है या आंखोंवाला? अंधा है क्या?.. ठहर तो! नहीं, नामुमकिन,"—वह और भी ज़ोर से चिल्लाया और उछल खड़ा हुआ। "इज़्वेकोव? हैं?"

वह आंखें फाड़-फाड़कर बेटी की ओर देख रहा था। उसकी मुट्ठियां मेज़ पर टिकी हुई थीं, और दुबला-पतला, सपाट सा धड़ बेटी की ओर झुका हुआ था।

आनोच्का खिलखिलाकर हंसी और अपने कमरे में चली गई—कपड़े बदलने।

"लो, तीख़ोन प्लातोनोविच, मुबारक हो, बेटी बहू बनने चली है!" दरवाज़े के पीछे से पाराबुकिन गरज रहा था। "जब तक बाप ने पाला-पोसा, तब तक बाप की ज़रूरत थी। अब बुड्ढे को लात मारकर निकाल दो! बेटी को पढ़ाया-लिखाया, इन्सान बनाया और बेटी खी-खी करती चल दी घर छोड़कर? और भाई को कौन रोटी देगा? कामरेड इज़्वेकोव? ये इज़्वेकोव सारी उम्र तुझे तेरे घर से दूर करते रहे हैं। वे तो सब कुछ अपने ही ढंग से करना चाहते हैं। हमेशा दूसरों को नसीहतें देते रहते हैं। पहले वो मास्टरानी मुझे नसीहतें दिया करती

थी, अब क्या उसका बेटा देगा? नहीं, तू पहले काम कर, फिर खी-सी करना!"

आनोच्का काफी देर तक बाप की बड़बड़ सुनती रही। पर वह उसकी बेमतलब बातों को समझने की कोशिश नहीं कर रही थी।

वह अभी सोई नहीं थी। उसे लग रहा था जैसे नींद उसे अपनी गोद में थपथपा रही है और बीती शाम की अलग-अलग आश्चर्यजनक घटनाओं को उसकी आंखों के सामने खोल रही है, जैसे कोई किस्मत बतानेवाला अपनी गड्डी में से ताश के पत्ते निकाल-निकालकर खोलता जाता है। अपने थके-मांदे मस्तिष्क से आनोच्का यह भेद करने का जतन कर रही थी कि इस शाम को उसने क्या पाया है और क्या खोया है। लेकिन आंखों के सामने मिले-जुले, गड्डमड्ड से चित्र अधिकाधिक तेजी से घूम रहे थे और इस भंवर में उसे लग रहा था कि इज़्वेकोव भी उसके साथ नींद की गोद में समा रहा है और बालिश्त भर का त्स्वेतुखिन दूर कहीं, नदी के अंधेरे, असीम पाट से अपना पाउडर लगा विग हिला रहा है।

उसके कानों में जो आखिरी आवाज़ पड़ी, वह थी बिस्तर पर करवटें बदलते बाप की गहरी उसांस:

"बख्शना प्रभु, मुझ हरामी के पिल्ले को!"

उम्र ढलने के साथ-साथ, खास तौर पर पत्नी की मृत्यु के बाद, पाराबुकिन दैवी शक्तियों से खौफ़ खाने लगा था—आनोच्का काफ़ी अरसे से यह देख रही थी।

३५

सैनिक कार्रवाइयों का उपसंहार

सितम्बर के तूफ़ानी विप्लव दिनों में सफ़ेद गार्डों ने दक्षिण में अपना अभियान जारी रखते हुए कूर्स्क के इलाके पर कब्ज़ा कर लिया। कुतेपोव की कोर में शामिल चुनिंदा पैदल डिविज़नें उत्तर, उत्तर-पश्चिम और उत्तर-पूर्व की ओर बढ़ने लगीं। कोर्नीलोव की डिविज़नें ओर्योल की ओर बढ़ रही थीं, द्रोज़्दोव की ब्रयान्स्क की ओर, अलेक्सेयेव तथा मार्कोव की डिविजनें येलेत्स की ओर। श्कुरो की

कैवेलरी कोर मामोन्तोव के साथ मिलकर दोन सेना के वायें पार्श्व के साथ संयुक्त कार्रवाइयां करने के उद्देश्य से वोरोनेज की ओर वढ़ रही थी।

अक्तूबर के मध्य में ओर्योल हाथ से जाता रहा और देनीकिन की फ़ौजें तूला को जानेवाली सड़क पर पहुंच गईं, जिससे लाल सेना को गोला-बारूद, बंदूकें और तोपें मुहैया करनेवाले इस नगर के लिए सीधा खतरा पैदा हो गया।

मास्को पर संकट गहराता जा रहा था।

यह देनीकिन की "दक्षिणी रूस की सशस्त्र सेनाओं" की सफलताओं का चरम बिंदु था और साथ ही गृहयुद्ध के मोर्चों पर प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों के विरुद्ध सोवियत राज्य के संघर्ष का सबसे अधिक तनावपूर्ण क्षण।

सन् उन्नीस सौ उन्नीस रूस के लिए ऐसी कठिनतम परीक्षा का वर्ष था कि अगर जनता का आत्म-बल टूट जाता, इतिहास ने उस पर जो विपदाएं ढाईं, उनको वह सह न पाती, तो वह न जाने कितनी दशाब्दियों के लिए उस नव जीवन से वंचित हो जाती, जिसके लिए उसने महान समाजवादी क्रांति की थी।

रूस के प्रसिद्ध विस्तारों के वारे में अनेकों वार यह कहा गया है कि वे ही रूस को शत्रुओं के आक्रमणों के दिनों में वचाते रहे हैं, किन्तु अव इनका अधिकांश भाग विभिन्न प्रतिक्रांतिकारी सरकारों और विदेशी हस्तक्षेपकारियों के कब्ज़े में था। गृहयुद्ध जिन दिनों पूरे ज़ोर पर था, उन दिनों सोवियतों के हाथ में केवल रूस के केन्द्र मास्को के आस-पास का भीतरी भाग ही वचा था।

रूस के पास न केवल सुदूर पूर्व और साइवेरिया का असीम विस्तार नहीं वचा था, वल्कि एक समय सारा उराल और वोल्गा पार का प्राय: सारा इलाका भी नहीं था। रूस के पास तुर्किस्तान समेत सारा दक्षिण-पूर्वी भाग तथा काकेशिया, कुवान, दोन के इलाकों और दोनेत्स के मैदान समेत सारा दक्षिणी भाग भी नहीं रहा था। उक्राइना, मोल्दाविया, वेलोरूस तथा वाल्टिक सागर के तटवर्ती प्रांत उससे अलग कर दिये गये थे। झीलों वाला इलाका तथा सारा उत्तरी इलाका उससे छीन लिया गया था। चारों दिशाओं में कहीं भी रूस के लिए समुद्र का रास्ता नहीं वचा था।

विशाल राज्य को अपनी अधिकांश सम्पदा इन बाहरी भागों से ही प्राप्त होती थी। १९१९ तक प्रतिक्रांतिकारी शक्तियों ने रूस को उसके प्रमुख अन्न क्षेत्र से, उराल के खनिजों से, मध्य एशिया की कपास से, तेल और कोयले से, स्तेपी की और पहाड़ी चरागाहों से, औद्योगिक और इमारती लकड़ी के जंगलों से वंचित कर दिया था।

रूस से छीन ली गई उसकी सारी सम्पदाओं के बदले अब दो राजधानियों समेत उसके भीतरी भाग के पास केवल भूख और ठंड ही बची थी।

और अब शरद ऋतु में शत्रु दक्षिण से मास्को की ओर तथा पश्चिम एवं उत्तर-पूर्व से पेत्रोग्राद की ओर बढ़ता आ रहा था।

पूर्व में कोल्चाक की पराजय के साथ वसंत में एंटेंट का पहला अभियान विफल हो गया था और तब सोवियत रूस के विरोधी पूंजीवादी देशों ने एक दूसरे अभियान की योजना तैयार की—इस बार चारों ओर से जोरदार हमला करके वे क्रांति का गला घोंट देने का इरादा रखते थे। इस अभियान के प्रधान प्रवर्तक, इंगलैंड के फ़ौजी मामलों के मंत्री चर्चिल की योजना के अनुसार सोवियत रूस के खिलाफ़ सैनिक कार्रवाइयां चौदह देशों के संयुक्त प्रयासों द्वारा की जानी थी, जिनमें इंगलैंड, अमरीका, फ़्रांस, जापान, इटली, फ़िनलैंड, पोलैंड तथा सात अन्य देश शामिल थे। किन्तु शीघ्र ही यह स्पष्ट हो गया कि चौदह देशों का गंठजोड़ कुछ कर पाने में असमर्थ है। इसकी निष्फलता के चार प्रमुख कारण थे। एक तो, कोल्चाक की हार से यह पता चल गया कि लाल सेना की शक्ति तेज़ी से बढ़ रही है। दूसरे, अधिकांश छोटे देश, जिन पर एंटेंट की महाशक्तियां इस अभियान को पूरा करने का बोझ डालना चाहती थी, सोवियत राज्य द्वारा घोषित जातियों के आत्म-निर्णय के अधिकार की नीति से लाभ उठाने की आशा रखते थे और इसमें ही अपना हित समझते थे। तीसरे, पश्चिमी यूरोपीय हस्तक्षेपकारियों ने जब सोवियत इलाकों को हथियाने के लिए अपनी फ़ौजों से काम लेने की कोशिश की, तो इन फ़ौजों में असंतोष फैला, साथ ही हस्तक्षेपकारी देशों में मजदूर इसका विरोध करते हुए हड़तालें करने लगे। चौथे, स्वयं इन देशों का रूस के प्रति रुख परस्परविरोधी था, इंगलैंड और फ़्रांस की विदेश नीति में यह विरोध विशेषतः स्पष्ट रूप से

प्रकट होता था: फ़्रांस की सरकार "अविभाज्य" और सशक्त रूस की पुन:स्थापना करनी चाहती थी, जो पराजित जर्मनी के लिए एक स्थायी खतरा हो; जबकि अंग्रेज़ सरकार रूस का विभाजन करना चाहती थी, ताकि एशिया में उसके उपनिवेशों के लिए कोई खतरा न रहे।

चर्चिल चौदह देशों के जिस संयुक्त हमले के सपने देखता था, वह आयोजित नहीं किया जा सका और तब एंटेंट को रूस के आंतरिक प्रतिक्रांतिकारियों को यथासम्भव अधिक समर्थन देकर ही संतोष करना पड़ा। बाज़ी देनीकिन पर लगाई गई – उसे सोवियतों के विरुद्ध एंटेंट के दूसरे अभियान का सूत्रधार बनाया गया।

"दक्षिणी रूस की सशस्त्र सेनाओं" को काले सागर के बंदरगाहों के रास्ते छह महीनों तक लगातार हर तरह के हथियार मिलते रहे। स्वयं देनीकिन ने यह स्वीकार किया था कि सितम्बर तक उसकी सेनाओं को इंगलैंड से साढ़े पांच सौ से अधिक तोपें और लगभग सत्तरह लाख गोले मिल चुके थे। अंग्रेजों ने एक लाख बंदूकें, सोलह करोड़ अस्सी लाख कारतूस तथा ढाई लाख वर्दियां भी भेजी थीं। इंगलैंड के साथ मिली-भगत में संयुक्त राज्य अमरीका ने भी देनीकिन को एक लाख बंदूकें तथा बहुत बड़ी संख्या में फ़ौजी वर्दियां दीं। टैंक और हवाई जहाज़ भी भेजे गये। देनीकिन की तिजोरियां पाउंडों और डालरों से भरती जा रही थीं।

उधर लाल सेना केवल स्वदेशी हथियार कारखानों पर ही निर्भर थी और ये कारखाने उसकी युद्धकालीन आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ थे। वसंत में बंदूकों और कारतूसों का उत्पादन १९१७ के अंत की तुलना में एक तिहाई ही रह गया था। १९१९ के पहले चार महीनों के दौरान गोलों का उत्पादन पहले के उत्पादन का पांचवां भाग ही था। इसके कई कारण थे: देश की आम तबाहहाली, कच्चे माल की कमी, युद्ध के लिए मज़दूरों की लामबंदी, टाइफ़स की महामारी में हुई मौतें और देश में फैली भुखमरी। इन दिनों नगरवासियों को दिन में सिर्फ़ आध पाव डबलरोटी ही मिलती थी

तो फिर यह कैसे हुआ कि देनीकिन की सफ़ेद-गार्डी फ़ौज की हार हुई और उसका बिल्कुल सफ़ाया कर दिया गया? यह कैसे हुआ कि जब सोवियत रूस से उसके सारे बाहरी इलाके, भूगर्भ की सारी

रसदगाह और प्रायः सारा अन्न छीन लिया गया था, जब नये-नये रास्तों से पूरी तरह लैस दुश्मन ने लाल सेना के सबसे महत्वपूर्ण मोर्चे को अथाह गर्त के किनारे ला खड़ा किया था और मास्को पर उसके कब्जे का खतरा पैदा हो गया था, कैसे तब सोवियत रूस ही विजयी हुआ ?

सितम्बर के अंत के संकटपूर्ण दिनों में डांवांडोल हो गये दक्षिणी मोर्चे को सुदृढ़ करना ही क्रांतिकारी शक्तियों का सबसे प्रमुख काम था। लेनिन के सुझाव पर रूसी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय समिति ने पार्टी के अधिकतम सदस्यों को सैनिक कार्यों में लगाने तथा शक्तिशाली रिजर्व टुकड़ियों को दक्षिणी मोर्चे पर भेजने का फ़ैसला किया, दक्षिणी मोर्चे की नई कमान गठित की, स्तालिन को क्रांतिकारी सैनिक परिषद का सदस्य नियुक्त किया। त्सरीत्सिन से नोवोरोस्सीइस्क की ओर हमला करने की गर्मियों की जो योजना नाकाम सिद्ध हो चुकी थी, उसके स्थान पर खार्कोव – दोनबास – रोस्तोव-आन-दोन की लाइन पर देनीकिन की सेनाओं पर प्रमुख प्रहार करने की योजना तैयार की गई।

कम्युनिस्ट पार्टी और युवा कम्युनिस्ट संघ के दसियों हज़ार सदस्य मोर्चे पर गये। एक "पार्टी सप्ताह" घोषित किया गया, जिसमें लाखों मजदूर, किसान और सैनिक पार्टी के सदस्य बने। देश के कोने-कोने में देनीकिन से पिंड छुड़ाने की इच्छा इतनी प्रबल थी कि युदेनिच के फिर से पेत्रोग्राद की ओर बढ़ते आने से पैदा हुई नाजुक स्थिति के बावजूद बाल्टिक बेड़े के एक हजार नौसैनिक दक्षिणी मोर्चे पर लड़ने गये। युवा कम्युनिस्ट संघ की अनेक स्थानीय समितियों के सारे के सारे सदस्य मोर्चे पर चले गये, जगह-जगह समिति कार्यालयों के दरवाजों पर ऐसे पर्चे देखे जा सकते थे: "समिति बंद है। सभी सदस्य मोर्चे पर चले गये"।

इस तरह देनीकिन के विरुद्ध संघर्ष का एक नया पृष्ठ आरम्भ हुआ, वह पृष्ठ जो सारे सफ़ेद गार्डी आंदोलन, सारी प्रतिक्रांति के इतिहास का अंतिम पृष्ठ बना।

इस योजना के क्रियान्वयन के लिए भगीरथ प्रयत्नों और असाधारण संकल्प की आवश्यकता थी। दक्षिणी मोर्चे की कमान को अपना आर-

म्भिक दल प्रायः पूरी तरह उन टुकड़ियों से बनाना पड़ा, जो पहले से ही रणक्षेत्र में थीं। लाल सेना की टुकड़ियों को पीछे हटने से रोकने और उन्हें तुरन्त ही जवाबी हमले में कूदने के लिए पुनर्गठित करने की आवश्यकता थी।

यह काम करने के साथ-साथ सेना में से निकम्मे कर्मियों को निकाला जा रहा था। दक्षिणी मोर्चे के सर्वोच्च कमांडर से लेकर निम्नतम श्रेणी तक के अनेक कमांडरों के स्थान पर नये कर्मठ कमांडर नियुक्त किये गये।

लाल सेना में भरती हो रहे सहस्रों मजदूर और किसान थकी-मांदी सैनिक टुकड़ियों में नई शक्ति का संचार कर रहे थे। इसके फलस्वरूप अभूतपूर्व गति से लाल सेना एक बार फिर से शत्रु के दांत खट्टे करने लायक हो रही थी। वोरोनेज – दोनबास की सबसे महत्वपूर्ण दिशा में आठवीं सेना (जो यहां उसके पार्श्व में तैनात बुद्योन्नी की कैवेलरी कोर के साथ लाल सेना की प्रमुख शक्ति थी) एक-एक करके अपनी डिविजनें रणक्षेत्र से पीछे हटा रही थी और कुछ दिनों में ही उन्हें नये सैनिकों और शस्त्रास्त्रों से लैस करके वापस भेज रही थी। हफ़्ते भर में ही इस सेना में सैनिकों की संख्या तिगुनी बढ़ गई। दक्षिणी मोर्चे की सेनाओं को जवाबी हमले के लिए तैयार करने के उद्देश्य से उनमें नई भरती और उनके पुनर्गठन का यह विराट कार्य कल्पनातीत अल्प अवधि में पूरा कर लिया गया।

देनीकिन के विरुद्ध संघर्ष की रणनीतिक योजना के दो चरण थे: पहले चरण में देनीकिन की वालंटियर और कज़्ज़ाक सेनाओं को मोर्चे पर एक-दूसरे से अलग किया जाना था और फिर एक-एक करके दोनों का सफ़ाया किया जाना था। योजना के पहले चरण की पूर्ति के लिए दक्षिणी मोर्चे के सम्मुख दो फ़ौरी कार्यभार रखे गये थे। एक कार्यभार यह था कि वोरोनेज की दिशा में देनीकिन की मोर्चेबंदी तोड़कर दोनेत्स के मैदान तक पहुंचा जाये। दूसरा यह कि सफ़ेद फ़ौजों को मास्को की ओर बढ़ने से रोका जाये, जिसके लिए ओर्योल क्षेत्र में जवाबी हमला किया जाना चाहिए था।

दक्षिणी मोर्चे की क्रांतिकारी सैनिक परिषद ने ओर्योल के पास देनीकिन की सेना के विरुद्ध कार्रवाइयों के लिए सैनिक टुकड़ियों का

प्रहारक दल गठित किया। इस प्रहारक दल ने उन आरम्भिक मुठ-भेड़ों में बहुत बड़ी भूमिका अदा की, जिनके साथ दक्षिणी मोर्चे की घटनाओं में निर्णायक मोड़ आया।

जब सफ़ेद गार्डों ने तूला की ओर बढ़ने का रास्ता साफ़ कर लिया था, जब लगता था कि मास्को बस देनीकिन की तोपों का निशाना बनने ही वाला है, तभी वालंटियर सेना के सफल अभियान को रोक दिया गया।

कोर्नीलोव की सफ़ेद गार्डी डिविज़नों द्वारा ओर्योल पर कब्ज़ा किये जाने से पहले ही दक्षिणी मोर्चे की क्रांतिकारी सैनिक परिषद ने पश्चिमी मोर्चे से यहां भेजी गई टुकड़ियों से गठित प्रहारक दल को ओर्योल की दिशा में लड़ रहे शत्रु के प्रमुख दल के खिलाफ़ जवाबी हमला करने का आदेश जारी कर दिया था। यह प्रहार पश्चिम से दक्षिण-पूर्व की ओर, कोर्नीलोव की टुकड़ियों के पार्श्व में किया जाना था, और इसका उद्देश्य था शत्रु के चंडावल में ओर्योल – कूर्स्क रेल लाइन काट देना।

सफ़ेद गार्डों की संख्या बहुत अधिक थी। दो सेनाओं के संधि-स्थल पर सोवियत मोर्चाबंदी तोड़कर उन्होंने ओर्योल से दक्षिण-पश्चिम में स्थित क्रोमी नगर पर कब्ज़ा कर लिया। यहां घमासान युद्ध हुआ, सफ़ेद गार्डों को पता था कि इसका महत्व निर्णायक है, इसलिए वे अपनी सर्वश्रेष्ठ अफ़सरों की रेजीमेंटों को रणक्षेत्र में भेज रहे थे। द्रोज्दोव की रेजीमेंटें क्रोमी के पश्चिम की ओर से उत्तर दिशा में बढ़ने की कोशिश कर रही थीं। कोर्नीलोव की टुकड़ियों ने ओर्योल को दक्षिण की ओर से आड़ दे रहे सोवियत सैनिकों को हराया तथा लाल सेना की टुकड़ियों को नगर छोड़ने पर विवश किया।

लाल सेना के प्रहारक दल के लिए यह असाधारणतया कठिन स्थिति का क्षण था, दल को न तो अपने पार्श्वों से ही और न ही चंडावल में कोई समर्थन प्राप्त था। एक ओर से कोर्नीलोव तथा दूसरी ओर से द्रोज्दोव की टुकड़ियों ने प्रहारक दल को मानो शिकंजे में कस दिया था और लम्बी लड़ाइयों में इसकी शक्ति क्षीण पड़ती जा रही थी। लड़ाई में भाग लेने के चौथे दिन धीरे-धीरे बढ़ते हुए यह दल क्रोमी के पास जा पहुंचा।

द्रोज़्दोव की टुकड़ियों ने ब्र्यान्स्क की ओर बढ़ने की कोशिश में सोवियत प्रहारक दल के पश्चिम में युद्धरत सैनिक दल के बायें पार्श्व को क्षत-विक्षत कर दिया और क्रोमी को दायीं ओर से खतरा पैदा कर दिया ; उधर कोर्नीलोव की टुकड़ियों ने तूला की ओर बढ़ने का दिखावा करते हुए क्रोमी पर बाईं ओर से प्रहार किया – इस सबको देखते हुए दक्षिणी मोर्चे की कमान ने शत्रु के इन दोनों दलों के खिलाफ़ एक साथ ही कार्रवाई करने का फ़ैसला किया। प्रहारक दल को यह कार्यभार सौंपा गया कि वह दो अलग-अलग दिशाओं में हमला करे, अपनी प्रमुख टुकड़ियां ओर्योल की दिशा में कोर्नीलोव के खिलाफ़ बढ़ाये और शेष टुकड़ियों को द्रोज़्दोव के खिलाफ़ द्मीत्रोव्स्क की ओर।

इस कार्रवाई से द्मीत्रोव्स्क के पास काफ़ी लंबी लड़ाइयों में बहुत रक्तपात हुआ। यहां प्रहारक दल की टुकड़ियां कभी आगे बढ़ जातीं और कभी फिर उन्हें पीछे हटना पड़ता। किन्तु ओर्योल के पास तीन दिन तक जूझने के बाद प्रहारक दल की प्रमुख टुकड़ियों ने कोर्नी-लोव की डिविज़न को खदेड़ दिया। इसके फलस्वरूप लाल सेना ने ओर्योल को तीन दिशाओं – उत्तर, पश्चिम तथा दक्षिण-पश्चिम से घेर लिया। सफ़ेद गार्डों के पास कुमक बची न थी, सो उन्हें कोर्नीलोव की टुकड़ियों को ओर्लोव से एकमात्र खाली रास्ते पर – दक्षिण की ओर – हटाना पड़ा।

ओर्योल को आज़ाद करा लेने पर लाल सेना में देनीकिन की सेना पर अपनी श्रेष्ठता में विश्वास दृढ़ हुआ – हफ़्ते भर पहले ही तो देनीकिन की सेना ने ओर्योल पर कब्ज़ा किया था। सफ़ेद सेना में क्षीणता के लक्षण दिखाई देने लगे और यह भी साफ़ हो गया कि पहलकदमी सोवियत कमान के हाथों में आ रही है।

परन्तु ओर्योल छुड़ा लेने पर भी दक्षिणी मोर्चे के केन्द्रीय भाग की स्थिति में आमूल परिवर्तन नहीं आया था। देनीकिन अभी भी सक्रिय था, उसकी वालंटियर सेना हाल ही की अपनी सफलताओं के परिणामों को हाथ से न जाने देने की जी-तोड़ कोशिशें कर रही थी।

क्रोमी के पास लड़ाई ठंडी नहीं पड़ रही थी।

मोर्चे के तीस किलोमीटर लंबे भाग पर द्रोज़्दोव के सैनिकों ने दक्षिण-पश्चिम की ओर से हमला किया और अत्यंत भारी क्षति उठाते हुए सोवियत सैनिकों का प्रतिरोध तोड़ दिया तथा क्रोमी पर फिर से कब्जा कर लिया। अगले दिन क्रोमी के रक्षकों ने नई कुमक के साथ वीरतापूर्ण हमला करके सफ़ेद गार्डों को नगर से खदेड़ दिया। लेकिन उससे अगले दिन द्रोज़्दोव फिर आगे बढ़ा, एक स्थान पर मोर्चा भेदने में सफल रहा, जिससे सेना के घिरने का खतरा पैदा हो गया और सोवियत टुकड़ियों को उत्तर की ओर हटना पड़ा। क्रोमी पर तीसरी बार सफ़ेद गार्डों का कब्जा हो गया।

दो हफ्तों तक लगातार होती रही लड़ाई से प्रहारक दल की सारी कुमक खत्म हो गई और उसकी टुकड़ियां विशाल मोर्चे पर जहां-तहां बिखर गई। इस बीच ओर्योल के पास हुई पराजय के बाद सफ़ेद गार्डों ने दक्षिणी मोर्चे के केन्द्रीय भाग के खिलाफ़ इस इरादे से अपनी सारी शक्ति जमा की कि प्रहारक दल को विखंडित करके उसका सफाया कर दें और फिर से ओर्योल पर कब्ज़ा कर लें।

लेकिन शत्रु का इरादा समझ लिया गया। कमान ने यह योजना बनाई कि केन्द्रीय भाग में लड़ रही दोनों सेनाएं शत्रु के ओर्योल और क्रोमी दलों के खिलाफ़ स्पष्टतया निश्चित दिशाओं में ही प्रहार करें तथा अलग-अलग टुकड़ियों में नहीं, बल्कि विशाल दलों में आगे बढ़ें।

२४ अक्तूबर को प्रहार की प्रमुख दिशा में शानदार जीत हुई: बुद्योन्नी की अश्वारोही टुकड़ियों और आठवीं सेना की टुकड़ियों ने वोरोनेज से शत्रु को खदेड़ दिया। इससे अब वालंटियर सेना के चंडावल में प्रहार करना सम्भव हो गया और इस तरह मोर्चे के केन्द्रीय भाग में लंबी खिंच गई लड़ाई में निर्णायक सहायता दी जा सकती थी।

वोरोनेज के पास हुई लड़ाई विशिष्ट ही थी। यह अश्वारोही सेनाओं का बड़ा भारी टकराव था, जिसके बाद सफ़ेद गार्डों के लिए यह स्पष्ट हो गया कि रिसाले में उनकी श्रेष्ठता के दिन चुक रहे हैं।

अक्तूबर के आरम्भ में वोरोनेज पर कब्जा करके श्कुरो की कैवेलरी कोर उत्तर की ओर बढ़ने लगी। आठवीं सोवियत सेना के नियंत्रणाधीन इलाकों पर चढ़ाइयां करते हुए मामोन्तोव श्कुरो का समर्थन कर रहा

था। आठवीं सेना के उत्तरी (दायें) पार्श्व पर मज़बूत मोर्चाबंदी नहीं थी, सो सफ़ेद गार्डों की कैवेलरी दक्षिणी मोर्चे के चंडावल के इलाके में दूर तक पहुंच सकती थी।

श्कुरो और मामोन्तोव का रास्ता अगर कोई रोक सकता था, तो वह थी बुद्योन्नी की कैवेलरी कोर।

परन्तु कमान का वह पुराना आदेश बदला नहीं गया था, जिसके अनुसार इस कोर को दोन के इलाके में बढ़ना था।

बुद्योन्नी श्कुरो के उत्तर की ओर बढ़ने के खतरे को ताड़ गया था, सो उसने दृढ़ संकल्प के साथ अपने रिसाले को मोड़ा और वोरोनेज पर सफ़ेद गार्डों का कब्ज़ा होने से पहले ही उत्तर की ओर बढ़ने लगा, शत्रु के रिसाले से टक्कर लेने का मौका ढूंढ़ने लगा। बाद में हुई घटनाओं से यह सिद्ध हो गया कि बुद्योन्नी का यह निडर और उत्तरदायित्वपूर्ण कदम बिल्कुल उचित था।

शीघ्र ही दक्षिणी मोर्चे की क्रांतिकारी सैनिक परिषद ने बुद्योन्नी को यह निर्देश दिया कि वह वोरोनेज के इलाके में शत्रु के रिसाले से टक्कर ले और आठवीं सेना को शीघ्रातिशीघ्र दोन तक पहुंचने में सहायता प्रदान करे। बुद्योन्नी ने जल्दी से अपनी कोर वोरोनेज के उत्तर-पूर्व में जमा कर ली।

अपनी टुकड़ियों को इस कार्रवाई के लिए तैयार करते हुए तथा सफ़ेद दलों की अवस्थिति की टोह लेते हुए बुद्योन्नी ने एक चतुर चाल चली। उसने श्कुरो की तार की लाइन के साथ अपनी लाइन जोड़ दी और बुद्योन्नी की प्रथम कैवेलरी कोर को एक भूठा आदेश भेजा। इस आदेश में वोरोनेज पर हमले की तैयारी तथा दक्षिण-पूर्व की ओर से प्रमुख प्रहार करने की चर्चा थी, जबकि वास्तव में यह प्रहार उत्तर-पूर्व की ओर से किया जाना था। श्कुरो की कैवेलरी कोर के कमांडर इस भ्रम में थे कि "लाल सेना का आदेश" उनके हाथ लगा है और यह सच्चा है।

श्कुरो को डर था कि कहीं पहलकदमी उसके हाथों से न निकल जाये, सो बारह कैवेलरी रेजीमेंटें लेकर वह हमला करने बढ़ा। आरम्भ में वह बुद्योन्नी की दो डिवज़नों में से एक को पीछे हटाने में सफल रहा, लेकिन फिर दूसरी डिविज़न उसकी रेजीमेंटों पर बगल से और

पीछे से टूट पड़ी। इस चाल से ही लड़ाई का फ़ैसला हुआ। बुद्योन्नी ने सफ़ेद गार्डों की कुबान कज्जाक डिविजन को धूल चटाई, पैदल रेजीमेंट का सफ़ाया कर दिया तथा वोरोनेज के पूर्वी बाह्यांचल तक शत्रु का पीछा किया।

इसके बाद बुद्योन्नी ने नया व्यूह रचा। वोरोनेज पर उत्तर की ओर से हमला करने के लिए उसने अपनी प्रमुख टुकड़ियां जमा कीं। बाकी टुकड़ियों को दक्षिण-पश्चिम की ओर से नगर को घेरने का काम सौंपा गया। सारा तोपखाना और बहुत भारी संख्या में मशीन-गनें इन टुकड़ियों की मोर्चेबंदी पर ही लगाई गईं।

नगर के लिए निर्णायक युद्ध के दिन सुबह तड़के दुश्मन पर ज़बर-दस्त गोलाबारी की गई, और बुद्योन्नी की एक डिविज़न ने घोड़ों से उतरकर वोरोनेज नदी पार की। नगर के पूर्व में मुठभेड़ होने लगी और धीरे-धीरे सफ़ेद गार्डों की प्रमुख टुकड़ियां इसमें फंस गईं। उधर बुद्योन्नी की प्रमुख टुकड़ियां उत्तर और उत्तर-पश्चिम से तेज़ी से नगर की ओर बढ़ने लगीं। सफ़ेद गार्डों को ऐसे प्रहार की ज़रा भी उम्मीद न थी। श्कुरो के पास इसके सिवा और कोई चारा न था कि वह पीछे हटने का हुक्म दे। उसका रिसाला तोपें और मशीनगनें छोड़कर दोन की ओर दौड़ चला।

दोन और वालंटियर रिसालों की वोरोनेज के पास हुई पराजय के एक दिन बाद प्रहारक दल ने, जिसकी टुकड़ियां ओर्योल से हटकर क्रोमी के इलाके में आ चुकी थीं, फिर से हमला किया। दो दिन की लड़ाई में लाल सेना ने ओर्योल – क्रोमी – द्मीत्रोव्स्क मोर्चे के तीनों भागों पर कुतेपोव की कोर के दांत खट्टे कर दिये, और इस तरह मास्को पहुंचने की देनीकिन की उम्मीदों को दफ़ना दिया। प्रहारक दल ने रात को हमला करके सफ़ेद गार्डों को क्रोमी से खदेड़ दिया; दल के पश्चिम की ओर जो डिविज़न थी उसने द्रोज्दोव की डिविजन को हराकर द्मीत्रोव्स्क में प्रवेश किया; प्रहारक दल से दाईं ओर के मोर्चे पर लड़ रही डिविजनों ने रेल लाइन के साथ-साथ दक्षिण की ओर बढ़ते हुए ओर्योल के पास कोर्नीलोव की टुकड़ियों को रौंद डाला।

इस तरह दक्षिणी मोर्चे के सारे केन्द्रीय भाग में सफ़ेद गार्ड पीछे हटने लगे।

साथ ही हर नई लड़ाई में सोवियत रिसाले को अधिकाधिक सफलता मिलने लगी। दोन नदी पार करके बुद्योन्नी ने श्कुरो के रिसाले को एक बार फिर धूल चटाई और कूर्स्क की दिशा में कस्तोर्नया स्टेशन के इलाके में खदेड़ दिया। यहीं पर नवम्बर के मध्य में, जब बहुत ही जल्दी आ गये जाड़े की बर्फ़ीली आंधियां पूरे ज़ोरों पर थीं, बुद्योन्नी ने अश्वारोही और पैदल सैनिकों के संयुक्त प्रहार से सफ़ेद गार्डों की धज्जियां उड़ा दीं।

देनीकिन के वालंटियर पीछे क्या हट रहे थे, दुम दबाकर भाग ही रहे थे। ऐसे हालात में सोवियत रिसाले द्वारा, जिसे अब वोरोशीलोव और बुद्योन्नी की कमान में प्रथम अश्वारोही सेना का रूप दिया गया था, शत्रु का पीछा किया जाना निर्णायक महत्व रखता था। सैनिकों में उत्साह तथा जीत में विश्वास बहुत बढ़ गया था। आगे बढ़ाये गये हर कदम के साथ वे लाभ अधिक स्पष्ट होते जा रहे थे, जो हमले की रणनीतिक योजना में निहित थे।

वोरोनेज के इलाके से प्रमुख प्रहार के फलस्वरूप सेनाओं का प्रमुख दल (समन्वित रिसाला और पैदल टुकड़ियां) उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर, दोनेत्स के मैदान में पहुंच रहा था। साथ ही ओर्योल के इलाके में किये गये प्रहार से दायें पार्श्व की सेना के लिए कूर्स्क से ख़ार्कोव की ओर दक्षिण का रास्ता खुल गया था।

दोनेत्स के मैदान में सभी मज़दूरों ने मिलकर सोवियत सेना को जिताया। इन जीतों का नतीजा यह हुआ कि दोन कज़्ज़ाक रिसाले और वालंटियर सेना के संधि-स्थल पर कार्यरत अश्वारोही सेना अब सबसे छोटे रास्ते से अज़ोव सागर की ओर बढ़ रही थी। और इससे योजना के पहले चरण की पूर्ति सुनिश्चित होती थी: देनीकिन की सेना को दो भागों में काटा जा रहा था: वालंटियरों को क्रीमिया की ओर तथा द्नीप्र के दायें तट की ओर खदेड़ा जा रहा था, और कज़्ज़ाकों को दोन के निचले भाग तथा उत्तरी काकेशिया की ओर।

नवम्बर और दिसम्बर में द्नीप्र से वोल्गा तक के विशाल विस्तार में देनीकिन की जगह-जगह हार हो रही थी। लाल सेना उक्राइना को आज़ाद करा रही थी। दक्षिण-पूर्वी मोर्चा आगे बढ़ने लगा। कीरोव की कमान में अस्त्राखान की ओर से लाल सेना उत्तरी काकेशिया

28*

में जमा सफ़ेद टुकड़ियों का सफ़ाया करने चली। "दक्षिणी रूस की सशस्त्र सेनाओं" पर पूर्ण विजय का दिन निरंतर निकट आता जा रहा था।

१९१९ के वसंत में देनीकिन ने कोल्चाक को एक पत्र में लिखा था: "सबसे बड़ी बात यह है कि हम वोल्गा पर न रुकें, बल्कि मास्को की ओर, बोल्शेविज़्म के हृदय की ओर बढ़ते जायें। मुझे आशा है सरातोव में आपसे मिलेंगे..."

न सरातोव में, न कहीं और ही देनीकिन कोल्चाक से मिल पाया। कोल्चाक को वोल्गा पार के क्षेत्र में ही हरा दिया गया, उसकी फ़ौजें उराल के पार भाग गईं।

एंटेंट के दूसरे (दक्षिणी) अभियान की सफलताएं जब चरम बिंदु पर थीं, तब देनीकिन के सेनापतियों को अपनी जीत में पूरा विश्वास था। वे "अधिक से अधिक दिसम्बर के अंत तक, १९१९ के क्रिस्मस तक..." मास्को पधारने की सोच रहे थे, जैसा कि ओर्योल पर कब्जा करने के बाद जनरल माइ-मायेव्स्की ने कहा। लेकिन जब क्रिस्मस आया, तो वालंटियर सेना के आधे सैनिक हताहत हो चुके थे, सफ़ेद गार्डों को पोल्तावा से परे खदेड़ा जा चुका था, दोनेत्स के उस मैदान में वे सिर पर पांव रखकर भाग रहे थे, जहां के पूंजीपतियों ने राजधानी में सबसे पहले प्रवेश करनेवाली वालंटियर रेजीमेंट को जार के ज़माने के दस लाख रूबल का इनाम देने की घोषणा की थी।

ओर्योल और वोरोनेज वे पहले उत्तोलक थे, जिन्होंने उन्नीस सौ उन्नीस की घटनाओं का पलड़ा सोवियत रूस की ओर झुकाया तथा देनीकिन के "मास्को अभियान" पर एंटेंट की बाज़ी पलट दी।

दोन कज़्ज़ाक रिसाले की चढ़ाइयों के साथ आया मामोन्तोव तथा चुनिंदा अफ़सर डिविज़नें लिये कुतेपोव ही वे दो सफ़ेद गार्डी जनरल थे, जो भीतरी रूस की सीमा तक पहुंचे, बल्कि उससे आगे भी बढ़ आये। वे तूला से कोई डेढ़-दो सौ किलोमीटर दूर आकर ही रह गये – मामोन्तोव दक्षिण-पूर्व से तथा कुतेपोव दक्षिण-पश्चिम से।

एंटेंट के बूते पर देनीकिन रूस के भीतरी भागों की ओर बढ़ चला था, लेकिन इस अभियान का अंत यह हुआ कि किसान समूहों

ने दृढ़तापूर्वक सोवियतों का समर्थन किया। सबसे नाज़ुक घड़ी में किसानों ने क्रांति के सबसे खतरनाक शत्रु देनीकिन के विरुद्ध क्रांति का पक्ष लिया। इस अभियान का अंत यह हुआ कि मज़दूरों ने न केवल अपनी लाल सेना के लिए नई-नई रेजीमेंटें तैयार कर दीं, बल्कि सफ़ेद गार्डों के कब्ज़े में जो इलाके थे उनमें भी छापामार आंदोलन के लाल झंडे उठाये। न केवल उन इलाकों में जो सोवियतों की सत्ता में थे, बल्कि *उन इलाकों में भी जहां सफ़ेद गार्डों का राज था, आम जनता को* क्रांति की सच्चाई में विश्वास था और अपने सबसे श्रेष्ठ, सबसे शक्तिशाली और सबसे समझदार भाग – आबादी के मेहनतकश भाग पर भरोसा था, क्योंकि जनता मानती थी कि यह भाग – सर्वहारा वर्ग ही – जनता को न्याय दिलायेगा, नया, बेहतर जीवन बनायेगा।

जनवरी के पहले दिनों में ही अश्वारोही सेना ने देनीकिन का मोर्चा तोड़ दिया, तगनरोग नगर के पास उसे बुरी तरह पराजित किया और फिर रोस्तोव के पास सफ़ेद गार्डों के भीषण प्रतिरोध को कुचलकर नगर में प्रवेश किया।

वालंटियर सेना बुरी तरह पिट चुकी थी और अब वह देनीकिन की प्रमुख शक्ति न रही थी। देनीकिन ने अब कज़्ज़ाक टुकड़ियों को अपनी प्रमुख शक्ति की भूमिका सौंपी। इन्हीं से उसे अपने उद्धार की उम्मीद थी, ये ही उसका बचा-खुचा आसरा थीं।

परन्तु यह नये वर्ष की, उन्नीस सौ बीस की बात है, जो नवोदित सोवियत रूस की प्रगति में एक नया चरण था, और उन्नीस सौ उन्नीस के आग्नेय वर्ष में तपकर ही सोवियत रूस इस चरण में पहुंचा था।

३६

नवम्बर की आखिरी तारीखों में एक दिन सुबह पाव्लिक ने बहन से पैसे मांगे। जब आनोच्का यह पूछने लगी कि वह पैसों का क्या करेगा, तब उसने बताया कि पिछले कई दिनों से लड़के आपस में पैसे जमा करके आर्सेनी रोमानोविच के लिए दूध खरीद रहे हैं।

इस तरह दोरोगोमीलोव की बीमारी का पता चला। आनोच्का ने किरील को यह बताया और उसने अपनी मां को।

"हमें शायद कुछ मदद करनी चाहिए न?"

"हां... करनी तो चाहिए," वेरा निकान्द्रोव्ना ने जवाब दिया।

परन्तु किरील को उसके स्वर में अनिश्चितता का पुट लगा। वह स्वयं भी यह तय नहीं कर पा रहा था कि इस व्यक्ति के प्रति उसका रुख कैसा होना चाहिए।

"रागोजिन उसका आदर करता है।"

वेरा निकान्द्रोव्ना चुप रही। वह समझ गया कि किसी व्यक्ति का आदर करने के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह भाता भी हो। उसे यह कहने में कोई तुक नहीं दिखी कि आनोच्का दोरोगोमीलोव को बहुत ही नेक और उदारमना आदमी मानती है। वेरा निकान्द्रोव्ना स्वयं आनोच्का की बातों से यह जानती थी। इसका एक ही उत्तर हो सकता था: किसी आदमी का पसन्द या नापसन्द होना उसके बारे में दूसरों की राय पर निर्भर नहीं करता। इज़्वेकोव परिवार और आर्सेनी रोमानोविच के सम्बन्ध इतने व्यक्तिगत रहे थे कि बाहर का कोई आदमी इनमें कुछ परिवर्तन नहीं ला सकता था। और क्या परिवर्तन की आवश्यकता भी थी?

"सारी बात इतनी पुरानी है और फिर कुछ भी साफ़ नहीं है। अब बूढ़े के लिए मन में क्या मैल रखना," किरील ने कहा।

"मेरे मन में उसके लिए कब से कोई मैल नहीं। और पहले भी उसे देखकर दुखद यादें ही मन में उठती थीं, और कुछ नहीं।"

"शायद वह भी यह जान ले तो अच्छा रहे?"

"मैं आनोच्का से बात करूंगी। वह राज़ी हुई तो हम उसके पास हो आयेंगी।"

"बेशक वह राज़ी है," किरील के मुंह से निकला पर तभी उसे यह ख्याल आया कि ऐसा जवाब तो आनोच्का ही दे सकती है और वह चुप हो गया।

शरद ऋतु के पहले दिनों से ही दोरोगोमीलोव की तबीयत ख़राब रहने लगी थी। उसे कोई बीमारी नहीं थी, बस तबीयत कुछ ढीली-ढीली थी। उन दिनों ही, जब उसने अपना पुराना कोट उतारकर फ़ौजी वर्दी पहनने का इरादा किया था, जब वह फ़ौजी दफ़्तरों में नये काम के बारे में पूछताछ करने लगा था और सहसा अपनी सारी किताबें उसने दे डाली थीं, तभी वह बीमार पड़ गया।

कमज़ोरी का पहला दौरा उसे उस दिन महसूस हुआ, जब घर से किताबें ले जाई जा रही थीं। एक साथ दो ठेले आये, अभी उन्हें पूरी तरह से लादा भी न गया था कि आधी अलमारियां खाली हो गईं। स्याह धूल कमरे में उड़ती फिर रही थी, मानो यह विरोध करते हुए कि उसकी शांति में क्यों विघ्न डाला गया। एक अजीब बात हुई: सबसे बड़ी अलमारी में से एक ओर से किताबें निकाली ही थीं कि सारी अलमारी ढह गई। धूल का गुबार छत तक उठा, किताबों के ढेर पर चुहियां चीं-चीं करती दौड़ने लगीं।

दोरोगोमीलोव से यह विनाश देखा न गया, वह सोफ़े पर लेट गया। लेटने पर उसे कमज़ोरी का स्पष्ट अहसास हुआ – उसके हाथ-पांव कांप रहे थे। बाकी बची किताबें जब लेने आये, तब भी वह नहीं उठा।

दोरोगोमीलोव ने अपनी यह निधि एक पुस्तकालय को भेंट की थी, जो बच्चों के लिए वाचनालय खोल रहा था। बच्चों के लिए ही उसने जो किताबें जमा की थीं, उनके इससे अच्छे उपयोग की वह कल्पना भी नहीं कर सकता था। और फिर वह जिस अस्पष्ट से किन्तु साहसपूर्ण अभियान का स्वप्न देख रहा था, उसके लिए अपना बोझ यथासम्भव हल्का करना चाहता था। परन्तु जब किताबें चली गईं, तो उसे सूनापन कचोटने लगा, हालांकि बरसों से उसे कभी सूना नहीं लगा था। पहले जो घटनाएं उसके मन को विचलित करती थीं, अब वह उनके प्रति उदासीन हो गया। शायद इसका कारण यह था कि इन घटनाओं से जिस खतरे की आशंका थी, वह टल गया था।

लड़के अभी भी उसके यहां आते रहते थे, लेकिन उसे लगता था कि अब किताबें न रहने से उसके घर में उनकी दिलचस्पी कम हो रही है। उसे पाव्लिक और वीत्या में सुलह करानी पड़ी, क्योंकि पाव्लिक वाचनालय के पक्ष में था और वीत्या इसके खिलाफ़।

आर्सेनी रोमानोविच की तबीयत अक्सर खराब रहने लगी। इसके कई कारण थे: खाना ढंग का नहीं मिलता था, शरद ऋतु की ठंड और नमी भी अपना काम कर रही थीं, और सबसे बड़ी बात – बुढ़ापा आ गया था। अचानक निमोनिया ने उसे धर दबोचा।

दोरोगोमीलोव के नये प्रशंसक वान्या रागोज़िन ने अपने पिता को इस मुसीबत के बारे में बताया। डाक्टर देखने आया, छकड़ा भर लकड़ियां भेजी गई, और लड़के बारी-बारी से रोगी की सेवा-टहल करने लगे।

दोरोगोमीलोव की रातें पहले कभी भी इतनी लंबी न हुई थी, घर भी कभी इतना बड़ा न था। बीमारी धीरे-धीरे ही चल रही थी। कमजोरी तथा खांसी के साथ छाती में होनेवाली पीड़ा के अलावा उसे और कुछ महसूस नहीं हो रहा था। हां, अनिद्रा ने खासा परेशान कर रखा था।

उसके विचार छोटी-छोटी बातों में उलझते रहते। कभी उसकी नजरें कमरे में पड़ी सैकड़ों चीजों में से किसी एक पर टिक जातीं और फिर यादों का सिलसिला शुरू हो जाता। ये सब चीज़ें, जो कभी उसके लिए जरूरी थीं, उसके जीवन से वैसे ही जुड़ी हुई थीं, जैसे पुच्छलतारे की पूंछ। इन सबकी अपनी-अपनी "जीवन कथा" थी। वह लेटा-लेटा यह याद करने लगता कि यह कैंची कितने बरसों से उसके काम आ रही है। कैंची इतनी खस्ताहाल थी कि दूसरा कोई आदमी उससे कुछ नहीं कर सकता था, पर दोरोगोमीलोव के हाथों में वह चीर-फाड़ के लिए और कीलें निकालने के लिए भी काम आती, यहां तक कि जब वह विचारों में खोया कोई धुन गुनगुनाता तो कैंची साज़ का भी काम देती, जिसे वह गुनगुनाते हुए खनकाता जाता।

सहसा उसे कोई विरली पुस्तक याद आ जाती, और यह याद भी पुस्तक के विषय से इतनी नहीं जुड़ी होती थी, जितनी कि उसकी किसी खास निशानी से, जो उसे सैकड़ों अन्य पुस्तकों से अलग करती थी – कहां खरीदी गई, कौन से दिन, किसने जिल्द बांधी, कहां रखी थी, क्यों आखिर तक पढ़ी नहीं गई।

दोरोगोमीलोव विरले ही कभी कोई पुस्तक अंत तक पढ़ता था, पुस्तकें तो क्या, दूसरे काम भी वह शुरू करके विरले ही खत्म करता था। कभी कुछ बनाने लगता, और देखता कि हां, चीज़ बन रही है, तो बस उसे अधूरी छोड़ देता, दूसरे किसी काम में लग जाता। कोई किताब पढ़ने लगता, हर्षोल्लास से भरपूर हो उठता, कल्पना के घोड़े दौड़ाने लगता और बस किताब धरी ही रह जाती। वह मानो अपनी

कल्पना में स्वयं पुस्तकों के अंतिम अध्याय लिखता था, इसलिए पुस्तकों की पहली पंक्तियां ही उसे याद रहती थीं, जैसे लोग हमें उनके चेहरों से याद रहते हैं। यही कारण था कि उसकी वस्तुओं का, उसकी पुस्तकों का संसार कहीं ख़त्म नहीं होता था, वह अंतहीन था। सो अब यह समझ नहीं आता था कि इस अंतहीनता का अंत क्यों हो रहा है? पुस्तकें चली गई थीं, शायद चीज़ें भी चली जायेंगी, और फिर वह स्वयं भी चला जायेगा।

जब आनोच्का और वेरा निकान्द्रोव्ना उससे मिलने आईं, तब तक वह बहुत कमज़ोर हो गया था। पर उनके आने पर वह उत्तेजित हो उठा, वाचाल हो गया और उसकी स्वभावगत बेचैनी लौट आई, हालांकि वह केवल उसके चेहरे के हाव-भाव और हाथों की गति में ही व्यक्त हो सकती थी। वह आनोच्का की ओर देखे जा रहा था, बस कभी चोरी-चोरी दूसरी मेहमान पर तिरछी नजर डाल लेता, पर वेरा निकान्द्रोव्ना को अपने रोम-रोम से यह अहसास हो रहा था कि दोरोगोमीलोव को उसके बोलने की प्रतीक्षा है। वह उपयुक्त शब्द नहीं ढूंढ पा रही थी। बूढ़े को देखकर वह स्तब्ध रह गई थी – उसका ज्वर से लाल चेहरा बालों के चौखटे में जड़ा हुआ था, जो न काले ही रहे थे और न अभी पूरी तरह सफ़ेद हुए थे।

आनोच्का ने भोलेपन से पूछा कि अकेले बैठे जी उदास होता होगा? दोरोगोमीलोव ने छोटी सी एक सांस में, जितनी जल्दी हो सकता था, नकारा:

"मैं कभी अकेला नहीं होता। इतने लड़के हैं..."

फिर अच्छी तरह सांस ले चुकने पर वह धीरे-धीरे बोलने लगा:

"अकेलापन तभी खलता है, जब किसी को तुम्हारी ज़रूरत न हो, तुम सड़क पर खड़े हो और सब तुम्हारे पास से गुज़रते जायें... यह तो बहुत ही अच्छी बात है कि अपना एक कोना हो, और आदमी कभी कभार दरवाजा बंद करके उन लोगों से आराम पा सके, जिन्हें उसकी ज़रूरत है।"

"जब ठीक हो जायेंगे, तब बेशक ताला लगाकर बैठना, और हम से आराम करना, पर अभी तो आप की देखभाल का प्रबन्ध किया जाना चाहिए," आनोच्का ने कहा।

"मुझे कोई परेशानी नहीं है। आपका पाव्लिक आग जला देता है। वान्या रागोज़िन बर्तन धोता है। लड़के अपनी ओर से सब कुछ कर रहे हैं।"

"लड़के भला क्या समझते हैं! आपको तो कोई देखभाल करनेवाली चाहिए। हम इन्तजाम कर देंगी, है न वेरा निकान्द्रोव्ना?"

दोरोगोमिलोव ने वेरा निकान्द्रोव्ना पर सहमी नजर डाली।

"नहीं, नहीं! मैं तो अब काफ़ी ठीक हो गया हूं! मुझे नौकरी करनी है!"

"नौकरी कहीं भागी नहीं जाती," बड़ों के से अंदाज़ में आनोच्का ने कहा।

उसकी लाल पड़ी आंखों में मुस्कान दौड़ गई और वह बूढ़ों की भांति जिंदादिली दिखाते हुए, पर साथ ही मानो क्षमा-याचना करते हुए बोला:

"अभी तो मैं लड़ने जाऊंगा।"

"बिल्कुल पाब्लिक जैसी बातें करते है," आनोच्का हंसी।

"और फिर रिटायर होकर कोई ऐसा काम करूंगा, जिससे मन को आनन्द मिले।"

"यह तो बहुत अच्छी बात है! ज़रा बताइये तो क्या काम करेंगे?"

"मछली पकड़ा करूंगा।"

"पर यह तो वक्त काटना है, कोई काम थोड़े ही है।"

"क्यों नहीं? इससे दो पैसे भी कमाये जा सकते हैं।"

"तब तो आप मछेरे होंगे, यों ही मछली पकड़नेवाले नहीं।"

"मछेरा होना भी अच्छा है, पर आनन्द तो बस यों ही मछली पकड़ने में है।"

उसे थकावट महसूस होने लगी थी। उसके गाल पीले पड़ गये थे, आंखों में उदासी गहरा रही थी।

"आपका क्या ख्याल है, कोई दिन ऐसा भी आयेगा, जब पुरानी किताबें बेचनेवाले नहीं रहेंगे?" सहसा उसने पूछा।

"आप क्या किताबें बेचना चाहते हैं? इससे अच्छा तो लाइब्रेरियन बन जाइये।"

"नहीं, किताबें बेचना ज्यादा अच्छा है, वह भी पुरानी किताबें। पुरानी किताबें बेचनेवाले को कोई किताब अच्छी लगती हो... तो वह उसे ऐसे आदमी को ही देगा... जो उससे भी बढ़कर... उस किताब की कद्र कर सकता हो... लाइब्रेरियन होना भी अच्छा है... पर उसे सबकी मर्ज़ी पूरी करनी होती है।"

"हां, हां, आप किताबें बेचना," आनोच्का बड़े जोश से बोली। "मैं आपके पास आया करूंगी, पुरानी किताबों के ढेर उलटा-पुलटा करूंगी!"

"पाव्लिक के साथ आना। लड़कों को... पढ़ने का शौक... कद्र करना..."

उसके लिए बोलना मुश्किल हो रहा था, वह मानो बेहोशी में बुदबुदा रहा था।

वीत्या कमरे में आया, एक ओर को बैठकर सख्ती से औरतों की ओर देखने लगा। वे उठ खड़ी हुईं।

वेरा निकान्द्रोव्ना ने दोरोगोमीलोव पर झुककर जल्दी से उसका हाथ दबाया और वही एकमात्र शब्द कहे, जो उसके इस विश्वास को व्यक्त कर सकते थे कि वह अब कभी नहीं उठेगा।

"जैसे ही आप ठीक हो जायेंगे, हमारे घर आना, ज़रूर आना!"

"आप आईं... बहुत अच्छा किया," क्षीण स्वर में उसने कहा और भौंहें सिकोड़कर फड़फड़ाती पलकें ज़ोर से भींचीं।

इसके हफ़्ते भर बाद रात को अपने अजीब से घर में अकेला सोया-सोया वह मर गया। वान्या रागोज़िन जब सुबह आया, तो उसका शरीर ठंडा पड़ चुका था। वान्या मृतकों से नहीं डरता था—अपनी अल्पायु में वह कई मौतें देख चुका था। और फिर दोरोगोमीलोव के चेहरे पर पहले की ही भांति सहृदयता की छाप थी। बस उसके दायें हाथ की मुट्ठी बंधी हुई थी, मानो वह किसी को धमकी दे रहा हो या किसी से हाथ मिला रहा हो। वान्या पल भर को उसके पास खड़ा रहा, और फिर पिता को यह बुरी खबर सुनाने दौड़ा गया।

थी तो यह विचित्र बात, पर इस एकाकी व्यक्ति को दफ़नाने के लिए बहुत से लोग जमा हुए। इनमें छोटे-छोटे लड़कों से लेकर फ़ौजी ओवरकोट और विद्यार्थियों की बदरंग टोपियां पहने नौजवान तक थे। इनमें से ज़्यादातर बचपन के खेलों से एक दूसरे को जानते थे। परन्तु ताबूत के पीछे बड़ी उम्र के भी बहुत से लोग चल रहे थे, जो एक दूसरे को नहीं जानते थे, लेकिन इस घड़ी ने उन्हें कुछ बातें एक समान समझनेवाले लोगों के एक सूत्र में बांध दिया था। बेशक, यहां दोरोगोमीलोव के चहेतों के रिश्तेदार भी थे—लीज़ा, पाराबुकिन, आनोच्का।

रागोज़ीन भी था, जो अर्थी के पीछे-पीछे ही चल रहा था। उसने ही दफ़नाने का सारा बंदोबस्त किया था, जो कि इन दिनों खासा झंझट का काम था।

छोटे शहरों में राह चलतों का यह आम सवाल "कौन गुज़र गया?" इन निष्ठुर दिनों में अब कम ही सुनने में आता था। मौतें बहुत हो रही थीं, सबको एक भांति ही दफ़नाया जाता था, अंतर बस इतना ही होता कि कुछ ताबूतों पर लाल रंग किया होता, कुछ ऐसे ही होते।

पर यहां अर्थी के पीछे चल रहे लोगों की संख्या देखकर कुछ कौतूहली रुक जाते, और पूछनेवाले यह समझ ही न पाते कि एक साधारण से व्यक्ति को दफ़नाने इतने लोग क्यों जा रहे हैं।

"कौन था? कोई मास्टर-वास्टर था क्या?"

"नहीं, मास्टर नहीं, ऐसे ही किसी दफ़्तर में काम करता था।"

"तो फिर इतने लड़के क्यों जा रहे हैं?"

हां, कोई-कोई औरत तुरन्त ही समझ जाती:

"दोरोगोमीलोव? अरे, वह झबरा?"

"हां, वही।"

"उस पगले को दफ़ना रहे हैं।"

"अच्छा-आ! तो तेरे दिन भी पूरे हो गये..."

इस तरह इस बात का कारण समझाया जाता कि इतने लोग क्यों हैं, क्योंकि पागल व्यक्ति साधारण व्यक्ति से अधिक ही दिलचस्प माना जाता है।

कब्रिस्तान में सब लोग कब्र के इर्द-गिर्द झुंड बनाकर खड़े हो गये। तेज हवा चल रही थी, जो रेत से चुभते हिमकण उड़ा रही थी, परन्तु फिर भी सब नंगे सिर खड़े थे, यहां तक कि लड़के भी बड़ों का कहना नहीं मान रहे थे, टोपियां नहीं पहन रहे थे। जाने क्यों सबको यह उम्मीद थी कि अंतिम विदाई के क्षण कोई खास बात होनी चाहिए, इसलिए जब रागोज़िन ने कब्र के पास मिट्टी के ढेर पर पांव रखा, तो सब चौकन्ने हो गये।

वह क्षण भर को चुपचाप खड़ा रहा। यों ही वह कद में सबसे ऊंचा था, अब ढूह पर खड़ा हो जाने से सब उसे और भी अच्छी तरह

देख पा रहे थे, और उसके सामने से गंजे तथा कनपटियों पर लहराते घुंघराले बालों वाले सिर की ओर सबका ध्यान खिंच रहा था।

"एक ऐसे आदमी का देहांत हो गया है, जिसे हमारे शहर में बहुत से लोग जानते थे," उसने धीमे स्वर में बोलना शुरू किया। "आर्सेनी रोमानोविच को दफ़्तर के साथी जानते थे, जिनके साथ उन्होंने पैंतीस बरस तक काम किया। बच्चे जानते थे, जिनके साथ वह अपना खाली समय बिताते थे। हम उन्हें एक मेहनती, विनम्र व्यक्ति के नाते, बच्चों के मित्र के नाते जानते थे। लेकिन उनके जीवन का एक ऐसा पहलू भी था, जिसके बारे में बहुत कम लोग जानते हैं, हालांकि यह एक सबसे महत्वपूर्ण पहलू था, और अब उसके बारे में बताना चाहिए"।

रागोज़िन ने लाल ताबूत पर नज़र डाली, जिसके ढकने के पास हवा हिमकण उड़ा रही थी, और फिर सिर ऊंचा उठाया।

"आर्सेनी रोमानोविच दोरोगोमीलोव स्वप्नद्रष्टा थे," वह कुछ ज़ोर से बोला। "जीवन भर वह भविष्य का, मानवजाति के महान भविष्य का स्वप्न देखते रहे और इसकी बातें किये बिना बस इस भविष्य के निर्माण के लिए परिश्रम करते रहे, क्योंकि उन्हें इसमें विश्वास था, और इसके लिए काम किये बिना नहीं रह सकते थे।"

"अब तो बहुत सारे लोग यह जानते हैं कि ज़ारशाही के ज़माने में हमारे यहां, सरातोव में 'प्रकाशस्तम्भ' नामक एक समाज स्थापित किया गया था। इसका उद्देश्य था ज्ञान-प्रसार करना और यह खुले आम काम करता था। लेकिन साथ ही क्रांति से कोई पांच साल पहले हमारे नगर में बोल्शेविकों का एक मज़बूत भूमिगत संगठन बना था। इसमें तब दूसरे कामरेडों के साथ-साथ व्लादीमिर इल्यीच लेनिन की बहनें भी काम करती थीं। मज़दूरों और कारीगरों का अपनी पार्टी से लगाव तेज़ी से बढ़ रहा था, और युद्ध के दिनों में हम खुले आम बोल्शेविकों का अखबार छापते थे। वह प्रायः सारे रूस में जाता था। बेलोरूस में भी वह पढ़ा जाता था और मास्को व पेत्रोग्राद में भी। लेकिन पुलिस ने अखबार बंद कर दिया। तब बोल्शेविक जनता तक अपनी बात पहुंचाने के दूसरे रास्ते खोजने लगे। इसके लिए 'प्रकाशस्तम्भ' का भी उपयोग किया गया, इस समाज में पार्टी की एक इकाई गठित हुई। कारखानों,

अध्ययन मण्डलियों और गैरिजन में क्रांतिकारी प्रचार के काम के लिए 'प्रकाशस्तम्भ' एक कानूनी आड़ बन गया। इस काम का नतीजा तब सामने आया, जब क्रांति शुरू हुई। हमारे प्रचार की बदौलत गैरिज़न के साठ हजार सैनिकों ने फ़रवरी और अक्तूबर क्रांतियों के दिनों में बहुत बड़ी भूमिका अदा की। फ़रवरी क्रांति के थोड़े दिन बाद ही 'प्रकाश-स्तम्भ' के कार्यालय में हमारी पार्टी समिति निर्वाचित की गई..."

वीत्या पहले तो बड़े ध्यान से सुनता रहा, पर फिर उसे लगने लगा कि प्योत्र पेत्रोविच की बातें आर्सेनी रोमानोविच से बहुत दूर चली गई हैं। भीड़ की वजह से वह एक क़ब्र के सलीब से सटा खड़ा था और मुश्किल से गर्दन मोड़कर टीन की पट्टी पर लिखे शब्द पढ़ रहा था।

"यहां अग्रिप्पीना रोदियोनोव्ना कलीन्निकोवा, गांव कोरोच्की, प्रदेश तूला, जिला अलेक्सीन्स्की की अस्थियां दफ़न हैं। हे प्रभु उसकी आत्मा को शांति दो, पुण्यात्माओं के लोक में वास दो।" और आगे, फिरोज़ी नीले अक्षरों में लिखा था: "अविस्मरणीय बेटी वेरा को मां और पिता की ओर से।"

जिला अलेक्सीन्स्की की अस्थियों पर वीत्या ने ज़्यादा विचार नहीं किया – यह कोई गम्भीर प्रश्न नहीं था: प्रत्यक्षतया इस स्थान की अस्थियां किसी तरह मृतक से सम्बन्धित थीं। परन्तु पुण्यात्माओं के लोक पर वीत्या सोच में पड़ गया। वह यह तय नहीं कर पा रहा था कि आर्सेनी रोमानोविच के लिए कौन से लोक की प्रार्थना करनी चाहिए, कौन-कौन से लोक होते हैं और कहां, और लोक में वास देने की विनती अगर भगवान से नहीं तो और किस से करनी चाहिए। यह एक गम्भीर प्रश्न था, क्योंकि इसका हल करके ही यह तय किया जा सकता था कि आर्सेनी रोमानोविच की क़ब्र पर क्या लिखा जाये। शायद ज़िला अलेक्सीन्स्की की अस्थियों की भांति उनके लिए भी पुण्यात्माओं का लोक ठीक रहेगा, पर शायद इससे भी अच्छा कोई लोक हो? प्योत्र पेत्रोविच जब बोलने ही लगे हैं, तो उन्हें इस गम्भीर प्रश्न का उत्तर देना चाहिए। वीत्या फिर से सुनने लगा।

"'प्रकाशस्तम्भ' की स्थापना से पहले भी आर्सेनी रोमानोविच क्रांतिकारियों की मदद करने आये थे," गरोज़िन कह रहा था। "लेकिन जब इस समाज में पार्टी की इकाई गठित हुई, तो आर्सेनी

रोमानोविच के साथ स्थायी सम्पर्क बनाया गया। उनका घर गुप्त भेंटों का स्थान बना। वह भूमिगत कार्यकर्ताओं को अपने यहां छिपाते थे। अपनी किताबों में, जिनमें कई उन्होंने जानबूझकर यों ही जमा की थीं, इस रद्दी के ढेर में वह क्रांतिकारी साहित्य छिपाते थे। यह काम वह इतने कमाल से करते थे कि बरसों तक खुफ़िया पुलिस की आंखों में धूल झोंकते रहे और एक भी क्रांतिकारी, जिसे उन्होंने छिपाया, कभी पकड़ा नहीं गया। गोपनीयता की खातिर, वह खुद भी 'प्रकाशस्तम्भ' के सदस्य नहीं बने, उस समाज के, जो अनेक अन्य लोगों की भांति, उन्हें भी प्रकाश दिखाता रहा था। यहां जमा लोगों में बहुत से पुराने पार्टी सदस्य हैं, जिन्हें स्वर्गीय आर्सेनी रोमानोविच का क्रांति से पहले का काम अच्छी तरह याद है।

"कामरेडो! आर्सेनी रोमानोविच के बारे में मैं यह तो नहीं कहूंगा कि वह रात में चमकता एक ऊंचा प्रकाशस्तम्भ थे, जो समुद्र में चल रहे जलपोतों का मार्ग दर्शन करता है। लेकिन वह एक तिरेंदा थे, तिरेंदे की छोटी सी बत्ती, जो निरंतर जलती हुई चौड़ी नदी का मोड़ इंगित करती रहती थी। जो कोई भी इस नदी से होता हुआ भविष्य के महासागर की ओर जाता था, तूफ़ान की घड़ी और घने कुहासे में, वह तिरेंदे की यह उज्ज्वल बत्ती देखता था और इस विश्वास के साथ आगे बढ़ता था कि उसका ख्याल रखा गया है, कि वह अकेला नहीं है।

"अब हम सब इस महासागर में पहुंच गये हैं, और यह भविष्य के साथ-साथ वर्तमान भी बन गया है। इसका विस्तार असीम है और इसमें अभी न जाने कितने झंझावात, कितने तूफ़ान और आयेंगे। किन्तु अब इसमें सबके लिए प्रकाशस्तम्भ चमक रहे हैं, और यह मार्ग सबके लिए खुला है।

"मैंने शुरू में कहा कि आर्सेनी रोमानोविच स्वप्नद्रष्टा थे। यह बिल्कुल सच है, और बच्चे ही उनमें यह गुण सबसे अच्छी तरह देखते थे, जो अपने स्वभाव से ही स्वप्नद्रष्टा होते हैं। कहना न होगा कि आर्सेनी रोमानोविच का सपना अस्पष्ट सा था। सभी बच्चे उसमें अपनी-अपनी आकांक्षाएं, यों कहिये कि भविष्य का अपना सपना जोड़ते थे। हम कम्युनिस्ट निराकार, अस्पष्ट सपने नहीं देख सकते, क्योंकि हम उज्ज्वल भविष्य के सपने ही नहीं देखना चाहते, उसका निर्माण भी

करना चाहते हैं। और सुस्पष्ट लक्ष्य के बिना, ठोस कार्यक्रम के बिना तो निर्माण हो नहीं सकता। परन्तु हमारे कार्यक्रम में महासागर का वह विस्तार निहित है, जिसका होना सपनों के लिए आवश्यक है। यह वह विस्तार है, जो बच्चे की निष्कलंक कल्पना को, न्याय, सौंदर्य और सुख के संसार की कामना करनेवाली कल्पना को उड़ान की प्रेरणा देता है। हमें उस उत्साह के साथ, उस लगन के साथ सपने देखने चाहिए, जो बच्चे आर्सेनी रोमानोविच में पाते थे। हमें आर्सेनी रोमानोविच के जीवन से यह सीखना है कि सच्चा उत्साह, सच्ची लगन क्या है। परन्तु साथ ही हमें अपने बच्चों को सपनों को साकार करने का सही रास्ता भी दिखाना है। इस रास्ते पर चलते हुए, इस मार्ग पर बढ़ते हुए वे निश्शंक होकर वह सब नष्ट कर देंगे, जो हमारे लक्ष्य के मार्ग में, भविष्य की हमारी योजनाओं में बाधा बनता है। उन नौजवानों के साथ जो आज सोवियत जनतंत्र के लिए जूझ रहे हैं, हमारे बच्चे कम्युनिज़्म की ओर अग्रसर होंगे।

"विदाई के इन दो शब्दों को मैं एक वचन के साथ खत्म करना चाहता हूं। अभी कुछ दिन पहले हमारे मल्लाहों ने मुझे बताया कि लाल सागर में जा रहे जहाज़ों के इंजनों में कोयला झोंकनेवालों को यह लगता है कि बायलरों के पास इतनी गर्मी नहीं है, जितनी डेक पर। मैं यह कहना चाहता हूं कि हम बोल्शेविकों को यह लगता है कि नए संसार के लिए संघर्ष की कठिनाइयां पुरानी दुनिया की कूपमंडूकी अकर्मण्यता से आसान हैं। हम अपने बायलरों के पास से नहीं हटेंगे, डेक पर आराम करने नहीं जायेंगे – हमें वहां घुटन लगती है। और हम अपने मित्र आर्सेनी रोमानोविच को यह वचन देते हैं कि बायलरों की भट्ठियों के पास खड़े-खड़े भी हम सपने देखना नहीं छोड़ेंगे और अपने बच्चों को भी, जो उन्हें इतने प्यारे थे, सपने देखना सिखायेंगे, उन्हें भविष्य के प्रकाशस्तम्भों को कभी नजरंदाज न करना सिखायेंगे।"

बड़ा सा डग भरकर रागोज़िन ढूह से उतर आया।

उसके बाद दो और लोग बोले। लेकिन वे ज़्यादा नहीं बोले – सब कुछ कहा जा चुका था, और हवा भी तेज़ होती जा रही थी, लोग एक दूसरे से सटे जा रहे थे।

अभी कब्र सपाट भी नहीं की गई थी कि लोग जाने लगे। ट्राम

कब्रिस्तान तक नहीं आती थी, विश्वविद्यालय तक पैदल जाना था। कब्रिस्तान के सामने फैले मैदान में हवा तेज़ी से हिम के रस्से बटती वह रही थी, जो ट्राम के खम्भों के पास वगूलों से उठ रहे थे। कहीं-कहीं हवा ने ज़मीन से सारा हिम उड़ा दिया था और काले-काले चकत्ते उभर आये थे।

लड़के कब्र के पास खड़े-खड़े ठंड से अकड़ गये थे, और अब अपने ओवरकोटों के बाज़ुओं में या जेबों में हाथ डाले बड़ों से आगे-आगे जा रहे थे।

"देखो तो, समय कैसे बीतता है," वेरा निकान्द्रोव्ना ने आनोच्का से कहा, "पाव्लिक के बगल में वह लीज़ा का बेटा ही है न?"

"हां, वीत्या है।"

"पाव्लिक कितना बड़ा हो गया है!"

"हां। मुझे तो कभी-कभी विश्वास ही नहीं होता कि मैं इसे गोद में लेकर खिलाया करती थी।"

आनोच्का हंस पड़ी।

"क्या बात है?"

"याद है वह चाकलेट की बात?"

"चाकलेट की बात?"

"हां, लड़ाई से पहले की बात है। याद है, आपने पाव्लिक को जन्म दिन पर बड़ी सी चाकलेट दी थी? मां ने उससे कहा कि मुझे भी दे। बड़ी देर तक बेचारा परेशान होता रहा, फिर बोला: 'अच्छा, मां, मैं आनोच्का को इत्ता छोटा सा टुकड़ा दे देता हूं!' 'छोटा सा क्यों? तेरे पास तो इतनी बड़ी चाकलेट है!' 'बड़ा टुकड़ा अगर आनोच्का के गले में फंस गया, तो?'"

अब वे दोनों एक साथ हंसीं, पर उनकी हंसी सहसा रुक गई, मानो उन्हें यह याद आया कि वे कब्रिस्तान से आ रही हैं। बर्फ़ीली हवा के तेज़ झोंकों से बचने के लिए आनोच्का ने चेहरे को बाज़ू से छिपाया और चलते-चलते पूछा:

"किरील निकोलायेविच क्यों नहीं आये?"

"हां, अफ़सोस की बात है। रागोज़िन की बातें सुनकर वह समझ जाता कि उसके पिता जी की दोरोगोमीलोव के साथ दोस्ती क्यों थी...

निलीन आना तो चाहता था, पर फ़ौजी कमिसारियात में कोई जरूरी काम आ पड़ा।"

आनोच्का के माथे पर बल पड़ गये, पर वह कुछ बोली नहीं, बस तेज चलने लगी। लड़के बहुत दूर निकल गये थे।

वे सड़क के बीचोंबीच एक झुंड में जल्दी-जल्दी, पर छोटे-छोटे क़दम रखते जा रहे थे। बस कभी कोई एक-दो शब्द कह देता, जिसका दूसरे देर तक जवाब न देते।

"मेरे पिता जी कितना अच्छा बोलते हैं, है न पाश्का?" वान्या ने पूछा।

"हू," पाव्लिक ने हामी भरी, पर फिर कुछ सोचकर बोला, "वो रद्दी की बात उन्होंने बेकार ही की। मेरा बाप खुश हो गया।"

"क्यों?"

"मुझे टोहका देकर बोला: देखा कामरेड रागोज़िन भी कहते हैं आर्सेनी रोमानोविच के पास रद्दी ही थी।"

"उसके कहने से क्या होता है! बड़ा आया है!"

वीत्या सोच रहा था कि प्योत्र पेत्रोविच ने आर्सेनी रोमानोविच के बारे में सबसे बड़ी बात नहीं कही है। सबसे बड़ी बात यह थी कि आर्सेनी रोमानोविच अब नहीं रहे और उनके जैसा और कोई हो ही नहीं सकता।

"हम आर्सेनी रोमानोविच के बारे में क्या लिखेंगे?"

"कहां क्या लिखेंगे?" वान्या ने जानना चाहा।

"सलीब पर।"

"हां, सच, क्या लिखेंगे?" सहसा पाव्लिक ने भी जिज्ञासा से पूछा।

"हू, सलीब पर!" वान्या ने मानो खिल्ली उड़ाते हुए कहा।

"क्यों नहीं?" वीत्या ने चुनौती स्वीकार करते हुए कहा।

"आर्सेनी रोमानोविच की क़ब्र पर सलीब नहीं होगा, समाधि पत्थर होगा।"

"हां, बहुत बड़ा पत्थर!" पाव्लिक ने कहा।

तीनों ने बारी-बारी से अपने कान मले ताकि ठंड से बिल्कुल अकड़ न जायें।

"मेरे ख्याल में ऐसे लिखना चाहिए," विचारमग्न सा पाव्लिक बोला, "यहां हमारे आर्सेनी रोमानोविच दफ़न हैं, और फिर नाम।"

"कैसे नाम?" वान्या ने पूछा।

"कैसे नाम? जैसे होते हैं – तेरा, मेरा, वीत्या का, और लोगों के नाम।"

"क्या सोची है! भला कब्र पर भी कभी कोई अपना नाम लिखता है? मैं सारी गर्मियां कब्रिस्तान में रहा हूं, मुझे पता है।"

"रहा है तो क्या हुआ? कोई मनाही है क्या? हमारे जी में आयेगा, तो हम अपने नाम लिखेंगे।"

"यह पुण्यात्माओं का लोक क्या होता है?" वीत्या ने कहा।

"सलीब पर पढ़ा है न? पता है मुझे," वान्या ने कहा।

"सलीब पर?" पाव्लिक ने भी पूछा।

"यह सब पादरियों के दिमाग की उपज है," वान्या ने कहा। "कयामत, पुण्यात्माओं का लोक। शिपी झाड़ते हैं! है कुछ भी नहीं! ज़मीन में गाड़ दिया, तो फिर कौन जी उठेगा!"

"बिल्कुल," पाव्लिक ने हामी भरी, "एक बार जो इस दुनिया से गये, तो गये।"

"और मंगलग्रह पर?" वीत्या ने अविश्वासपूर्वक पूछा।

"मंगलग्रह पर! ज़रा सोचो तो!" पाव्लिक ने कंधे बिचकाये।

"तूने कुछ पढ़ा नहीं, इसीलिए ऐसे कह रहा है।"

"और तूने पढ़ा तो, पर ठीक से नहीं," वान्या ने कहा। "मंगलग्रह पर मुर्दे नहीं, ज़िंदा लोग रहते हैं।"

"हां, हां," पाव्लिक ने हां में हां मिलाई, "और वह मंगलवासी कहलाते हैं।"

"मेरे ख्याल में ऐसे लिखना चाहिए," वीत्या ने सुझाया। "यहां (पल भर को वह इस सोच में पड़ा कि अस्थियों और स्थान की बात कहनी चाहिए कि नहीं) ... सबसे अच्छा व्यक्ति आर्सेनी रोमानोविच दफ़न है!"

अनिश्चय भरी नज़रों से उसने साथियों की ओर देखा। पाव्लिक को उसका सुझाव अच्छा लगा। वान्या को वह बहुत पसन्द नहीं आया था।

"पत्थर पर कुछ खोदना भी चाहिए," उसने कहा।

"तसवीर?"

"हां।"

"कैसी?"

तभी गरोजिन लड़कों तक आ पहुंचा। उसने अपने भारी हाथ, जिनमें वह बग़ैर उंगलियों वाले बड़े से दस्ताने पहने था, लड़कों के कंधों पर रखे।

"अकड़ गये ठंड में?"

"नहीं," तीनों ने एकसाथ कहा, और फिर से हथेलियों से कान मले।

"प्योत्र पेत्रोविच, हम समाधि पत्थर की सोच रहे थे, कि उस पर क्या लिखें।"

"तो क्या फ़ैसला किया?"

फिर से तीनों में बहस होने लगी, नये-नये सुझाव देने लगे, और आखिर उन्होंने गरोज़िन से यह कहलवा ही लिया कि वह खुद क्या लिखता।

"मैं सोचता हूं, सीधे-सादे ढंग से लिखना चाहिए: आर्सेनी रोमानोविच दोरोगोमीलोव, क्रांतिकारी।"

"और बस?" पाव्लिक ने हैरान होते हुए पूछा।

"बस।"

"बस!" वान्या चिल्लाया। "भई, वाह!"

"भई वाह!" पाव्लिक भी चिल्लाया। "आर्सेनी रोमानोविच को भी यह अच्छा लगता, है न?"

अकेला वीत्या ही सोच में पड़ा हुआ चुप रहा। उसे यह सोचकर अफ़सोस हो रहा था कि आर्सेनी रोमानोविच जैसे व्यक्ति के बारे में केवल एक ही शब्द लिखा होगा।

लड़के गरोजिन के साथ-साथ, उसकी भांति ही लंबे-लंबे कदम भरने की कोशिश करते चल रहे थे। शीघ्र ही वे चौराहे तक पहुंच गये, जहां ट्राम के इंतजार में भीड़ लगी हुई थी।

ठंड काफ़ी तेज हो गई थी, अंधेरा भी तेज़ी से घिरता आ रहा था, बर्फ़ीली आंधी जोर पकड़ रही थी। लेकिन लड़के धीरज से बड़ों के साथ ट्राम का इंतजार कर रहे थे, हां थोड़ी-थोड़ी देर बाद वे अपने कान मल

लेते। तेज़ हवा उनके चारों ओर हिम उड़ा रही थी और वे आंखें सिकोड़-कर विश्वविद्यालय की अस्पष्ट सी इमारतें देख रहे थे।

३७

'छल और प्रेम' के पहले शो के वाद से आनोच्का और किरील हर हफ़्ते मिलते रहे थे, और जिस दिन दोरोगोमीलोव को दफ़नाया गया, उस दिन भी उन्हें मिलना थां।

किरील को लगता था कि वे काफ़ी जल्दी-जल्दी मिलते रहे हैं, यानी इससे अधिक जल्दी मिल पाना असम्भव ही है—ऐसे दो-तीन घंटे, जव दोनों खाली हों, ढूंढ़ना इतना मुश्किल था। वेशक, किरील के लिए ही ज़्यादा मुश्किल था। एक वार अगली भेंट का समय तय करते हुए आनोच्का ने पूछा:

"तुम्हारा कोई नेम भी तो होगा?"

"कैसा नेम?"

"कि कव तुम्हें काम करना होता है, कव नहीं।"

"कव नहीं?" वह हंस दिया। "तव अचानक कोई न कोई ऐसी समस्या उठ खड़ी होती है, जिसकी पहले कल्पना तक न की थी।"

उसकी हंसी तुरन्त ही गायव हो गई।

"ये अचानक उठ खड़ी होनेवाली समस्याएं हमारे काम का काफ़ी महत्वपूर्ण अंश हैं। कभी-कभी तो सबसे महत्वपूर्ण। इनसे हम आगे देखना, यह अनुमान लगाना सीखते हैं कि हमारे काम में कैसी बधाएं, कैसी कठिनाइयां आ सकती हैं।"

"तो यह आशा की जा सकती है कि किस दिन मुझसे ढंग से मिल सकते हो, इसका अनुमान लगाना भी सीख जाओगे?"

"ढंग से?"

"हां। ताकि मिलना पल भर का न हो।"

इस वात पर वह इतनी गहरी सोच में पड़ गया कि आनोच्का की हंसी ही फूट पड़ी।

अभी तक किरील ने आनोच्का को मिलने का वायदा करके कभी धोखा नहीं दिया था, अगर किसी वजह से उसका जाना मुमकिन न

होता, तो वह वक्त रहते आनोच्का को इसकी सूचना दे देता था। लेकिन उस दिन अचानक ही उसे छावनी में एक सभा में बोलने को कहा गया।

उसका अनुमान था कि नियत समय तक लौट आयेगा। लेकिन सब कुछ उसके अनुमान के विपरीत होता रहा।

सभा रिसाले में स्वेच्छा से भरती के लिए बुलाई गई थी। टीलों पर दूर-दूर तक फैल गई छावनी की एक मामूली सी इमारत में लोग खचाखच भरे हुए थे। सब खड़े थे। छावनी के विभिन्न कार्यालयों में काम करनेवाले लोग, लाल सेना के रंगरूट, मठ मोहल्ले के रहनेवाले और आस-पास के इलाके में फैले भट्ठों के मजदूर यहां जमा थे।

इज्वेकोव एक मंच पर खड़ा बोल रहा था, जो उसके पांवों तले डांवाडोल हो रहा था। उसे बोलते समय चलते रहने की आदत थी, इससे उसे एकाग्रचित्त होने में मदद मिलती थी और विचारों का क्रम कदमों की ताल पर चलता रहता था। उसे इस बात का जरा भी अहसास नहीं था कि कैसे उसके भारी कदमों से मंच और उस पर रखी मेज़ हिल रहे हैं।

वह आसानी से बोलता जा रहा था। जिन घटनाओं की वह चर्चा कर रहा था, वे स्वयं ही इतनी रोचक थीं कि श्रोता कान लगाकर सुनते – दक्षिण में हो रही जीतों की, मुंह की खाकर सफ़ेद गार्डों एस्तोनिया में भाग गये युदेनिच की और साइबेरिया में कोल्चाक के विरुद्ध नये अभियान की चर्चा थी। गृहयुद्ध के सभी मोर्चों पर अभूतपूर्व गति आ गई थी, लेकिन दो-तीन महीने पहले की भांति यह गति प्रतिक्रांतिकारियों की पहलकदमी से नहीं आई थी, बल्कि लाल सेना के एकजुट संकल्प से। लाल सेना अपने ध्वज लहराती आगे बढ़ रही थी, रूस को उसके बाहरी प्रांत लौटा रही थी।

सिकुड़ी भौंहों तले से सैकड़ों नजरें किरील पर लगी हुई थीं – अपेक्षा करती और साथ ही सतर्कता भरी, वे मानो उसके धीरज, उसके ज्ञान की परीक्षा ले रही थीं। पर वह हठधर्मी से कदम नापता जा रहा था – मोड़ों पर पल भर को थमता हुआ और बीच-बीच में मानो अपनी बात पर जोर देने के लिए मुट्ठी से हवा को चीरता हुआ। और उसका ज्ञान इतना गहरा था कि जब वह लाल रिसाले की जीतों की

गिनती करने लगा, तो जनता ने मानो तय किया कि वह परीक्षा में खरा उतरा है: भौंहें ढीली हो गईं, लोग हिलने-डुलने लगे, हाल में जहां-तहां गुंजन हुआ, और फिर जैसे एक साथ आतिशबाज़ी छोड़ी गई हो, तालियों की तड़ातड़ गूंज उठी।

किरील ने अपना भाषण इन शब्दों के साथ समाप्त किया कि दुश्मन का मुंह काला कर दिया गया है, उसे धूल चटा दी गई है, वह दुम दबाकर भाग रहा है, लेकिन अभी उसका पूरी तरह सफ़ाया नहीं किया गया है, और उसे सदा के लिए दफ़ना देने के लिए लाल सेना को नई शक्ति की आवश्यकता है। उसने एकत्रित लोगों का आह्वान किया कि वे अश्वारोही सेना में भरती हों, जवान और अधेड़, अनुभवी और अनुभवहीन उन सब लोगों का उसने आह्वान किया, जिनके बाजुओं में दम है और मन में सफ़ेद गार्डों के लिए नफ़रत तथा मज़दूरों और किसानों की मुक्ति के लिए प्राण न्योछावर करने की ललक।

उसे उम्मीद थी कि यह आह्वान सुनते ही वालंटियर नाम लिखाने लगेंगे। लेकिन लोग सवाल पूछने लगे और कुछेक ने बोलने की इच्छा व्यक्त की।

अस्त्राख़ान का एक मुच्छड़ कज़्ज़ाक, जिसकी सलवार पर दोनों ओर ऊपर से नीचे तक पीली पट्टी लगी हुई थी, मंच पर चढ़ा। शुरू में वह इतना अच्छा तो नहीं बोला, जितना ज़ोर से, और सुननेवाले उसकी बातों पर इतना हैरान नहीं हो रहे थे, जितना उसकी ज़ोरदार आवाज़ पर। वह कहने लगा कि कज़्ज़ाक भी भांति-भांति के होते हैं, जनरलों के तलुवे चाटनेवाले भी और ज़ालिम कुलक भी और डंडी मारनेवाले भी, पर ऐसे भी कज़्ज़ाक होते हैं, जैसा वह खुद है। और वह सच्चा कज़्ज़ाक है – मुसीबत आ पड़े तो चुल्लू से भी प्यास बुझा लेगा, हथेली पर रखकर भी खाना खा लेगा। लोग उसे बड़बोला ही समझ रहे थे, पर आखिर में उसने कुछ ऐसी बात कही कि सब शांत हो गये और वह मंच से उतरकर अपनी जगह को गया, तो सबकी सद्भावना भरी नज़रें उसपर लगी हुई थीं।

उसने कहा: "सच्चे कज़्ज़ाक लाल रिसाले का मान करते हैं। आजकल एक लाल सेना ही है, जो अपनी सौगंध निभाती है। शत्रु से लड़ते हैं, तो सब एक समान सौगंध निभाते हैं, चाहे कोई सबसे आगे

हो या मबसे पीछे, भांति-भांति से नही। कोई आंख-मिचौनी नही खेलना। पर, हमारे इस खरे सिक्के का दूसरा पहलू भी है। पूछोगे कौन सा? बताता हूं। किसने सबसे पहले उराल के सफ़ेद गार्डों के छक्के छुड़ाये थे? वसीली इवानोविच चपायेव ने। अब भले ही वो कज्जाक नही था, पर सबसे तेज-तर्रार कज्ज़ाक को भी पछाड़ता था और अब कहा है हमारा कामरेड चपायेव? उराल नदी के तल पर, वहां ल्वीश्चेन्स्क के पास। अब यह तो बताओ कि क्यों उसे बचाया नही? क्यों अपनी छातियो से उसे छिपाया नही? क्यों उस ल्वीश्चेन्स्क से ले नही गये? वह अपने हाथों सफ़ेद गार्डों को मौत के घाट उतारना चाहता था तो क्या? उसे अपनी आंख के तारे की भांति बचाना चाहिए था! तो वह आज सही-सलामत होता। हमारी लाल सेना में ऐसे सरदार अभी थोड़े ही है, वे तो अभी परगट होने ही लगे हैं। सो हमारे नियम ऐसे होने चाहिए कि सेना की सौगंध तो सभी एक समान निभायें, पर रक्षा हर किसी की लाल सेना के लिए उसकी सेवाओं के अनुसार हो। हमें अपने सरदारों की रक्षा करनी चाहिए। तो, कामरेडो, यही मेरा सुझाव है।"

उसके बाद और लोग भाषण देने आये, फिर अपनी जगह खड़े-खड़े ही, इजाजत मांगे बिना ही बोलने लगे। किरील ने देखा कि वे असल काम की बात से दूर ही दूर होते जा रहे है।

तब उसने फिर से बोलने की इजाजत मांगी, सवालों के जवाब दिये, और चपायेव के बारे मे कहा कि हां यह सच है कि न खुद उसने अपनी जान की परवाह की, न साथियों ने उसे बचाया, कि रात-दिन चौकस रहना चाहिए, क्योंकि पहले किसी भी लड़ाई में सफ़ेद गार्डों जैसे क्रूर और कपटी शत्रु से सामना नहीं हुआ है।

"चपायेव की वीरगति पर सारा सोवियत रूस आंसू बहा रहा है, और वोल्गा के लिए, जिसके वह सपूत थे, यह सबसे भारी सदमा है। परन्तु उनकी यह वीरगति उन्हें रूसी गाथाओं के शूरवीरों की पांत में खड़ा करती है। वह वसीली बुस्लायेव की भांति मृत्यु की आंखों में झांकते हुए हिचकिचाते नही थे, उनका दिल नही कांपता था। येर्माक तिमोफ़े-येविच की ही भांति वह जिस नदी की गोद में समाये, उसका नाम उनके पराक्रमो से विख्यात हुआ। उनका स्थान दूसरे सूरमा, दूसरे शूरवीर

लेंगे। और उतनी जल्दी लेंगे, जितने ज़्यादा मेहनतकश लोग हमारी सेना में, हमारे रिसाले में भरती होंगे। जनता के बीच से, जीवन की आंच से तपे आप लोगों के बीच से ही ये शूरवीर आयेंगे।"

किरील मेज़ के पास गया, एक कागज़ लेकर सिर के ऊपर उठाया :

"कामरेडो, कौन हमारी विजयी अश्वारोही सेना की नई स्क्वैड्रन में शामिल होना चाहता है? हम सूची बनाने लगे हैं, सबसे पहले मैं प्रथम अश्वारोही सेना में भरती हो रहा हूं। और कौन नाम लिखवाना चाहता है? आगे आओ, कामरेडो!"

उसने कलम दावत में डाला। मेज़ उसकी कोहनियों के बोझ तले हिल रही थी, लाल मेज़पोश के ऊपर रखा कागज़ निब से फट-फट जाता था। जब तक वह लिखता रहा, सब लोग ज़ोर-ज़ोर से तालियां बजाते रहे, और जब वालंटियर मंच पर चढ़ने लगे और मेज़ के सामने कतार बनाकर खड़े होने लगे, तो तालियों की गड़गड़ाहट और भी तेज़ हो गई।

किरील भरती होनेवालों के नाम ज़ोर से सुनाता और मेज़ के पीछे बैठे सभी लोग वालंटियरों से हाथ मिलाते। वे चेहरे पर गम्भीरता बनाये और गर्व से छाती फुलाये मंच से उतरते और बड़े जोश से दूसरों को भी नाम लिखवाने को मनाने लगते।

सूची में सबसे पहले अपना नाम लिखते हुए किरील जानता था कि उसे हर हालत में मोर्चे पर जाना है, उसमें भी अगले दिन सुबह से ज़्यादा देर नहीं होगी – उसकी जेब में फ़ौजी कमिसारियात का कागज़ पड़ा हुआ था। लेकिन वह महसूस कर रहा था कि दूसरों का आह्वान करते हुए वह स्वयं भी ऐसा किये बिना नहीं रह सकता। हर क़ाम में ही पहल करनेवाले की ज़रूरत होती है, और यहां पर तो यह आवश्यकता अन्य किसी भी काम से अधिक थी। किरील ने सबसे पहले अपना नाम लिखने की घोषणा सोचे-विचारे बिना की थी, केवल अंत:प्रेरणावश, उसके मन ने कहा था कि इससे काम में सफलता मिलेगी।

जब उसने यह कदम उठा लिया, और पाया कि उसने ठीक ही किया है, कि सब कुछ अच्छी तरह चल निकला है, तो उसने चैन की सांस ली मानो सब लोगों ने उसके उस फ़ैसले को खुले आम सही ठहराया

को, जो वह मन ही मन पहले से ही कर चुका था और जिससे वह किसी हालत में पीछे हटनेवाला नहीं था। सारी सभा में एक जोश छाता जा रहा था, जो पहले नहीं था, और न ही इतने भांति-भांति के लोगों के समूह से इसकी आशा ही की जा सकती थी, अब किरील में भी यह जोश उबल रहा था। निस्सन्देह, इस उफान में सबसे बड़ा हाथ रंगरूटों का था, जो प्राय: सबके सब यह मांग कर रहे थे कि उनका पैदल सेना से रिसाले में तबादला कर दिया जाये। उनके उत्साह ने बहुतों को प्रेरित किया।

किरील जब सभा से चला, तो वह उत्तेजित था और अपने आप से सन्तुष्ट, मानो कोई बहुत महत्वपूर्ण अनुष्ठान उसने सम्पन्न कर लिया हो। वह सोच रहा था कि आनोच्का के यहां पहुंचने में उसे ज़्यादा देर नहीं होगी, और वह खुशी-खुशी कार में जा बैठा। लेकिन कार अभी शहर के बाहर ही थी कि अगले टायर में पंक्चर हो गया।

तीसरे पहर से ही हिमानी आंधी आने लगी थी, और अब सांझ ढले वह पूरे जोर से चल रही थी। जाड़ा जब बहुत जल्दी ही आ जाता है, तो ऐसी हिमानी आंधियों से ही शुरू होता है, जो धरती पर हर चीज को झकझोरती और फाड़ती जाती हैं, निचाइयों में हिम के ढेर लगा देती है और टीलों पर के घास के आखिरी तिनके तक को उड़ा ले जाती है। हिम के साथ पिसे कांच की सी सख्त धूल उड़ती है। लकड़ी के मकान भी हवा के थपेड़ों से झुक-झुक जाते हैं, कराहते हैं। हर चीज झुकी-दबी होती है, थरथराती है, चारों ओर से असंख्य स्वरों में मनहूस सीटियां बजती है।

किरील ने सड़क पर पांव रखा ही था कि तेज झोंके से खुल गया कार का दरवाजा जोर से उससे टकराया और वह गिरते-गिरते बचा। हिम का बवंडर उन्मत्त सा उसके इर्द-गिर्द घूम रहा था, मानो उसके हाथ-पांव बांधकर उसे उड़ा ले जाना चाहता हो। ड्राइवर ने अपने गालियों के भण्डार में से चुनी हुई गाली सुनाई और फिर जैक निकालने लगा।

किरील फिर से कार में जा बैठना चाहता था, पर फिर उसने अपना इरादा बदल दिया और ड्राइवर से कहा कि वह पैदल ही चला जायेगा, ताकि यहां खुले मैदान में ठंड से अकड़ना न पड़े।

उसने ओवरकोट का कालर उठाया, हाथ वाजुओं में डाले और आगे को झुककर सड़क के बीचोंबीच चलने लगा। वह आस-पास के इलाके को पहचान नहीं पा रहा था, और उसके लिए यह अनुमान लगाना कठिन था कि किस रास्ते से वह शहर में घुसेगा – आगे भी उतना ही अंधेरा था, जितना अगल-वगल में। ठंड ओवरकोट तले गहरी ही गहरी समाती जा रही थी, ओवरकोट के पल्ले कभी हवा से ऊपर उठ जाते और कभी टांगों के वीच फंस जाते। चलना मुश्किल होता जा रहा था।

किरील को पता भी न चला कव उसका सारा उत्साह जाता रहा। उसे अपने आप पर खीज आ रही थी कि क्यों उसने पहले से आनोच्का को यह खबर नहीं कर दी कि उसे देर हो सकती है। इस में वेचैनी भी मिली जा रही थी, जो पिछले कुछ दिनों से उसके मन में उठ रही थी, उस दिन से, जब उसे पता चला था कि मोर्चे पर जाना होगा। वह आनोच्का और मां को यह वात वताने में देर करता रहा था – यह सोचते हुए कि विदाई का समय जितना थोड़ा होगा, उतनी ही वह कम पीड़ादायक होगी। परन्तु अव सहसा वह यह समझ गया था कि यह उसकी निष्ठुरता थी, कि आनोच्का अवश्य ही उसे निर्ममता का उलाहना देगी, कहेगी कि किरील को उसकी भावनाओं की कोई परवाह नहीं है, और वह अपनी सफाई में कुछ भी नहीं कह सकेगा।

सुइयों की तरह चुभती हवा के वीच वह उस छोटे से कमरे की गरमाहट भरी रोशनी देख रहा था, जिसमें वह जल्दी से जल्दी घुसना चाहता था और जो अभी इतनी दूर था। हर पल के साथ उसे इस कमरे की कोई न कोई चीज़ याद हो आती और अपने आप पर उसकी खीज वढ़ती जाती।

पीठ पर हवा का धक्का लगा। पल भर को किरील को ऐसे लगा मानो वह ढलान पर उतर रहा हो और उसे आनोच्का के कमरे का ढलुवां फ़र्श याद हो आया : जिस मकान में पारावुकिन परिवार रह रहा था, उसकी एक दीवार ज़मीन में थोड़ी धंस गई थी। सारा कमरा उसे दिखाई दिया : जालीदार मेज़पोश; किसी पत्रिका में से काटकर दीवार पर टांगी गई कुईंजी के चित्र 'भोज कुंज' की प्रतिकृति, सूखी घास के बने कत्थई और पीले फूलों का दस्ता, जो आनोच्का की

मा के फ़ोटो के पीछे रखा हुआ है; गत्ते का बना लैम्प शेड, जो एक ओर से जलकर चाकलेट जैसे रंग का हो गया है, सिलाई की मशीन का बक्सा, जो जतन से तौलिये से ढका हुआ है, और तौलिये पर कढ़े वे शब्द: "सारा परिवार हो अगर संग, मन में बनी रहती है उमग"—ये सारी चीज़ें उसकी नज़रों के सामने घूम गई, यह वह घर था जिसे किरील अच्छी तरह पहचानता था और जो उसके मन को प्यारा था, और इसी घर में इन सब चीज़ों के बीच उसने आनोच्का को खाट की पाटी पर बैठे देखा, नीली आंखें ठंड से जमी खिड़की पर लगी हुई: "नही आया, नही आया"। उसने टोपी माथे पर नीचे खींची, कालर ऊपर खीचकर कान उसमें छिपाये, और नीचे को झुकता हुआ तेज़ चलने लगा।

बेशक, दूर से ही इस मामूली से कमरे के एक-एक कोने की तसवीर दिमाग में उतारने और उसमें आनोच्का की हर गति को देख पाने के लिए असाधारण कल्पना शक्ति नहीं चाहिए थी। हां, वह अपनी खाट की पाटी पर बैठी रही थी (ठीक वैसे ही जैसे किरील ने इसकी कल्पना की थी), यही नहीं, वह बीस बार उठकर इधर-उधर आ जा चुकी थी, कभी दौड़कर दरवाज़े के पास जाती, कभी खिड़की के पास, कान लगाकर हिमानी आंधी की आहों और सीटियों को सुनती कि कही उनके पीछे दस्तक न दब जाये।

क़ब्रिस्तान से घर लौटकर उसने समोवार गरम किया था, ताकि ठंड से ठिठुरे बदन में कुछ गर्माहट आये। बड़ी खुशी से उसने पाव्लिक को वीत्या के घर जाने दिया था। पारावुकिन ने कहा कि उसे दफ़्तर में राजकीय महत्व का काम है (वह कैसे इस पर कोई आपत्ति कर सकती थी, हालांकि उसे इस बात पर रत्ती भर भी विश्वास नहीं था)। वह खुश थी कि अकेली रह गई है।

घंटे भर बाद वह अपना सबसे अच्छा फ़्राक पहने थी, सारे घर की उसने सफ़ाई कर ली थी, और एक बार फिर समोवार गरम कर दिया था, ताकि किरील को भी आते ही गरम चाय मिले। बाहर आंधी बुरी तरह से हुआ रही थी, हवा खिड़की में महीन-महीन झरियां ढूंढ लेती और उनमें सिसकती।

समय था कि बीत ही नहीं रहा था। आनोच्का निराश होने लगी।

उसने मन ही मन वे सब शब्द दोहराये, जो किरील ने कभी अपनी सफ़ाई में या उसे समझाने के लिए कहे थे – कि वह कितना व्यस्त है, उस पर कितना भारी दायित्व है, या और भी कोई बात, जो उन दोनों के बीच के अंतर से जुड़ी हुई थी, लोगों के सम्मुख, क्रांति के सम्मुख, युग के सम्मुख उसके उत्तरदायित्व की बातें – ओफ़, जाने कितनी बातें थीं, जिनके कारण किरील अपना अलग, विशिष्ट जीवन जीने को विवश था, जो आनोच्का के साधारण जीवन से बिल्कुल भिन्न था!

क्यों अभी तक आनोच्का ने उसके उन सब बहानों, उन सब कल्पित संयोगों के मतलब पर गौर नहीं किया, जो सारी गर्मियां और सारी शरद ऋतु में उनकी भेंटों में बाधक बनते रहे थे? अभी तक उसे यह ख्याल क्यों नहीं आया कि आनोच्का की यह प्रतीक्षा, उससे वह जो वायदे लेती है कि वह आये, कि वह अचानक आ टपकनेवाले कामों को नज़रंदाज़ करे – यह सब उसके लिए बोझ है, बंधन है? हां, हां, उसके काम बहुत ज़रूरी हैं। वे सचमुच ही राजकीय महत्व के हो सकते हैं। इज़्वेकोव तो पाराबुकिन नहीं है। वह झूठ नहीं बोलेगा। उसे तो बढ़ा-चढ़ाकर कहने की भी ज़रूरत नहीं।

लेकिन अगर यह बात है, तो किरील के बड़े कामों और आनोच्का के छोटे कामों के बीच अंतर कभी खत्म नहीं होगा। यह तो बढ़ ही सकता है, गहरा ही हो सकता है। तो क्या इसका अर्थ यह है कि आनोच्का किरील के लिए और भी अधिक बोझ बनती जायेगी, कि उसे इन निष्फल प्रतीक्षाओं में और भी अधिक समय काटना होगा कि कब वह अपने अमूल्य समय में से उसके लिए दो क्षण निकाल सकेगा, कब उसकी ओर ध्यान देने की कृपा करेगा।

लेकिन उसे यह सोचने का क्या हक है कि उसकी ऐसी कोई खास अहमियत है? क्या अनोच्का के लिए भी समय उतना ही अमूल्य नहीं है, जितना उसके लिए है? क्या आनोच्का के लिए यह आसान था कि वह किरील के साथ इस कमबख्त मुलाकात की खातिर आज नये नाटक के वाचन के लिए नहीं गई, हालांकि त्स्वेतुख़िन ने इस नाटक में उसे नई भूमिका देने का वायदा किया है? वह थियेटर नहीं गई, जबकि वहां सब उसका इंतज़ार कर रहे थे, जबकि उसने अभी-अभी वह काम शुरू किया था, जिसके बचपन से दिन-रात सपने देखते आई थी! क्या यह

बलिदान नहीं? और किरील क्या करता है? वह उसे धोखा देता है! उसने आनोच्का को धोखा दिया है! वह नहीं आया!

शायद वह आ ही जाये? शायद किसी बहुत ही जरूरी काम से वह रुक गया हो? आखिर आजकल इतनी घटनाएं हो रही हैं और सभी इतनी बड़ी, इतनी महत्वपूर्ण हैं! और वह इतना बड़ा आदमी है! उस पर इतनी बड़ी जिम्मेवारियां हैं! उसकी जिम्मेवारियों की तुलना भला किसी नाटक के वाचन से कैसे की जा सकती है, जिसमें आनोच्का को शायद कोई भूमिका भी न मिले! उसने त्स्वेतुखिन को इतना नाराज़ कर दिया है, अब वह उसे कोई भूमिका नहीं देगा। उसे तो अपना सौभाग्य मानना चाहिए कि उसे किरील जैसे विलक्षण व्यक्ति से प्रेम है, कि वह उससे प्रेम करता है।

बेशक, वह आनोच्का से प्रेम करता है! उसे तो बस देर हो रही है। आखिर वह उसे धोखा तो नहीं दे सकता! अभी वह आता होगा। आनोच्का उसके लिए क्या करे? हे भगवान, वह उसके लिए सब कुछ करने को तैयार है, बस वह आ जाये! पर वह नहीं आयेगा! उसने पूरे दो घंटे की देरी कर दी है। नहीं, दो घंटे चार मिनट की। चार मिनट! हे भगवान, क्या करूं कि वह आ जाये?! फिर से समोवार गरम कर दूं? ठंडा हो गया है। चिमनी किसी प्रेत की भांति फुंकार रही है, पर समोवार ठंडा हो गया है। किरील इज़्वेकोव ठंडा हो गया है। हे भगवान, क्या बेतुकी बातें दिमाग में आ रही हैं!

उसने कुछ चैलियां छीलकर समोवार में डालीं और खाट पर बैठ गई। कोहनियां घुटनों पर टेककर उसने सिर हाथों में थाम लिया। बिस्तर में लेट जाये? माथा कितना तप रहा है!

सहसा आनोच्का तेज़ी से उछली और सांस रोके खड़ी हो गई। दरवाज़े पर दस्तक हुई। हां, उसे भ्रम नहीं हुआ! ज़ोर से, जल्दी-जल्दी कोई दस्तक दे रहा था!

वह आ गया!

वह लपककर ड्योढ़ी में गई और एक झटके से कुंडा खोल दिया। अंधेरे में कोई ठंडा पड़ा आदमी अंदर घुस आया – हवा के थपेड़ों से बचने के लिए दोहरा मुड़ा हुआ; सिर से पांव तक उसके सारे कपड़ों पर हिम की तहें जमी हुई थीं।

"जल्दी करो, जल्दी!" वह बुदबुदाई; एक हाथ से उसने अंदर का दरवाज़ा खोला और दूसरे हाथ व घुटने से बाहर के दरवाज़े को रोके रही, जिस पर हवा पूरा ज़ोर डाल रही थी। बड़ी मुश्किल से उसने दरवाज़ा बंद करके कुंडा चढ़ाया, फिर वह अंदर लपकी, कमरे की चौखट के पास रुकी और उसके मुंह से चीख निकलते-निकलते रह गई।

उसके सामने त्स्वेतुख़िन खड़ा था – ओवरकोट के बटन खोलकर एक झटके में ही उसने सारा हिम फ़र्श पर झाड़ दिया था।

"धत् तेरे की! क्या तूफ़ान आया हुआ है! कहो, दोस्त, अकेली हो? बड़ी अच्छी बात है।"

ठंडी चौखट से पीठ सटाये आनोच्का फटी-फटी आंखों से त्स्वेतुख़िन को देखे जा रही थी। घबराहट के मारे उसका चेहरा विकृत हो गया लगता था, उसपर बेबसी और डर की छाप थी।

"अरे, समोवार गरम है!" गीली भौंहों को रूमाल से पोंछते हुए और कनपटियों पर जमी बर्फ़ साफ़ करते हुए त्स्वेतुख़िन कहता जा रहा था। "एक गिलास गरमागरम चाय मिल जाये, तो बस और क्या चाहिए! वाह, कितनी गरमाहट है अंदर! क्या घर वाले आने को हैं?"

उसने आनोच्का का हाथ थपथपाया।

"क्या, तबीयत ठीक नहीं है? आईं क्यों नहीं? मैं सीधा थियेटर से आ रहा हूं। सोचा तुम बीमार पड़ गई हो।"

आखिर आनोच्का का आत्मसंयम लौट आया, और उसने सब सवालों का एक साथ जवाब दे डाला – हां, कब्रिस्तान से लौटने पर उसकी तबीयत कुछ खराब हो गई, इसीलिए थियेटर नहीं गई, और अभी पिताजी और पाव्लिक लौटनेवाले हैं।

"अरे हां, दोरोगोमीलोव!" त्स्वेतुख़िन बोला। "बेचारा! मैं भी जाना चाहता था, पर सारा दिन इधर-उधर के कामों में फंसा रहा। हां, प्यारा ही आदमी था! अब ऐसे लोग कम ही कम रहते जा रहे हैं... क्यों, मन उचाट है क्या?"

वह चाय का बन्दोबस्त करने में लग गई – ऐसे काम में जिसके पीछे अतिथिप्रेमी गृहस्वामिनियां बिनबुलाये मेहमान के प्रति अपनी भावनाएं छिपाती हैं।

त्स्वेतुखिन ने उसका हाथ पकड़कर उसे अपने सामने बिठाया।

"सुनो आनोच्का। मैं यों ही नहीं आया हूं।"

वह दृढ़ संकल्प के साथ उसकी ओर देख रहा था, पर उसका निचला होंठ यों फड़क रहा था, जैसे उसे भारी ठेस पहुंची हो।

"मुझे तुमसे बात करनी है। जैसी स्थिति बन गई है... जैसी स्थिति तुमने अपने बर्ताव से बना दी है..."

"बर्ताव से? क्या मेरा बर्ताव अच्छा नहीं?"

"मैं सोचता हूं, तुम खुद फ़ैसला कर सकती हो कि यह अच्छा है या बुरा, जब कि तुम अपने बर्ताव से कौतूहल जगा रही हो, सारी मण्डली का बेहूदा कौतूहल..."

"मैं कौतूहल जगा रही हूं? अपने प्रति? सो भी पूरी मण्डली का? और वो भी बेहूदा?"

आनोच्का ने अपनी कुर्सी थोड़ी परे खिसका ली।

"भगवान के वास्ते, ऐसे बात मत करो," त्स्वेतुखिन ने अनुरोध किया। "यह तुम्हारी ज़बान नहीं है। हां, खेद की बात है, पर कौतूहल तुम्हारे प्रति भी है।"

"और किसके प्रति है?"

"तुम ऐसे बन रही हो, जैसे कि मैं हूं ही नहीं।"

"येगोर पाव्लोविच, मैंने क्या आपका जी दुखाया है?" आनोच्का ने सहसा गम्भीर स्वर में पूछा।

"क्या मतलब जी दुखाया है?" त्स्वेतुखिन चिल्ला पड़ा, और अब उसकी आवाज़ में स्पष्टतया वह ठेस का भाव था, जो पुरुष को कुछ-कुछ हास्यास्पद बनाता है, सो वह और भी खीजता है। "यह जी दुखाना नहीं, यह तो अपमान है जब लोग तुम्हारी पीठ पीछे कानाफूसी करते हैं, और तुम्हारी खिल्ली उड़ाते हैं।"

"येगोर पाव्लोविच!"

"मैं तुम्हारी बात नहीं कर रहा। तुम कानाफूसी नहीं करती हो। पर दूसरे सब कर रहे हैं! मुझे विश्वास है कि तुम यह सब पूरी तरह से नहीं समझती हो। इसीलिए मैं बुरा नहीं मानता। पर माफ़ करना, आखिर मैं तुम्हें यह समझाये बिना भी तो नहीं रह सकता कि

क्या हो रहा है। अगर तुम खुद यह नहीं देख रही हो, या अगर ... अगर तुम कुछ-कुछ जानबूझकर ऐसा कर रही हो।"

"मुझे सच में कुछ समझ में नहीं आ रहा," आनोच्का ने कहा।

"पर यह कैसे हो सकता है? महीने भर से तुम मुझसे बिल्कुल औपचारिक ढंग से बर्ताव कर रही हो। माफ़ करना, पर इसमें ओछेपन की बू आती है! नमस्ते, धन्यवाद और बस! क्या है यह सब? आखिर सब यह देखते हैं! अगर कोई दांव-पेच चलनेवाली पुरानी खिलाड़िन ऐसा करती, तो कोई ध्यान भी न देता। पर तुम तो मेरी शिष्या हो? अब सबको कौतूहल होता है – क्या हो रहा है? शायद त्स्वेतुख़िन का उसके साथ कोई किस्सा चल रहा है। शायद कुछ बात बन गई है! या नहीं बनी! अब तुम समझती हो कि ऐसे में मेरी क्या हालत है?"

"मान लिया कि मैं समझती हूं," आनोच्का धीरे-धीरे बोली और साथ ही टकटकी लगाकर त्स्वेतुख़िन की ओर देखने लगी, "और अगर यह कुछ-कुछ जानबूझकर कर रही हूं, तो?"

खड़े होकर उसने बालों में हाथ फेरा और नपे-तुले कदमों से कमरे का चक्कर लगाने लगा।

"नहीं, मैं यह नहीं मान सकता। मैं तुम्हें बहुत अच्छी तरह जानता हूं। तुम केवल एक हालत में जानबूझकर ऐसा कर सकती हो: अगर तुम्हारी छाती में किसी दूसरे का दिल रख दिया जाये तो।"

वह सोच में पड़ गई। वह मानो कान लगाकर यह सुन रही थी कि उसके उत्तेजित हृदय में क्या हो रहा है, और कहीं उसमें सचमुच किसी पराये की भावना का कोई प्रभाव तो नहीं। पर नहीं, नहीं।

"नहीं!" अदम्य उत्तेजना के साथ उसने कहा। "मैं चाहती थी कि मेरा मन सच्चा रहे। उस दिन ... नाटक के बाद आपको लेकर मेरा जी बहुत खट्टा हुआ ... और ... और मैं शर्मिंदा भी थी, आपके लिए।"

"पर मैं भी तो सब सच्चे मन से कर रहा था," त्स्वेतुख़िन याचना के से स्वर में चीखा। "क्या तुम अभी तक यह नहीं देख रही हो ..."

वह भी खड़ी हो गई।

"नहीं, नहीं, मैंने देख लिया है! तब सहसा मैंने देखा था और डर गई थी कि कहीं पास्तुख़ोव की ही बात तो सच नहीं। वही, जो उसने गर्मियों में कही थी।"

वह फिर से चिल्लाया, पर यह आवाज़ बिल्कुल उसके जैसी न थी।

"पास्तुख़ोव! उस नवाबज़ादे ने अपनी सारी ज़िंदगी में एक बार भी सच्चे मन से कोई बात नहीं कही है! वह हमेशा बनता फिरता है, मुखौटा पहने रहता है। याद है, तब बड़ी डींग हांक रहा था कि प्रेरणा होने पर ही लिखता है? अभी उस दिन कुछ एक्टर आये हैं, बता रहे थे, वहां कोज़्लोव में, घोड़ों की उस मण्डी में वह कलम घसीट रहा है। मामोन्तोव के दिनों में मुंह काला करवा लिया था, सो अब नाक रगड़ रहा है, सब कुछ करने को तैयार है। आखिर मुखौटा तो उतारना पड़ा! बक्की कहीं का!"

त्स्वेतुख़िन ने अपनी बात बीच में ही काट दी, मानो यों आत्मसंयम खो बैठने पर लज्जित हो गया हो। कोट झटककर और फिर से कमरे का चक्कर काटकर वह धीमे स्वर में, पर पहले की ही भांति खिसियाते हुए बोला:

"अजीब बात है कि तुम भी पास्तुख़ोव की तरह सोचने लगीं। तुमने खुद ही कहा था कि वह कीचड़ उछाल रहा है।"

"याद है मुझे। मैं तो बस इस ख्याल से डर गई थी कि कहीं उसकी बात सच है, तो?"

"पर क्या उसकी बात सच हो सकती है?"

"येगोर पाव्लोविच, इसमें मेरा क्या कसूर कि मुझे उसकी कही बात याद हो आई?"

उसने आनोच्का की ओर कदम बढ़ाया और उसके हाथों को अपने हाथों में दबाते हुए, उन्हें अपनी ओर खींचते हुए इतने जोश से बोलने लगा कि वह न तो उसे टोक सकती थी, न इशारे से उसकी बातों पर कोई आपत्ति कर सकती थी।

"सुनो, सुनो मेरी बात! किसने तुम्हें अभिनेताओं को ऐसी हेय दृष्टि से देखना सिखाया है, किसने तुम्हारे कान में यह बात फूंकी है? मैं देख रहा हूं मेरे बारे में ये विचार तुम्हारे अपने नहीं हैं! अगर हम कल ही पहली बार मिले होते और तब तुम रुखाई, अविश्वास, यहां तक कि नापसन्दगी भी दिखातीं, तो मैं इसे समझ सकता था, माफ़ कर सकता था। तुम तो मुझे बहुत अच्छी तरह जानती हो! मैं तुम्हारे लिए इतना कुछ करता हूं, आगे भी इतना कुछ करते रहने को तैयार हूं

और करता रहूंगा – केवल तुम्हारे लिए मेरे मन में जो भावना है उसकी खातिर! यह कैसे मुमकिन है कि तुम मुझ पर विश्वास न करो? क्या मैंने कभी किसी बात में धोखा दिया है? मुझे कभी किसी से इतना गहरा, इतना सच्चा लगाव नहीं हुआ है! तुमने मुझे नया जीवन दिया है। समझती हो? नया भविष्य! क्योंकर मैं अपनी आशा तुमसे छिपाऊं?"

"पर मैं क्या करूं, जबकि ..." उसकी बात काटने की कोशिश में आनोच्का चिल्लाई।

लेकिन उसने आनोच्का को बोलने नहीं दिया।

"ठहरो! बस एक सवाल का जवाब दे दो: मेरी ओर देखते हुए, देखो न, इधर देखो! – इस बात पर तो तुम विश्वास करती हो न कि मेरे मन में जितनी पवित्र भावना तुम्हारे लिए है, वैसी कभी किसी के लिए नहीं रही?"

"लेकिन यह तो यंत्रणा है – आप मुझसे वह कहलवाना चाहते हैं, जो मैं नहीं कह सकती!"

"नहीं कह सकतीं? ठीक है, अभी जवाब मत दो। मत दो अभी। मैं इंतज़ार करता रहूंगा। मुझमें धीरज है, बहुत धीरज है," त्स्वेतुखिन ने कटुता के साथ कहा।

"मैं आपके धीरज की परीक्षा नहीं लूंगी," आनोच्का ने हठधर्मी से कहा।

"ठहरो! अभी कोई फ़ैसला नहीं! कोई अंतिम निर्णय नहीं! तुम्हें खुद विश्वास आ जायेगा। तुम खुद देख लोगी कि मेरी भावना कितनी सच्ची है।"

आनोच्का की ठोड़ी कांपी, पर यह नहीं कहा जा सकता था कि वह अपनी हंसी दबा रही है, या अभी रो पड़ेगी।

"भावनाओं का अनुभव पाना ... और फिर अनुभव को दोहराना," उसने मानो अपने आप से कहा।

"नहीं, निश्छल मन में ऐसी निष्ठुरता नहीं हो सकती!" त्स्वेतुखिन ने हताश होकर उसांस छोड़ी और आनोच्का के हाथ और भी ज़ोर से दबाये।

"छोड़िये मुझे। छोड़िये न! सुनते नहीं – कोई दस्तक दे रहा है!" वह चिल्लाई और हाथ छुड़ाकर परे दौड़ी।

उसने ध्यान से सुना और फिर ड्योढ़ी में चली गई।

आंधी की सांय-सांय के बीच अधीरता भरी दस्तक साफ़ सुनाई दे रही थी। उसने अगड़ी हटाई ही थी कि दरवाज़ा अपने आप खुल गया, कोई अंदर घुसा और तत्क्षण आनोच्का भांप गई कि यह किरील है।

"मैं बंद कर दूंगा। जाओ अंदर, ठंड लग जायेगी," उसने कहा। ठंड मे उसका गला बैठ गया था।

आनोच्का कमरे में दौडी गई। त्स्वेतुख़िन खिड़की के सामने फ़ौजियों की तरह सीधा, तना खड़ा था। आनोच्का ने हाथ उठाया, मानो उसे चेताना चाहती थी, पर तुरन्त ही हाथ गिरा लिया। किरील कमरे में घुस रहा था।

ठंड से अकड़ी उंगलियों से बड़ी कठिनाई से उसने ओवरकोट के बटन खोले। उसके बाज़ुओं पर से हिम की परतें गिरीं। बूट पटककर उसने बूटों से बर्फ़ साफ़ की, कोट उतार फेंका, आनोच्का की ओर, फिर त्स्वेतुख़िन की ओर देखा और मुस्कराने की कोशिश की। लेकिन उसका चेहरा ठंड से इतना अकड़ गया था, लाल-सुर्ख़ हो गया था कि वह जड़वत ही रहा।

"नहीं, भई, यह तो हद हो गई! बिल्कुल फ़रवरी जैसा मौसम है!"

उसने जल्दी-जल्दी अपना बर्फ़ीला हाथ दोनों की ओर बढ़ाया और फिर बुखारी के पास गया, सारा शरीर उससे सटाकर खड़ा हो गया और कुछ सेकंड यों ही खड़े रहने के बाद घूमकर पीठ उससे सटाई।

"आनोच्का, तुम राह देखते थक गई? नाराज़ हो? मैं छावनी गया था। रास्ते में पंक्चर हो गया। कब्रिस्तान से पैदल आ रहा हूं।"

"कब्रिस्तान से यहां तक!" आनोच्का ने कहा और त्स्वेतुख़िन की ओर देखा, मानो उसे भी अपने आश्चर्य और भय में शामिल होने को कह रही हो।

"थका-मांदा, भटका पथिक देता है दस्तक..."* त्स्वेतुख़िन ने कहा और चुपके से अपनी पीठ पीछे खिड़की के शीशे पर दस्तक देकर ऐसे कान लगाया, मानो कोई रहस्यमयी आवाज़ सुन रहा हो।

---

* पुश्किन की एक कविता की पंक्ति। – सं०

"आपने दस्तक दी ?" आनोच्का ने हौले से पूछा।

"मैंने," भयभीत से स्वर में बुदबुदाते हुए उसने जवाब दिया। "तुम्हें क्या किसी और पथिक की भी प्रतीक्षा है?"

किरील हंस दिया। जल्दी से वह समोवार पर झुका, फूंक मारकर ढकने से राख उड़ा दी और फिर समोवार उठाकर मेज़ पर रख दिया।

"कुछ खातिर करो, आनोच्का!"

"बहुत ठंड लगी ?" आनोच्का ने पूछा, और फिर से त्स्वेतुख़िन की ओर नज़र दौड़ाई, जो मानो यह कह रही थी कि देखा, हमारे बीच कितना अपनापन है!

किरील ने त्स्वेतुख़िन से बैठने को कहा, पर उसने इन्कार कर दिया: उसे जाना चाहिए था, वह तो दो मिनट के लिए ही आया था, यह देखने कि आनोच्का बीमार तो नहीं।

"बीमार ?"

"हां, आज नये नाटक का वाचन था, पर आनोच्का आई नहीं। पहले इसने ऐसा कभी नहीं किया।

"तुमने बताया क्यों नहीं ?" किरील ने कहा। "हम कोई और समय रख लेते।"

तीनों ने एक दूसरे की ओर, देखा, अचानक आनोच्का दूसरे कमरे में दौड़ गई और खिलखिलाकर हंसने लगी, जैसे शरारत करते पकड़ा गया बच्चा।

त्स्वेतुख़िन के चेहरे पर फिर नाराज़गी का भाव आ गया – ऐसे क्षणों में वह निचला होंठ आगे निकाल लेता था, और उसे ऊपरी होंठ से चिपका देता था।

किरील ने अपनी मुस्कान दबाते हुए कहा:

"आप आनोच्का को ज़्यादा छूट मत दीजिये, नहीं तो वह अपनी मनमर्ज़ी ही करने लगेगी। उसका स्वभाव ऐसा ही है।"

"हां, अभी इसमें कुछ बचकानापन है," त्स्वेतुख़िन ने सख्ती से कहा। "बेशक, सहज स्वाभाविक होना बहुत बड़ा गुण है, लेकिन कला के सृजन के लिए अकेला यह गुण ही काफ़ी नहीं। कला का अर्थ है परिश्रम, परिश्रम, परिश्रम (तीसरी बार उसने बड़े गुस्से में कहा – परिश्रम!)। इसमें इन्सान को अपना

सर्वस्व न्योछावर करना होता है। अगर कला की सेवा करनी है, तो कला पहले आनी चाहिए, बाद में व्यक्तिगत जीवन, जीवन कला को अर्पित होना चाहिए (आखिरी शब्द उसने बहुत ज़ोर देकर कहे)। इसे एक नियम की भांति स्वीकार किया जाना चाहिए।"

"मैं आप से बिल्कुल सहमत हूं," किरील ने गम्भीरतापूर्वक, पर साथ ही मानो व्यंग्य के पुट के साथ कहा। "और मेरी आपसे अर्ज़ है कि आनोच्का से इस नियम का सख्ती से पालन करवायें।"

वह थम गया। उसकी भौंहें सिकुड़ गई, पर आंखें अभी भी त्स्वेतुख़िन पर ही लगी हुई थीं।

"मैं नहीं चाहता कि आनोच्का के व्यक्तिगत जीवन की कोई भी बात उसके काम में बाधक बने। ख़ास तौर पर मेरी अनुपस्थिति में। अगर मैं चला गया।"

आनोच्का दूसरे कमरे में से निकल आई थी। उसके हाथ में एक कागज़ था, और यह हाथ हर कदम के साथ नीचे गिरता जा रहा था।

"अगर तुम चले गये?" उसने हौले से पूछा।

किरील तुरन्त ही उसे सच्ची बात बताने का साहस नहीं कर पाया और उसने मजाक में कहा:

"हां, अगर मुझे कहीं जाना पड़ा, तो तुम्हें और किसके हवाले कर सकता हूं?"

आनोच्का ताड़ गई कि वह बात गोल कर गया है, और मुस्कराई पर पहले की ही भांति चौकन्नी थी।

"देखिये, आप लोग मुझे डांट रहे हैं। पर मेरी जब तारीफ़ की जाती है तो मैं ज़्यादा अच्छा काम करती हूं। येगोर पाव्लोविच, मैं थोड़ी शेखी बघार लूं?"

उसने किरील को कागज़ दिया।

यह लाल, पीले और नीले अक्षरों में बड़े जतन से लिखा गया आभार पत्र था, जो लुईज़ा मिल्लर को रिसाले की टुकड़ी के सैनिकों ने भेंट किया था (आनोच्का पूरे सात बार क्लब में अपनी एकमात्र भूमिका अदा कर चुकी थी)। आभार पत्र लिखनेवालों ने अपनी प्रिय अभिनेत्री के लिए उसी तरह के शब्द इस्तेमाल किये थे, जैसे मृतकों के लिए इस्तेमाल करने की परम्परा है – उन्होंने इस तरह उसकी प्रशंसा के

पुल बांधे थे, जैसे कि वह अब कभी भी अपने प्रशंसकों को निराश न कर सकती हो। उन्होंने लिखा था कि उसके अभिनय की बदौलत वे समझ गये हैं कि कैसे गरीब लोग राजाओं-महाराजाओं के अत्याचार सहते थे। उन्होंने यह विश्वास दिलाया था कि 'छल और प्रेम' जैसे शानदार नाटकों से बुर्जुआओं को पूरी तरह हरा देने का उनका संकल्प सुदृढ़ होता है। उन्होंने कामरेड अ० पाराबुकिना को अद्वितीय अभिनेत्री, रंगमंच का उज्ज्वल सितारा कहा था और लिखा था कि उनके कुछ साथी दो-दो बार यह नाटक देख चुके हैं, पर फिर भी और कई बार देखने को तैयार हैं। और उन्होंने अ० पाराबुकिना तथा दूसरे अभिनेताओं को मोर्चे पर चलने का निमंत्रण दिया था। "आप हमें अपनी सर्वहारा कला दिखायेंगे, और हम नीच देनीकिन का सफ़ाया करेंगे!" आनोच्का की प्रतिभा के प्राय: हर प्रशंसक ने अपने हस्ताक्षर के साथ कुछ लिखा भी था: "फिर मिलेंगे", "मोर्चे पर आना", और एक ने तो लिखा: "रोस्तोव चलो!"

किरील हैरान सा कागज़ पर आड़े-तिरछे हस्ताक्षरों को गौर से देख रहा था और इन हार्दिक, गम्भीर, सच्चे मन से लिखे गये शब्दों के विशेष महत्व को समझने की कोशिश कर रहा था। फिर उसने जेब में से पेंसिल निकाली।

"यह क्या कर रहे हो?" आनोच्का चिल्लाई और उसके हाथ से कागज़ छीनने को लपकी।

"मैं भी हस्ताक्षर करना चाहता हूं।"

"नहीं! ऐसा मत करो! यह मेरी यादगार है... इसे खराब मत करो! मैं इसे संभालकर रखूंगी।"

आनोच्का से बचते हुए वह उठा, उसकी ओर पीठ कर ली और कागज़ दीवार पर टिकाकर उसके ऊपर कोने में बड़े-बड़े अक्षरों में अपने हस्ताक्षर किये।

"यह तुमने क्यों किया!" आनोच्का चीखी, लगा वह अभी रो पड़ेगी।

"पहली बात, मैं भी चाहता हूं कि तुम्हारा थियेटर मोर्चे पर जाये," जहां तक बन पाया शांत स्वर में उसने उत्तर दिया, "दूसरे, मुझे भी इन सैनिकों के साथ हस्ताक्षर करने का अधिकार है।"

"कोई अधिकार नहीं है। तुमने नाटक भी बस एक बार देखा है! और अब मजाक उड़ा रहे हो।"

"यह मेरी रिसाले की टुकड़ी है। मुझे इसका ज़िम्मा सौंपा गया है, मुझे इसे मोर्चे पर ले जाना है। कल सुबह हम रवाना हो रहे हैं।"

आनोच्का बुत बनी उसकी ओर देखती जा रही थी। क्षण भर पहले ठंड से लाल किरील का चेहरा तेज़ी से पीला पड़ता जा रहा था। वह यह देखकर हक्का-बक्का रह गया था कि उसके शब्दों का आनोच्का पर क्या प्रभाव पड़ा है। उसने आनोच्का की ओर कुर्सी बढ़ाई।

त्स्वेतुख़िन ने खखारकर ज़ोर से सांस ली।

"हां! कितना अच्छा रहे यह! हम भी मोर्चे पर जाने का सपना देख रहे हैं। इससे अच्छी बात और क्या हो सकती? पर हमारे पास केवल एक ही नाटक तैयार है। और उसकी भी मंच सज्जा इतनी भारी-भरकम है। वैसे तो उसे कम किया जा सकता है..."

वह उत्सुकता से प्रतीक्षा करता रहा—क्या उत्तर मिलेगा। उसकी मख़मली आवाज़ इस छोटे से कमरे के लिए बहुत अधिक ज़ोरदार थी।

"पर हम कोशिश करेंगे! है न आनोच्का?"

"हम कोशिश करेंगे," आनोच्का ने यंत्रवत दोहरा दिया।

"सो आप कल जा रहे हैं?" अभी भी वह ख़्वामख़्वाह ज़ोर से बोल रहा था। "देनीकिन से लड़ने? अच्छा, तो सफलता की मेरी शुभकामनाएं। अपनी ओर से बस इतना वायदा कर सकता हूं: हम काम करेंगे, तन-मन लगाकर काम करेंगे।"

उसने ज़ोर से किरील का हाथ हिलाया और फिर ओवरकोट पहनने लगा।

"आनोच्का की ओर से आप निश्चिंत रहिये। मैं इसके गुणों को भी जानता हूं और कमियों को भी, और सदा सख़्ती से इससे काम लूंगा। ख़ूब सख़्ती से। अच्छा तो नमस्ते। अगर हमें आपके समर्थन की ज़रूरत पड़ी, तो इन्कार मत कीजियेगा। मेरा मतलब हमारे थियेटर से है। आख़िर तो हमारा लक्ष्य एक ही है!"

"मैं दरवाज़ा बंद कर लूंगा," किरील ने कहा।

किरील को दरवाज़े की ओर जाते देखकर आनोच्का जैसे होश में आई। वह जल्दी से उठी, किरील को रोका और खुद त्स्वेतुख़िन के

पीछे गई। वह अंधेरे में निराशाभरे कुछ शब्द कह पाया:

"अच्छा, मेरी दोस्त, सब समझ गया! ठीक है! तुम मेरे लिए पहले जैसी ही हो! सुखी रहो! बस..."

जैसे ही उसने दहलीज़ के बाहर पांव रखा तेज़ हवा उसके अंतिम शब्द उड़ा ले गई।

आनोच्का ने धड़ाम से दरवाज़ा बंद किया, दौड़ी-दौड़ी कमरे में लौट आई और किरील के सामने खड़ी हो गई। साफ़ दिखाई दे रहा था कि जो कुछ हुआ था, उस पर वह अपने मन को समझा-बुझा लेना चाहती है, पर ऐसा कर नहीं पा रही।

"मैं और कुछ नहीं मांगती, बस इतना ही कि यों अचानक मत जाया करो," दुखी स्वर में उसने कहा।

किरील ने हाथ उसकी ओर बढ़ाये, पर उसने मानो संकोच भरी गति देखी ही नहीं।

"आखिर क्यों तुम हर बार मुझे ऐन आखिरी घड़ी पर बताते हो?"

"मैं सोचता हूं – ऐसे ज़्यादा अच्छा है।"

"ताकि मेरे साथ एक घंटा और न बिताना पड़े?"

"ताकि उस बात की चर्चा न करनी पड़े, जो शब्दों के बिना ही स्पष्ट है।"

"ताकि जुदाई की वेदना अधिक गहरी हो?"

"ताकि वेदना कम हो।"

"तुम्हें ऐसा नहीं लगता कि यह निर्ममता है?"

"अक्सर साहस को ही निर्ममता कहा जाता है। पर तुम ऐसा क्यों कहती हो? इस वक्त हम दोनों के सुख के लिए बस साहस की ही आवश्यकता है।"

आनोच्का ने उत्तर में आंखें उठाकर उसकी ओर देखा और उसकी इस दृष्टि में किरील ने ऐसी नारीसुलभ कोमलता देखी, जैसी उसने पहले कभी न देखी थी। और एक विचित्र बात यह थी कि उसकी इस कोमलता को ही किरील ने साहस की उसकी तत्परता माना, जिसकी उसे आनोच्का से प्रतीक्षा थी। वे दोनों खाट की पाटी पर बैठ गये। किरील ने उसके हाथ अपने हाथों में ले रखे थे और उसकी आंखें आनोच्का के चेहरे पर लगी हुई थीं।

खिड़की के बाहर हिमानी आंधी की सांय-सांय के बीच कमरे की नीरवता आश्चर्यजनक लग रही थी। वे दोनों एक दूसरे के सांस की आवाज़ सुन रहे थे, लैम्प की बत्ती कभी-कभार हल्के से चटचटाती, खिडकी की महीन झरियों में हवा सिसकार रही थी, दीवार पर घड़ी की सुखद टिक-टिक हो रही थी। किरील को लगा आनोच्का का मन शांत हो रहा है, जो कि क्षण भर पहले असम्भव प्रतीत होता था।

"मैं एक बात कहना चाहता हूं। मैं जो कुछ करता हूं, उसके बारे में कुछ सोचते हुए अपनी उम्र से थोड़ी बड़ी होने की कोशिश किया करो।"

"मुझे लगता है मैं सदा अपनी उम्र से बड़ी रही हूं। पर अब इसकी चर्चा क्यों?"

"मुझे केवल वैसा करने का हक नहीं जैसा मुझे या मेरे किसी निकट सम्बन्धी को अच्छा लगता है। मैं अपने हर काम के लिए जवाबदेह हूं, समझीं? हर काम के लिए जवाबदेह हूं।"

"मैं समझती हूं। इसमें न समझने की बात ही क्या है! तुम सबके सामने तो जवाबदेह हो। पर मेरे सामने?"

"तुम्हारे सामने भी, जहां तक मुमकिन हो," उसने जवाब दिया और फिर मुस्कराया। "पता है, यहां आते हुए मुझे अचानक अफ़सोस हुआ कि मैंने तुम्हें अपनी रवानगी की बात पहले क्यों नहीं बताई।"

आनोच्का ने उसकी उंगलियां दबाई।

"अच्छा, तो तुम्हें पछतावा हुआ?"

"मैंने शायद इस बात पर अच्छी तरह विचार नहीं किया था।"

"पर क्या तुम्हें अपने हर काम पर सदा ही सोचना-विचारना चाहिए?!"

किरील ने कुछ जवाब नहीं दिया, बस झुककर अपना गाल आनोच्का की हथेली पर रख दिया। वह दूसरे हाथ से उसके रूखे-रूखे, बढ़े हुए बाल सहलाने लगी। किरील ने सिर उठाया और फिर से उसकी ओर देखने लगा।

"ओह, कैसे हो तुम..." आनोच्का बुदबुदाई।

किरील ने उसका चुम्बन लिया। वह बड़ी देर तक चुप रही, फिर उसके होंठों पर खोई-खोई सी बिल्कुल नई मुस्कान आ गई।

"तुमने सोच लिया अच्छी तरह क्या कर रहे हो?" उसने हौले से पूछा।

किरील ने और भी ज़ोर से उसका चुम्बन लिया। पीछे हटते हुए उसने अपनी हल्की, कोमल ठोड़ी से खिड़की की ओर इशारा किया।

किरील उछलकर खड़ा हुआ, मेज़ के पास गया और ज़ोर से फूंक मारकर लैम्प बुझा दिया।

३८

रात को आंधी थम गई।

दिसम्बर के दिन की पौ फट ही रही थी कि आनोच्का घर से बाहर निकली। बाहर विचित्र शांति थी। पटरियां हिम झालर से सजी लगती थीं, इस झालर पर हवा ने छोटी-छोटी लहरें बना दी थीं, जैसी बालुई टीलों पर होती हैं। सड़कें बीचोंबीच साफ़ थीं, बस उनके किनारे कहीं-कहीं नुकीले, चमकते शिखरों वाले हिमानी ढूह खड़े थे। स्याह पेड़ों पर कौए चुपचाप बैठे थे।

हिमानी आंधी के पश्चात नगर पर छाई शांति आनोच्का की व्याकुलता कम नहीं कर रही थी, उलटे बढ़ा ही रही थी। वह बेहद जल्दी में थी।

स्टेशन पर उनींदे, उतावले लोग न जाने कहां से अंदर आते, और न जाने कहां गायब हो जाते, सहसा फिर उनके झुंड जमा हो जाते और फिर बिखर जाते। चरमराते, धड़-धड़ करते दरवाज़े झूलों से आगे-पीछे डोल रहे थे। इंजनों की फुफकार कभी दूर से आती, कभी इतनी पास से कि लगता अभी अंदर ही घुस आयेंगे।

आनोच्का बड़े हाल में प्लेटफ़ार्म की ओर सबसे दूर वाली खिड़की के पास खड़ी थी—जैसा कि उसने किरील के साथ पिछली शाम को तय किया था। बड़ी देर तक आनोच्का उसका इंतज़ार करती रही। एक दरवाज़े से दूसरे दरवाज़े की ओर आते-जाते लोगों को देखते-देखते उसकी आंखें थक गईं।

आखिर जब किरील दिखाई दिया, तो वह उसे तुरन्त ही पहचान नहीं सकी। वह घुटनों तक लंबा भेड़ की खाल का ओवरकोट पहने था,

घुटनों से नीचे पांवों में नमदे के सफ़ेद जूते थे और सिर पर फ़र की ऊंची टोपी। आनोच्का को लगा जैसे वह चलता हुआ नहीं, वल्कि लुढ़कता हुआ आ रहा है।

"चलो, अव तुम्हें ठंड नहीं लगेगी," उसने मुस्कराते हुए कहा।

किरील ने फ़र के दस्ताने उतारकर सैनिकों की भांति उन्हें वगल में दवाया।

"अगर तुमने पहले से वता दिया होता कि कव जा रहे हो, तो मैं खाली हाथ न आती।"

किरील ने उसके हाथ अपने हाथों में लिये, और एक-एक उंगली को सहलाते हुए वोला:

"ये हाथ मेरे लिए कभी खाली नहीं।"

कुछ देर तक वे आंखों में आंखें डाले देखते रहे।

"सैनिक गाड़ी पर सवार हो गये हैं। गाड़ी प्लेटफ़ार्म पर है। थोड़ी देर में छूटनेवाली है।"

"इतनी जल्दी?" आनोच्का ने कहा और नजरें झुका लीं।

"चलो, चलें," किरील ने कहा।

आनोच्का की कोहनी पकड़कर वह उसे प्लेटफ़ार्म पर ले गया और वे गाड़ी के पास-पास चलने लगे। डिव्वों के दरवाज़ों में से भाप निकल रही थी, पानी के जमने से वनी वर्फ़ की छोटी वड़ी गुल्लियां सी छतों पर से लटक रही थीं। माल-डिव्वों से घोड़ों की गंध आ रही थी।

"दूर है?" आनोच्का ने पूछा।

"आखिरी डिव्वा है।"

"थोड़ी धीरे चलो।"

सभी डिव्वों में से एक दूसरी से होड़ लगाती चीखने-चिल्लाने और गाने की आवाज़ें आ रही थीं, कहीं-कहीं अकार्डियन पूरे जोश से वजाया जा रहा था। वे दोनों चलते जा रहे थे, और अनचाहे ही उनके कदम धीमे होते जा रहे थे।

आखिर उन्हें रागोज़िन और उसके पास ही खड़ी वेरा निकान्द्रोव्ना दिखाई दिये। चारों इधर-उधर की वातें करते खड़े रहे। इंजन सीटी देने लगा। उसकी निडर आवाज़ की लहरें अधिकाधिक जोर से उठ रही थीं, हवा भी उनसे थरथराती लगती थी।

"अच्छा," मां की ओर देखते हुए किरील ने अस्फुट से स्वर में कहा और उससे गले मिला।

फिर उसकी आंखें आनोच्का पर गड़ गईं। उसे बांहों में भरकर सहसा उसने कई बार उसके होंठ चूमे, इतने ज़ोर से कि वे दुखने लगे।

उससे अलग होकर फिर से मां की ओर देखा। वेरा निकान्द्रोव्ना मुस्कराते हुए सिर हिला रही थी। किरील ने मां की ओर कदम बढ़ाया, मां ने उसका सिर छाती से लगा लिया, और उसी क्षण, जब इंजन की सीटी थमी, फुसफुसाकर कहा:

"मैं इसका ख्याल रखूंगी। बेफ़िक्र रहो!"

वह सिर हिलाये जा रही थी। बेटे को भेजने की तैयारियों की इस रात के बाद उसके चेहरे पर ढलती उम्र की रेखाएं स्पष्टतया उभर आई थीं। सहसा यह दिखाई देने लगा था कि वह बूढ़ी हो रही है।

किरील जल्दी से रागोज़िन की ओर मुड़ा। गाड़ी चल पड़ी थी। वे दोनों डिब्बे के पीछे दौड़ने लगे, जो सैनिकों से खचाखच भरा हुआ था। किरील उछलकर पायदान पर चढ़ गया।

"मैं भी तुम्हारे पीछे-पीछे आ रहा हूं!" रागोज़िन टोपी उतारते हुए चिल्लाया।

"पहले अपना इलाज कराओ, प्योत्र पेत्रोविच! भले-चंगे हो जाओ! नमस्ते," किरील इतना ही कह पाया और फिर उसने रागोज़िन के गंजे सिर के ऊपर नज़र दौड़ाई।

आनोच्का हाथ ऊपर उठाये खड़ी थी। किरील दस्ताने हिलाने लगा। अब कहीं जाकर उन दोनों को यह अहसास हुआ कि छोड़नेवालों की कितनी भीड़ है: पलक झपकते ही हिलते हाथों, टोपियों और रूमालों के पीछे दोनों एक दूसरे की नज़रों से ओझल हो गये।

गाड़ी का शोर पहले तो लोगों की आवाज़ों में डूब गया था, पर अब ये आवाज़ें धीमी पड़ गई थीं और तेज़ होते जा रहे पहियों की ठकाठक मंद होती हुई दूर से आनोच्का के कानों में पड़ रही थी।

प्रियजन से विदाई का यह क्षण ही सबसे कठिन होता है—जब गाड़ी चली जाती है, उसका आखिरी डिब्बा आंखों से ओझल हो जाता है, जब सहसा अपने हृदय के टुकड़े को खोने की तीव्र अनुभूति होती है, उस व्यक्ति को खोने की, जो तुम्हारा अपना था, जिसे क्षण भर पहले

छुआ जा सकता था, पर जो अब एकदम ही पहुंच से बाहर हो गया है।

रागोज़िन और वेरा निकान्द्रोव्ना ने एक दूसरे के चेहरे पर भी और आनोच्का के चेहरे पर भी इस क्षण की वेदना की छाप देखी। परन्तु साथ ही आनोच्का के चेहरे पर भावनाओं की तीव्र उथल-पुथल भी स्पष्टतया नज़र आई मानो वह इस विदाई से ही व्यथित नहीं, बल्कि किसी दूसरी अग्नि-परीक्षा से भी गुज़र रही है। उसके चेहरे का रंग उड़ गया था और लगता था, बस अभी गिरी कि गिरी।

"आओ भई, इधर आओ," बड़ा अदब और उत्साह दिखाते हुए रागोज़िन ने आनोच्का की ओर बांह बढ़ाई।

"थोड़ी देर कहीं बैठ न लें? और फिर सब मेरे यहां चलें," चिंतित वेरा निकान्द्रोव्ना ने कहा।

"शुक्रिया, पर मैं नही चल सकती," आनोच्का ने कहा, "मुझे एक जगह जाना है ... वेरा निकान्द्रोव्ना अगर आप मेरे साथ चल सकें ..."

"चलूंगी, बिटिया, क्यों नहीं। पर यह अचानक कहां की ज़रूरत पड़ गई?"

"अस्पताल।"

"अस्पताल? तुम बीमार तो नहीं?"

"नहीं, नहीं। पिता जी को देखने जाना है। उन्हें कल अस्पताल भरती किया गया है।"

"क्यों? क्या हुआ उन्हें?"

वे प्लेटफ़ार्म के बीचोंबीच रुक गये। भीड़ अब नहीं रही थी। आनोच्का ने जल्दी-जल्दी वह सब बताया, जो उसे पिछली शाम को पता चला था।

किरील जब उसके यहां से गया, तो उसके थोड़ी देर बाद ही पाव्लिक घर लौटा। वह अकेला नहीं था। उसके साथ एक आदमी आया था, जो पाराबुकिन के साथ काम करता है। यह आदमी काम पर देर तक रुका रहा था, और अब आंधी-झक्कड़ की परवाह न करते हुए पाराबुकिन का घर ढूंढ रहा था। अहाते में पाव्लिक उसे मिला था। वह यह बताने आया था कि तीख़ोन प्लातोनोविच मुसीबत में पड़ गया है।

पता चला कि दोरोगोमीलोव को दफ़नाकर पाराबुकिन जब काम पर लौटा, तो वह और उसका दोस्त मेफ़ोदी कोठरी का दरवाज़ा बंद

करके वहां मातमी दावत करने लगे। थोड़ी देर बाद दोनों वहां से निकले, तो नशे में थे, पर मेफ़ोदी ने कहा कि आर्सेनी रोमानोविच दोरोगोमीलोव जैसी पुण्यात्मा के निधन पर दोनों मित्रों को जितना शोक है, उनकी दावत उसके अनुपात में छोटी रही है। इसके बाद दोनों चले गये, प्रत्यक्षतया अनुपात पूरा करने। और कोई तीन घंटे बाद, जब यह आदमी अपना काम खत्म कर चुका था और घर जाने ही वाला था, तभी अस्पताल से फ़ोन आया। फ़ोन करनेवाले ने बताया कि पाराबुकिन और मेफ़ोदी को सड़क पर पाया गया है और अस्पताल में भरती किया गया है—लगता है उन्होंने कोई ज़हरीली चीज़ खा-पी ली है।

आनोच्का को जब यह खबर मिली तो रात हो गई थी और हिमानी आंधी में अस्पताल जाना मुमकिन नहीं था। इसलिए उसने सुबह जाने का फ़ैसला किया था।

अंत में आनोच्का ने यह कहा कि सारी रात उसकी आंख नहीं लगी। बेशक किसी को भी यह जानने की कोई ज़रूरत नहीं थी कि पिता की चिंता के साथ-साथ उसके हृदय में परस्पर विरोधी भावनाओं का भी मंथन होता रहा था। उस शाम की कुछ घड़ियों में ही उसे कितने भांति-भांति के अनुभव हुए थे—पहले अपना एकाकीपन उसे काटने को दौड़ता रहा, फिर येगोर पाव्लोविच के साथ वह हृदयवेधी बातचीत हुई, फिर किरील के जाने की बात सुनकर उसका कलेजा बैठ गया और अंततः वे सुखद क्षण भी आये, जिन्होंने आनोच्का और किरील को सदा के लिए एक दूसरे का बना दिया।

रागोज़िन ने सारी बात सुनकर कहा:

"मेरे पास यहां घोड़ागाड़ी है। आप उसे ले जाइये। और अगर मेरी मदद की ज़रूरत पड़ी, तो मुझे खबर कर देना।"

दोनों औरतें तुरन्त अस्पताल चल दीं। रास्ते में वेरा निकान्द्रोव्ना ने बस एक सवाल पूछा—क्या आनोच्का ने पिता की विपदा के बारे में किरील को बताया है?

"नहीं, क्या ज़रूरत थी? कुछ करने का वक्त तो उसके पास था नहीं, बस मन में एक चिंता और बनी रहती।"

वेरा निकान्द्रोव्ना ने पुरुषों की भांति आनोच्का की कमर में हाथ डालकर उसे पकड़ा हुआ था। उसने आनोच्का को अपने पास खींच

लिया और वे सारे रास्ते यों ही बैठी रहीं – घोड़ागाड़ी कभी हिम के ढेरों में फंसती, कभी सड़क के गड्ढों पर धचके खाती चलती रही।

आनोच्का अपने आप को संभाले हुए थी, चुप्पी में ही वह मनोबल पा रही थी। अस्पताल में एक जगह से दूसरी जगह चक्कर लगाने की सारी यातनाएं वह चुपचाप सहती रही – उसके सारे शरीर में तनावपूर्ण संयम था, चेहरा पीला और जड़ सा।

हर जगह उन्हें देर तक इंतज़ार करना पड़ता था, क्योंकि जिस किसी से भी वे कुछ पूछतीं, वह एक साथ ही कई कामों में लगा होता.। नर्सें और डाक्टर इधर-उधर आ जा रहे थे। उन्हें कोई रोक लेता या वे खुद रुक जाते और अपने निजी मामलों की बातें करने लगते। अस्पताल में रहना इन लोगों का व्यवसाय था, काम था, जो वे सारी ज़िंदगी, दिन-रात करते आये थे। उन लोगों के लिए, जो अपने सगे-सम्बन्धियों की बीमारी या मौत के कारण अस्पताल में आते थे यह एक असाधारण घटना थी, कठोर परीक्षा और प्रायः घोर विपदा थी। अस्पताल में काम करनेवाले यह मानते थे कि रोगियों के लिए सब कुछ किया जाता है, और उनसे मिलने आनेवाले नाहक इतना घबराते हैं और उन्हें तंग करते हैं। मिलने आनेवालों का यह दृढ़ विश्वास था कि रोगियों के लिए सब कुछ नहीं किया जाता, और अस्पताल में काम करनेवालों की निश्चिंतता पर उन्हें परेशानी होती थी और गुस्सा आता था। अदालत की ही भांति यहां अपने और पराये दुख के प्रति इन्सान के रुख में अंतर अत्यंत स्पष्ट था।

रोगियों की भरती के काउंटर पर सिर पर रूमाल बांधी बैठी युवती ने रजिस्टर देखकर बताया कि हां पाराबुकिन और मेफ़ोदी को भरती किया गया था और उन्हें अमुक वार्ड में रखा गया है, रोगियों की हालत के बारे में वे सूचना कार्यालय से पता कर सकती हैं। सूचना कार्यालय में रात की ड्यूटी का रजिस्टर देखकर उन्हें बताया गया कि दोनों रोगियों को अमुक वार्ड में रखा गया है, कि रात को उनकी स्थिति गम्भीर थी और उनका तापमान इतना था। सुबह की सूचना अभी नहीं थी, इसके लिए वार्ड से नर्स को बुलाने की जरूरत थी, ताकि वह डाक्टर से यह पता लगाये कि अब रोगियों की हालत कैसी है। नर्स को ढूंढने में आधा घंटा लग गया। आखिर वह आई तो उसने बताया कि सुबह जब

वह ड्यूटी पर आई थी, तो रात की नर्स ने उसे कोई नये रोगी नहीं सौंपे थे। उसने कहा कि वह बड़ी नर्स या डाक्टरों से पूछ सकती है, शायद कोई जानता हो, लेकिन जाते-जाते वह सूचना कार्यालय के दरवाज़े में रुक गई, आनोच्का और वेरा निकान्द्रोव्ना देख रही थीं कि कैसे वह बड़ी देर तक दूसरी नर्स से बातें करती रही और उसे अपना नमदे का घिसा स्लीपर दिखाती रही। और आधा घंटा बीतने पर एक नर्स आई, जिसके एप्रन पर छोटा सा लाल क्रास बना हुआ था। उसने बताया कि दोनों रोगियों को रात को ही जनरल वार्ड से ले जाकर अलग वार्ड में रखा गया था, लेकिन उस वार्ड में जाना मना है। सुबह की जानकारी सूचना कार्यालय को अभी देर से मिलेगी, इससे पहले रोगियों की हालत के बारे में पता लगाने के लिए उन्हें उस विभाग के बड़े डाक्टर से इजाज़त लेनी होगी, पर अभी ऐसा नहीं किया जा सकता, क्योंकि डाक्टर रोगियों को देखने निकल गया है। अस्पताल का चीफ़ डाक्टर भी इजाज़त दे सकता था, पर वह इस वक्त आपरेशन वार्ड में था।

नर्स उस दरवाज़े की ओर चल दी, जहां से सफ़ेद गाउन पहने लोग लगातार आ जा रहे थे, पर दरवाज़े तक पहुंचने से पहले ही लौट आई और एक दुबले-पतले आदमी की ओर इशारा करते हुए बोली:

"वह रहे इग्नाती इवानोविच, उनसे पूछ लीजिये। वह विभाग के बड़े डाक्टर हैं।"

वह खुद उसके पास गई और उससे कुछ कहने लगी। डाक्टर ने वेरा निकान्द्रोव्ना और आनोच्का की ओर देखा, सिर हिलाया और उस औरत से आगे बात करने लगा, जो बार-बार सवाल पूछकर उसकी बात काट रही थी और अपनी उंगलियां मरोड़ रही थी। फिर सूचना कार्यालय की लड़की उसके पास गई और ज़ोर-ज़ोर से कहने लगी कि उसने किसी से वह किताब नहीं ली थी। फिर वे दोनों सूचना कार्यालय में चले गये। पूछ-ताछ की खिड़की से उनकी आवाज़ें आ रही थीं और स्पष्ट था कि उसी किताब को लेकर बहस हो रही है, जो लड़की ने किसी से नहीं ली थी।

"मैं क्या झूठ बोल रही हूं?" खिड़की में से आवाज़ आ रही थी।

आखिर इग्नाती इवानोविच बाहर निकला और सीधा दरवाज़े

की ओर बढ़ा, लेकिन उसकी नज़र आनोच्का और वेरा निकान्द्रोव्ना पर पड़ी और वह उनकी ओर मुड़ा।

"आप पारावुकिन का पता करने आई हैं?" उसने दबे स्वर में पूछा। "कौन लगती हैं आप उनकी?.. अच्छा, आप के पिता जी ..."

उसने धीरे-धीरे नज़र उस दरवाज़े की ओर घुमाई, जिधर वह जाने लगा था, और क्षण भर को चुप रहा।

"हां, हां," वह कुछ ऐसे लहजे में बोला, जैसे कि आनोच्का और वेरा निकान्द्रोव्ना पहले से ही वह बात जानती हों, जो वह बताने जा रहा है। "हां, सुबह सात बजे। गुज़र गये।"

"क्या... यों एकदम?" मानो अपने इन शब्दों में ही कुछ अर्थ ढूंढते हुए वेरा निकान्द्रोव्ना ने कहा, और आनोच्का की बांह कुछ ऐसे पकड़ी जिससे यह कहना मुश्किल था कि वह उसको आसरा देना चाहती है, या ख़ुद आसरा ढूंढ रही है।

"नहीं, एकदम तो नहीं। कोई दस घंटे ज़िंदा रहे। हृदय काफ़ी शक्तिशाली था। हालांकि काफ़ी अरसे से पीते लगते थे। हां, काठी मज़बूत थी।"

"पर वह अकेले नहीं थे?" वेरा निकान्द्रोव्ना अभी भी उपयुक्त शब्द ढूंढ रही थी।

"हां, वह भी। वह कमज़ोर थे। डेढ़-दो घंटे पहले ही। वह भी आपके रिश्तेदार थे? नहीं?"

आनोच्का की ओर गौर से देखते हुए उसने सांत्वना दी:

"आप ज़्यादा दुखी मत होइये। यह तो अच्छा ही हुआ। अगर बच रहते, तो दोनों अंधे हो जाते। मेथिलेटिड स्पिरिट थी।"

उसने एक बार फिर दरवाज़े की ओर नज़र डाली।

"अब कहां हैं वह?" आनोच्का ने बुझी आवाज़ में पूछा।

"पोस्ट मार्टम के बाद आप देख सकती हैं," डाक्टर ने कहा। कलई को पेट से दबाते हुए वह गाउन की डोरी बांधने लगा। "माफ़ कीजिये, मुझे वार्डों का चक्कर लगाना है। आप बैठ जाइये। मैं किसी को भेजे देता हूं आपके पास।"

उसने दोनों के सामने बारी-बारी सिर झुकाया और हलके-फुलके आदमी के उछलते कदमों से उस दरवाज़े की ओर चल दिया, जो सारा समय उसे अपनी ओर खींचता रहा था।

आनोच्का और वेरा निकान्द्रोव्ना बेंच पर बैठ गईं। वे एक दूसरी की ओर नहीं देख रही थीं, लेकिन जिस तरह वे एक दूसरी से सटी बैठी थीं, उससे स्पष्ट था कि यह निकटता उन्हें संबल प्रदान कर रही है, और इस समय यह निकटता ही उनका एकमात्र सहारा है।

वही छोटे से क्रास वाली नर्स उनके पास आई, जिसने कहा था कि वार्ड में जाना मना है। उसने आनोच्का की ओर पतली सी गिलासी बढ़ाई, जो तेज़ गंध वाली पीली सी दवाई से आधी भरी हुई थी।

"यह पी लीजिये। आपको पीनी चाहिए," उसने आग्रहपूर्वक कहा। वह इतनी शांत, धीर थी, मानो उसने पहले जो कुछ कहा था और अब जो कह रही है, उसमें लेशमात्र भी असंगति नहीं है।

वेरा निकान्द्रोव्ना ने गिलासी लेकर आनोच्का के मुंह से लगाई। आनोच्का ने कहना मानते हुए सारी दवाई पी ली।

उसका चेहरा पहले की ही भांति जड़ और पीला था। उसके इर्द-गिर्द जो कुछ हो रहा था, उसकी ओर से वह वेसुध तो नहीं थी, हां पूर्णतया उदासीन थी। उसके लिए इस बात में कोई अंतर नहीं रह गया लगता था कि क्या आवश्यक है और क्या निरावश्यक, क्या महत्व-पूर्ण है और क्या गौण। विचारमग्न सी वह सूचना कार्यालय की लड़की की ओर देख रही थी, जो फिर खिड़की में से किसी से चिल्लाकर कह रही थी:

"कहा न, मैंने देखी तक नहीं! मैं क्या झूठ बोल रही हूं?"

और वैसे ही विचारमग्न सी आनोच्का सुन रही थी कि कैसे वेरा निकान्द्रोव्ना उसे ढाढस बंधा रही है, यह कोशिश करते हुए कि उसमें अपने दुख को सहने, कुछ करने की शक्ति जागे:

"तुम डरो नहीं, मैं तुम्हारे साथ हूं। और हमारे मित्र हैं। हम अकेली नहीं हैं।"

आनोच्का के अंग-अंग से जो पूर्ण विरक्ति और उदासीनता व्यक्त हो रही थी, उसके बावजूद उसकी दृष्टि में, उसकी आंखों की गहराई में एक ऐसी झलक थी, जिसमें प्रायः पूर्ण बुद्धिभ्रंश के साथ-साथ विवेक पाने की उत्कट कामना व्यक्त होती थी, जैसा कि केवल मानसिक रोगों से पीड़ित व्यक्तियों के साथ होता है। इस क्षण आनोच्का या तो अपनी दुर्बलता के वशीभूत होकर बीमार पड़ सकती थी, या अपनी चेतना में

ऐसा संबल पा सकती थी कि जीवन भर के लिए उसे अपने आत्मबल में विश्वास हो जाता।

अपनी दृष्टि की इस झलक से वह बीते दिन के सबसे मार्मिक क्षण देख रही थी, उसे पहियों की ठकाठक कानों में पड़ती प्रतीत होती थी, उसे लग रहा था कि वह गाड़ी का आखिरी डिब्बा देख रही है, जो दूर होता जा रहा है, कि कोई कह रहा है: "अपनी उम्र से बड़ी बनो", और एक दूसरा स्वर: "काठी मज़बूत थी"। इन असम्बद्ध बातों में निश्चित सम्बन्ध था, हालांकि एक के होते दूसरे का होना असम्भव था। आनोच्का का हृदय मानो दो टुकड़ों में बंटा जा रहा था, और एक टुकड़ा गाड़ी के आखिरी डिब्बे के साथ जा रहा था, बरसों तक जीने के लिए, और दूसरा टुकड़ा यहां अस्पताल में रह गया था और सदा के लिए इस संसार से नाता तोड़ रहा था।

अथाह उदासी के साथ आनोच्का मुस्कराई। मानो सहसा मन में प्रकट हुई बात पर विस्मित होते हुए उसने कहा:

"पता है, किरील सचमुच पिता जी को बहुत चाहता था!"

वेरा निकान्द्रोव्ना ने उमड़ती ममता के साथ आनोच्का का हाथ अपने सीने से दबाया।

"कितनी सच बात है! तुम्हें पता भी नहीं, रानी, कितनी सच बात है यह!"

"पिता जी बड़े ही स्नेही स्वभाव के थे," आनोच्का पहले जैसे ही उदास स्वर में कहा, "बस वह अभागे थे।"

"तुम पा लोगी वह सौभाग्य, जो उन्हें नहीं मिल पाया। तुम पा लोगी!"

"हम बैठी क्यों हैं?" आनोच्का ने कहा और ऐसे आह भरी, मानो आंसुओं से मन हल्का कर लिया हो। "कुछ करना चाहिए। रागोज़िन के पास चलें। फिर येगोर पाव्लोविच के पास। मेफ़ोदी सीलिच ने आज उनकी सारी खुशियां छीन लीं।"

"हां, चलो। हम अकेली नही, अकेली नहीं," वेरा निकान्द्रोव्ना कहे जा रही थी।

बाहर ठंड में आने पर मानो उनकी इंद्रियां फिर से यथार्थ में लौटीं। एक बार फिर से घोड़ागाड़ी सड़क के खड़ंजों पर खड़खड़ करती

और हिम पर चरमराती दौड़ चली। नगर में अभी भी हिम झंझावात के बाद की शांति व्याप्त थी। हर मकान के साथ, हर मोहल्ले के साथ घोड़ागाड़ी ज्यों-ज्यों अस्पताल से दूर जाती जा रही थी, त्यों-त्यों आनोच्का को वह डिब्बा स्पष्टतया दिखाई दे रहा था, जो असीम हिम धवल मैदानों के बीच दौड़ा जा रहा था, और जिसमें वह स्वयं मानो किरील के सामने बैठी थी, उसकी पांडुर आंखों में उसके विचार पढ़ रही थी।

बेशक विचार आनोच्का के बारे में ही थे। वह उसे अकेली नहीं छोड़ सकता था, वह उसे अपने साथ ले आया था, इस डिब्बे में, रूस के असीम मैदान को पार करती इस विशाल रेलगाड़ी में अपने साथ ले जा रहा था।

दूर कहीं एक सिगनल पर गाड़ी रुकी और किरील डिब्बे में से निकला, धूप में चमकती हिमाच्छादित स्तेपी से उसकी आंखें चुंधिया रही थीं। सहसा उसे याद आया कि तोलस्तोय ने पथिकों के बारे में क्या कहा है: शुरू के आधे रास्ते में आदमी उस सबके बारे में सोचता रहता है, जो पीछे छोड़कर आया है, और बाद के आधे रास्ते में उस सब के बारे में, जो वहां होगा, जहां वह जा रहा है।

गाड़ी ज्यों-ज्यों आगे जाती जा रही थी, त्यों-त्यों किरील के अपने हमसफ़रों के साथ नये-नये सम्बन्ध बनते जा रहे थे। यह कोई आम गाड़ी नहीं थी, जिसकी सवारियां संयोगवश ही इकट्ठी होती हैं और गंतव्य स्थल पर पहुंचते ही अलग-अलग हो जाती हैं।

यह फ़ौजी गाड़ी पहियों पर बने चहल-पहल भरे नगर के समान थी। और जैसे कि नगर के निवासी सबके लिए सामान्य सड़कों, स्रोतों और उपजाऊ धरती से एक समुदाय में गठित होते हैं, वैसे ही इस गाड़ी की सवारियां सबके लिए एक सामान्य ध्येय से एक सूत्र में बंधी हुई थीं, उस ध्येय से, जो इस गाड़ी की सीमा से परे था। सुबह-शाम रसद और चारे की सोचना, ताश और चेकर्स खेलना, तम्बाकू पीना और गाना, लाइन खाली न होने से गाड़ी के रुकने पर नीचे उतरना — ये सब बातें ही उन्हें एक दूसरे से इतना नहीं जोड़ती थीं, जितना कि वह लड़ाई, जो वे अपने भविष्य के लिए लड़ने जा रहे थे।

किरील के मन में इस बात की चेतना बढ़ रही थी कि वह रेलगाड़ी की इस नगरी का निवासी है। वह अक्सर यह सोचता कि मोर्चे पर

उसका काम कैसा होगा, कैसे चलेगा और जिस सरातोव को वह पीछे छोड़ आया था, उसकी ओर उसका ध्यान कम ही कम जाता। यही कारण था कि उसे तोलस्तोय का कथन याद आया और उसे अपने पर लागू करके देखा तो हैरान हुआ – सचमुच ही पिछले सारे दिन में आनोच्का की याद भी उसे इतनी नहीं आई थी, जितनी कि यात्रा के आरम्भ में। लेकिन इस बात पर वह परेशान नहीं हुआ। आनोच्का उसके हृदय के सबसे गहरे कोने में जा बसी थी, और वह जानता था कि जब तक यह हृदय धड़कता रहेगा, तब तक आनोच्का उसमें बसी रहेगी।

गाड़ी बलाशोव और पोवोरिनो से होती हुई जा रही थी। मोर्चे के पास का ही इलाका होने के कारण यहां पर कई-कई बार रुके बिना गाड़ी का बढ़ना असम्भव था। तीसरे दिन जाकर कहीं उन्होंने वे स्थान – वोरोनेज और कस्तोर्नाया पार किये, जहां हाल ही में घमासान युद्ध हुए थे। जाड़ा यहां भी पूरी तरह आ चुका था, लगातार चलती रही हिमानी आंधियों के कारण रणक्षेत्रों में हुए रक्तपात की निशानियां हिम की चादर तले दब गई थी, बस स्टेशनों पर, सड़कों के आस-पास, गांवों मे अधजली काली इमारतें और मलबे के ढेर मातम कर रहे थे।

आखिर यह टुकड़ी नई गठित की जा रही कैवेलरी ब्रिगेड में शामिल हो गई और इसके साथ टुकड़ी को गंतव्य स्थल तक पहुंचाने का किरील का प्रमुख कार्यभार पूरा हो गया। उसने वोल्गा के साथियों से विदा ली और आगे दक्षिण की ओर चल दिया, जहां प्रथम अश्वारोही सेना कार्यरत थी।

किरील जब नोवी ओस्कोल पहुंचा, तो वहां चारों ओर खूब धूम-धाम थी: मकानों पर झंडे लहरा रहे थे, घुड़सवार इधर-उधर आ-जा रहे थे, खुले फाटकों में से अहातों में ज़ीन कसे घोड़े और उनके पास खड़े सैनिक दिखाई दे रहे थे। गरम कपड़ों में अच्छी तरह लिपटे बच्चे सड़कों पर भागे जा रहे थे और उनके पीछे-पीछे बड़े भी, सब एक ही दिशा में – शहर के बाहर जा रहे थे।

किरील ने कई लोगों से रास्ता पूछा, पर कोई उसे ठीक से जवाब नहीं दे सका। आखिर उसे एक नौजवान कमांडर मिला, जिसके कुछ सैनिक एक बहुत बड़ी मेज़ मकान में ले जा रहे थे। दरवाज़े तंग थे, कभी वे मेज़ को लिटाकर पाये आगे करके अंदर ले जाने की कोशिश करते, कभी खड़ी करके।

"चलो, पाये निकालो," एक सैनिक ने चिल्लाकर कहा। "अंदर ले जाकर फिर लगा देंगे।"

"अच्छा, निकाल लो," कमांडर ने हाथ झटकाते हुए कहा और दूसरी ओर मुंह मोड़ लिया।

उसने त्योरियां चढ़ाकर किरील की ओर देखा, मानो यह उसी का कसूर हो कि मेज़ दरवाज़े में नहीं घुस रही।

"क्या चाहिए आपको, कामरेड?"

किरील ने उसे अपनी समस्या वताई और इससे कमांडर और भी अधिक नाराज़ हो गया।

"दिखाओ अपने कागज़!"

उसके लहजे से ही किरील समझ गया कि वह अगर सही पते पर नहीं, तो उसके पास ही पहुंच गया है। उसने अपने कागज़ात निकाले। मोटे-मोटे दस्ताने उतारे विना ही कमांडर ने अपनी मुट्ठियों में कागज़ दवा लिये और बड़ी गम्भीरता से, एकाग्रचित्त होकर उन्हें पढ़ने लगा। उधर मेज़ ऐसे चरमरा रही थी, जैसे कोई भीमकाय अखरोट तोड़ा जा रहा हो। आखिर जव कमांडर मुड़ा, तो देखा कि सड़क पर न मेज़ है, न सैनिक, और तुरन्त ही उसने खुशी-खुशी कागज़ लौटा दिये।

"अच्छा, तो सरातोव से आये हैं? सरातोव तो नहीं गया, हां त्सरीत्सिन जाने का मौका मिला था, कामरेड वोरोशीलोव के साथ ही... चलिये, अंदर चलें।"

पता चला कि वह वोरोशीलोव का एड्जुटेंट है और उसे यहां पड़ाव का प्रवन्ध करने भेजा गया है। उसने किरील को वताया कि पास के गांव में दक्षिणी मोर्चे और प्रथम अश्वारोही सेना की क्रांतिकारी सैनिक परिषदों की संयुक्त वैठक हुई थी। सेर्पुखोव से, जहां दक्षिणी मोर्चे का हेडक्वार्टर था, कामरेड स्तालिन आये थे और उन्होंने वैठक में देनीकिन को हराने की योजना को पूरा करने में प्रथम अश्वारोही सेना के कार्य-भारों के वारे में वताया था। यहां आस-पास के इलाके में अश्वारोही सेना की कई टुकड़ियां जमा थीं और नोवी ओस्कोल के पास उनकी परेड होनेवाली थी (मोर्चे पर हर डिविज़न की एक-एक व्रिगेड लड़ रही थी)।

"चलेंगे देखने? घंटे भर वाद मेरी स्लेज तैयार होगी," एड्जुटेंट ने कहा।

बातें करते हुए वह अधिकाधिक सत्कारशील होता जा रहा था। शायद मेज़ के झंझट से वह सचमुच ही खीजा हुआ था। अब सब कुछ ठीक-ठाक हो रहा था, और वह सैनिकों को यह बता रहा था कि फ़र्नीचर कैसे लगायें, गमले बाहर ले जा रहा था, तसवीरें एक जगह से हटाकर दूसरी जगह टांग रहा था – इस सब काम का वह आदी लगता था, सो अधिक मिलनसार हो रहा था।

"चले चलिये! हर हालत में कामरेड वोरोशीलोव ही आपकी नियुक्ति अनुमोदित करेंगे। और अपनी टुकड़ी के बारे में आपको रिपोर्ट भी उन्हें ही देनी है। सो, अभी वक्त है। आप देखेंगे कैसी हैं हमारी डिविज़नें अब! बस देखते ही रह जायेंगे!"

वह कुछ सोच में पड़ गया।

"क्या ख्याल है, लगी रहने दूं? या हटा दूं?"

उसने असमंजस के साथ सिर से दीवार की ओर इशारा किया, जहां प्राचीन रूसी वेश-भूषा पहने महिला का धुएं से काला पड़ गया चित्र टंगा हुआ था।

"क्यों क्या परेशानी है?"

"भई, यहां कमांडरों और कमिसारों को क्रांतिकारी सैनिक परिषद के सामने पेश किया जायेगा।"

"तो क्या हुआ? यह तो माकोव्स्की* का चित्र है।"

"शैतान जाने इस कला को! कभी कुछ कहा नहीं जा सकता।"

दोनों हंस पड़े – अपने-अपने मन की बात पर। उनमें वह आत्मीयता आ रही थी, जो मोर्चे पर इतनी आसानी से लोगों के सम्बन्धों में आ जाती है, और प्रायः इतनी ही जल्दी भुला भी दी जाती है, परन्तु कभी-कभी सैनिकों की जीवन भर की मित्रता बन जाती है।

किरील और एड्जुटेंट जब परेड देखने निकले, तब तक दोनों दोस्त बन चुके थे। स्लेज की पट्टियां हिम पर चलती लगातार एक सुर में चरमराती जा रही थीं, सड़क के गड्ढों में स्लेज सहज ही गोता लगाती और फिर धीरे-धीरे ऊपर उठ आती, इसके साथ ही सवार पहले आगे को

---

* माकोव्स्की – १९ वीं सदी का सुविख्यात चित्रकार। – सं०

गिरते और फिर पीछे को, यों गिरते हुए उनकी वातचीत भी पहले तेज़ हो जाती और फिर धीमी पड़ जाती।

नगर के बाहर पहुंचते ही उन्हें असीम स्तेपी दिखाई दी, जिसमें कहीं-कहीं टीलों की शृंखलाएं थीं। स्तेपी के दूधिया विस्तार में बल खाते लंबे-लंबे हिम-सर्प तेज़ी से बढ़ रहे थे। जाड़े के दिन का यह सबसे उजला पहर था, लेकिन हिमानी वादलों की सीसे की चादर सारे आसमान पर नीची छाई हुई थी।

दूर से ही किरील को परेड के लिए खड़े अश्वारोही सैनिकों की कटी-कटी रेखाएं दिखने लगीं। उनकी टुकड़ियां रेल लाइन के स्लीपरों की भांति विशाल क्षेत्र में फैली हुई थीं। कुछ पास को लोगों की काली लाइन दिख रही थी, उसके निकट पहुंचते हुए स्लेज गाड़ी अपने पीछे वहुत से लोगों को छोड़ती जा रही थी, जो देर हो जाने के डर से तेज़-तेज़ चल रहे थे।

भीड़ के पास पहुंचकर जब वे स्लेज से उतरे, तो पाया कि दर्शकों के उस बिचले भाग तक आगे घुस पाना मुमकिन नहीं है, जहां लाल झंडे लहरा रहे थे और उन लोगों के लिए जगह बनी हुई थी, जिन्हें सलामी लेनी थी। किरील और एड्जुटेंट फिर से स्लेज में बैठ गये और भीड़ की पीठ पीछे बढ़ते हुए ऐसी जगह ढूंढने लगे, जहां कुछ कम लोग खड़े हों।

दूर से "हुर्रा" की गूंज आ रही थी, हवा के झोंके कभी-कभी संगीत के स्वरों को यहां तक ले आते, कभी वे बीच में ही खो जाते। निरीक्षण आरम्भ हो गया था – क्रांतिकारी सैनिक परिषदों के सदस्य डिविज़नों का चक्कर लगाते हुए सैनिकों का अभिवादन कर रहे थे।

आखिर उन्हें उपयुक्त स्थान मिल गया। किरील भीड़ में घुसकर आगे पहुंच गया और वहां उसने स्तेपी पर नज़र दौड़ाई। उसके बिल्कुल सामने और दाईं ओर को स्तेपी क्षितिज तक चली गई थी, और वहां कोई धब्बा तक नहीं दिखाई दे रहा था, वस दूर कहीं पेंसिलों जितने ऊंचे तार के खंभे धरती पर बल खाते उड़ रहे हिम के पीछे से धुंधले से दिख रहे थे। वाईं ओर रिसाला था, टकटकी लगाने पर वहां अगली कतार में घोड़ों की लाइन और उसके ऊपर घुड़सवारों की पतली सी रेखा तथा कहीं-कहीं हवा में प्रकट हो उठते ध्वज देखे जा सकते थे।

संगीत और जय-जयकार बंद हो गया, बाहों पर लाल क्रॉस की पट्टियां बांधे तथा कंधों पर झोले लटकाये अरदली प्रकट हुए, परेड मैदान में ड्यूटी के लिए नियुक्त सैनिक दौड़कर अपनी-अपनी जगह खड़े होने लगे। यह क्षणिक हलचल खत्म हो गई, तो किरील ने देखा कि बाईं ओर से भीड़ के समानांतर कुछ घुड़सवार और उनके पीछे स्लेज गाड़ी भीड़ के केन्द्र की ओर आ रही है।

"आ रहे हैं, आ रहे हैं," एड्जुटेंट ने किरील को बगल में टहोका देते हुए कहा।

परन्तु तभी घुड़सवारों का दल भीड़ की अगली पंक्ति के इतने पास आ गया कि उसमें घुल-मिल सा गया, और किरील को वहां कुछ दिखाई नहीं दे रहा था, हालांकि वह अगली कतार से एक कदम आगे बढ़ गया था।

इसके तुरन्त बाद ही बिगुलों के ताम्र स्वर गूंजे और दूर कहीं आदेश दिये जाने लगे, जो यहां प्रायः सुनाई नहीं दे रहे थे। लेकिन यह सब किरील के बाईं ओर काफ़ी दूर हो रहा था, और अब उसे यह ख्याल आया कि वह घटनाओं के केन्द्र से कितनी दूर खड़ा है। उसे इस बात पर अफ़सोस हो रहा था कि वह यहां एक ओर को खड़ा है, जबकि उसका मन बीच में खड़े होने का था, किन्तु यह अफ़सोस उसके हर्षोल्लास को नहीं दबा सकता था, जो सैनिकों की अभेद्य दीवार को देखकर उसके मन में प्रतिपल बढ़ रहा था। इतनी दूर से यह स्पष्ट आभास होता था कि किसी भी क्षण चल पड़ने की तत्परता में अश्वारोही भी और अश्व भी एकदम तने खड़े हैं; असीम हिमाच्छादित विस्तार भी इसी तनाव से भरा लगता था।

आदेशों के स्वर आने बंद हो गये, स्तेपी की निस्तब्धता में हवा के धरती से टकराने की आवाज़ और उस पर बढ़ते हिमकणों की सरसर सुनाई पड़ रही थी।

और फिर पास ही कहीं बैंड बजने लगा। यह कैवेलरी की उत्साह-वर्द्धक मार्च-धुन थी, जिसमें वीरता के साथ ज़िंदादिली का पुट था, और जिसकी ताल सधे घोड़े की इठलाती चाल पर आधारित थी। संगीत के इन स्वरों में शनैः-शनैः भूगर्भ से उठती दबी-दबी गड़गड़ाहट मिल रही थी: रिसाला चल दिया, परेड शुरू हो गई।

परन्तु यह एक विशिष्ट गति थी, जिसमें सैनिकों के मार्च के साथ उतनी ही कम समानता थी, जितनी कबूतरों की उड़ान और मनुष्य की चाल के बीच है।

डिविज़नें नम्बरों के क्रम में आ रही थीं, और परेड का उद्घाटन चौथी डिवीज़न कर रही थी। इसकी सबसे अगली स्क्वैड्रन दुलकी चाल से चली, पर तुरन्त ही घोड़ों को सरपट दौड़ाने लगी। सैनिकों ने तलवारें सिरों के ऊपर उठाईं। काठी पर भुका और लाल ध्वज की अग्नि-जिह्वाओं में लिपटा ध्वजवान दंड को भाले की भांति नीचे भुकाये बर्फ़ीली हवा को चीरता बढ़ रहा था और उसके पीछे विस्तार के खुले सिंहद्वार में स्क्वैड्रन उफनती आ रही थी।

भारी गड़गड़ाहट में ठंड से जकड़ी ज़मीन की टंकार भी मिल गई— नालें हिम आवरण को भेद रही थीं और धरती सहस्रों घंटियों सी टंकार कर रही थी। अश्वारोहियों ने जयनाद किया। घोड़े पूरी रफ़्तार से दौड़ रहे थे। उनके सुमों तले से हिमकण उमड़-घुमड़ रहे थे और धार से दायें-बायें उड़ रहे थे।

तूफ़ानी वेग से यह लहर उस स्थान तक बढ़ आई, जहां से पल भर पहले मार्च-धुन सुनाई दे रही थी। धरती की गड़गड़ाहट, सैनिकों के जयनाद तथा सैकड़ों घोड़ों की टाप में संगीत के स्वर पूरी तरह खो गये। इस उफान पर क्षण भर को अवाक रह गये दर्शकों ने भी हर्षनाद किया और सभी स्वर एक अनवरत गर्जन में मिल गये।

सरपट दौड़ती गई स्क्वैड्रन की कुछ भलकें ही किरील की नज़रों में पड़ीं: एक दमकता ताम्रवर्णी चेहरा और उस पर चमकते दांत; लाल-पीली सी फ़र की टोपी; मुश्की घोड़े का ऊंचा उठा थूथना और दहाने को ज़ोरों से चबाते जबड़े; और फिर भांजी जा रही तलवारों की चमक; और सहसा एड़ लगाता विशाल काला बूट, और फिर सुरंग अयाल से सटा नौजवान का फक चेहरा। उमड़ते-घुमड़ते हिम में किरील ने ये सब भलकें पाई ही थीं कि स्क्वैड्रन दाईं ओर को दूर निकल गई। बाईं ओर से नई स्क्वैड्रन हर्षनाद और हुंकार के साथ बढ़ती आ रही थी।

इस तरह एक के बाद दूसरी स्क्वैड्रनें उफनती नदी सी चली आ रही थीं। सैनिकों में कोई घुटनों तक लंबा भेड़ की खाल का कोट पहने था, कोई साधारण फ़ौजी ओवरकोट, कोई कमर से सटे कज़्ज़ाक कोट,

कोई पतले नमदे का काकेशियाई कोट, कोई मज़दूरों वाली मिरज़ई और कोई लड़ाई में हाथ लगी अंग्रेज़ी वर्दी। उनके कंधों पर बंदूकें थीं और सिरों पर कपड़े और फ़र की भांति-भांति की टोपियां। घोड़े भी अलग-अलग रंग और नस्ल के थे। बस सभी की तलवारें एक समान चमक रही थीं और उनके अच्छे रूसी फ़ौलाद की खनक एक जैसी थी।

"छठी डिविज़न आ रही है! छठी!" इज़्वेकोव के नये साथी ने उसके कान में चिल्लाकर कहा।

किरील ने दंड के नुकीले सिरे से हवा को चीरते आ रहे ध्वजवान की ओर नज़र घुमा ही ली थी, तभी चौथी डिवीज़न की आखिरी स्क्वैड्रन में से काला सा गोला गिरा और हिम-धूल में लोटने लगा।

"गिर गया! गिर गया!" लोग चिल्लाये। "कुचला जायेगा!" गिर पड़ा घुड़सवार भीड़ से कोई दस कदम दूर चित पड़ा हुआ था और उससे थोड़ी दूर बगल से उठकर खड़े होने की कोशिश में घोड़ा टांगें फेंक रहा था।

किरील लपककर सैनिक के पास पहुंच गया, उसकी बांह पकड़कर उसे हिम पर घसीटने लगा। लेकिन सैनिक का दूसरा हाथ तेगवन्द में फंसा हुआ था, तलवार ज़मीन में गड़ गई थी और मानो अपने स्वामी को छोड़ना नहीं चाहती थी। किरील ने तलवार ज़मीन में से निकाली और फिर से सैनिक को घसीटने लगा। पास ही से ध्वजवान के गुज़रने की आवाज़ आई, छठी डिवीज़न के हरावल दस्ते की टापों की गड़गड़ाहट भी बढ़ती आ रही थी। तभी अरदली आ गया और वे दोनों मिलकर सैनिक को मैदान से निकाल ले गये। भयभीत घोड़ी खड़ी हो गई थी, ड्यूटी का सैनिक उसकी ओर लपका, लगाम खींचकर आखिरी क्षण में उसे परे ले गया, जब दस्ता वहां पहुंच ही गया था। दाईं कतार के घोड़े की छाती रास्ता पार करती घोड़ी के पुट्ठे से इतनी ज़ोर से टकराई कि वह लोगों पर गिरने-गिरने को हुई।

इस सब में कुछ सेकंड लग गये, चूंकि किरील और अरदली परेड देखने को उतावले थे, इसलिए उन्होंने सैनिक को मैदान से हटाकर हिम पर रख दिया।

ज़मीन पर गिरते ही सैनिक होश में आ गया। उसके सिर पर घुंघराले सुनहरे बालों का प्रकृतिदत्त टोप था, और उनके ऊपर जो

शिरस्त्र उसने धारण कर रखा था, वह अब मैदान में घुड़सवार दस्तों द्वारा रौंदा जा रहा था। सैनिक ने सिर उठाकर लोगों पर नज़र डाली, अपनी तलवार की मूठ टटोली (किरील ने तलवार म्यान में डाल दी थी), स्प्रिंग की तरह उछलकर खड़ा हो गया, अपनी लटों में हाथ डाले और गला फाड़कर चिल्लाया:

"माश्का! कहां है माश्का, हरामज़ादी?!"

तभी लोगों के कंधों के पीछे उसने अपनी घोड़ी देख ली, जो पेशानी पर अबलक सितारे वाला थूथना ज़ोर-ज़ोर से झटक रही थी। वह लपककर उसके पास गया और पूरी बांह घुमाकर उसकी आंखों के बीचोंबीच करारी चोट रसीद की। फिर बाग पकड़कर और उसे इधर-उधर झटकाते हुए चिल्लाने लगा:

"तेरा सत्यानास जाये, हरामजादी! दगा दे गई! काम तमाम कर दूंगा, मुई का!"

पर शीघ्र ही लोग परेड देखने में मग्न हो गये और इस घटना को भूल गये।

"ग्यारहवीं डिविज़न!" बुद्योन्नी टोप पहने एक से एक बढ़कर दिलेर घुड़सवारों को आते देखकर एड्जुटेंट बड़े जोश से चिल्लाया। इस बिल्कुल नई ही किस्म के शिरस्त्र और वर्दी की समानता से उनका तूफ़ानी वेग और भी अधिक प्रचण्ड लगता था, उनका हुंकारा और भी अधिक ज़ोरदार—वे मानो अपने प्राण हथेली पर लिये रणक्षेत्र को जा रहे थे।

जिस क्षण से किरील घोड़े से गिर पड़े सैनिक की मदद को लपका था, उस क्षण से परेड के दर्शक का उसका उल्लास और उत्साह परेड में भाग लेनेवाले की तीव्र अनुभूति में परिवर्तित हो गया था। वह मानो हवा से बातें करते अश्वारोहियों को देख नहीं रहा था, बल्कि स्वयं भी अदृश्य घोड़े पर सवार हो उनके साथ उड़ा जा रहा था। अंतर केवल इतना ही था कि प्रत्येक सैनिक लोगों के सामने से अपने दस्ते के साथ केवल एक बार गुज़रता था, और किरील हर दस्ते, हर सैनिक के साथ गुज़र रहा था। उसका अंग-अंग फड़क रहा था।

सारा मार्च देखते-देखते पूरा हो गया। प्रायः पंद्रह मिनट में ही प्रथम अश्वारोही सेना के लगभग दो-तिहाई सैनिक अपने कमांडरों के सामने से सलामी देते हुए गुज़रे।

लोग तुरन्त ही सारी व्यवस्था भूल-भालकर सलामी मंच की ओर लपके। फिर से संगीत सुनाई देने लगा। झंडे फड़फड़ा रहे थे। अलग-अलग घुड़सवार भीड़ में इधर-उधर आने-जाने लगे।

"सामने देखिये," किरील के साथी ने कहा, जो अभी तक उससे एक कदम भी दूर नहीं हटा था। "नुकरा घोड़ा देख रहे हैं? वो घुड़सवारों के बीच, हमारी ओर आ रहे हैं। देखा?"

भीड़ की वजह से किरील कुछ देख नहीं पा रहा था। एक झंडा सामने से ले जाया गया, फिर एक और।

"दायें देखिये, दायें! जल्दी से!"

किरील को कुछ घुड़सवार दिखे, जो दुलकी चाल से उधर जा रहे थे, जिधर डिवीज़नें गई थीं। वह उनकी शक्लें देखने की कोशिश कर रहा था, लेकिन घुड़सवार पास-पास चल रहे थे और वह उनमें से किसी को भी अच्छी तरह नहीं देख पा रहा था। उसे लोगों की आवाज़ें सुनाई दीं:

"बुद्योन्नी! बुद्योन्नी!"

एड्जुटेंट ने किरील की बांह खींची।

"स्लेज देखी? स्तालिन है उसमें, स्तालिन!"

पल भर को किरील ने सैनिकों जैसा ओवरकोट तथा शिरस्त्र सा फ़र का कनटोप पहने व्यक्ति को स्पष्टतया देखा। कनटोप का कानों को ढकनेवाला हिस्सा नीचे लटका हुआ था, इसलिए चेहरा दिखाई नहीं दिया।

स्लेज गाड़ी जल्दी से मोड़ के पीछे ओझल हो गई, किरील को बस उसकी मखमली पीठ ही दिखाई दी।

वह अभी गायब होती स्लेज की ओर देख ही रहा था कि एड्जुटेंट ने उससे कुछ कहा। लेकिन जब किरील ने मुड़कर देखा तो वहां कोई नहीं था, न एड्जुटेंट और न उसकी स्लेज गाड़ी – जितनी तत्परता से वह किरील को अपने साथ यहां लाया था, उससे भी अधिक आसानी से वह उसे छोड़कर चला गया था।

किरील हंस पड़ा और प्रसन्नचित्त चल दिया – भीड़ के पीछे-पीछे नगर की ओर।

उमंग के क्षणों में किरील के लिए चिंतन-मनन भी ऐंद्रिय अनुभव

हो जाता था। जीवन का ऐंद्रिय बोध मस्तिष्क में उठते विचारों और छापों के अनवरत क्रम के साथ एकाकार हो जाता था। स्तेपी का एकरूप दृश्य तथा समान गति से निर्बाध बढ़ते कदम इस समय उसके विचारों एवं भावनाओं के ऐकात्म्य को और भी अधिक सुदृढ़ कर रहे थे। चलने में उसे आनन्द आ रहा था।

किरील हृदय पर गहरी पड़ी छाप के अलग-अलग ब्योरों पर विचार नहीं कर रहा था। वह इस समग्र छाप को ही हृदय में समेटे लिये जा रहा था।

स्तेपी में सहर्ष चलते हुए किरील के स्मृति-पटल पर कई बार वह अंतिम छाप सजीव हो उठी थी। यह छाप यों तो साधारण सी ही थी: मोड़ पर मखमली स्लेज की झलक, उसमें बैठा व्यक्ति, सैनिकों के ओवरकोट में उसके कंधे, फ़र का कनटोप।

किरील जब शहर पहुंचा, तो झुटपुटा हो चला था। उसे यह नहीं पता था कि रात कहां काटनी होगी। लेकिन इस चिंता से वह परेशान नहीं था। उसके मन में सैनिकों का यह विश्वास था कि वह सेना में है तो सब कुछ ठीक ही होगा।

चौराहे पर किसी ने ज़ोर से उसे पुकारा। दौड़ता घोड़ा सड़क के बीचोंबीच रुका। छोटी सी स्लेज में एक दूसरे की गोद में चार कमांडर बैठे थे। उनमें से एक उछलकर नीचे उतरा। किरील एड्जुटेंट को पहचान गया। किरील की ओर दौड़ते हुए वह चिल्लाया:

"आप सीधे उस मकान को जाइये, जहां हम मिले थे। पर आपको वहां अंदर नहीं जाने देंगे। उसके आगे एक और छोटा मकान है... अभी मैं भी पहुंचता हूं वहीं!"

किरील तक आये बिना ही वह वापस मुड़ गया। स्लेज चल ही पड़ी थी, जब वह उछलकर अपने कामरेड की गोद में बैठ गया।

शीघ्र ही किरील उस जाने-पहचाने मकान तक पहुंच गया। अंधेरा घिर आया था। तंग सी खिड़कियों में से पीली रोशनी आ रही थी। बाड़ से कुछ घोड़े बंधे खड़े थे, जिन पर साज़ कसे हुए थे। मकान के दरवाज़े के पास किरील को दंड और ध्वज दिखे, ध्वज शायद लाल था, लेकिन अंधेरे में काला ही लग रहा था। रिसाले का पुराना सैनिक तुरन्त समझ जाता कि यहां हेडक्वार्टर के दस्ते का पड़ाव है। दरवाज़े पर दो संतरी खड़े थे। इधर-उधर लोग आ जा रहे थे, अंधेरे में सब

एक जैसे लग रहे थे और उनके पांवों तले हिम की चर्र-चर्र हो रही थी।

कोई पचास कदम आगे जाने पर किरील को छोटे मकान की खिड़कियों से आती रोशनी दिखाई दी। सैनिक ज़ोर-ज़ोर से बातें करते हुए बाहर निकल रहे थे। वह उनसे कुछ पूछने ही लगा था कि पीछे से स्लेज आ पहुंची।

"आप पहुंच भी गये? चलिये, कुछ खा-पी लें!" एड्जुटेंट ने स्लेज से कूदकर किरील की बांह पकड़ते हुए कहा।

बड़े कमरे में बहुत से कमांडर जमा थे। गोल मेज़ पर सादी डबलरोटी, उक्राइनी चर्बी और भूना गोश्त काटे जा रहे थे। नमकीन खीरे और बंदगोभी रखे हुए थे। एक गिलास बारी-बारी सबको दिया जा रहा था। बिना बटनों वाला भेड़ की खाल का कोट पहने चौड़े कंधों वाला मुच्छड़ ढाई लीटर की बोतल में से चासनी जैसी गाढ़ी, आलूबुखारे के रंग की शराब गिलास में उंडेल रहा था।

"ज़रा जगह दो, कामरेडो! वोल्गा वाले को भी दो घूंट भर लेने दो," एड्जुटेंट ने कहा।

किरील को गिलास थमा दिया गया। खाने की गंध से उसे भूख का अहसास हुआ। किसी ने उसे शिकारियों का भारी सा चाकू पकड़ा दिया। उसने डबलरोटी का एक सिरा काटा। किसी ने पूछा वह कहां से आया है। किरील एक घूंट में सारा गिलास पी गया, फिर सांस लेकर उसने जवाब दिया। बातचीत शुरू हो गई।

खाना खाने के बाद किरील ने इस छोटे मकान के कमरों का चक्कर लगाया। एड्जुटेंट एक बार फिर गायब होने से पहले उसे कहता गया था कि वह रात यहीं काट सकता है, और सुबह ठीक तरह से इंतज़ाम हो जायेगा। लेकिन सारे मकान में सोने के लिए कोई जगह खाली नहीं थी।

किरील फिर से बड़े कमरे में लौट आया। यहां किसी स्टेशन की ही भांति नये-नये लोग आकर खाना खाते और चले जाते। एक कोने में उसे आरामकुर्सी दिखी, जिसके स्प्रिंग ढीले पड़े हुए थे। किरील ओवरकोट के बटन खोलकर कुर्सी में बैठ गया। गर्माहट और थकावट के कारण जल्दी ही वह ऊंघने लगा।

आंखें मूंदते हुए किरील सोच रहा था कि आराम करके फ़ौरन ही पत्र लिखेगा। वह अपने विचारों और छापों में से उनको अलग कर रहा

था, जिन्हें वह अच्छी तरह याद रखना चाहता था और इसके लिए लिख लेना चाहता था, ताकि नये अनुभव इन पहली छापों पर हावी न हो जायें। सबसे पहले मन ही मन वह केवल आनोच्का को चिट्ठी लिखने लगा, फिर मां को भी। कई बार उसने चिट्ठी इन शब्दों से शुरू की कि उसे यहां बहुत अच्छा लग रहा है, कि वह यह बता भी नहीं सकता कि क्यों उसे इतना अच्छा लग रहा है। वह बस यही चाहता था कि वे उसकी बात पर विश्वास कर लें। परन्तु फिर भी वह मन में इसका कारण खोज रहा था कि क्यों उसे इतना अच्छा लग रहा है। उसने सोचा वह लिखेगा कि कैसे स्तेपी में अश्वारोही दस्तों की टापों से धरती के गर्भ से उठती गड़गड़ाहट पर वह स्तब्ध रह गया था और कैसे वह उसे अपने साथ बहा ले चली थी; कि यह गड़गड़ाहट सारे संसार में गूंज रही है; कि ये इतिहास के बढ़ते कदम हैं; कि इस वक्त उसका, किरील इज़्वेकोव का हृदय इसीलिए उमंग से ओत-प्रोत है कि उसने इन गरजते कदमों में अपना छोटा सा, किन्तु दृढ़ कदम मिलाया है। जैसे ही उसने मन में इतिहास के कदमों की यह बात कही, वैसे ही वह समझ गया कि वह न आनोच्का को लिख रहा है, न मां को, बल्कि रागोज़िन को लिख रहा है। तीनों पत्र उसके विचारों में मिलकर एक हो गये। परन्तु फिर भी उसने नींद से जूझते आदमी की भांति जतन करके तीनों के नाम पत्रों में से आनोच्का के लिए पत्र अलग कर लिया। और तब उसने सोचा कि वह आनोच्का को वह पुरानी बातचीत याद दिलायेगा, जब वे मां के कमरे में पहली बार मिले थे। और उसके मन में वह दृश्य बिल्कुल साफ़-साफ़ उभर आया – कैसे मां ने आनोच्का की बिखरी लट ठीक की थी और मुस्कराई थी। किरील आनोच्का को कला पर हुई उनकी बातचीत याद दिलायेगा और यह लिखेगा कि उसे कला से अनुराग है। और वह यह भी लिखेगा कि उसे यहां बहुत अच्छा लग रहा है क्योंकि केवल यहां पर ही, जहां अब वह है, उसके लिए जीवन का संगीत पूरी तरह से ध्वनित हो रहा है, केवल यहां पर तथा इस क्षण ही – और कहीं भी नहीं। इसके बाद उसके विचार धुंधले से पड़ने लगे, हालांकि वह इसी ख्याल में था कि वह एकाग्रचित्त होकर सोच रहा है और चिट्ठी लिख रहा है, उसे बस एक बात का ख्याल नहीं था: कि वह चित्त को शांत करनेवाली गहरी नींद में सो गया है।

शायद सन्नाटे के कारण ही उसकी आंख खुली। मेज़ के पास एक सैनिक बैठा इतमीनान से कुछ खा रहा था। दूसरा सैनिक फ़र्श पर अपनी लम्बी फैली बांह पर सिर रखे सो रहा था। लैम्प की बत्ती बुझने से पहले तड़तड़ कर रही थी।

ओवरकोट के बटन बंद करके किरील बाहर निकल आया। हवा अब नहीं चल रही थी, ठंड काफ़ी बढ़ गई थी, आकाश निरभ्र था, शुक्ल पक्ष का अर्द्ध चन्द्र निकला हुआ था। धरती पर बरसती ज्योत्स्ना में हिम झिलमिला रहा था और हिमाच्छादित रास्ता ऊपर ही ऊपर जाता हुआ उस पर बढ़ते जाने का आह्वान करता लगता था।

और दो-तीन लोग भी बाहर निकल आये थे, तथा किरील की ही भांति शीतकालीन रात्रि के सौंदर्य का रसपान कर रहे थे। पूर्ण नीरवता थी, बस कभी-कभार ही कहीं सोते-सोते कोई घोड़ा फुफकार उठता।

जिस मकान पर संतरी पहरा दे रहे थे, उसमें से एक सैनिक बाहर आया और दौड़ चला। उसके नमदे के बूटों तले हिम की चरमराहट हो रही थी। वह छोटे मकान में चला गया और फिर तुरन्त ही बाहर निकल आया।

"अरे भई, कामरेडो!" वह ज़ोर से पुकारने लगा। "इज़्वेकोव नाम का है कोई यहां?"

किरील ने जवाब दिया।

"मेरे साथ चलिये, आपका बुलावा है!"

वह किरील को अंदर ले गया।

उस बड़े कमरे में, जहां किरील दिन को एड्जुटेंट के साथ आया था, काफ़ी भीड़ थी। कमांडर और कमिसार दीवारों के पास खड़े थे, खिड़कियों के दासों पर और मेज़ के पास बैठे थे। किरील दरवाज़े में खड़ा हो गया। भांति-भांति के कुछ लैम्प इस दृश्य पर रोशनी डाल रहे थे। मेज़ के पीछे दीवार पर टंगे दक्षिणी रूस के बड़े से नक्शे की ओर किरील का ध्यान गया। नक्शे पर पिनों से लगी छोटी-छोटी झंडियां तथा लाल और नीली पेंसिलों से बने तीर, कोष्ठक आदि स्पष्टतया यह इंगित करते थे कि नक्शा कैसा है। मेज़ पर समोवार रखा हुआ था, और खाने-पीने की वे ही साधारण चीज़ें जो बगल के छोटे

मकान में किरील ने देखी थीं। रंग-बिरंगी बोतलें खाली हो चुकी थीं। तश्तरियां वगैरह मेज़ के एक सिरे पर हटा दी गई थीं। खाना खत्म हो चुका था।

खिड़कियों और दीवारों के पास जमा लोग दबी-दबी आवाज़ों में बातें कर रहे थे, और मेज़ के पास बैठे लोग उन थोड़े से लोगों की हौले-हौले हो रही बातचीत सुन रहे थे, जिन्हें किरील लैम्प के कारण देख नहीं पा रहा था। धुएं के बादल उमड़-घुमड़ रहे थे। किरील दरवाज़े से आगे बढ़ा, ताकि मेज़ के पास बातें कर रहे लोगों को देख सके। तभी सहसा एड्जुटेंट उसके पास आ पहुंचा और काफ़ी ऊंची आवाज़ में बोलते हुए, पर न जाने क्यों किरील के कान में उसने कहा:

"चलिये, मिलवाता हूं।"

मेज़ के पास पहुंचते ही उसने किरील की बांह खींची और उनकी ओर पीठ किये खड़े व्यक्ति को संबोधित किया:

"कामरेड वोरोशीलोव, वह सरातोव वाला आ गया, जिसके बारे में मैंने आपको बताया था।"

वोरोशीलोव मुड़ा, जल्दी से इज़्वेकोव को निहारा और कहा:

"नमस्ते, कामरेड कमिसार।"

"कामरेड वोरोशीलोव, मैं कमिसार नहीं," किरील ने कहा।

"कमिसार कैसे नहीं? मुझे आपके बारे में ऐसी-ऐसी बातें बताई गई हैं कि आपको बस अभी पूरी ब्रिगेड सौंपी जा सकती है।"

किरील चुप रहा। अभिवादन का उत्तर देते हुए उसने ज़ोर से एड़ियां बजाई थीं, पर यह भूल गया था कि वह चमड़े के नहीं, नमदे के बूट पहने है, सो पांवों की गति भोंडी सी रही और किरील सकपका गया।

"कभी काठी में तो बैठे हैं?" वोरोशीलोव ने पूछा।

"जी हां।"

"कैसा रहा था? टिके रहे थे?"

"जी हां, टिका रहा था।"

वोरोशीलोव ने मुस्कराते हुए सिर हिलाया।

"अच्छा, चलिये।"

वे मेज़ के परले सिरे पर उन लोगों के पास गये, जो बातचीत कर रहे थे। यहां कमांडर एक दूसरे से सटे खड़े थे और एक फ़ौजी

धीरे कुछ सुना रहा था। वोरोशीलोव खड़े लोगों का घेरा तोड़कर अंदर घुमा, किरील भी उसके पीछे वढ़ा।

घेरे के वीच में स्तालिन और वुद्योन्नी वैठे थे। सुनानेवाला उनकी ओर झुका घुटनों पर कोहनियां टिकाये वैठा था और हाथ हिलाये-डुलाये विना इतमीनान से कुछ सुना रहा था, प्रत्यक्षतया वह इस वात का आदी था कि लोग उसकी बातें ध्यान से सुनते हैं।

स्तालिन घनी मूंछों तले से धुआं छोड़ते हुए बीच-बीच में अपनी पैनी नजर उस पर डाल रहा था।

फ़ौजी कह रहा था: "वोरोनेज के फ़ौरन वाद मैंने मिरोनेन्को को सफ़ेद गार्डों के पीछे भेजा। वह पुरानी फ़ौज में हवलदार था। दोनबास का खनिक है। मैंने उसे हुक्म दिया कि वह अपनी ब्रिगेड के साथ हमला करते हुए यह टोह ले कि सफ़ेद गार्ड किन-किन गांवों में हैं, कितने दिनों से ठहरे हुए हैं, किस तरह की उनकी फ़ौजें हैं, वगैरा-वगैरा। काम पूरा होते ही उसे फ़ौरन रपट देने को कहा। सो मैं इंतज़ार करने लगा – घंटा वीता, दो घंटे, तीन घंटे। आधी रात हो गई। कोई खवर नहीं। आखिर वहुत रात गये हरकारा लिफ़ाफ़ा लाया। लिफ़ाफ़ा खोला, देखा – वस दो पंक्तियां लिखी हैं: 'दुश्मन सिर पर पैर रखके भाग रहा है – रोस्तोव नगर की ओर'। और रोस्तोव था पूरे पांच सौ मील दूर!"

स्तालिन हंसा। एक सिगरेट से दूसरी सिगरेट जलाते हुए उसने हर्षमय स्वर में कहा:

"जब सोते-जागते रोस्तोव दिखता हो, तो फिर टोह क्या ली जायेगी!"

कुछ और लोग वातचीत में शामिल हुए। एक वोला:

"फ़ौजी नियमों का पालन करना मुश्किल हो रहा। अभी उस दिन मैंने नियम के अनुसार सैनिकों को पड़ाव डालकर आराम करने का आदेश दिया। तभी रपट मिली: सिपाही नाराज़ हो रहे हैं, कहते हैं आराम करने में वक्त वेकार जाता है, आगे वढ़ना चाहिए, दुश्मन को खदेड़ना चाहिए।"

दूसरे ने कहा:

"घर पहुंचने की जल्दी में हैं।"

"घर?" स्तालिन ने सहज भाव से पूछा।

"मेरी यूनिट में ज़्यादातर सैनिक दोन और कुबान इलाके के हैं। जल्दी-जल्दी वहां पहुंचना चाहते हैं।"

स्तालिन ने चालाकी भरी मुस्कान के साथ धीरे-धीरे आस-पास जमा लोगों पर नज़र डाली।

"वैसे तो नियमों का पालन होना चाहिए। पर सच पूछें तो मैं इस बात के खिलाफ़ हूं कि पड़ाव ज़्यादा लंबे हों। लगता है, कामरेडो, हमारी बातचीत कुछ ज़्यादा ही खिंच गई।"

वह उठ खड़ा हुआ। जो लोग बैठे हुए थे, वे सब उठने लगे, अपनी जेबों से घड़ियां निकालने लगे। स्तालिन ने एक बार फिर से, पर अब गम्भीरतापूर्वक इर्द-गिर्द खड़े लोगों पर नज़र डाली और पहले की ही भांति मंद स्वर में बोला:

"मैं दुबारा कहता हूं: हमें जल्दी करनी चाहिए। अच्छा, कामरेड कमिसारो और कमांडरो, एक बार फिर आपकी सफलता की कामना करता हूं। उस सफलता की, जो देनीकिन की फ़ौजों का नामोनिशान मिटा देगी। आज बुद्योन्नी का जो रिसाला हमने देखा है, उससे इसमें शक की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती।"

स्तालिन ने बुद्योन्नी से हाथ मिलाया और जाने के लिए मुड़ा। वोरोशीलोव ने उसकी ओर कदम बढ़ाया।

"कामरेड स्तालिन, यह सरातोव से कामरेड आये हैं। हमारी नई टुकड़ियों के लिए घुड़सवार दस्ता लाये हैं।"

स्तालिन ने किरील से हाथ मिलाया और सहसा सवालों की झड़ी लगा दी: दस्ता कितना बड़ा है, कैसे लोग हैं उसमें, उन्हें अच्छा प्रशिक्षण मिला है कि नहीं, सफ़र कितने दिन का था, कहां गाड़ी से उतरे, और फिर यह कि किरील का पूरा नाम क्या है, ज़ारशाही फ़ौज में था कि नहीं, कहां काम किया था, सरातोव में लोगों का हौसला कैसा है।

"कैवेलरी में वालंटियरों की भरती जारी है, लोग खुशी-खुशी भरती हो रहे हैं," छावनी में हुई सभा याद करते हुए किरील ने कहा।

"बड़ी अच्छी बात है। वोल्गा वाले जोशीले होते हैं, और रिसाले में जोशीलों की कद्र होती है," स्तालिन ने कहा। "मैं सोचता हूं

अगर सरातोव वाले दोनबास में देनीकिन का सफ़ाया करने में मदद देंगे, तो इस तरह वे अपनी वोल्गा से भी खतरा टाल सकेंगे।"

उसने वोरोशीलोव की ओर देखा।

"अच्छा, तो अब कामरेड को बुद्योन्नी के रिसाले में जगह देनी चाहिए।"

"मैं इन्हें ब्रिगेड सौंपने की सोच रहा हूं," वोरोशीलोव ने कहा।

"ब्रिगेड काफ़ी होगी? कामरेड देखने में तो नौजवान है, पर मुझे लगता है तपा-मंजा है।"

स्तालिन ने मुस्कराते हुए किरील की ओर हाथ बढ़ाया।

सब लोग दरवाज़े की ओर बढ़े। मानव-कठों का गुंजन अधिक ज़ोरदार हो गया। ड्योढ़ी के फ़र्श के पुराने पटरे लोगों के भारी कदमों तले चरमराने लगे।

वोरोशीलोव ने पीछे मुड़कर देखा, दीवार पर टंगे लैम्प की टिमटिमाती रोशनी में किरील का चेहरा देखकर बोला :

"अच्छा तो तुम सुबह मेरे पास आना। तड़के ही!"

सहसा यह 'तुम' का संबोधन सुनकर किरील रोमांचित हो उठा, और उसे मन की वह विचित्र स्थिति याद हो आई, जब किशोरावस्था मे सरातोव के टीलों पर एक बूढ़े मज़दूर ने जीवन में पहली बार उसे 'कामरेड' कहा था और वह अपने मन के आवेग को दबाने के लिए टीलों पर दौड़ चला था।

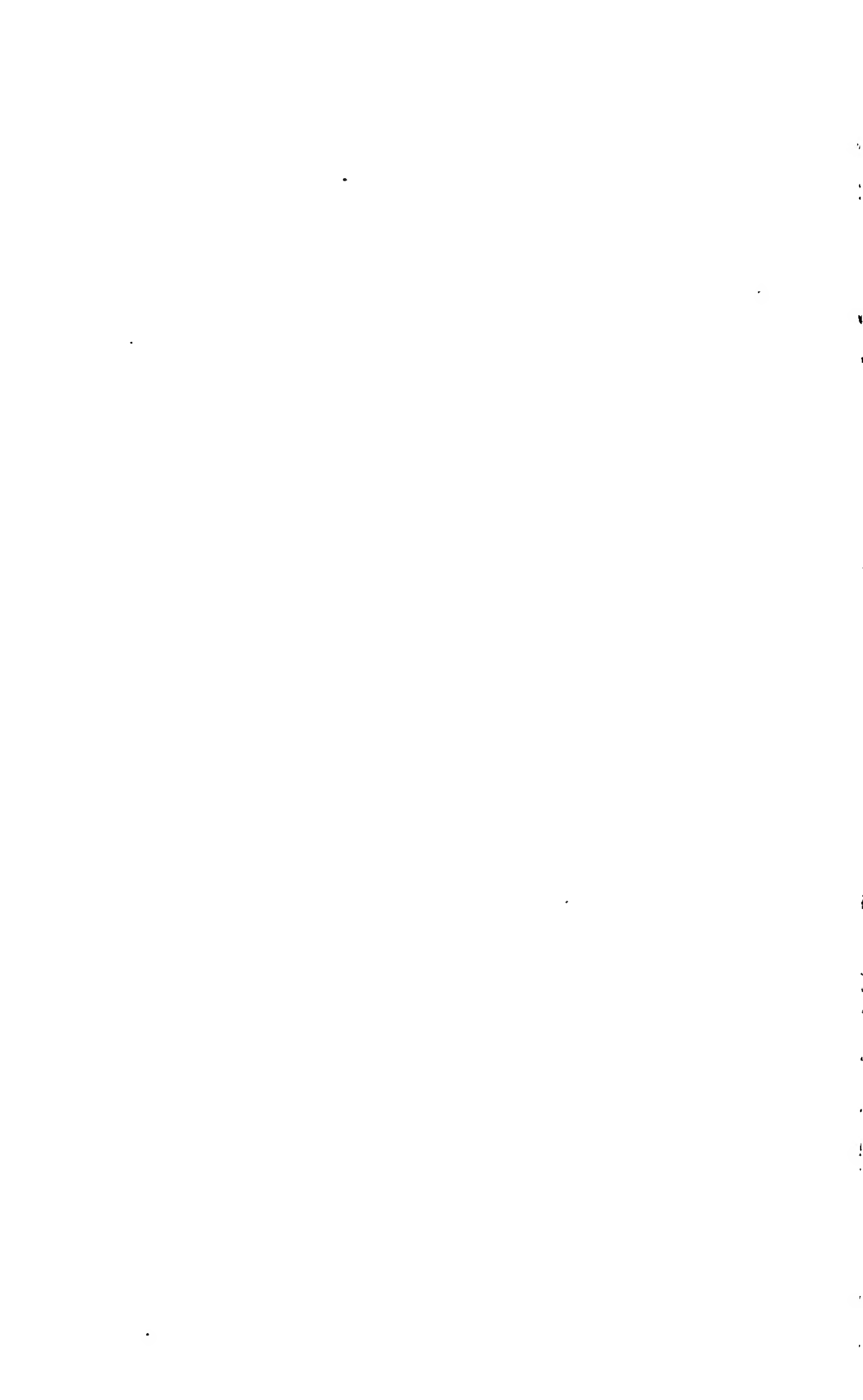
दरवाज़े में से निकलते और ठंड में विलीन होते भाप के बादल के साथ किरील बाहर आया। अपने नये कामरेडों के साथ वह सैनिकों के रैनबसेरे को चल दिया, वहां आराम करके नये प्रभात का स्वागत करने। उसके सामने सीधा हिमाच्छादित रास्ता था, जो ऊपर ही ऊपर जाता प्रतीत होता था।

१९४५ – १९४८

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन को इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन के संबंध में आपकी राय जानकर और आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर बड़ी प्रसन्नता होगी। अपने सुझाव हमें इस पते पर भेजें:

प्रगति प्रकाशन,
१७, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।







सोवियत संघ में कोन्स्तान्तिन फ़ेदिन की रचनाएं पंद्रह भाषाओं में प्रकाशित हुई हैं, इनकी कुल प्रति-संख्या लगभग ७०,००,००० है। यूरोप, एशिया और अफ़्रीका में तीस भाषाओं में फ़ेदिन की पुस्तकें अनूदित हुई तथा १३७ बार प्रकाशित हुई हैं।